



आद रत्न गुप्तसागर

तथा

गुप्त ज्ञानो गुटके



रश्मिनामः—

श्रीमद् परमहंस

परिव्राजकः श्री पूज्यपाद अवधूत

श्री गुप्तानंद महाराज

मुद्रा : अमृत









# ચૌદ રત્ન ગુપ્ત સાગર

તથા

ગુપ્ત જ્ઞાનનો ગુટકો



— સમ્પાદિતા : —

શ્રીમદ્દ પરમહંસ પરિવ્રાજકાચાર્ય પૂજ્યપાદ અવધૂત

✽ શ્રી ગુપ્તાનંદજી મહારાજ ✽

મુલ : અમૃત

પ્રકાશક :

સંતશ્રી પ્રણવરામજી મહારાજ,  
નિત્યાનંદ સેવાશ્રમ, ઓલવ રોડ,  
અમદાવાદ.

આવૃત્તિ-૩ જી

પ્રત - ૧૦૦૦.

મહાશિવરાત્રી.

વિ. સં ૨૦૨૧.

તા. ૧-૩-૬૫.

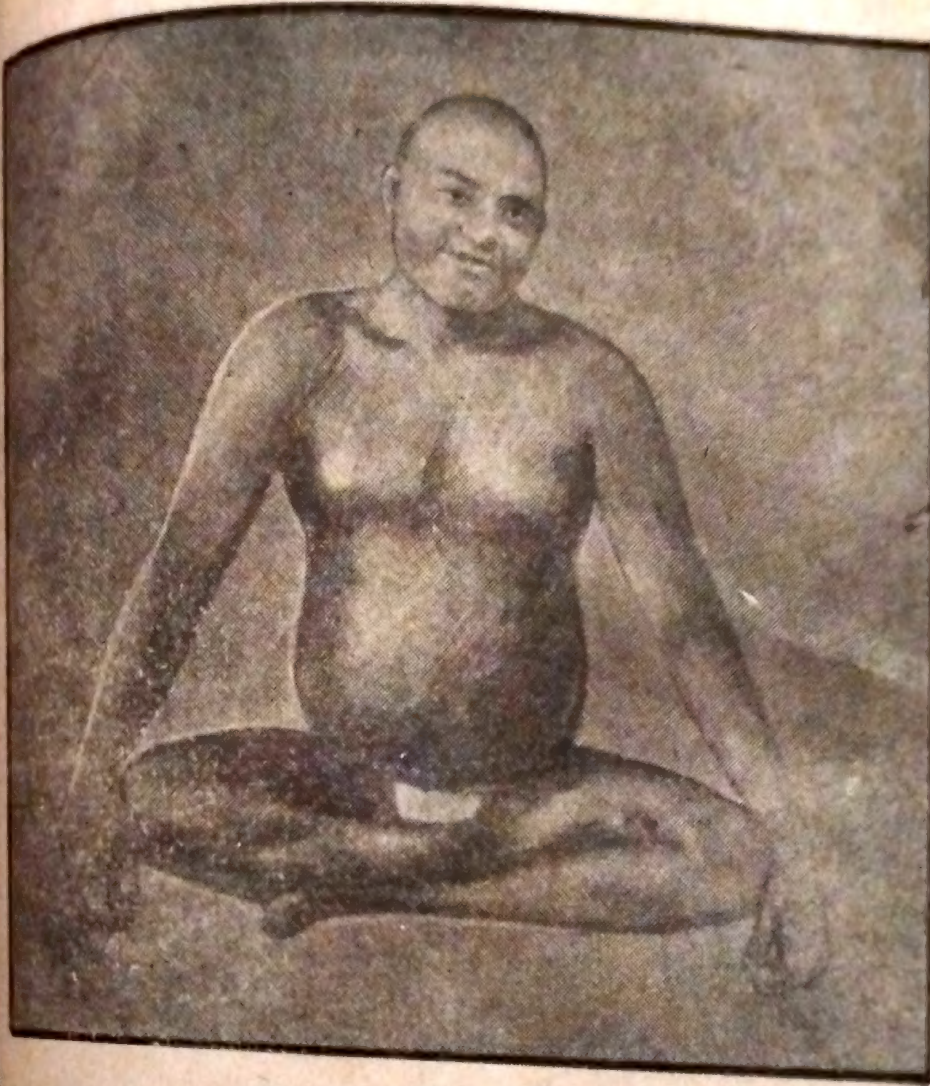
મુલ્ય :

મુમુક્ષુ આત્માઓ માટે,  
અમૂલ્ય.

મુદ્રક :

શ્રી રામાનંદ પ્રિન્ટીંગ પ્રેસ.  
કાંકરીઆ રોડ, અમદાવાદ-૧.





શ્રીમત્ પરમહંસ પરિવાજકાચાર્ય પુજ્યપાદ અવધુત.  
શ્રી ગુપ્તાનંદજી મહારાજ







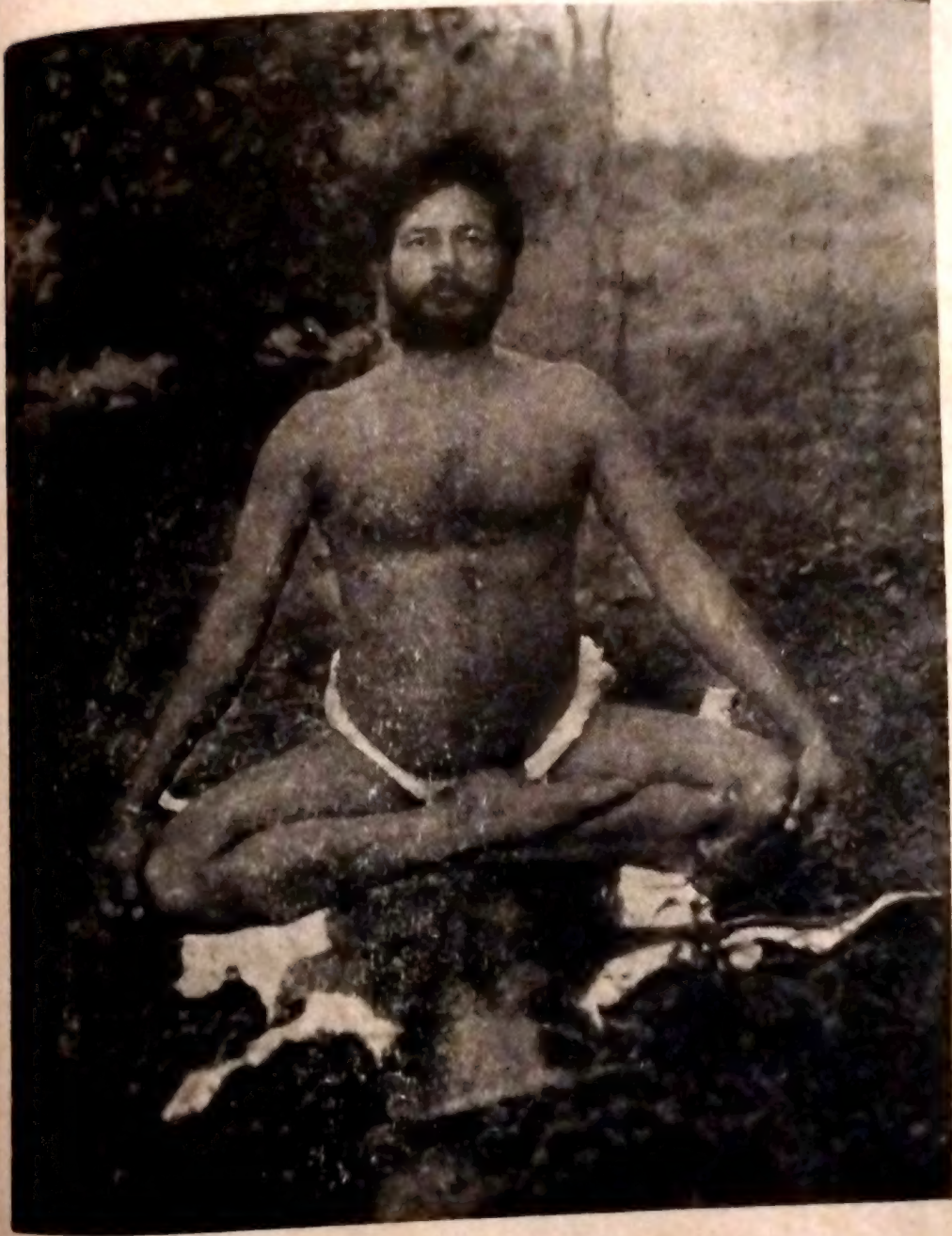


શ્રી અવધૂત ૧૧૦૮ નિત્યાનંદ મહાપ્રભુજી









બ્રહ્મનિષ્ઠ સંત શ્રી પ્રણવરામ મહારાજ







## મસ્તાવના

માન: અમલગીચ પ્રાચીન મુનિઓની પરંપરા અનુસાર  
જાણીત યોગીશાસ્ત્ર અને મહાન અવધુત શ્રી ગુપ્તાનંદજી મહારાજ  
મુમુક્ષુ આત્માઓના હિતાર્થે મધ્યપ્રદેશમાં વસ્યા હોવા મમલ મુખી  
જામણ કરીને સંવત ૧૬૭૬ માં મન્દગૌર મામમાં વિષ્ણુપુત્રી  
નિવાસમાં અમાધિ લીધી હતી તે વાત અર્થ વિવિત છે.

આ જગતમાં ચાર પ્રકારના મનુષ્યો હોય છે (૧) પામર  
(૨) વિપરી (૩) છતામુ અને (૪) મુક્ત આ ચાર સોડો માટે  
વેદોમાં એક લાખ ૨૬૦૬૦ છે જેમાં ૮૦ હજાર કર્મકાંડના,  
૧૬ હજાર ઉપાસનાના તથા ૪ હજાર જ્ઞાનકાંડના છે. પરંતુ વેદોમાં  
તાત્પર્ય તથા પરંપરાનુસાર અધીકારીજનો માટે કર્મજનનની  
નિવૃત્તિ અને પરમાત્માની પ્રાપ્તિ એજ મોક્ષ છે.

આત્મા સ્વયં પ્રકાશીત છે. સ્વયં સિદ્ધ છે. આ જ્ઞાનથી  
અંધકાર રૂપી અજ્ઞાનને નાશ કરવા માટે મહાત્માઓની વાણી  
અભેદ જ્ઞાનરૂપ સૂર્ય સમાન છે. આ વાણી પાદૃત કે સંસ્કૃત ગમે  
તે ભાષામાં હોય તેનું શ્રવણ-મનન-એજ પરમ પુરુષાર્થ છે.  
એટલા માટેજ મહાત્મા શ્રી અવધુત ગુપ્તાનંદજી મહારાજે આ  
“ચૌદરત્ન ગુપ્તસાગર” નામના અંધનુ ઉપરોક્ત જ્ઞાનની પ્રાપ્તિ  
માટે નિર્માણ કરેલું છે. સમુદ્ર મંથનમાંથી નીકળેલા ચૌદ રત્નો  
જેમ, આ અંધમાં પણ ચૌદ રત્ન રૂપી મહા જ્ઞાન પ્રગટ કર્યું છે.

“ચૌદ રત્ન ગુપ્તસાગર” નામનો અંધ શ્રી નિવ્યાનંદ  
જિવાશ્રમમાં વાંચ્યો, મારા અનુભવ પ્રમાણે આ અંધ જે કોઈ છતામુ  
શ્રવણ-મનન-નિદિધ્યાસ કરે તો જરૂર મોક્ષ પ્રાપ્ત કરી શકે, તો  
રેક છતામુએ આ અંધ વાચન કરી મનન કરે તેવો મારો  
મુખ્ય અભિપ્રાય છે.



મુજ પુસ્તક હિન્દીમાં હોવાથી વાંચવું સમજવું કઠીન  
 પડતું હોઈ ગુજરાતના ઘણા પ્રેમી ભક્તોની ઈચ્છાથી તેમજ  
 મુમુક્ષુ આત્માઓને સરળ ભાષામાં સમજાય તે માટે આ ગ્રંથ  
 શ્રી નિત્યાનંદ સેવાશ્રમના સંતશ્રી પ્રભુવરામ મહારાજે ગુજરાતી  
 ભાષામાં પ્રગટ કર્યો છે. તેનો છાન્દસો લાલ લેશે.

ૐ શાન્તિઃ શાન્તિઃ શાન્તિઃ

આચાર્ય શ્રી વલ્લભરામ વૈદ્ય.





# श्री. हठ रत्न गुह्य सागर प्रारंभः

भंगलाचरण

शिवः केवलो ऽ हं शिवः केवलो ऽ हं हरिम् ।

शिवः केवलो ऽ हं शिवः केवलो ऽ हं हरिम् ॥

शिवः केवलो ऽ हं शिवः केवलो ऽ हं हरिम् ।

शिवः केवलो ऽ हं शिवः केवलो ऽ हं हरिम् ॥

हंस भंगलाचरण के आनन्द और श्री भंगल करते हैं—

श्री. हठ रत्न

निज आत्म भंगल रूप सदा । द्वि भंगल द्विधा द्विधा गुहा ।  
वो सग्न भंगल हा भंगल है । निमनं विन्न और अभंगल है ॥१॥  
दशाष्ट द्विधा भंगल है जिस को । निज व्यापकरूप लब्ध्या जिस को ।  
हरि हर सूर गणेश निज । सग्न आत्म भं स्तुति है तिते ॥२॥  
आत्म सग्न हा व्यापार है । वह नाम रूप से न्यास है ॥  
जिस भं मिथ्या संसारा है । जो अव्ययरूप अपारा है ॥३॥  
सग्न चेतन हा अभिधारा है । वो आनन्द रूप हमार है ।  
दूजे हा भंगल क्या द्विधा । जो हास पाप के सग्न लीजे ॥४॥  
आत्म त्रिधाता आद्य सदा । दूजे हा जिस भं लेश नहीं ॥  
कोछ लोक न वेद न यज्ञ मुरा । गुरु शिष्य न जन्म परम्परा ॥५॥  
श्री. १



कोई मज्जन न पन्थ सन्यास नहीं । कोई साधन साधन न ज्ञान नहीं  
 सो ज्ञान सारूप सदा नित है । नहीं कोणी नहीं मन्दिर है ॥१॥  
 नहीं दृष्ट भुक्त भं आपन है । जोकर जग व्यापक आपन है ॥  
 हम आपन भंगल आप किया । सग करना हमसे हर दुया ॥२॥  
 किया का भुक्त भं देश नहीं । कोई देश और परदेश नहीं ॥  
 भं ही व्यापक भुक्त विना काया । कोई व्यवह मश नहीं भाया ॥३॥

### अनुपमं

अधिकारी के लक्षणों के युक्ति रत्न से लेकर निश्चयात् अन  
 पर्यन्त कथन किये हैं सो जनने योग्य है. प्रतिपाद्य प्रतिपादक  
 भाव रूप के संशय है सो ही इस ग्रंथ में यथाक्रम कथन  
 किया गया है. वास्तव में व्यवस्था ही अकता इस ग्रंथ का  
 मुख्य विषय है जो ज्ञान रत्न में विशेष रूप से प्रतिपादन किया  
 गया है. इसी प्रकार व्यवस्था युक्ति और विवेक युक्ति रत्न में  
 इस के प्रयोजनका विवेचन करने में आया है.

-(X)-

## अथ युक्ति रत्न

होला

शिष्य गया गुरु देव द्विग, छाँडि कपट छल भंड ॥  
 कर प्रणाम लज्जि मुहिन मन, पूछन लगां निशंक ॥१॥

सुख ही याहुं प्राप्ति मै, सभी को हान ॥  
 सा कैसे हात है, कलिये कृपा निधान ॥ २ ॥

किसी समय जब शिष्य, कपट, लस, वदनाय (अर्थात् प्रभाव) आदि त्याग कर अपने सद्गुरु के पास गया और प्रणाम करके उसने देखा कि इस समय गुरु महाराज अपने पर ज्येष्ठ प्रसन्न हैं तब तो वह सदैव रहित अर्थात् निर्वाण हो कर सविनय पूजने लगा। हे गुरु देव! मैं सुख की प्राप्ति और सख प्रभार के दुःखों की निवृत्ति चाहता हूँ ऐसा हे देव निधान! आप मुझ पर दया करके कहिये मेरी यह छद्मा कैसे सफल हो सकती है? शिष्य के दीनता पूर्वक इस प्रश्न करने पर गुरु बोले—हे शिष्य तू किसके वास्ते और कैसा सुख चाहता है। वेदों में दो प्रकार के पदार्थ कहे हैं (१) आत्म और (२) अनात्म धर्मों से तू आत्मा के सुख की प्राप्ति चाहता है अथवा अनात्मा के यदि तू कहे कि अनात्मा के सुख को चाहता हूँ तो तेरा यह कहना वृथा है क्योंकि कि अनात्मा का तात्पर्य अपने से भिन्न का है, और यह स्पष्ट है कि तेरे से भिन्न याने दूसरे के आराम से तेरे को आराम नहीं होता है, जैसे किसी मनुष्य को निधि प्राप्त हो तो उस निधि जनित सुख की प्राप्ति भी होगी दूसरे को नहीं होगी। इसी प्रकार अनात्म को सुख प्राप्त होने से तेरा प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा।

वेद ने अनात्म पदार्थों को सुख रूप नहीं कहे हैं, बल्कि असत्, जड और दुःखरूप ही कहे हैं। इसलिये इस लोक तथा परलोक के सभी अनात्म पदार्थों को सुख की प्राप्ति होना संभव नहीं। अथ यदि तू कहे कि आत्मा के लिये सुख की प्राप्ति चाहता हूँ तो तेरा यह कथन भी व्यनता नहीं, क्योंकि वेद ने आत्मा को सुख रूप कहा है और इस शरीर से लेकर स्त्री, पुत्र और शरीर के उपकारक धन पशु आदि सभी लौकिक तथा पार-लौकिक अनात्म पदार्थों को दुःखरूप बताया है।

गुरु के उक्त वचन सुनकर शिष्य बोला—हे भगवन्! आप कहते हैं कि पदार्थों में सुख नहीं है, परन्तु मुझे यह कथन ज्ञानता नहीं है क्योंकि मेरे को तो पदार्थों में सुख प्रतीत होता है। यदि पदार्थों में सुख नहीं हो तो उनके प्राप्त होने से जो



आनन्द होता है इस नदी' होना आदिये क्योंकि बिना लुके पदार्थ की प्रतीति होती नदी' है. यदि बिना लुके पदार्थ की प्रतीति माने तो अन्या पुत्र आदि की प्रतीति होना आदिये कि जो किसी को भी होती नहीं. अतः जोसा प्रत्यक्ष विचार होता है कि पदार्थ में ही आनन्द है. कि पदार्थ सुख रूप नदी है—यह कथन मेरी समझ में नहीं आता. यदि जोसा कहा जाय कि आत्म सुख का ही विषय में ज्ञान होता है तो मेरे विचारानुसार यह भी संभव नहीं. क्योंकि आत्मा का तो किसी काल में अभाव नहीं होता. आत्मा नित्य है. जैसी स्थिति में सुख का भी कदापि अभाव नहीं होना आदिये. यदि विषय में आत्म सुख का ज्ञान होता सदैव ही प्राप्त होना. आदिये सुख की परंतु सुख सदैव होता नहीं है. इस से यही जना जाता है कि विषय में ही आनन्द है और प्रत्यक्ष भी देखने और सुनने में आता है मेरे ही पुत्र, धन, नहीं इस करके मैं अहुत दुखी हूँ और शास्त्रद्वारा सुनने में आता है कि जिस काल में देवराज धन्वका और दैत्योंका पदार्थ के वास्ते भडा लारी युद्ध हुआ तब दैत्यों ने जय पाई और धन्व डारगया और लोगों की धम्छा करके दीन होगया तब विष्णु भगवान् के पास जा के विषय सुख के वास्ते अहुत दीनता की यदि विषय में सुख नहीं होता तो अमरेश विष्णु की कृपा का पात्र क्यों होता इस से जना जाता है कि विषय में ही सुख है.

गुरुस्वामी—हे शिष्य ! तुमने जो कहा विषय में ही सुख है सो ऐसी बुद्धि तो विषयी पुरुषों की होती है तू काहे को विषयी बनता है और तुझे किसी रीति से विषय में सुख की प्रतीति भी हो गई है तो तेरे से यह पूछते हैं कि विषय सुख अनित्य है कि नित्य ? यदि तुम प्रथम पक्ष स्वीकार करो कि विषय सुख अनित्य है, तो अनित्य सुख की कोधली लज्जासु धम्छा करता नहीं और अनित्य सुख की जो धम्छा करते हैं वे जिज्ञासु नहीं, और जो तुम दूसरा पक्ष अंगीकार करो कि विषय सुख नित्य है तो आत्मा का स्वरूप ही सुख होवेगा क्योंकि वेद में आत्मा को सुखरूप और नित्य कहा है. इसलिये



आत्मासे सिन्न अनात्म वस्तु कोई भी सुख रूप है नहीं, अथ  
 आत्मा ही सुखरूप है, तिसको सुख की प्राप्ति कहना अनता नहीं  
 क्योंकि पाँड़वे जो वस्तु नहीं होवे तिसकी प्राप्ति कहना अनता  
 है, सो आत्मा वेदने आनन्दरूप कहा है तिसको सुख प्राप्ति की  
 याहना भने नहीं और जो तूने यह जान कही थी जो आत्म  
 सुख ही विषय में मान होवे तो सख काल सुख की प्रतीति  
 होनी चाहिये. आत्मा नित्य होने से यह कहना भी तेरा अनता  
 नहीं क्योंकि आत्मा की तो उत्पत्ति नाश होता नहीं और तुम  
 भी अंगीकार करते नहीं हो क्योंकि वह नित्य है, परन्तु साक्षी  
 आत्मा के आश्रित जो अनात्म अंतःकरण की वृत्ति इन्द्रिय द्वारा  
 निकल के वह बाह्य देश में जाकर अनुकूल वा प्रतिकूल पदार्थ  
 से मिल के सुखाकार वा दुःखाकार होती है और जय अनुकूल  
 विषय की प्राप्ति होती है तब वृत्ति सुखाकार होती है यद्यपि  
 वह वृत्ति राजस है तिस वृत्ति से सुख की प्राप्ति कहना संभव  
 नहीं. क्योंकि सुख सात्विकी वृत्ति से होता है. तिसका कोई  
 निमित्त है नहीं तथापि तिस विषय की जो प्राप्ति से तिस  
 राजस वृत्ति का नाश होगया है परन्तु तिस वृत्ति के नाश से  
 अनंतर दूसरी सात्विकी वृत्ति उत्पन्न होवे है तिस वृत्ति के  
 उत्पन्न होने में राजस वृत्ति का नाश ही निमित्त है. परन्तु  
 अहिर विषय के आनन्द का विषय करने से वह वृत्ति भी अहिर  
 सुख ही होती है तिस वृत्ति से भी अनंतर आनन्द का भाव  
 होवे नहीं परन्तु तिस अहिरसुख सात्विकी वृत्ति के पीछे और  
 अनंतरसुख वृत्ति उत्पन्न होवे है, तिस वृत्ति से अनंतरसुख जो  
 अंतःकरण उपहित आनन्द है तिसका ही मान होवे है और  
 अहिरसुख जो सात्विकी वृत्ति दुर्ध है और विषय के आनन्द का  
 जो लाभ हुआ है तिस आनन्द से वृत्ति की स्थिती दुर्ध है यही  
 तिस अनंतरसुख वृत्ति के होने में निमित्त है, तात्पर्य यह है  
 कि जितना कि अनंतर और आहुर जो आनन्द मान होता है  
 सो सख वृत्ति के ही उत्पत्ति और नाश से होवे है, घसी कर के  
 सुख का नाश होवे है और वृत्ति को स्थिरता होने से विषय में  
 आनन्द का भाव होवे है सो आत्मा का ही आनन्द है जैसे



जितना पदार्थन में जो भीड़ा भावूम होता है सो सली गन्ने  
 का रस है क्योंकि जितनी ही अन्न मिश्रित मिठाई बनती है सो  
 सख सांठे करके भीड़ी होती है तैसे ही जितना कि जो आनन्द  
 का लान होवे है भावर और अन्तर सा सली अन्न आत्मा  
 तिस अन्नका ही है आत्मा से लिन्न और कोई ली आनन्द  
 स्वरूप है नहीं इस करके जो तू आत्मा के वास्ते सुख को चाहे  
 सो तेरा कहना बने नहीं क्योंकि आत्मा सदा आनन्दरूप है  
 और वेद ने ली कहा है ॥ प्रज्ञानमानन्दमूर्ध्ना तिस महा वाक्य  
 करके प्रज्ञान पद एव आत्मा का वाचक है और अन्न पद ध्विर  
 का वाचक है और आनन्द पद दोनों को अपने में ही बतावे  
 इस करके ली आत्मा सुख रूपही है, परंतु भाग त्याग लक्षण  
 करके द्वेषिये तब तेरे को भावूम होवेगा कि आत्मा आनन्द  
 स्वरूपही है और जो तू सुखादिकों को आत्मा के गुण कहे सो  
 बात तेरी बने नहीं, क्योंकि गुण और गुणी का तादात्म्य संबंध  
 होता है सो ली तिन अनात्म पदार्थों का ही होता है, और  
 जो जिसका जिसमें तादात्म्य होता है सो तिसका स्वरूपही होवे  
 है जैसे जति तादात्म्य होवे सो जति व्यक्ति स्वरूप ही है,  
 व्यक्ति से लिन्न करके द्वेषिये तो जति कहीं मिलती नहीं, याते  
 अनात्म पदार्थन का ली जिनका तादात्म्य होवे है, तिनका ली  
 कल्पित ही भेद होवे है, वास्तव में गुण और गुणी का अल्लेह  
 ही होवे है तब अनात्म पदार्थों का अल्लेह ही है, जब अनात्म  
 है तो निर्गुण कहा है? तिस निर्गुण आत्मा का गुणों से कौन है,  
 संबंध संयोग अथवा संवाय सम्बन्ध है, सो संवाय सम्बन्ध तो  
 पूर्व की रीति से बनता नहीं क्योंकि जिन पदार्थन का न्याय शास्त्र  
 में संवाय संबंध माना है उन पदार्थन का वेदान्तशास्त्र में तादात्म्य  
 संबंध माना है, तादात्म्य के नहीं बनने से संवाय ली बनता  
 नहीं, और दूसरा संयोग सम्बन्ध कहा सो ली बनता नहीं,  
 क्योंकि संयोग दो के आसरे रहता है याते कोई ली आसरे  
 संयोग का बनता नहीं जो ऐसा कहे कि आत्मा के आसरे  
 संयोग रहे है, सो कहना बनता नहीं क्योंकि आत्मा को असंग  
 कहा है, याते असंग आत्मा में संयोग का आसरा बनता

નહીં. ઓર જો દુસરા પક્ષ કહે કે ગુણન કે આસરે સંયોગ રહતા  
 સો ભી ખાત બનતી નહીં ક્યોંકિ ગુણ જડ હોને સે સંયોગ  
 આસરે બનતે નહીં, ઇસ કરકે સુખાદિક ગુણન કા ઓર આત્મા  
 કા કોઈ ભી સમ્બન્ધ હૈ નહીં યાતેં ભી સુખાદિક આત્મા કે ગુણ  
 નહીં હૈ. સુખાદિક આત્મા કે સ્વરૂપહી હૈ જો જિસકા સ્વરૂપહી  
 હોવે હૈ. સો તિસ સે ભિન્ન હોવે નહીં, જૈસે દ્રવતા જલકા સ્વરૂપ  
 હૈ જૈસે ઉષ્ણતા અગ્નિ કા સ્વરૂપ હૈ, તસે હી સુખાદિક આત્મા  
 ગુણ નહીં આત્મા કે સ્વરૂપ હી હૈ, ઓર જો તુમ અંસે કહો કે  
 સુખાદિક આત્માકે ધર્મ હૈ, તો હમ યહ પૂછતે હૈ કે સુખાદિક  
 આત્મા કે ધર્મ સો તૈને કેસે જાના યહ આપ બતાધય જો તુમ યહ  
 કહો કે આત્મા કરકે જાના સો યહ તુમહારા કહના બનતાં નહીં  
 ક્યોંકિ આત્મા સબ ધર્મોં સે રહિત વેદ ને કહા જૈસે ઓર સર્વ  
 ધર્મન સે રહિત હૈ, તસે જાનના ભી એક ધર્મ હૈ સો તિસ જાનને  
 સે ભી રહિત યા તે સાક્ષી આત્મા મેં જાનના બનતા નહીં તો  
 યદ્યપિ અનાત્મા મેં ભી જાનના બનતા નહીં, ઓર સુખાદિકોં  
 કા ભાન હોતા હૈ સો નહીં હોના ચાહિયે, તથાપિ જૈસે દૂર દેશ  
 મેં વસ્તુ હોવે તિસકે દેખને મેં નેત્ર કી સામર્થ નહીં હોવે હૈ,  
 ઓર એક દૂરબીન શીશા હોતા હૈ કેવલ તિસમેં ભી સામર્થ  
 નહીં હોવે હૈ, ઓર જબ ઉસ દર્પણ કો નેત્ર સે મિલાધયે તબ  
 દૂર દેશ સ્થિત વસ્તુ જાની જાતી હૈ, તૈસે સાક્ષી આત્મા મેં ભી  
 જાનના નહીં હૈ, ઓર જડ અનાત્મા જો અંતઃકરણ તિસમેં ભી  
 જાનના બનતા નહીં, પરંતુ ચેતન આત્મા કે આશ્રિત જો જડ  
 અંતઃકરણ તિસ અંતઃકરણ કી વૃત્તિ આત્મા કે પ્રકાશ કરકે પ્રકા-  
 શિત હુઈ સુખાદિકન કો પ્રકાશતી હૈ, તિસ સાભાસ વૃત્તિ કરકે  
 સુખાદિક જાને જાતે હૈ; ઇસ રીતિ સે સુખાદિક આત્મા કે ધર્મ જાને  
 હૈ ઓર ન્યાયશાસ્ત્ર મેં સુખાદિક આત્મા કે હી ધર્મ કહે હૈ. ઇસ  
 કરકે ભી સુખાદિક આત્મા કે હી ધર્મ સિદ્ધ હોવે હૈ ઇસ યુક્તિ  
 ઓર ન્યાય શાસ્ત્ર કા પ્રમાણ દેકે સુખાદિક આત્મા કે ધર્મ સિદ્ધ કરે  
 સો ભી કહના બનતા નહીં, ક્યોંકિ પ્રથમ તો આત્મા કો સર્વ  
 ધર્મ સે રહિત હી કહા હૈ, ઉસ સર્વ ધર્મ રહિત આત્મા મેં  
 કિસી ધર્મ કે આરોપણ કરને કા નામ ભ્રાંતિ હૈ, જૈસે ઉષ્ણતા



સે સદિત કે ઉચ્ચતાસદિત કહના તથા ડંડસદિત કે ડંડી કહના  
 બનતા નહીં, કયોંકિ તત્-ધર્મ સદિત કે તત્-ધર્મ વિશિષ્ટ કહના  
 હી જ્ઞાતિ હૈ. સો એસી જ્ઞાતિ તેરે કે કહાં સે પ્રાપ્ત હુઈ હૈ.  
 સુખાદિક આત્મા કે ધર્મ હૈ. યહ કહના તેરા એસા હૈ, જેસે કોઈ  
 કહે ચન્દ્રમા ધી કિર્ણ સે ઝરે કે બડી તપ્તી માલુમ હુઈ, ઓર  
 મરુસ્થલ ધી નદી મેં મૈને જલપાન ઓર સ્નાન કિયા તબ ઝરે  
 કે શીતલતા હુઈ, એસે હી તૂં કહતા હૈ કિ મૈને સામાસ વૃત્તિ  
 સે સુખાદિક આત્મા કે ધર્મ જાને હૈ, સો આત્મા કે ધર્મ સુખાદિક  
 કિસ વૃત્તિ સે જાને હૈ, સાત્વિકી વૃત્તિ કરકે જાને હૈ. અથવા  
 રાજસી વૃત્તિ કરકે જાને હૈ, અથવા તામસી વૃત્તિ કરકે જાને હૈ.  
 ઇસમેં બી વૃત્તિ કે ભેદ હૈ, એક સાત્વિક સાત્વિકી હોતી હૈ દુસરી  
 સાત્વિક રાજસી હૈ ઓર તીસરી સાત્વિક તામસી હોતી હૈ, જેસે  
 સાત્વિક વૃત્તિ કે ત્રીન ભેદ હૈ તેસેહી રાજસ ઓર તામસ કે બી  
 જાન લેના, પર ઉનસે કિસી કા જ્ઞાન કહના સંભવ નહીં, સાત્વિક  
 વૃત્તિ સે હી સંભવ હૈ. ફિર યહ પૂછતે હૈ જો પૂર્વ ત્રીન ભેદ કહે  
 હૈ, ઉનમેં સે સાત્વિક સાત્વિકી સે સુખાદિક આત્મા કે ધર્મ જાને  
 જાતે હૈ, અથવા સાત્વિક રાજસ સે જાને હૈ અથવા સાત્વિક  
 તામસ સે જાતે હૈ. યહ બાત તુમ હુમારે કે બતાઓ. યાદ તુમ  
 કહો કિ સાત્વિક સાત્વિકી વૃત્તિ સે સુખાદિક આત્મા કે ધર્મ હુમને  
 જાને હૈ, તો યહ કહના તુમહારા બનતા નહીં કયોંકિ જાગ્રત  
 અવસ્થા મેં કોઈ કથા પ્રસંગ સુનકે જો ચિત્ત કા એકાગ્ર હોજના  
 હૈ અથવા કિસી ધ્યાન કરકે જો મન એકાકાર હોકે ધ્યેય વસ્તુ  
 મેં વૃત્તિ કે પ્રવાહ ધી સમાપ્તી હોતી હૈ, ઉસી વૃત્તિ કે સાત્વિક  
 સાત્વિકી કહતે હૈ, ઓર ઈસી પ્રકાર જાગ્રત અવસ્થા મેં સ્વર્ગ  
 કે ભોગોં ધી ઈચ્છા કરકે યજ્ઞાદિક કર્મ કા કરના સાત્વિક રાજસ  
 વૃત્તિ કા કાર્ય હૈ, ઓર જાગ્રત અવસ્થા મેં આલસ્ય નિદ્રા કે  
 વસ હી કે કરને યોગ્ય કાર્ય કે નહીં કરના હી સાત્વિક તામસ  
 વૃત્તિ હૈ, એસે હી રાજસ ઓર તામસ કે બી જાન લેના, વાસ્તવ  
 મેં રાજસ તામસ વૃત્તિ સે તો કોઈ બી જ્ઞાન યથાવત્ બનતા  
 નહીં, કિન્તુ સાત્વિક વૃત્તિ સે હી બનતા એસા કહના પડેગા,  
 ઓર હુમ યહ બી જાનતે હૈ કિ ભગવત્ વચન કા પ્રમાણ બી



तुम देखो, कि "सत्त्वात्संनयते ज्ञानम् रजसो लोभः अयम्" इस प्रकार से सुभाषित आत्मा के धर्म सिद्ध करके सात्विक वृत्ति द्वारा सुभाषित आत्मा के धर्म हैं, ऐसा तुम कहो तो हम पूछते हैं कि जिस सात्विकी वृत्ति करके सुभाषित आत्मा के धर्म होने हैं, सो वह शक्ति वृत्ति है अथवा लक्षणा वृत्ति है, जो तूँ ऐसा कहें कि शक्ति वृत्ति करके सुभाषित हमने जाने हैं, सो भी तेरा कहना अनता नहीं, क्योंकि जिस पद में जिस अर्थ की शक्ति है, सो अर्थ तिस पद का शक्य अर्थ होता है, और तिस के वाच्य अर्थ भी कहते हैं, सो तूँ वाच्य वाचक का भेद मानता है, अथवा अभेद मानता है, अथवा भेदाभेद मानता है, यदि तूँ कहें कि वाच्य और वाचक का भेद मानता हूँ तो वास्तव से भेद मानता है अथवा कल्पित भेद मानता है, जो तुं ऐसे कहें कि वास्तव से भेद मानता हूँ, तो यह तेरा कहना अपने नहीं, क्योंकि वाच्य और वाचक का नाम मात्र भेद होता है, जैसे घट पद वाचक है और कलश अर्थ तिसका वाच्य है, सो घट पद और तिसका वाच्य अर्थ कलश दोनों एकही वस्तु के नाम हैं, इस करके वाच्य और वाचक का वास्तव में भेद होने नहीं और दूसरा कल्पित भेद कहें, सो वह कल्पना मात्र ही है, क्योंकि कल्पित वस्तु अधिष्ठान से लिन्न होती नहीं, इस से तो हमारा ही मत सिद्ध होता है, दूसरा अभेद पक्ष कहें, सो भी अनता नहीं, क्योंकि वाच्य वाचक का अभेद हो तो जैसे अग्नि पद का अंगार वाच्य है, जो अग्नि से अत्यन्त अलिन्न होवे तो अग्नि पद उच्चारण करने से मुष्ण का दाह होना चाहिये, ऐसेही उदक पद के उच्चारण करने से मुष्ण शीतल होना चाहिये, सो होता नहीं, इससे वाच्य और वाचक का अभेद कहना संभव नहीं, और जो तीसरा भेदाभेद पक्ष कहें, सो अत्यन्तही विरुद्ध है, क्योंकि जिस वस्तु का अपर वस्तु से भेद होता है, तिस वस्तु का दूसरी वस्तु से अभेद होता नहीं, जैसे ओक आम्र के वृक्ष में अपना अभेद होता है, भेद होता नहीं, और जै आम्र के वृक्ष का और करजूवे के वृक्ष का भेद होता है तिसका अभेद होता नहीं, क्योंकि भेद और अभेद



આપસ મેં વિરોધી હોનેસે તિનકા સમાવેશ હોતા નહીં, ઈસ કરકે તીસરા બેદાબેદ પક્ષબી તેરા બનતા નહીં, ઇસી સે જો તૂં શક્તિ વૃત્તિ માન કે આત્મા કે સુખાદિક ધર્મોં કા વિષય કરના કહે, સો તેરા કહના બનતા નહીં, ક્યોંકિ આત્મા કિસી પદ કા શક્ય અર્થ હો તો શક્તિ વૃત્તિ સે આત્મા કા જ્ઞાન હોવે. જ્ય આત્મા કા જ્ઞાન હોતા હૈ. તહી સુખારિકોં કા જ્ઞાન ભી સંભવ હૈ ક્યોંકિ ધર્મોં કે જ્ઞાન સે અન્નરહી ધર્મોં કા જ્ઞાન હોતા હૈ. યહ બાત સખ કે અનુભવ સિદ્ધ હૈ, જેસે પક્ષી કી જો ગમન રૂપી ક્રિયા હૈ સો પક્ષી કા ધર્મ હૈ સો પક્ષી મેં રહતા હૈ, જ્ય તક પક્ષ કો નહીં જાને તખતક ઉસકે ક્રિયા રૂપી ધર્મ કો ભી નહીં જાનેગે તૈસેહી અનુભવ ગમ્ય આત્મા કા કિસી વૃત્તિ કરકે જ્ઞાન સંભવ નહીં, તો ફિર સુખાદિક આત્મા કે ધર્મ હૈં યહ કહના તેરા કૈસે બનેગા કદાપિ ભી નહીં બનેગા ક્યોંકિ અનાત્મ વસ્તુ યદિ આત્મા મેં જુદિહો તખ તો તેરા કહના બને, ક્યોંકિ આત્મા તો સર્વ વ્યાપક હૈ ઇસસે જિતની અનાત્મ વસ્તુ હૈ, સો આત્મા સે ભિન્ન હૈ નહીં, ઔર મુઝે ભિન્ન ભાસતી હૈં યહ તેરે કો આત્મા કે અજ્ઞાન કરકે પ્રતિત હોતી હૈ, જેસે જેવરી કે અજ્ઞાન કરકે નાના પ્રકારકે સર્પ દંડાદિક પદાર્થ ભાસતે હૈં જ્ય જેવરી સમ્યકજ્ઞાન હોતા હૈ, તખ જેવરી હી પ્રતિત હોતી હૈ, તૈસે હી તિસ આત્મા કે અજ્ઞાન કરકે નાના પ્રકારકે સુખાદિક ધર્મ આત્મા કે ભાસતે ; સો વહ આત્મા કે જ્ઞાન સે હી દૂર હોંગે. દૂર એસા નહીં જાનના કિ કોઈ દો કોસ થસે જાવેંગે જેસે સર્પ દંડાદિક કહીં સે આયે નહીં, ઔર કહીં જાતે ભી દીખે નહીં, કેવલ રજજૂ કે અજ્ઞાન કે કારણ ભાસતે થે રજજૂ કા જ્ઞાન હોનેસે રજજૂ સ્વરૂપહી હો જાતે હૈં તૈસે આત્મા કે અજ્ઞાન કરકે આત્મા મેં સુખાદિક ધર્મ ભાસતે હૈં, સો કેવલ આત્મા કે જ્ઞાન સે હી આત્મ સ્વરૂપ ભાસતે હૈં ઔર જો તૂં યહ કહે, કિ શક્તિ વૃત્તિ કરકે આત્મા કે જ્ઞાન કે અસંભવ હોને સે સુખાદિક આત્મા કે ધર્મ નહીં વિષય હોવે તો લક્ષણ વૃત્તિ સે આત્મા કા જ્ઞાન હોને સે સુખાદિક ધર્મોં કા જ્ઞાન હોવેગા, સો ભી કહના બને નહીં ક્યોંકિ લક્ષણ વૃત્તિ દો પ્રકાર કી હોતી હૈ, એક કેવલ લક્ષણ ઔર

સરી લક્ષિત લક્ષણા છે. કેવલ લક્ષણા કે ત્રીન ભેદ છે જહતી, અજહતી ઓર ભાગત્યાગ. વાચ્ય અર્થ કા જે સંબંધી હો સો લક્ષણા કા સ્વરૂપ કહલાતા હૈ ઓર વાચ્ય અર્થ સારે કા ત્યાગ કરકે ઉસકે સંબંધી કી જે પ્રતીતિ હોતી હૈ ઉસે જહતી કહને હૈ. ઓર વાચ્ય અર્થ સારે અલણ હોકે અધિક ઉસકે સંબંધી કા બી અલણ હોવે, ઉસે અજહતી લક્ષણા કહને હૈ. જહાં વાચ્ય અર્થ મેં સે એક ભાગ કા ત્યાગ હો ઓર એક ભાગ કા અલણ હો વહાં ભાગત્યાગ લક્ષણા હોતી હૈ. કેવલ લક્ષણા કે ત્રીન ભેદ હૈં શક્ય કે સાથ સાક્ષાત્ જિસ પદાર્થ કા સંબંધ હૈ ઉસીકો કેવલ લક્ષણા કહતે હૈ: જહાં શક્ય કે સાથ કિસી પદાર્થ કા પરપરા સંબંધ હો તહાં લક્ષિત લક્ષણા હોતી હૈ. પદ્ધતિ અપને અર્થ સે જે સંબંધ હો હૈ ઉસી કા નામ વૃત્તિ હૈ. આત્મા અસંગ હોને સે ઉસ કે સાથ કિસી બી પદાર્થ કા સંબંધ નહીં બનતા. યદિ તુમ કહો કિ નૈયાયકોં ને આત્મા સે મનકા સંયોગ સંબંધ માન કે આત્મા મેં જ્ઞાન ગુણ ઉત્પન્ન હોના કહા હૈ. ઈસ પ્રકાર કે કથન સે આત્મા જ્ઞાન ગુણ ધર્મ વાલા હી પ્રતીત હોતા હૈ એસા કહના બી તુમહારા ફિજુલ હૈ કયોં કિ નૈયાયકોં ને જે સંયોગ સંબંધ માના હૈ સો સાવયવ પદાર્થો કાહી માના હૈ ઓર આત્મા કો તો શ્રુતિ ને નિરવયવ કહા હૈ. નિરવયવ કા સંયોગ કેસે હોવે? યદિ સંવાય સંબંધ કહૈ તો બી નહીં બનતા કયોં કિ સંવાય ગુણ ઓર ગુણી કા હોતા હૈ. આત્મા કો તો વેદને નિર્ગુણ કહા હૈ. એસે નિર્ગુણ નિરવયવ આત્મા કા કિસી પદાર્થ સે કોઈ બી સંયોગ કેસે બનેગા કદાપિ નહીં બનેગા. કિસી સંબંધ કે નહીં બનને સે લક્ષણા વૃત્તિ સે આત્મા કો તુમ કેસે જનોગે ઓર જપ આત્મા કો નહીં જના તો કિય ઉસકે સુખાદિક ધર્મ કેસે જને. યદિ તુમ યહ કહો કિ તુમને બી યહ બાત પૂર્વ કહી થી કિ જિતના અંતર બાહર જે સુખ હોતા હૈ સો સખ વૃત્તિ સે હી હોતા હૈ સાક્ષી આત્મા કે પ્રકાશ સે પ્રકાશિત હુર્મ અંતરજી કી સુખાકાર વા હુઃખાકાર હોતી હૈ એસેહી હમને બી સાભાસ વૃત્તિ સે સુખાકાર આત્મા કે ધર્મ જને હૈ, તો બી તેને હમારે કહને કા અભિપ્રાય



समझा नहीं, क्योंकि हमारे कहने का यह मतलब कि अंतर  
आहरे जे पदार्थों में सुख प्रतीत होना है, सो सभी आभास  
वृत्ति से होता है. आत्मा और आत्मा के धर्म सुखादिक किसी  
भी आभास वृत्ति के विषय हमने कहे नहीं. यदि यह कहा जाय  
कि अंतर आत्मा के बिना और कौन पदार्थ है, तो मुन जैसे  
जगत अवस्था में अंतरण की वृत्ति नेत्रादिक द्वारा निकल के  
आहरे देश में जाकर व्यवहारिक पदार्थों को विषय करती है सो  
वृत्ति का विषय करना यही है कि पदार्थ व छिन्न चेतन के आश्रित  
जे अंतरण है उसे दूर करती है, यही वृत्ति की विषयता है,  
और कोई वृत्ति से पदार्थ का ज्ञान नहीं होता है परंतु वृत्ति  
में जे चेतन का आभास है उसी का विद्याभास भी कहते हैं.  
जैसे जगतके पदार्थों के आभास और वृत्ति से ज्ञान होता है  
तेसे ही स्वप्नों के पदार्थों का भी आभास वृत्ति से ही ज्ञान  
होता है सो अंतर कहा जाता है, और साक्षी भास कहा जाता है,  
क्योंकि जिस पदार्थ को अविद्याकी वृत्ति द्वारा साक्षी प्रकाशे सो  
पदार्थ साक्षी भास्य कहा जाता है. इस से स्वप्नों के पदार्थों को  
साक्षिभास्य कहते हैं तात्पर्य यह है कि अनात्म पदार्थ ही के  
प्रकाश करने में वृत्ति और आभास की सक्षमता है, आत्म  
पदार्थ के प्रकाश करने का समर्थ किसी भी वृत्ति और आभास  
का है नहीं, इसी से आत्मा को वेद ने स्वयं कहा है. और यदि  
तुं यह कहें कि वृत्ति और आभास की पदार्थों के ही ज्ञान में  
सक्षमता है तो सुषुप्ती अवस्था में कोई भी पदार्थ है नहीं,  
और सुख का ज्ञान होता है तो वही आत्मा होगा ज्ञान सो यह  
कहना भी तेरा ऐसा ही है जैसे :—

( १ ) वृद्ध आलस न्याय

किसी वृद्ध पुरुष के पास उसका एक आलस जेल रहा था और  
वही एक जलका लरा घट रखा हुआ था. वह आलस घटके  
पास जाके अपने मुख के प्रतिबिम्ब को देखकर लयलीत हुआ  
और अपने पितामह के पास आकर कहने लगा यह हमारे को  
उराता है. तब भुठ ने कहा तेरे को कौन उराता है आलस आला

कि धिस घउ मे' है जुड़ा ठिके घट के पास आकर देभने लगा तो सड़े दाढ़ी सहित उसका प्रतिबिम्ब भासने लगा, तब जुड़ा कहने लगा अरे येईमान बोली दाढ़ी तेरी हो गई, अतएव अवस्था को उराता है, तेरे को लज्जा नहीं आती, यह जुड़े का दृष्टांत है.

दाष्टांत यह है

जैसे उस जुड़े ने नहीं जाना कि धिस घट मे' मेरा ही प्रतिबिम्ब है, कोई दूसरा लय देनेवाला समझ के उसको धिक्कार देने लगा तैसे ही तेने जो कछा कि सुषुप्ति अवस्था मे' कोई भी पदार्थ नहीं है और सुषुप्ति को जान होता है सो आत्मसुषुप्ति होगा तू विचार करके देख सुषुप्ति अवस्था मे' कारण शरीर रहता है, उस कारण शरीर को ही अज्ञान कहते हैं, और प्राज्ञनामा एव रहता है सो अज्ञान प्रतीति से सुषुप्ति के अज्ञान आवृत आनन्द को लागता है, सो भी वृत्ति द्वारा ही आनन्द का जान होता है, और जो धृतिर की सर्वज्ञता आदि का ज्ञान सो भी माया की वृत्ति करके होता है. वृत्ति से जो ज्ञान होता है सो ज्ञान अनात्म पदार्थों का ही है. तू येतन आत्मा स्वयं प्रकाश होने से किसी भी प्रतीति का विषय नहीं है, और सुषुप्ति का आनन्द तो अज्ञान की वृत्ति से होता है. तू शुद्धरूप आत्मा अज्ञान मे' शामिल काहे को होता है. तू सुषुप्ति को अपने से जुड़ा समझ के सुषुप्ति प्राप्ति की इच्छा करता है. यही इच्छा तेरे को जुड़ाई की देनेवाली है वास्तव मे' देखा जाय तो किसी रीति से सुषुप्ति तेरे से न्यारा नहीं क्योंकि अस्ति भांति प्रिय, नाम और रूप यह पांच अंश सब पदार्थों मे' होते हैं, पर का अस्तित्व यह अस्ति पर का जान होना यह भांति, पर शीत उष्ण को दूर करता है यह प्रिय, पर ये दो अक्षर नाम, और विस्तृत आधार, शुक्ल रूप, किसी दैवयोग से उस वस्त्र मे' अग्नि लग जाये तब परनाम और शुक्लरूप दोनों बदल जाते हैं रात्रि नाम और काला उसका रूप हो जाता है और अस्ति, भांति, प्रिय यह जो तीन अंश हैं सो वहां भी जाने रहते हैं. रात्रि



अस्ति, जासती है यह भांति, और अस्तन भोजन के काम में आते हैं इससे प्रिय है, ये तीनों अंश आत्मा के हैं, नाम और रूप का माया जने जते हैं क्योंकि व्यभिचारी होने से ये दोनों अंश कद्विपत हैं, तैसे ही अस्ति, भांति, प्रिय, आत्मा नाम और उसके अंश ये भी नाम होने से सख कद्विपत हैं, ये तेरे जताने के वास्ते कहे हैं, क्योंकि कुछ नाम रखने से ही आत्मी का व्यापार होता है और नाम से ही नामी जना जाता है, इस से बार-बार आत्मा का कथन किया है, इसमें शिष्य शंका करता है, हे भगवन नाम से नामी की प्राप्ति होती है और बार-बार जे आत्मा का कथन किया है सो भी आत्मा के समझने के वास्ते कथन किया है क्योंकि सूक्ष्म होने से अस्ति भांति जे हो अंश आत्मा के कहे सो तो ठीक है, परंतु प्रियपना, सख पदार्थों में कैसे घटेगा, क्योंकि शेर सर्पादिक किसी को प्यारे नहीं लगते हैं, अपने शत्रु में प्रियपना कैसे घटेगा, आप इस शंका की निवृत्ति कीजिये, गुड़ कपते हैं कि हे शिष्य ? सर्व वस्तु सर्व को प्रिय नहीं होती है यह वार्ता आप की मानी, परंतु एक अंश से प्रियपना सर्व वस्तुओं में घटता है जैसे सर्पनी को सर्प प्यारा लगता है, शेरनी को शेर प्यारा लगता है और अग्नी को कीट को अग्नी प्यारी लगती है तैसे ही अपने शत्रु के दुष्म में प्रियता होती है सो सर्व के अनुभव सिद्ध है परंपरा से सर्व को अपना आत्मा प्रिय है, जितना चेतन शरीर के अंदर आया है उतने को आत्मा कहते हैं जैसे जितना आकाश घर में आया है उतने आकाश को घटाकाश बोलते हैं, परंतु वह व्यापक आकाश से प्रथक नहीं हो गया है, तैसे ही जे व्यापक चेतन है शरीर के अंतर और बाहर व्याप रहता है, इससे विषय अविच्छिन्न और निरविच्छिन्न जे कुछ आनंद का भान होता है सो सर्व तेरा ही आनंद है, तेरे से जुदा आनंद कहीं भी है नहीं, फिर तेरे को सुख की धृष्टा कैसे संभवैगी, तू सदा सुखरूप ही है, और सर्व ठीर में जे आनंद प्रतीत होता है सो भी तेरा ही आनंद है, इसी से तू चेतन स्वरूप है, जे घर पर आदिक चेतन नहीं है, सो आन-

નહ સ્વરૂપ લી નહીં હૈ. જો આનંદ હૈ સો તેરા હી હૈ. તરે  
હી જો ચેતના હૈ સો લી તુઝ ચેતન હી હી હૈ, તેરે પ્રકાશ કો  
પાકે સખ કુછ પ્રકાશમાન હો રહ્યા હૈ. ગુરુ કે યે વચન સુનકર  
શિષ્ય બોલા હૈ બગવાન ? આપ મેરે પ્રકાશ સે સર્વ પ્રકાશમાન  
કેસે કહતે હો. ક્યોંકિ દિન મં તો સૂર્ય બગવાન પ્રકાશ કરતા  
હૈ ઓર જખ સૂર્ય નહીં હોતા હૈ તખ રાત્રિ મં ચન્દ્રમા પ્રકાશ  
કરતા હૈ ઓર ચન્દ્રમા નહીં હોતા હૈ તખ તારાગણ કા પ્રકાશ  
હોતા હૈ, જખ બાદલોં સે તારાગણ આગ્રહિત હો જતે હૈ,  
તખ આગ્ન સે પ્રકાશ હોતા હૈ, ઓર જખ અગ્નિ લી નહીં  
હોતો હૈ તખ બિજલી સે પ્રકાશ હોતા હૈ ઓર જખ બિજલી  
લી નહીં હોતી હૈ તખ વાકચ ઈન્દ્રી કા પ્રકાશ હોતા હૈ ઇસ  
રીતિ સે ઇન પદ જ્યોતિયોં સે ઓર ઇન્દ્રિયોં સે ઓર ઇન્દ્રિયોં  
કે દેવતાઓ સે અર્થાત્ ઇસ ત્રિપુટી સે સર્વ કા પ્રકાશ દેખને  
મં આતા હૈ. મેરે પ્રકાશ સે સર્વ કા પ્રકાશ આપ કેસે કહતે  
હો ? આપકા યહ કહના તો અસમ્ભવસા માલૂમ હોતા હૈ ।

ગુરુરુવાચ—હૈ શિષ્ય તેરા કહના દુરસ્ત હૈ ક્યોંકિ એસાહી  
માલૂમ હોતા હૈ, પરંતુ જખ તૂં બિચાર દષ્ટિ સે દેખેગા, તખ  
તેરે કો માલૂમ હોજવેગા કિ મુઝ ચેતન આત્મા કા હી પ્રકાશ  
સર્વ ઠોર હૈ, સો બિચાર યહ હૈ કિ જખ સ્વપ્ન અવસ્થા હોતી  
હૈ તખ કોઈ લી જોતિ હૈ નહીં, ઓર સ્વપ્ન કે પદાર્થોં કા પ્રકાશ  
હોતા હૈ ઇસસે જાના જાતા હૈ કિ કોઈ આર હી જોતિ હૈ જો  
ઇન જોતિયોં સે ભિન્ન હૈ. યદિ તૂં એસા કહે કિ જૈસે સ્વપ્ન  
મં પદાર્થ કલ્પિત પ્રતીત હોતે હૈ તેસેહી સૂર્યાદિક જોતિ લી  
કલ્પિત હી હૈ જિન સે સ્વપ્ન કે પદાર્થોં કા પ્રકાશ હોતા હૈ યહ  
કહના તેરા એસા હૈ જૈસે કોઈ કહે કિ મૃગ-વૃષ્ટા કે નીર સે  
ગારા બનાકે મૈને ઘર બનાયા થા, ઓર શુક્તિ કા રૂપા બહુતસા  
મૈને ઇકઠા કિયા ઓર ઉસ ઘરમં રખા થા જિસકો ઢૂંઢકે ચોર  
શોડ કે નિકાલ લેગયા. ઉસ ઘન કો ઢૂંઢને કે લિયે મેં ગયા થા,  
રાસ્તે મં રજજૂ કે સર્પ ને મેરે કો કાઠ ખાયા ઇસસે મેરે કો બઢા  
બારી કષ્ટ હુઆ હૈ જૈસે ઇસ પ્રકાર કે કથન કો સુન કે સર્વ



હોવાં છો હંસી આતી હૈ, તેસે હી હમેં તેરે કહને સે હંસી આતી હૈ, ક્યોંકિ કલ્પિત પદાર્થોં કા કલ્પિત સૂર્યાદિક જોતિયોં સે પ્રકાશ હોતા હૈ યહ કહના તેરા કેવલ હંસી કા હી વિષય હૈ. કલ્પિત પદાર્થ સે કલ્પિત પદાર્થ કા પ્રકાશ કહના બનતા નહીં. ક્યોંકિ ચસ્તુ કલ્પના માત્ર હી હોતી હૈ, ઉસ સે કિસી કા પ્રકાશ હોતા નહીં અતઃ જડપદાર્થોં કા સ્વપ્ન કી કલ્પિત જોતિયોં સે જો પ્રકાશ પ્રતીત હોતા હૈ સો કિસી ચેતન કરકે હી હોતા હૈ. તૂં અપને ચિત્ત મેં વિચાર કરકે દેખ તેરે બિના ઓર કોઈ ભી વહાં હૈ નહીં, સર્વ કો જાનને વાલા ઓર સર્વ કો પ્રકાશને વાલા તૂં ચેતન આત્મા પરિપૂર્ણ સ્વપ્રકાશ હૈ. તેરે સે સખહી પ્રકાશવાન હો રહા હૈ. જગત સ્વપ્ન સુષુપ્તિ આર તુરિયા તથા તુરિયાતીત ઇન સર્વ અવસ્થાઓ કા પ્રકાશ તેરે સે હોતા હૈ. યે સખ આપસ મેં વ્યાભિચારી હૈં તૂં ઇન સખ મેં અનુગત હૈ. ઇસ સે તેરી ચેતના કો પાકે યહ ભૂત ભૌતિક જિતના અનાત્મ પ્રપંચ હૈ સો સખ ચેતન પ્રતીત હો રહા હૈ. વાસ્તવ મેં તૂં હી ચેતન તે બિન્ન ઓર કોઈ ભી ચેતન નહીં. તૂંહી સર્વ જોતિયોંકા જોતિ હૈ. ભગવાન ને ભી કહા હૈ “જોતિયામપિ તદ્ જોતિ” ઓર વેદ ને ભી કહા હૈ “યસ્ય હૃદય અંતર આત્માજ્યોતિભર્વતી” યહી કારણ હૈ કિ આનંદ રૂપ હોને સે ચેતનરૂપ હૈ, ઓર ચેતન-રૂપ હોને સે સત્યરૂપ ભી આત્મા હી હૈ. સત્ ચિત્ત આનંદ રૂપ આત્મા તૂંહી બ્રહ્મ સ્વરૂપ હૈ. તેરા કિંચિત્ માત્ર ભી બ્રહ્મ સે ભેદ નહીં હૈ. ઓર જો ભેદ કહતે હૈં ઉનકે વાસ્તે એસા કહા હૈ-

દોહા. અસ્તિ-ભાંતિ-પ્રિય આત્મા, બ્રહ્મ સન્નિવદાનંદ ।

તાતે એક સરૂપ હૈ, ભેદ કહેં મતિમંદ ॥

ઇસી સે કહા હૈ “ભેદાભેદ શબ્દ ગણનો” અર્થાત્ તુઝ ચેતન આત્મા મેં ભેદ ઓર અભેદ કા લેશ ભી નહીં હૈ, ઓર જો ભેદ ઓર અભેદ યે દો પ્રકાર કે વચન શાસ્ત્રકારોં ને કહે ઇસસે તાત્પર્ય યહી હૈ કિ કહને મેં ખાત આતી હૈ સો બાણી કા વિષય હોને સે અનાત્મ હી હૈ ક્યોંકિ બાણી સે અનાત્મ પદાર્થ કા હી

कथन होता है, तू मैं चेतन आत्मा किसी भाषी और मन का विषय नहीं है, और किसी जगह इसे मन और भाषी का विषय भी कहा है सो दिजाते हैं कि जिस काल में गुरु द्वारा महावाक्यों का जो उपदेश अवश्य होता है सो भाषी से ही सुना जाता है, उस अवश्य से अनंतर मनन का कथन किया है, सो मन से ही मनन होता है, मनन किये लुये अर्थ के परिपक्व हो जाने को निदिध्यासन कहते हैं, और निदिध्यासन की परिपक्व अवस्था को समाधी कहते हैं, इस प्रकार से आत्मा मन और भाषी का विषय भी कहलाता है।

किसी ने मन और भाषी का निषेध भी किया है, दोनों प्रकार के वचनों को सुन के अल्प श्रुत जिज्ञासु को भ्रम उत्पन्न हो जाता है, वह कहीं वेद वचनों को सुनता है, और कहीं अवेद को सुनता है परंतु शास्त्रकारों के जो कथन है सो सारेही अध्यारोप में बनते हैं, और जितने वेद के वचन हैं सो अधिकारी वेद से सारे ही सङ्गल है, जैसे किसी पुरुष को स्वप्न होता है तब उस को वेद और वेद का उपदेश कर्ता आचार्य, और जगत में नाना प्रकार के कर्म, और उनका प्रेरक ईश्वर, और लोगनेवाला ज्य आदि जो कुछ प्रतीत होता है सो सभ ही अविद्या और निद्रा दोष के कारण भासता है, सो सभ मिथ्या है, यथार्थ में एक स्वप्नदृष्टा पुरुष ही सत्य होता है, प्रकार एक तू ही सत्तत्त्व है।

तू भ्रम के भुरहे को क्यों रोता है? विवेक रुपी नेत्र जोल कर देख जैसे यह स्वप्न का प्रपंच बिना लुवे ही सर्व अर्थकार भासता है, तैसे ही यह जगत् का प्रपंच भी तू जन, यदि तू ऐसा कहे कि जगत् प्रपंच में तो पदार्थों के देश, काल, कारण, कार्य, भाव भासते हैं और स्वप्न में सर्व पदार्थ सभ काल भासते हैं, धन दोनोंकी ऐकता कहना बने नहीं, यह कहना तेरा ठीक नहीं है, क्योंकि देश काल आदि जैसे जगत् में भासते हैं वैसे ही स्वप्न में भी भासते हैं, यह सभ अविद्या थी. २



के भाव प्रतीत होता है. जबतक देश काल आदि में और स्वप्न के देश काल आदि में कुछ भी अधिक न्यूनता नहीं है क्योंकि ये दोनों ही आविधा कृत हैं. इसी पर तेरे को

## (२) एक राजपुत्र शोक न्याय

सुनाते हैं. एक राजा रात्री के समय अपनी शय्या पर सोता था. उस समय ऐसा भावम हुआ कि मेरा राज थड़ा लारी है और चार पुत्र सर्व गुणों की जानी और यौवन अवस्था वाले हैं. दैवयोग से राजा के राज में किसी अन्य राजने लड़ाई छेड़ दी जिस में इस राजा के चारों पुत्र मारे गये, तब लड़कियों ने ज्वर दी कि हे राजन ! आपके कुंवर इस लड़ाई में मारे गये, इस प्रकार के वचन सुनके राजा को थड़ा लारी शोक हुआ और हाहाकार शब्द करने लगा. धीमे में राजा की निद्रा भुल गई और नेत्र उघड़ते ही उसे थड़ा विस्मय हुआ और सोचने लगा किसका राज और किसके पुत्र. देखा मैं वृथा ही मोह के प्राप्त हो गया था. उसी समय मंत्रियों ने आके राजा से कहा, हे राजन आपके कुंवर ने तो अपने कर्म लोग की समाप्ती की. इस प्रकार मंत्रियों के वचन सुन के सज्ज को अपने पास बिठा कर कहने लगा हे मंत्रियो तुम सज्ज धैर्य रखो. मैं तुम्हारे से एक गाथा सुनाता हूँ तुम चित्त लगाकर सुनना. वह गाथा इस दुष्कर ससार से वैराग्य के करानेवाली है और इसे सुनके तीन लोक की संपदा भृगतृष्णा के जलवत् भासेगी; और वह शोक मोह को दूर करने वाली तथा आनंद को देने वाली है. वह गाथा इस प्रकार है :—

अली धाडी दर गढ़ले मैं सोता था उस समय मुझे स्वप्न हुआ जिसमें मेरे को इस राज से योगुना राज प्राप्त हुआ और यह भी देखा कि अली चतुरंगिनी सेना और अउ अउ शूरवीर सेनापति और अनन्त प्रकार के कोप भजने आदि विभूतियां हैं और चंद्रमा के समान मृग जिनके ऐसी मनको मोहनेवाली अनन्त रानियां हैं. और चार पुत्र सर्व गुण संपन्न, रूपवान

ઝીર જવાન ઊંચર વાસે જિનકે દેખને સે મેરે કો બહા આનંદ  
 હોતા થા. ઈસ પ્રકાર કી મહાન વિભૂતિ કે સાથ મેરે કો ચિર-  
 કાલ અતીત હો ગયા, ઝીર એસા બી માલુમ હોતા થા કિ મેરે  
 બાપ હાહા સભી રાજ કરને આયે હૈ, ઝીર બાગે હમારે પુત્ર  
 ઝીર પોત્ર બી રાજ કરેગ. હે મંત્રિયો! એક ક્ષણ માત્ર કે સ્વ-  
 પ્ન મેં મેંને બહુત કાલ સ્વાર્થ દેખા. દેવયોગ સે મેરે ઉસ રાજ  
 મેં ઉપદ્રવ હો ગયા ઝીર બહા ભારી સંઘામ હુવા ઉસી યુદ્ધ  
 મેં મેરે બેટ ર શૂરવીર મારે ગયે ઝીર મેરે ચારે પુત્ર બી યુદ્ધ  
 મેં અપની અપની સેના લેકર અઢે ઝીર યુદ્ધ કરને લગે. બહુત  
 બાર અબ કયા કહેં વે ચારે કુંવર મારે ગયે, તબ હલકારેં ને  
 આકે કહા હે પૃથ્વીનાથ ! આપકે કુંવર યુદ્ધ મેં મારે ગયે હૈ.  
 યે વચન સુનકે મેરે કો બહા ભારી શોક હુવા, ઝીર હાહાકાર  
 શબ્દ કરને લગા ઈતને મેં મેરી નિદ્રા ખુલ ગઈ. તબ મેં બેટ  
 વિરમય કો પ્રાપ્ત હુવા ઝીર અપને ચિત્ત મેં વિચાર કર હી  
 રહા થા કિ તુમને આકે મેરે સે કહા કિ તુમહારે પુત્ર ને અપને  
 કર્મ બોગ કી સમાપ્તી કી હૈ. અબ મેં તુમહારે સે યહ બાત  
 પૂછતા હૂં કિ ઉસ રાજ ઝીર ચારે પુત્રોં કો રોડોં, અથવા ઇસ  
 એક પુત્ર કો રોડોં, સો તુમ મેરે કો બતાઓ. મંત્રી કહતે હૈ,  
 હે રાજન યહ તો સ્વપ્ન કી સૃષ્ટિ જીઠી હૈ, ઝીર યહ જાગ્રત કા  
 સમ્યા જગત હૈ. ઉસકા કયા શોચ કરના હૈ શોચ કરને કે યોગ્ય  
 તો યહ જાગ્રત કે બોગ્ય પદાર્થ હોતે હૈ, સ્વપ્ન કે પદાર્થોં કા  
 કોન શોચ કરતા હૈ મંત્રીયોં કી યહ વાર્તા સુનકર રાજ બોલા :—

હે મંત્રિયો, તુમ ઈસ મૂર્ખતા કે મોહલસે મેં આકે કાહે કો  
 ઈસ કો સમ્યા કહતે હો ઝીર ઉસકો ક્રોધ કહતે હો. અરે, મૂર્ખોં  
 યહ મનુષ્ય શરીર તુમકો મિલા હૈ, ઈસમેં કુછ વિચાર કરકે દેખો.  
 યહ તો સભી ક્રોધ હૈ વિચાર યહી હૈ કિ ઈસ જીવન ને અપને  
 ગતે મેં આપ હી કાંચી ડાલ રખી હૈ ક્યોંકિ આત્મા તો સદા  
 અકર્તા હૈ. પરંતુ અનાત્મ અંતઃકરણ સે મિલકે જ્ઞાતિ સે અપને  
 મેં કર્તાપન આરોપણ કરકે કાયક વાચક માનસિક, ત્રીન પ્રકાર કી  
 ક્રિયા કા અભિમાન કરને લગા. ઇસસે કો પ્રકાર કે સૂક્ષ્મ ઝીર



સ્થૂલ કર્મ હોવે. જ્ય જીવ કો સ્થૂલ કર્મ લોગ દેનેકો સન્મુખ હોતે હૈ તથ ઇસે કર્મ કે વસ હોકે જાગત અવસ્થા હોતી હૈ એસી દશા મેં સ્થૂલ પસારા હૈ ઉસકો સત્ય જાનતા હૈ, ઓર જિસ કાલ મેં સૂક્ષ્મ કર્મ લોગ દેને કો સન્મુખ હોતે હૈ ઉસ કાલ મેં જાગત અવસ્થા કા વિસ્મરણ હૈ જાતા હૈ, ઓર કર્મો કે વસ હોકર સ્વપ્ન કી સૂક્ષ્મ સૃષ્ટિ સતરૂપ હૈ, ઓર કર્મો કે વસ હોકર સ્વપ્ન કી સૃષ્ટિ વહાં પર નહીં રહતી ભાસને લગજાતી હૈ ઓર જાગત કી સૃષ્ટિ વહાં પર નહીં રહતી ઇસસે જાના જાતા હૈ કિ યહ ભી જૂઠી હૈ ઓર જ્ય સ્વપ્નસે કર્મો કે આધીન જાગત હોતા હૈ, તથ સ્વપ્ન કે પદાર્થો કા અભાવ હૈ જાતા હૈ, અર્થાત્ જૂઠે માલૂમ હોતે હૈ. હૈ મંત્રિયોં, તુમ અપને ચિત્ત મેં વિચાર કરેકે દેખો ઇનમેં કોન સત્ય હૈ યે તો સભી મૃગતુષ્ણા કે જલવત હૈ ઓર તુમ અપને ચિત્ત મેં વિચાર કરે દેખો અજ્ઞાન રૂપી નિદ્રા મેં જગત રૂપ સ્વપ્ન ભાસતા હૈ, ઇસકે દૂર કરને કે વાસ્તે તુમ જ્ઞાન રૂપ જાગત અવસ્થા પ્રાપ્ત કરો, તથ તુમહારે વિચાર રૂપી નેત્ર ખુલેંગ ઓર તુમકો માલૂમ હોગા કિ યે દાનોંહી મન કે સ્પંદ હૈ યહ મનભી જલકે બર્ફ ટુકડે કે સમાન હૈ જો જ્ઞાન રૂપી સૂર્ય લગવાન કે ઉદય હોને પર પિચલ જાતા હૈ ફિર વહી જલ હોકે બહને લગતા હૈ. એસી દશા મેં વહ જલ ચેતન રૂપ હી ભાસતા હૈ.

ઇસલિયે હૈ મંત્રિયોં ! તુમ જ્ઞાનરૂપી સૂર્ય કી ઉપાસના કરો જિસસે તુમહારી જગત કી સત્તારૂપી ઠંડ દૂર હોગી. સૂર્ય રૂપી આત્મા કા પ્રકાશ હોગા તથ તુમહારી મૂર્ખતા ઇસ પ્રકાર ચલી જાવેગી જૈસે સૂર્ય કે પ્રકાશ સે અંધકાર દૂર હો જાતા હૈ દેખો યહી અંધકાર હૈ સ્થૂલ, સૂક્ષ્મ, કારણ યે તીનોં શરીર ઓર જાગત સ્વપ્ન, સુષુપ્તી યે તીન અવસ્થા ઓર, વિશ્વ, તેજસ પ્રાણ ઇન તીનોં કે અભિમાની તીન જીવ ઓર તીન શરીરોં મેં અન્નમયાદિક પંચકોશ, ઇનમેં ઓર ઇન સભોં કે જો ધર્મ હૈ કરતા, ક્રિયા, કર્મપના, ઓર જો ઇન મેં અહંકાર સો હી અંધકાર હૈ હૈ, ઓર જ્ય તુમ ઇનકો સાક્ષી રૂપ હોકે દેખોગે કિ જિસ કાલ મેં (વિવેક, વૈરાગ્ય, શમ, દમ, શ્રદ્ધા સમાધાન, ઉપરતી, તિતિક્ષા) ઓર શ્રવણ મનન, નિદિધ્યાસન, ઓર તત્ત્વ પદ કા શોધન કરોગે

तब तुम्हारे को परिपूर्ण आत्मा ही भासेगा, और तुम्हारे शोक, भ्राह्म, सभ्य नष्ट होय जावेगा. हे भक्तियों यह साराही स्वप्न है. इसमें किसी का रोना और शोक करना वृथा है, क्योंकि सभ्य जब अपने कर्मों के अनुसार जन्मते हैं और मरते हैं. इस ज्ञान के समझ के यथा योग्य कार्य को करो.

हे शिष्य ! इस प्रकार पूर्व के संस्कारों से राजा को ऐसा बोध उत्पन्न हुआ और सभ्य भक्तियों को उपदेश करके वह शोक भ्राह्म से रहित होके अपने स्वयं में स्थित हुआ वह स्वयं कैसा है ? शांत है, निर्विकार है, चेतन है, परमानन्द है, अजन्मा है, अविनाशी है और सत रूप है, उसी चेतन आत्मा की सत्ता का सभ्य पदार्थों में अनिर्वचनीय सम्बन्ध उत्पन्न होके सारे पदार्थ सत्य जैसे भासते हैं, परन्तु इसमें कोई भी सत्य नहीं है, क्योंकि अविद्या कृत होने से ये तो सारे ही भ्रम रूप हैं, एक तू ही सत्य रूप है, और सर्व देश, काल, वस्तु परिच्छेद रहित है, क्योंकि जिस पदार्थ का देश से अंत होता है उसका काल से भी अंत होता है उस का वस्तु से भी अंत होता है, जैसे घट, पट, आदिक पदार्थ देश काल वस्तु से अंतवाले हैं इसीसे असत होता है, और तू चेतन आत्मा देश कालादि के परिच्छेद से रहित है इसी से तू सत रूप है.

शिष्य प्रश्न करता है— हे भगवन ! आपने मेरे को सत चित आनन्द रूप कैसे कहा, मैं तो जन्मता हूँ और मरता हूँ पुण्य पाप करता हूँ और उनके फल सुख दुःख को भोगता हूँ. और भी अनेक प्रकार के व्यवृत्त धर्म मेरे में भासते हैं. इससे मैं तो असत, जड, दुःखरूप हूँ और ब्रह्म को तो सतचिदानन्दरूप हमने आप जैसे महापुरुषों के मुख से सुना है. मैं सच्चिदानन्द रूप हूँ यह वार्ता मैं किस प्रकार जानूँ. वेद ने भी इस व्यवृत्त को मोहमान और अनीश ही कहा है. इस कारण व्यवृत्त विरुद्ध धर्मवाला होने से सच्चिदानन्द रूप नहीं है जैसे कोई महीन कर्मों के करनेवाले हैं और कोई अशुद्ध आचरण



से रहनेवाले हैं। इन दोनों प्रकार के पुरुषों की अकृता कैसे बनेगी, यदि तुम ऐसा कहो कि लागत्यागलक्षणा से इनकी नदी बनेगी अकृता बनती है, सो तुमने अंगीकार की नदी, इसमें किसी रीति से ली ज्व को सतयिदानंद कहना बनता नही, पूर्व आपने यह ली कहा था कि लागत्यागलक्षणा करके देवेगा तब तेरेको भाखूम होगा, और फिर आगे आपने सर्व वृत्तियों का निषेध कर दिया है, इसमें हम कौनसी आत को अंगीकार करें, हमको तो गमोला भाखूम होता है, आप हमें समझा कर कहो ।

गुरुस्वाय—यद्यपि यह वार्ता हमने पूर्व कही थी परंतु तेरी समझ में गलती है सो सुन, हमने जो लक्षणा वृत्ती कही थी सो कोई आत्मा के प्रकाशने में नहीं कही है, हमारा ध्येन यह नहीं था कि लक्षणा वृत्ती से आत्मा का प्रकाश होना है, ऐसा नहीं समझना क्योंकि वृत्ती का तो पदार्थ के आवरण दूर करने में सामर्थ्य है, पदार्थ के प्रकाश करने में सामर्थ्य नहीं है, तब वह आत्मा के प्रकाश करने में कैसे सामर्थ्य होगी, इसी वास्ते यह आत कही थी कि तेरे को आपाही भाखूम हो, इसी से वृत्ती आदिक जितने जड अनात्म वह स्वयं प्रकाश है, इसी से वृत्ती आदिक जितने जड अनात्म पदार्थ हैं सो सब आत्मा में कल्पित हैं, उन कल्पित वृत्ती आदिकों से आत्मा का प्रकाश कहना बने नहीं, क्योंकि वे जड हैं और जो तुमने कहा था कि ज्व तो जन्म मरण से आदि लेकर ब्रह्म से विरुद्ध धर्मवाला है उसकी ब्रह्म से अकृता बने नहीं, और लागत्यागलक्षणा मानी नहीं इसीसे ली ज्वको सतयिदानंदकृता बने नहीं, यह जो तने कहा है सो सारा ही सिद्धान्त के अज्ञान से कहा है, क्योंकि सिद्धान्त में आत्मा से सिद्ध सर्व अनात्म वस्तु आत्मा में कल्पित होने से रज्जु में सर्प की तरह सर्प कल्पना मात्र है, जैसे रज्जु में जो सर्प प्रतिबिम्बित होता है, सो केवल जेवरी के अज्ञान से प्रतिबिम्बित होता है, उसके दूर करने को कौनसी वृत्ती आवश्यक है? किसी भी लक्षणा वृत्ती की जरूरत नहीं है, केवल रज्जु के ज्ञान

सो सपर्यं अभ निवृत्त हो जाता है तैसे ही वृत्ति और विषयान्न  
कारण अंतःकरण और अज्ञान और नाना प्रकार के विषय और  
उनका प्रकाश जितना कि ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय त्रिपुट्टी समाज है  
सो सारा ही आत्मा के अज्ञान से तेरे को लासता है, सो  
सारा आत्मा के ज्ञान से निवृत्त होगा, और प्रकार से नहीं,  
लिखा भी है—

श्लोक ॥ आन्ता प्रतीत संसारो, विवेकानस्तु कर्मभि ॥  
रञ्ज्य आरौपितो सर्पो घन्टा घोसो निवर्तते ॥

जो वस्तु जिस के अज्ञान से प्रतीत होती है, सो उसी  
के ज्ञान से ही दूर होती है, और किसी भी वृत्ति आदिक की  
अपेक्षा नहीं। यदि तू ऐसा कहे कि अधिष्ठान का जो ज्ञान है  
और कल्पित की निवृत्ति का जो ज्ञान है, सो भी तो किसी वृत्ति  
से ही होता है। यद्यपि तेरा यह कहना दुरुस्त है क्योंकि शास्त्र-  
कारों ने प्रमा, अप्रमा और स्मृती, तीन प्रकार की वृत्ति मानी  
है, परंतु इनका विषय जो ज्ञान है सो सभ्य अनात्म ही कहा  
जाता है, आत्मा को तो किसी ने भी किसी वृत्ति का विषय  
नहीं कहा और तुम अपने अनुभव से देखो शुद्ध आत्मा  
किसी भी लक्षण आदिक वृत्ति का विषय नहीं है क्योंकि वाच्य  
और वाचक भाव और लक्षण भाव कुछ शुद्ध आत्मा में है  
नहीं। इसलिये किसी वृत्ति से आत्मा का ज्ञान मेरे को होगा  
यह धृष्ट्या छोड़कर तू अपने आप विचार के देखेगा तब तेरे  
से जुदा ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय कुछ भी नहीं मिलेगा, इसी आत  
पर तेरे को अंक—

( ३ ) रुपया और राज न्याय

सुनाते हैं, सो यह है कि एक मनुष्य ने किसी का एक  
रुपया चुरा लिया था। जिसका रुपया चुराया उस ने अपने  
मन में विचार किया कि आज के दिन अमुक मनुष्य से मिलान  
हुवा था, उसने हमारा रुपया लिया है। तब वह उसके पास



જાકે કહીને લગા કિ ભાઈ હુમારા રૂપયા તુમને લિયા હૈ સો દેદો  
 ઉસને જવાબ દિયા કિ હુમને તો નહીં લિયા. તખ ઉસને રાજ  
 મેં જાકે એક કચ્ચા સવાલ દે દિયા. ફિર ઔર મુદ્દાધલેહ  
 સે ઇન્સાફ કરનેવાલે ને પૂછા તુમહારા કયા ઝગડા હૈ, મુદ્દા કહીને  
 લગા કિ ઇસને મેરા માલ ચુરાયા હૈ. ઇન્સાફ કરનેવાલે ને કહા  
 તેરા કયા માલ ચુરાયા હૈ, તખ ઉસને કહા એક રૂપયા થા,  
 ઔર દો અઠત્રી, ઔર ચાર ચુઅન્ની ઔર આઠ દુઅન્ની,  
 ઔર સોલહ આને ઔર બત્તીસ અધત્રે, ઔર ચૌસઠ પૈસે.  
 ઇતના માલ ઇસને મેરા ચુરાયા હૈ, જખ ઇન્સાફ કરનેવાલે ને ચોર  
 સે કહા. અરે તૂં ને ઇસકા ઇતના માલ ચુરાયા હૈ તખ વો  
 ચોર મુદ્દા સે કહીને લગા, અરે ભલે માનસ તેરા તો એક હી  
 રૂપયા થા, ઇતના માલ મેં કહાં સે દૂંગા. મુદ્દા ને કહા કિ  
 અચ્છા તૂમ એક હી રૂપયા દેઓ હુમ રાજનાંમા લિખ દેંગે.  
 ઉસને કહા બહુત અચ્છી બાત, યહ અપના રૂપિયા લો. તખ  
 ઉસને લે લિયા ઔર ઇન્સાફવાલેસે કહીને લગા, હુજૂર હુમ રાજ  
 હો ગયે ઇન્સાફકરનેવાલે ને પૂછા તુમ કૈસે રાજ હુએ. તખ  
 મુદ્દા ને કહા એક રૂપીયા લે કર રાજ હો ગયે ઇન્સાફકરને-  
 વાલેને કહા. તુમ બડે બેઈમાન હો, તખ મુદ્દા ને  
 કહા કૈસે, ન્યાય કર્તા ને કહા કિ તુમહારા એકહી રૂપયા થા ફિર  
 ઇતના માલ કાહે કે લિખવાયા થા, ઇસસે તૂમ બેઈમાન હો.  
 તખ વહ કહીને લગા કિ હુજૂર આપ વિચાર કરકે દેઓ, વહ તો  
 સારા હી ઇસીકે અંદર હૈ. મુદ્દા ને ઇન્સાફ કર્તા કે આગે રૂપયે  
 સે આદિ લેકર પૈસે પર્યાંત સારા માલ ઉસ રૂપયે મેં હી બતા  
 દિયા તખ ઇન્સાફ કર્તા ને કહા ઠીક હૈ. યહ તો દૃષ્ટાંત હૈ, દૃષ્ટાંત  
 યહ હૈ કિ તેરા જો મન હૈ યહી રૂપયા હૈ. જિતના યહ જગત  
 ઔર બંધ મોક્ષ સે આદિ લેકર સંસાર ના વિસ્તાર હૈ સો  
 સારા તેરે મન કે હી અંદર હૈ, જૈસે વહ રૂપયા નામ હૈ સો  
 ભી રજત ધાતુ મેં કલ્પના માત્ર હૈ, વૈસે હી જો મન નામ હૈ  
 સો ભી તુઝ ચેતન આતમા મેં મન કી હી કલ્પના હૈ. સખ  
 ચેતન કા હી ચમત્કાર હૈ, જૈસે રૂપયા ઔર ઉસકા વિસ્તાર

સખ રજતરૂપ હૈ વૈસે હી મન ઔર મન કા વિસ્તાર સખ ચેતન રૂપ હૈ.

તૂં બિચાર કરકે દેખ જિતને ઘટ હૈ સો સારે મૃત્તિકા હૈ ભિન્ન નહીં હોતે, સખ મૃત્તિકારૂપ હી હોતે હૈં. જિતને સુવર્ણ કે આભૂષણ હોતે હૈં સો સખ સોના હી હોતે હૈં, ઔર જિતને લોહ કે વિવર્ત, હથિયાર આદિક હોતે હૈં સો લોહ સે ભિન્ન નહીં હોતે હૈં. સખ લોહા હી હોતા હૈ, ઔર ઘટ આભૂષણ, હથિયાર, અદિ, નામ મૃત્તિકા, સુવર્ણ, ઔર લોહ મેં કહીં ભી નહીં મિલતે, કેવલ પુરૂષોં કી કલ્પના માત્ર સે હી હૈં જિસકો સુવર્ણ ભાસતા હૈ ઉસકો આભૂષણ નહીં ભાસતા હૈ, ઔર જિસકો સુવર્ણ ભાસતા હૈ ઉસકો સુવર્ણ નહીં ભાસતા હૈ, પરંતુ જિસ પુરુષ કી સુવર્ણ મેં ભૂષણ બુદ્ધિ હે સો પુરુષ મિથ્યાદરશી કહતા હૈ, ઔર જિસકી દૃષ્ટિ મેં સુવર્ણ હે, સો પુરુષ યથાર્થદરશી કહલાતા હે ઈસી પર તેરેકો એક—

(૪) બાબા, ઠાકુર, સરાફ, ન્યાય

સુનાતે હૈં. ઈસકો જખ તૂં ચિત્ત લગા કે સુનેગા તખ તેરે કો સુવર્ણ સ્થાની એક આત્માહી ભાસેગા, ઔર ભૂષણ સ્થાની નાના ભાવ સખ દૂર હો જાવેંગે. સો અખ કહતે હૈં:—

એક બાબાને જવાન અવસ્થા મેં દેશ દેશાંતરોં મેં ઘૂમ કે બહુતસા રૂપયા ઇકઠા ક્રિયા ઔર ઠાકુર પૂજા ભી રખતા થા. જવાન અવસ્થા મેં ઉસ રૂપૈયે ઔર ઠાકુરજી કા કુછ બોઝા માલુમ નહીં હોતા થા. વહુ ઉન્હેં ઉઠા કર ઘૂમા કરતા થા. પરંતુ ફિર કાલ પાકે જખ વૃદ્ધ અવસ્થા આઈ તખ વહુ બોઝા તોકને લાયક નહીં રહ્યા. બાબા ને અપને મન મેં વિચાર ક્રિયા કિ બોઝે કો હલકા કરના ચાહિયે, તખ સખ રૂપૈયોં કા સોના ખરીદ કે સોને કે ઠાકુરજી બનવા લિયે ઔર સોને હી કા સિંહાસન બનવાયા ઔર જો પહિલે પથર કે ઠાકુરજી થે સો ગંગા મેં પ્રવેશ કરદિયે ઔર વહુ એક સ્થાન મેં રહુને લગા, ઔર એક ચેલા ભી સેવા



के बारते सूँठ लिया. जन्म इस प्रकार करके कर्मों का अन्त हुआ  
तब शरीर शांत हो गया. फिर येने ने अपने मन में विचार  
किया कि गुरु महाराज का अंजारा करना चाँहिये, नहीं तो  
हमारे लेश के लोभों में निराकर होगा. इस प्रकार सोचकर वह  
अकुरल को और सिंहासन को सराई के यहाँ लेज के कढ़ने लगा  
कि लाई. इस अकुरल को और सिंहासन को गेयता हुई. तब उन  
ज्ञानों को सराई ने काँटे पर रण के कड़ा कि सौ रूपये के तो  
अकुरल है और बार सो का सिंहासन है. येने ने कहा अरे,  
तू क्या बकता है. अकुरल तो सौ रूपये के है और सिंहासन  
बार सौ का है. तेरी बकल को क्या कोष लोगका है, कहीं ऐसा  
ली होता है! सराई ने कहा कि महाराज मैं तो सोने का मोल  
करता हूँ. अकुरल और सिंहासन तो तुम्हारी ही दृष्टि में है.  
मैं तो सुवर्ण ही देखता हूँ. मेरे को तो कहीं ली धंसमें अकुर  
और सिंहासन मालुम नहीं होता है. दृष्टांत यह है कि जन्म  
तू अपने अंदर से आकारदृष्टि को मिथ्या जन के दूर करेगा  
तब तेरे को सत्यित आनंद रूप एक आत्मा ही परिपूर्ण  
लासेगा, जैसे उस सराई को एक सुवर्ण ही लासता था. इसी  
का नाम दृष्टि सृष्टि. आह कहा है, जिसका और ली विवेचन  
करने में आता है. आलमीक ऋषिने वशिष्ठ नाम महा रामायण  
में यही मुख्य सिद्धान्त रखा है.

होहा—दृष्टि सृष्टि आह का, सुन लीनै शिष सेह ।

द्वैत विलय होजय है, दूर होय सय जेह ॥

दृष्टि सृष्टि आह के तीन सेह है सो तू जन्म अकाश होकर  
सुनेगा तब तेरा द्वैत रूप दुष विलय हो जवेगा अर्थात् जैसे  
अग्नि से धूम निकलता हुआ मालुम होता है परंतु वह आकाश  
में लीन हो जाता है तब जना नहीं जाता कि कहाँ गया. तैसे  
ही जन्म तू इस उत्तम सिद्धान्त को धारण करेगा तब तेरा धुँवा  
रूपी द्वैत आकाश रूप आत्मा में लय हो जवेगा, फिर तेरे को  
सर्वत्र एक आत्मा ही लासेगा, जैसे उल्लु को अंधेराही लासता

હૈ. દષ્ટિરેવસૃષ્ટિ દષ્ટિ સે તાત્પર્ય કહિયે નેત્ર કી વૃત્તિ કા હૈ, જખ તક નેત્ર કા વિષય પદાર્થ હૈ તખ તક હી પદાર્થ હૈ. જખ નેત્ર કી વૃત્તિ કા વિષય નહીં હૈ, તખ પદાર્થ ભી નહીં હૈ—યહ મત કનિષ્ઠ હૈ, કયોંકિ જખ તક નેત્ર કા વિષય પદાર્થ હૈ તખ તક દ્વૈત હૈ. દૂસરા મત જો સમજા જાતા હૈ ઇસ પ્રકાર હૈ, દષ્ટિ રેવ સૃષ્ટિ સે યહાં તાત્પર્ય દષ્ટિ કહિયે અંતઃકરણ કી વૃત્તિ સે હૈ. જખ તક અંતઃકરણ કી વૃત્તિ કા વિષય પદાર્થ હૈ, જખતક પદાર્થ કી સાક્ષાત સત્તા રહતી હૈ. ઇસ મેં ભી દ્વૈત બના રહતા હૈ. ઇસી સે યહ મત મધ્યમ કહલાતા હૈ. તીસરા મત જો ઉત્તમ કહા જાતા હૈ સો દિખાતે હૈ, દષ્ટિ રેવ સૃષ્ટિ અર્થાત દષ્ટિ કહિયે જો ચેતન આત્મા હૈ સો હી સૃષ્ટિરૂપ હોકે ભાસ રહા હૈ. ઇસ પ્રકાર સમજ કે જખ તૂં ઇસ ઉત્તમ દષ્ટિ કો ધારણ કરેગા તખ તેરા દ્વૈત ભાવ નષ્ટ હો જાવેગા. ઓર એક અદ્વૈત હીં તેરે કો ભાસેગા. પરંતુ અદ્વૈત ભી ફિર તેરે કો અપને સ્વરૂપમેં કલ્પિત હી પ્રતીત હોગા. તખ તૂં આપહી જાન લેગા કિ સુખાદિક આત્મા કે સ્વરૂપ હી હૈ; કયોંકિ આત્મા મેં અનાત્મ વસ્તુ કલ્પિત હોને સે વહ આત્મા કા સ્વરૂપ હી હૈ, વાસ્તવ મેં મેં ચેતન આત્મા સદાહી સુખ રૂપ હું ઓર જો મેરે કો સુખ પ્રાપ્તિ કી ઈચ્છા હુઈ થી, સો તો કેવલ જ્ઞાંતિ કરકે હુઈ થી.

હે શિષ્ય, તૂં ઇસ ઉત્તમ સિદ્ધાંત કો ધારણ કર, તૂં તો સદા શુદ્ધ સ્વરૂપ સર્વ ગુણ ઓર ધર્મો મેં રહિત હૈ, ઇસ પ્રકારસે ગુરૂને સમજાકર કહા તખ શિષ્ય સવિનય કહતા હૈ, હે ભગવન! શુદ્ધ આત્મા મેં કોઈ ધર્મ નહીં ભી હો, પરંતુ વિશિષ્ટ આત્મા મેં તો સુખાદિક ધર્મ હોંગે, કયોંકિ અહં સુખી, અહં દુખી, એસી પ્રતીતિ કિસકો હોતી હૈ સો આપ હમકો બતાઈયે ઓર જો આપ એસા કહો કિ અંતઃકરણ મેં હોતી હૈ તો યહ કહના બને નહીં કયોંકિ અંતઃકરણ કો જડ ભી કહા હૈ, પરંતુ જડ પદાર્થ મેં સુખ દુખ કી પ્રતીતિ કહના બને નહીં કયોંકિ જડ પદાર્થ મેં જો સુખ દુખ કા ભાન હો તો ઘટાદિક મેં ભી હોના ચાહિયે, સો હોતા નહીં ઇસી સે જાના જાતા હૈ કિ ચે ચેતન કે હી ધર્મ હોંગે



यदि आप साक्षी आत्मा में इस प्रकार धर्म होता कहे तो यह उचित नहीं होगा और न विशिष्ट में कहना ठीक होगा, क्योंकि जो धर्म अंतःकरण में नहीं है और न साक्षी आत्मा में है वे उन के मिलाप में कहाँ से होंगे, होना नहीं आदिये किन्तु दुष् सुष् प्रत्यक्ष में होने हैं सो कैसे होते हैं, जो धर्म जिन पदार्थ में नहीं है वह उसके मिलाप में कैसे आवेगा, यदि पान सुपारी कबे में रखा तो उन के मिलाप में कहाँ से आवे तैसे ही अंतःकरण और आत्मा में सुष्पादिक नहीं होता उन के मिलाप में कैसे होंगे, है प्रष्टु यह षडा सारी सहेह भरे के प्राप्त हुवा है, आप कृपा कर के इसे निवारण कीजिये.

गुरु कहते हैं; हे शिष्य तूने अच्छा प्रश्न पूछा है क्योंकि इस बात को तो मैं भी भूलाही था, तेने स्मरण करवाया है, अथ तू चित्त लगाकर श्रवण कर, यद्यपि अंतःकरण तो जड़ है, और शुद्ध आत्मा में कोई सुष्पादिक धर्म अनते नहीं, और सुष्पादिक प्रतीत होने हैं सो कैसे ! सुन, पुर्वजन्मों में जो नाना प्रकार के धर्म किये हैं सो सभी अंतःकरण विशिष्ट में ही हुवे हैं और अंतःकरण विशिष्ट में ही सुष् दुष् की प्रतीति होती है क्योंकि जो कर्ता है सो ही भोजता होता है, और जो कर्ता नहीं होता है, सो भोजता भी नहीं होता है, शुद्ध चेतन इस अनुमान से जाना जाता है कि अंतःकरण विशिष्ट ज्य चेतन में ही सुष् दुष् का भान होता है, क्योंकि जैसे घर में जल का आनयन रूप जो कार्य होता है सो केवल घर में नहीं होता है, और केवल आकाश में भी नहीं अनता है, उन दोनों का जो उपाधिक संश्लेष है उसमें ही पांच सेर, और दस सेर, संख्या का व्यवहार होता है, केवल आकाश में भी पांच सेर कहना अनता नहीं, और केवल मृत पिंड में भी पांचसेर की संख्या की जाती नहीं, उनका जो उपाधिक संश्लेष है, उसमें ही कहना होगा, क्योंकि शरीर अनुमती से जाना जाता है कि दोनों के मिलाप में ही व्यवहार होता है, इसी प्रकार दुष् सुष् रूप कार्य की प्रतीति होने से जाना जाता है कि अंतःकरण विशिष्ट में ही सुष् दुष्

મ જાન હોતા હૈ, ઓર તેને કહા થા કિ જો ધર્મ દાનોં પદાર્થોં  
 નહીં હોતા હૈ સો ઉનકે મિત્રાપ મેં કેસે હોગા, સો જી નિયમ  
 નહીં બનતા, ક્યોંકિ વિચાર કર દેખા, જેસે ધૂમ કેવલ લકડી મેં  
 નહીં હોતા હૈ ઓર ન કેવલ અગ્ની મેં હોતા હૈ પરંતુ જળ  
 દાનોં મિલતે હૈ તખ ધૂમ કી પ્રતીતી હોતી હૈ, અખ તૂં દેખ મનમેં  
 મેં કિસમેં કુંવાં થા, એસે હી હસ્ત કી દાનોં તાલિયોં મેં શબ્દ  
 નહીં હૈ, પરંતુ જળ દાનોં મિલતે હૈ તખ શબ્દ હોતા હૈ.

હૈ શિષ્ય ઇસ દેખ, યદિ તુએ એસા કિખાર્પ દેતા હો  
 તો અંતઃકરણ વિશિષ્ટ મેં સમજ લે, ઓર નહીં તો પૂર્વ  
 દુષ્ટને દષ્ટિસુષ્ટિ બાદ મેં જો ઉત્તમ દષ્ટિ કહીથી ઉમીડો ધારણ  
 કર ઓર જો અંતઃકરણ વિશિષ્ટ બાદ પૂર્વ કથન કિયા હૈ સો તેરે  
 પ્રશ્ન કે ઉત્તર દેને કે વાસ્તે હૈ, જિસસે તેરી બ્રાંતી દૂર હોવે. તુએ  
 ચેતન મેં જેસે ઓર સર્વ ધર્મ કલ્પિત હૈ, વૈસેહી વિશિષ્ટપના  
 ઓર શુદ્ધપના ભી સખ કલ્પિતહી હૈ. યદિ તૂં એસા કહે કિ જો  
 કુછ ભી કલ્પિત હૈ સો કલ્પના માત્ર હી હૈ, ઉસસે કાર્થ ભી કાર્ય  
 હોતા નહીં, જેસે સ્થંભ મેં પિશાય કા ભ્રમ હોતા હૈ સો વહ  
 કલ્પના માત્ર પિશાય કિસી કે બાલક કે ભારતા નહીં હૈ ઓર  
 રજ્જૂ મેં કલ્પના માત્ર કે સર્પસે રજ્જૂ વિપ વાલી નહીં હોતી  
 હૈ, એસેહી જો તુએકો આત્મા મેં અનાત્મા કા અભ્યાસ હુવા હૈ  
 સો તેરે આત્મા મેં કુછભી હાની નહીં કર સજતા, કિન્તુ યહ  
 અધ્યાસ હી તેરે કો દુખ કો દેને વાલા હૈ ઇસ પર તુએ કો એક—  
 મુનાતે હૈ, સો તૂં જળ ઇસકો મન લગા કર સુનેગા તખ તેરા  
 યદ અધ્યાસ ટૂંકને સે ભી નહીં મિલેગા, ઓર તેરે કો શાંતરૂપ  
 એક આત્માહી ભાસેગા, તૂં સાવધાન હો કે સુન.

એક પિંજરા ચલા જાતા થા ઉસ સમય કિસી મંડી મેં  
 ઉસને સૂઈ કા બહુત ભારી ગંજ દેખા, તખ ઉસકો એસા સોચ  
 હુવા કિ યહ તો સારી મુઝકો પીંજની પડેગી. વહ રાત ઓર  
 દિન ઇસી ફિકર મેં રહને લગા ઓર એસી ભારી ચિંતા કે ભારે  
 કિમકા શરીર સૂખકર કમજોર હોગયા ઓર ચલને ફિરને કે લાયક  
 નહીં રહા. તખ કિસી પુરુષને ઉસ પિંજરે સે પૂછા અરે ભાઈ



તું કિસ ચિંતા મેં રહતા હૈ ? કિસ દુષ્ણ કે કારણ તેણે શરીર  
 કૃશ હોગયા હૈ, સો બતા તો સહી. પિંગ્લરેને ઉત્તર દિયા કિ વહ  
 વહ સારી રૂઠ મેરકો હી પીંગ્લની પડેગી. તખ પુછને વાલા બોલા  
 અરે ભાઈ તું એસા ફિકર કુછ ભી મત કર, વહ તો અગ્નિ લગા  
 કે સારી ભસ્મ હેસ્મ હો ગઈ હૈ. યહ મુન ઉસ પિંગ્લરે ને કહા  
 કયા યહ સચ્ચી બાત હૈ ? તખ વહ કહને લગા, ઝૂં બોલકર  
 હમેં કુછ તેરે સે લેના હૈ. વહ તો પરસોં કે મોજ ભસ્મ હોગઈ.  
 તખ ઈસ પ્રકાર ઉસ પુરૂષ કે વચનોં કો મુન કે પિંગ્લરે કા અધ્યાસ  
 નિવૃત્ત હો ગયા. ઈસી પ્રકાર તેને આત્મા મેં અનાત્મા અન્ત:-  
 કરણ કે મુખ દુષ્ણાદિક ધર્મ આરોપણ કરકે મેં મુખી હું મેં દુખી  
 હું એસા જો માન લિયા હૈ ઈસી કા નામ અધ્યાસ હૈ.

વાસ્તવ મેં એસા સભી કો હોતા હૈ તથાપિ જ્ઞાનવાન ઔર  
 અજ્ઞાની કે અધ્યાસ મેં સામાન્ય ઔર વિશેષ કી જિસ પ્રકાર  
 વિલક્ષણતા હોતી હૈ સો દિખાતે હૈં. જ્ઞાનવાન વ્યવહાર દશા મેં  
 અંહ મુખી અંહ દુખી, એસે શબ્દો કો ઉચ્ચારણ કરતા માહુમ  
 હોતા હૈ, પરંતુ ઉસને જો ચેતન આત્મા કો અપના સ્વરૂપ જના  
 હૈ, સો સર્વ દુષ્ણ મુખ આદિ સે રહિત અસ ગ હૈ એસા ઉસકા  
 દૃઢ નિશ્ચય હોને સે જ્ઞાનવાન કા અધ્યાસ સામાન્ય હોતા હૈ  
 જિસસે વહ જન્મોં કા કારણ નહીં હોતા હૈ. અજ્ઞાની કો એસા  
 અકરતા રૂપ કરકે આત્મા જ્ઞાન હૈ નહીં ઈસી કારણ અજ્ઞાની  
 કો અધ્યાસ હોતા હૈ જો જન્મોં કા કારણ હોતા હૈ.

શિષ્ય પ્રશ્ન કરતા હૈ, હે ભગવાન ! અધ્યાસ કિતે પ્રકાર  
 કો હોતા હૈ સો આપ કૃપા કરકે કહો, કયોંકિ મલો પ્રકાર સે  
 વસ્તુકા સ્વરૂપ જાને બિના શ્રવણ ઔર ત્યાગ હોતા નહીં ઈસ-  
 લિયે અધ્યાસ કે ભિન્ન ભિન્ન સ્વરૂપ કથન કરો. ઈસ પ્રકાર  
 મુન કે ગુરુ કહતે હૈ, હે શિષ્ય અધ્યાસ કા સ્વરૂપ ઔર ભેદ  
 હમ કહતે હૈં, તું ચિત્ત લગાકર શ્રવણ કર. અધ્યાસ દો પ્રકાર  
 કો હોતા હૈ એક તો અર્થા અધ્યાસ ઔસ દૂસરા જ્ઞાના અધ્યાસ  
 હોતા હૈ. ઈનમં અર્થા અધ્યાસ કે ઔર ભી બહુત ભેદ હૈં કહીં  
 કેવલ સંખ્યધી અધ્યાસ હોતા હૈ ઔર કહીં સંખ્યધ સહિત

સર્વથી કો અધ્યાસ હોતા હૈ ઓર કહીં ધર્મ સહિત ધર્મી કો અધ્યાસ હોતા હૈ, ઓર કહીં અન્યોન્ય અધ્યાસ હોતા હૈ ઓર કહીં અનંતરા અધ્યાસ હોતા હૈ, સો ભી દો પ્રકારકો હોતા હૈ, ઓર દૂસરા સ્વરૂપો અધ્યાસ હોતા હૈ. ઇતને અધ્યાસ કે ભેદ કહે હૈ; ઓર ભી અનેક ભેદ હૈં.

માયાકે પદાર્થોકો ચિંતન કરને સે અંત નહીં આતા હૈ. ઉતકો તો મિથ્યા જાનને સે હી ઉતકો અંત હોતા હૈ. બહુત ગમે કે બાલ જિનને સે કુછ પ્રયોજન સિદ્ધ નહીં હોતા હૈ ઇસ-લિયે જિતના અધ્યાસક્રમ હૈ સો સબ અર્થો અધ્યાસ ઓર અધ્યાસ કે અંતર ભૂત હૈ.

અધ્યાસકો સ્વરૂપ યહુ હૈ કિ મિથ્યા વસ્તુ ઓર ઉસકો જ્ઞાન દાતોં કો અધ્યાસ કહુતે હૈ સો અધ્યાસ ઓર અધ્યસ્ત વસ્તુ કે અધિષ્ઠાન કે જ્ઞાન બિના ઓર પ્રકાર સે નિવૃત્તી હોતી નહીં. યહુ મુન શિષ્ય શંકા કરતા હૈ, હે ભગવાન, આપ કહુતે હો કિ અધિષ્ઠાન કે જ્ઞાન સે અધ્યાસ ઓર અધ્યસ્ત કી નિવૃત્તી હોતી હૈ, સો યહુ નિયમ બનતા નહીં કયોંકિ અધિષ્ઠાન કે જ્ઞાન બિના ભી અધ્યસ્ત કો નિવૃત્તી દેખને મે આતી હૈ, જૈસે કિસી પુરુષકો સર્પ કે વંદ સંસ્કારોં સે રજજૂ મેં સર્પ ભ્રમ હોકે ઉસકે અનં-તર ફિર ડંડકો હી ભ્રમ હોગા, તબ રજજૂ કે જ્ઞાન બિનાહી, સર્પ ભ્રમ નિવ્રત હોગા, ઇસમેં કર્તાપને કો જો ભ્રમ હો રહા હૈ સો આત્મા કે અકર્તારૂપ જ્ઞાનસે નિવૃત્ત હોજવેગા તો ફિર આત્મા કો બ્રહ્મ રૂપ કરકે જાનકો, ઇસ જ્ઞાન કી કયા જરૂરત હૈ! એસી શંકા કે કરને પર-

શુરુ કહુતે હૈં, હે શિષ્ય યદ્યપિ વિરોધી પદાર્થકે જ્ઞાન સે વિરોધી પદાર્થ કી લય રૂપ નિવૃત્તી હો જાવેગી, તથાપિ અત્યંત નિવૃત્તી હોતી નહીં; કયોંકિ સર્પ ભ્રમ તો નિવ્રત હોગયા હૈ. પરંતુ અધિષ્ઠાન કો અજ્ઞાન નિવ્રત નહીં હુવા ઇસી સે ફિર ડંડા કો ભ્રમ હો જાતા હૈ. અધિષ્ઠાન કે જ્ઞાન બિના અત્યંત નિવ્રતી હોતી નહીં હૈ. કારણ સહિત જો કાર્ય કી નિવૃત્તી હૈ સો હી



અત્યંત નિવૃત્તી કહી જાતી છે જે કેવલ અધિષ્ઠાન કે જ્ઞાન સે  
હી હોતી છે ઓર કિસી પ્રકાર સે હોતી નહીં, ઓર જે તેને  
કહા થા કિ આત્મા કા જે બ્રહ્મરૂપ કરકે જ્ઞાન છે ઉસકી કયા જરૂરત  
છે. આત્મા કે અકર્તાપન કે જ્ઞાન સે આપ હી નિવૃત્તી જાવેગી,  
સો તેસ કહના જનતા નહીં, કયોંકિ કર્તારૂપ સે જે આત્મા કા  
જ્ઞાન છે સો તો અકર્તાપન કે જ્ઞાન સે લય રૂપ નિવૃત્તીકો પ્રાપ્ત  
હો જાવેગા. પરંતુ આત્મા કો બ્રહ્મ રૂપ સે નહીં જાવેગા. તખ  
તક અજ્ઞાન કી નિવૃત્તી નહીં હોગી, જખ અજ્ઞાન કી નિવૃત્તી  
નહીં હુઈ તો અકર્તાપન કા જ્ઞાન લી અધ્યાસ રૂપ હી છે,  
જસે સર્વ જ્ઞાન સે ડંડ જ્ઞાન હો ગયા છે, પરંતુ દોનોં હી  
બ્રમ રૂપ છે.

તાત્પર્ય યહ છે કિ જખ તક અધિષ્ઠાન કે અજ્ઞાન કી નિવૃત્તી  
નહીં હોતી છે, તખ તક બ્રમ કી લી નિવૃત્તી નહીં હો સકતી.  
યહા દષ્ટાંત મેં સર્વ કલ્પિત વસ્તુ કા અધિષ્ઠાન આત્મા છે, સો  
ઉસકો બ્રહ્મ સે ભિન્ન જાનના હી અધિષ્ઠાન કા અજ્ઞાન છે ઓર  
બ્રહ્મ સ્વરૂપ આત્મા કો જાનના હી આત્મા કા યથાર્થ જ્ઞાન  
છે. ઇસ પ્રકાર આત્મા કે યથાર્થ જ્ઞાન સે સર્વ અધ્યાસ ઓર  
અધ્યાસ કા કાર્ય જે અધ્યસ્ત પદાર્થ છે ઇન સર્વ કી નિવૃત્તી  
હોતી છે, ઇસી કો અત્યંત નિવૃત્તી કહતે છે. ઇસી પર તેરે કો  
એક પદ સુનાતે છે સો તૂં મન લગા કે સુન:—

કહીં આના છે નહીં જાના, એક મનકા મેલ મિટાના ।  
દરિયાવ કી મોજ્યા દેખો દરિયાવ કે ખીચ સમાના ॥૧૦॥  
કર્તા બુદ્ધિ કો ત્યાગો, અખ મર્મ નીંદ સે જાગો ।  
તુમ આતમ પદ સે લાગો, તજ દેઉ ન વિષય વિષ આના ॥૧૧॥  
જહાં હિંસા નહીં અહિંસા, નહીં જાતિ વરન કુલ વંસા ।  
કોઈ નિંદા નહીં પ્રશંસા, અહે કોઈ કુછ બકો જમાના ॥૧૨॥  
જહું નહીં ગાયત્રી સંધ્યા, કોઈ મોક્ષ હુવા નહીં વંધ્યા ।  
આતમ છે સદા સ્વછંદા, જહું નહીં જ્ઞાન અરુ ધ્યાના ॥૧૩॥  
જહું નહીં મૂલ નહીં તૂલા, કલી કુમહલાતા નહીં કૂલા ।  
કુછ જાન અજાન ન બૂલા, વહ એસા દેશ દેવાના ॥૧૪॥

જહં જીવ ઈશ નહીં માયા, કોઈ ધર્મ કર્મ નહીં પાયા ।  
 તુઝ ચેતન કી સખ છાયા, યહ સ્વર્ગ પાતાલ જહાના ॥૫૫॥  
 જખ ગુપ્ત રૂપ કો જાના, તખ મિટા ભેદ બ્રમ નાના ।  
 ભઈ માયા મલકી હાના, જખ દેખા એક સમાના ॥૫૬॥

ઈસ બાત કો અપને ચિત્ત મેં વિચાર કે આત્મા કો એક સમરૂપ જાન, ઔર જો પૂર્વ મેં સુખ કો આત્મા સે ભિન્ન આત્મા કો ગુણ તથા આત્મા કો ધર્મ રૂપ કરકે જાના થા, સો વાસ્તવ મેં આત્મા કો સ્વરૂપ હી જાન. યદિ તૂં એસા કહે કિ સુખાદિક કિસી ક્રિયા સે આત્મા કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં તેરા યહ કહના સી બનતા નહીં, કયોંકિ ક્રિયા કરકે અનાત્મ પદાર્થ કી હી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ, આત્મા તો સર્વવ્યાપી હોને સે નિત્ય હી પ્રાપ્ત હૈ, ઔર જો તૂં એસા કહે કિ નિત્ય પ્રાપ્ત કી પ્રાપ્તિ, ઔર નિત્ય નિવૃત્ત કી નિવૃત્તિ વેદાંત શાસ્ત્ર મેં કહી હૈ, ઈસલિયે પ્રાપ્ત કી પ્રાપ્તિ બનતી હૈ, સો ઠીક હૈ પરંતુ તેને ઈસ પ્રકાર કે કથન કા અભિપ્રાય સમજા નહીં હૈ. જો વસ્તુ નિત્ય હી પ્રાપ્ત હૈ ઉસકી ફિર કિસ ક્રિયા સે પ્રાપ્તિ હોગી. ઉસકા તો અજ્ઞાત હોના હી અપ્રાપ્તિ હૈ, ઔર જ્ઞાત હોના ઉસકી પ્રાપ્તિ કહી જાતી હૈ, યથાર્થ મેં કિસી ક્રિયા સે ઉસકી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી હૈ ઔર જો નિત્યપદ દિયા હૈ ઉસકો તૂં વિચાર કે દેખ. જખ તૂં ઈસ પ્રકાર વિચાર કરેગા, તખ તેરી ક્રિયાજન્ય પ્રાપ્તિ કી શંકા નિવૃત્ત હો જાવેગી. સો વિચાર યહ હૈ જિસ પર તેરે કો એક—

(૬) બચ્ચા બાજર પિતા ન્યાય

સુનાતે હૈં. એક પુરૂષ અપને બચ્ચેકો સંગ લેકે બાજર કી સેલ કરને ગયા થા. ઉસને બાજર મેં ગાડી, ઘોડે કી બહુત સી લીડ દેખકર અપને મન મેં વિચાર કિયા કિ બચ્ચેકો કોઈ ચોટ ફેડ લેગે નહીં. ઈસલિયે ઉસને ઉસ બચ્ચેકો અપને કંધે પર બિડા લિયા, ઔર બાજર મેં ધુમતા રહા. વહ અનેક પ્રકાર કે કોતુક તમાશે દેખતા રહા ઔર બાજર કી અનેક વસ્તુ દેખકે. ઉસકા



मन उधर रुजू होने के कारण उसे उस लड़के का विस्मरण हो गया। फिर उस पुरुष को ऐसा भ्रम हुआ कि लड़का तो कहीं बाजार में जा गया है। तब वह उस लड़के को ढूँढने लगा और साराही बाजार उसने ढूँढा, परंतु वह भ्रम्या उसको कहीं ली मिला। ऐसी दशा में वह पुरुष हैरान होकर अपने घरको चला जब घरके दरवाजे में घुसने लगा तब उस भ्रम्येका सिर दरवाजे में टकराने से वह रोने लगा। उसका रोना सुनके पिता को उसी वक्त पुत्र की ज्ञात हो गध, अथ तूँ इस बात को विचार कर देख, उस भ्रम्येकी प्राप्ति किस क्रिया से हुई ! किसी ली क्रिया से नहीं हुई। पूर्व में उस पुरुष ने अनेक क्रिया उसकी प्राप्ति के वास्ते की परंतु किसी ली क्रिया से उस भ्रम्येकी प्राप्ति नहीं हुई। जब वह पुरुष सर्व क्रिया को त्याग के निराश होकर अपने घर आया तभी उसको अपने भ्रम्ये की प्राप्ति हुई। यह तो दृष्टांत है।

दृष्टांत यह है कि जबतक तेरेको किसी कायक, वाचक, मानसिक क्रिया का अलंकार है कि अमुक क्रिया करके आत्मा को सुख की प्राप्ति होगी, तबतक तेरेको कली सुखकी प्राप्ति नहीं होगी। जैसे वह पुरुष जब तक ढूँढने की क्रिया करता रहा तब तक उसको पुत्र की प्राप्ति नहीं हुई। तब वह निराश होकर अपने घर आया, तब उसको पुत्र की प्राप्ति नहीं हुई। ऐसे ही तेरे को जो सुख प्राप्ति की धृष्टा हुई है, और उसके वास्ते नाना प्रकार की जो क्रिया करता है, जब तूँ धन सर्व से निराश होगा, और जो सच्चा आत्मादर्पी घर है उसकी तरफ आवेगा, तब तेरे पुत्र स्थानी आत्म स्वरूपी नित्य सुख की प्राप्ति होगी परंतु वह तभी होगी जब दरवाजा स्थानी जो सत् शास्त्र, और महात्मा का सत्संग है उसीमें तूँ आवेगा और तेरेको “अहं ब्रह्मास्मि” ऐसा बोध लगेगा, तब तूँ उस भ्रम्ये की में तरुण प्रविष्टावेगा कि मैंही येतन आत्मा परिपूर्ण ब्रह्मरूप हूँ—और अक्रिय हूँ। इसीसे मैं सर्व धर्मों से रहित हूँ, और सलो धर्म और सभी क्रिया, मेरेही से सिद्ध होनी है और मेरे से कोई ली पदार्थ हटा नहीं है। जब इस प्रकार समझेगा, तब तूँ

जान लेगा, कि नित्य प्राप्ति कही है सो केवल प्राप्त पदार्थ का ज्ञान करने के वास्ते कही है. और किसी क्रिया से प्राप्त प्राप्ति नहीं होती है.

जिस पदार्थ की किसी क्रिया से प्राप्ति होती है सो पदार्थ अनात्म ही होता है. जैसे घटपटादिक पदार्थ हैं. ये सारे क्रिया जन्य होने से अनात्मा ही हैं. जो पदार्थ किसी क्रिया से उत्पन्न होता है सो नाशवान ही है. यज्ञादिक कर्मों से स्वर्ग के लोग पदार्थ प्राप्त होते हैं, सो भी काल पा के नाश हो जाते हैं. यदि किसी क्रिया जन्य पदार्थ से आत्मा के सुख की प्राप्ति कही, तो सुख भी नाशवाला ही होगा. वास्तव में वेदने आत्मा को अक्षीय ही कहा है. उसमें किसी क्रिया का आरोपण करने उसको सुख की प्राप्ति कहना सर्वथा वेद और शास्त्र से विरुद्ध है. धर्म आत को सुन के शिष्य प्रश्न करता है—

हे गुरो ! वेद में दो प्रकार के कर्म कहे हैं, उनमें एक तो विधी और दूसरा निषेध कर्म कहा है. धर्म दोनों में से निषेध कर्म का तो त्याग ही कहा है, और जो विधी कर्म है सो करने के वास्ते कथन किया है. विधी कर्म से सुख की प्राप्ति कही है. ज्ञात्मा से सिन्न और किसीको भी कर्म का अधिकार है नहीं, ज्ञात्मा ही कर्मका अधिकारी है. धर्मलिये ज्ञात्मा के सुख के वास्ते ही वेदने कर्मका कथन किया है, सो कर्म किसी क्रिया से होता है और आप कहते हो कि किसीकी क्रिया के करने से आत्मा को सुख की प्राप्ति होती नहीं. धर्ममें तो आपका कहना ही वेद से विरुद्ध भावूम होता है, क्योंकि वेदने कर्मों का जो कथन किया है वह कथन ज्ञात्मा के सुख के ही वास्ते करने में वेद का अलिप्राय है, और जो क्रिया जन्य कर्म से सुख नहीं होता तो वेद ऐसा कथन क्यों करता. धर्मसे जाना जाता है कि वेद का तो किसी के अहङ्काने में तात्पर्य नहीं. वेदों को धर्मरने सर्व जनों के लिये के वास्ते ही उत्पन्न किया है, ऐसी शंका होने से—



ગુરુ કહતે હૈં--યદ્યપિ ઈશ્વરને જીવોં કે ભલે વાસ્તે હી ઉત્પન્ન કિયે હૈં, ઔર વિધી નિષેધ દો પ્રકારકે કર્મોંં કા કથન કિયા હૈ, સોભી જીવોંં કે કલ્યાણ વાસ્તે હી હૈ, પરંતુ અપની બુદ્ધિ મેં જો અસંભાવનાદિક દોષ હોને સે વેદ કે વચનોંં કા તાત્પર્ય સમજ મેં નહીં આતા હૈ, ઈસી કારણ વિરોધ માલૂમ હોતા હૈ, ક્યોંકિ કિસી સ્થાન મેં તો એસા કહા જખ તક હૈ કિ કર્મોંં કો જીવે તખ તક હી કરે ઔર કિસી જગહ એસા ભી કથન કિયા હૈ કિ “કર્મણા બન્ધ્યતે જન્તુઃ” અર્થાત કર્મોંં સે જીવ બન્ધાયમાન હોતે હૈં. ઈસ રીતિસે નાના પ્રકારકે વચનોંં કો સુનકે પુરૂષોંં કી બુદ્ધિ મેં ભ્રમ હો જાતા હૈ. ઈસસે ન તો કર્મોંં કા ત્યાગ હોતા હૈ. ઔર ન કર્મોંં કે કરને મેં ચિત્ત કી પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ. ઉભયતા સંશયમેં ઉમર બીત જાતી હૈ. ઈસસે પ્રથમ અપની બુદ્ધિ મેં જો અસંભાવના દોષ હૈ ઉસકી નિવૃત્તી કરની ચાહિયે. ઉસકી નિવૃત્તી બારંબાર શાસ્ત્ર કે વિચારને ઔર મહાપુરૂષોંં કે વચનોંં મેં વિશ્વાસ રખને સે હોતી હૈ. જખ ઈસ પ્રકાર મહાત્મા પુરૂષોંં કે વચનોંં મેં વિશ્વાસ રખને સે હોતી હૈ. જખ ઈસ પ્રકાર મહાત્મા પુરૂષોંં કે બચનોંં કો બારંબાર સુનેગા ઔર શાસ્ત્ર કા વિચાર કરેગા તખ જાન જાવેગા કિ અધિકારી ભેદ સે સારે હી વેદ કે વચન ઠીક હૈં. વિધી નિષેધ યે દો પ્રકાર કે કર્મ વેદને કહે હૈં. નિષેધ કર્મ સે રોક કે વિધી કર્મ મેં લગાતા ઔર ફિર સકામ કો છુડાકર નિષ્કામ વિધી કર્મ મેં લગાના ઔર જખતક અશુભ વાસના દૂર નહીં હો તખતક નિષ્કામ કર્મ કરના, ઔર જખ અશુભવાસના નહીં માલૂમ હો તખ નિષ્કામ કર્મ કો ભી નહીં કરના કિન્તુ નિષ્કામ ઉપાસના કો કરના, ઔર વહ ભી જખતક ચિત્ત કી સ્થિરતા નહોંં દિખે તખતક કરના, ઔર જખ વિશ્લેષ દોષ દૂર હોજાવે તખ નિષ્કામ ઉપાસના ભી નહીં કરના ઔર વૈસી દશા નિત્ય અનિત્ય વસ્તુ કા વિચાર કરના ઔર કુછ ભી નહીં કરના. એસે હી વિધી કર્મ સે લેકર જ્ઞાન કી પ્રાપ્તી પ્રચિન્ત સોપાન કર્મ અર્થાત અધિકાર ભેદસે એક કર્મ કા ત્યાગ ઔર દુસરે કા ગ્રહણ વેદ ને કહા હૈ, સો કર્મ કે કરાને મેં વેદ કા તાત્પર્ય નહીં હૈ કિન્તુ સર્વ કર્મોંં

को कुमशः छुड़ाने में ही वेद का गूढ़ अलिप्राय है. क्योंकि जिन कर्मों में अहंकार करके जन्म मरण रूप नाना प्रकार के क्लेश प्राप्त होते हैं उन कर्मों के दूर होने से ही दुष्ण की निवृत्ति होगी. कर्मों का नाश तीन प्रकार से होता है. (१) किसी ज्ञात में पाप हो जाये तो उसकी निवृत्ति विरोधी कर्म से होती है, जैसे प्रायश्चित्त कर्म, (२) कर्म के भोगने से कर्म नाश होता है, जैसे प्रारब्ध कर्म और (३) अविज्ञान से सर्व संयित आगामी कर्म नाश होते हैं.

धर्म प्रकारसे किया जन्म कर्मका वेदने जो कथन किया है सो कर्म के ही नाश करने के वास्ते है जैसे किसीके भूत चिपट जाता है तब उसको बलीदान देकर निवृत्त करते हैं परन्तु जैसा भेत होता है, वैसा उसकी बली होती है. धर्मी प्रकार धर्म एव को कर्म रूपा भूत लगा है तो कर्म रूपा बलिदान देने से ही वह दूर होता है, और किसी किया के करने से आत्मा को सुख की प्राप्ति नहीं होती है. ऐसा जो अक्रिय और सुखरूप आत्मा है उसको किसी किया से सुख प्राप्ति की धृष्टि दुर्घ है सो दोष है. धर्मी से तेरे को अक्रिय आत्मा में नाना प्रकार की किया और कर्म प्रतीत हुवे हैं जैसे किसी के नेत्र में दोष होता है उसको आकाश में दू या चन्द्रमा लासते हैं. धर्मी प्रकार किसी को पित्त दोष होता उसे सबी पदार्थ पीले प्रतीत होते हैं. वास्तव में दोष केवल नेत्र में ही है. चन्द्रमा तो एक ही है और सारे पदार्थ पीले नहीं होते हैं, परन्तु अपने नेत्र के दोष से पीले लासते हैं. फिर वह पुरुष द्वाध करता है और आराम होने पर जो पदार्थ जैसा होता है वैसा ही लासने लग जाता है. वास्तव में द्वाध से नेत्रका दोष ही दूर होता है, नेत्र में उस द्वाध से सामर्थ्य नहीं बढ़ती है. तैसे ही अज्ञान रूपा दोष से अपनी बुद्धि में ही कर्ता. किया, कर्म, लासता है, सो किसी द्वाध से ही दूर होगा, और वह द्वाध निष्काम कर्म है. उससे अन्तःकरण शुद्ध होता है. शुद्ध अन्तःकरण में विवेक वैराग्य आदि साधन उत्पन्न होते हैं. फिर श्रवण, मनन. निदि-



ધ્યાસન સે અસંભાવના ઔર વિપરીત ભાવના દૂર હોકર આત્મા કા યથાર્થ જ્ઞાન હોતા હૈ. જૈસા વસ્તુ કા સ્વરૂપ હો વૈસા હી જાનના ઇસી કા નામ યથાર્થ જ્ઞાન હૈ.

તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જૈસે દવાઈ કી સામર્થ્ય રોગ કે દૂર કરને મેં હોતી હૈ, તેસે હી જિતની સાધનરૂપી દવાઈ હૈ સો અજ્ઞાન રૂપી રોગ કે દૂર કરને મેં તો સમર્થ હૈ પરંતુ આત્મા કો સુખ કી પ્રાપ્તી કરાને મેં સમર્થ નહીં હૈ, ક્યોંકિ આત્મા તો સદા સુખ રૂપ હી હૈ, જૈસે કપડે મેં જો મેલ હોતા હૈ ઉસકી મલસે હી નિવૃત્તી હોતી હૈ, પરંતુ સાબુન રૂપી મલસે ઉસ વસ્ત્ર મેં સફેદી નહીં ઉત્પન્ન હોતી હૈ, ક્યોંકિ સફેદી તો વસ્ત્ર કા સ્વરૂપ હી હૈ. કોઇ કહે કિ જલ કો ઠંડા કરો. વહ કોન વસ્તુ હૈ જો જલ કો ઠંડા કરેગી ? વાસ્તવ મેં જિતની વસ્તુ ઠંડી માલુમ હોતી હૈ સો સખ જલ હી સે ઠંડી હોતી હૈ. ઇસી પ્રકાર પદાર્થો મેં જો સુખ કી પ્રતીતિ હોતી હૈ સો સારા સુખ ચેતન આત્મા કા હૈ કિર આત્મા કો સુખ કી પ્રાપ્તી કોન પદાર્થ કરેગા. પદાર્થ માત્ર કો વેદ ને દુખ રૂપ કહે હૈ. યહી વેદ કા ગૂઢ અભિપ્રાય હૈ, સો તેને સમજા નહીં, જૈસે એક વૈરાગી કો ગુરુ કે ઉપદેશ કા અર્થ નહીં સમજા થા ઇસી પર તેરે કો એક--

### (૭) ગુરુ શિષ્ય ઉપદેશ ન્યાય

સુનાતે હૈ સો યહ હૈ કિ એક ગ્રહસ્થી કો ઉસકે પૂર્વ જન્મ કે ઉત્તમ સંસ્કારોં કે યોગ સે વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન હુવા તખ વહ ઘર છોડ કર ચલ દિયા, ઔર અપને કલ્યાણ કી ઇચ્છા કરકે વિચરને તથા તીર્થ યાત્રા કરને લગા. એક દિન વહ કિસી વૈરાગી કે મંદિર મેં જાકર ઠહરા તખ મંદિર વાલા વૈરાગી ઉસસે પૂછને લગા તુમ કહાં સે આયે ઔર કહાં જાતે હો! વહ કહને લગાકિ મહારાજજી, મેં તો એસે હી તીર્થયાત્રા મેં વિચરતા રહતા હૂં, અપને ઘર કા તો મૈંને ત્યાગ કિયા હૈ, પરંતુ મેરે કો યહ ઇચ્છા બની રહતી હૈ કિ ઇસ જન્મ મરણ રૂપી સંસાર દુખ સે કિસી પ્રકાર મુક્ત હોંઉં. ઇસ પ્રકાર સુનકર વે બાબાજી કહને લગે, અરે

यह तो तेरे ही हथ में आना देवे, तब वह बोला कि महाराज बहुत अच्छी बात है, आप कृपा करके बताइये आशा करने लगे कि आप तुम तीन काम करते रहो तो तुम्हारी मुक्ति हो जायेगी, वे तीन काम ये हैं, एक तो गडि का जापर थाप दिया करो, दूसरा काम तमाछू कूटकर मेरे को भर दिया करो, और तीसरा काम गडि के वास्ते हरी हरी घास जंगल से जोड़ लाया करो, इन तीन कामों के करने से तुम्हारा मोक्ष हो जायेगा, तब वह पुरुष धिस आन हो सुनके उस आत्मा का चेला होकर उसी मंदिर में रहने लगा, और ये तीनों काम करने लगा, बहुत दिन व्यतीत होने पर वह अपने मन में विचार करने लगा कि ये काम तो हम अपने घर पर ही करते थे, जो धनसे उदयाण होता तो वहीं हो जाता, महाराज ने कहा है सो कुछ समय के ही कहा होगा, धिस प्रकार विचार करता ही रहा, फिर एक दिन वह आत्मा जैया के वास्ते किसी तालाब के किनारे घास जोड़ रहा था उस समय उसी तालाब पर दोईपरमहंस महात्मा विचरते हुवे चले आये, उन्होंने वहां स्नान किया तब वह पुरुष उन महात्मा के तरङ्ग देख रहा था, स्नान करके वे महात्मा उसी तालाब के किनारे आसन लगा कर बैठ गये और गीता का पाठ करने लगे, जब वे पाठ कर चुके, तब वह मनुष्य उनके पास जाके जय सीताराम कहता हुवा वन्दनापूर्वक उनके समीप बैठ गया, फिर वे महात्मा उससे पूछने लगे कि तुम कौन हो ? उसने कहा कि महाराज मैं ही साधु हूं, तब उन्होंने कहा कि बहुत अच्छी बात है, वह मनुष्य कहने लगा कि महाराज मैं आपसे एक बात पूछता हूं, सो आप कृपा करके बताइये महात्माने कहा, बहुत अच्छा आप पूछीये तब वह कहने लगा कि महाराज, मेरे गुने तीन काम मेरे को बताये हैं, और यह कहा कि इनको तुम करते रहो, तुम्हारा मोक्ष हो जायेगा, वे काम ये हैं (१) गडि का जापर थापना, (२) तमाछू कूट कर भर र के देना, और (३) गडि के वास्ते हरी र घास जोड़ लाना, इन कामों के करने से मोक्ष होता है या क्या सो आप बताइये,



તથા વે મહાત્મા કહીને લગે--

હો સજ્જન, ઇન કામોં કે કરને સે તો મોક્ષ નહીં હોતા હૈ, પરંતુ ઇનકા અર્થ સમજને સે મોક્ષ હોતા હૈ. તુમહારે ગુરુ ને ઠીક બાતે બતલાઇ પરંતુ તુમને ઇનકા અર્થ નહીં સમજા. તથા વહ કહીને લગા કિ મહારાજ કૃપા કરકે અર્થ બતાઇએ. ઇસ પર સે વે મહાત્મા બાલે કિ ગોબર થાપને કા અર્થ યહ હૈ, કિ ગો નામ ઇન્દ્રિયોં કો ઔર થાપને સે તાત્પર્ય બોલે વિષયોં સે રોકને કા હૈ. ઔસે હી વર નામ શ્રેષ્ઠ કા હૈ. વહી પુરુષ શ્રેષ્ઠ હૈ જિસને અપની ઇન્દ્રિયોં કો દુષ્ટ વિષયોં સે રોકા હૈ. તમાખૂ કૂટને ઔર કૂંકને કા અર્થ તમા અર્થાત તમ હૈ, લોભ ઔર લાલચ કો કૂટ કૂટકે કૂંક દેના હી તમાખૂ કૂટ ર કર ભર દેના હૈ. તીસરા કામ જો હરી ર ઘાસ ખોદ લાને કા હૈ ઇસકા અર્થ યહ હૈ કિ જબ તૂં બોલે વિષયોં મન ઔર ઇન્દ્રિયોં કો રોકેગા, ઔર લોભ લાલચ કામ ક્રોધ આદિ સર્વ કો કૂટ ર કે કૂંક દેગા, તથા હરિ અર્થાત વિષ્ણુ ભગવાન કો બોજને સે હી તેરા મોક્ષ હોગા. ઇસ પ્રકાર સે ઇન કામોં કે અર્થ કો સમજ કે વહ જાલી ખુરપી છાડ કે મંદિર મેં જાકર બેઠ ગયા ઔર માલા હાથ મેં લેકર ઠાકુરજી કા ભજન કરને લગા. ગુરુજી ઉસે પુકાર કે કહીને હુગે, અરે જાનકીદાસ, ફિલાના અમકા કામ નહીં કિયા, તો વહ બોલા કિ મહારાજ આજ તો મેં કામોં કે અર્થ કો સમજ ગયા હૂં. અથ પહિલે જૈસે કામ કરને સે કયા પ્રયોજન હૈ. યહ સુન ગુરુજી કહીને હૈ--

અર, જાનકીદાસ આજ તેરે કો કોઈ ચોટીકટ તો નહીં મિલા યહ ગુરુ ચેલેકા દષ્ટાંત હૈ. દષ્ટાંત યહ હૈ કિ જબતક ઇન કામોં કા અર્થ જાનકીદાસને નહીં સમજા થા, તથા તક ગોબરકો થેપા, તમાખૂ કો કૂટા ઔર ઘાસ કો ભી ખોદતા રહા. જિસ સમય ઉનકે અર્થ કો જાન લિયા તો સર્વ કામોં સે નિવ્રત હો ગયા ઔર આનન્દ કો પ્રાપ્ત હુવા તૈસે હી જબ તક તૂં કિસી કિયાસે આત્મા કો સુખ કી પ્રાપ્તી ચાહતા હૈ, તથા તક તેરે કો સુખ કી પ્રાપ્તી કદાપિ નહીં હોગી, ક્યોંકિ કર્મ ઔર ઉનકે ફલ કો વેદ ને દુખરૂપી કહા હૈ, ઇસસે ભી જાના જાતા હૈ કિ કર્મ ઔર ઉનકે ફલ દુઃખ

રુપ હી હૈ. પ્રત્યક્ષ મેં ભી યહી દેખને મેં આતા હૈ કિ બિના સંતોષ કે જો પુરુષ નાના પ્રકાર કે લૌકિક કાર્ય આરંભ કરતા હૈ ઉસકો દેખ કે લોગ કહતે હૈં યહ તો બહુત દુખી હૈ, ઓર જો પુરુષ સર્વ કાર્યોં કો ત્યાગ વિવેક પૂર્વક એકાન્ત દેશ મેં રહતા હૈ ઉસે દેખકર લોગ કહતે હૈં કિ યહ પુરુષ આનન્દ મેં હૈ. કહીં એસા લિખા ભી હૈ—

દોહા—નહી દેવ નર તાસ સમ, જો નર વસૈ એકાંત ।

ભોગોં કી નહીં વાસના, મન હુવા બ્રહ્મ મેં શાંત ॥

કર્તા ક્રિયા કર્મ કા, દૂટ ગયા અહંકાર ।

તાસ સમાન નઔર સુખ, સખ કહતે સંત પુકાર ॥

હે શિષ્ય ! જૈસે ઉસ મહાત્મા ને ઉસ બાબા કો ઉનકર્મોં કા ગૂઢ અર્થ સમજાયા, તખ અર્થ સમજને પર બાબા કો આનંદ પ્રાપ્ત હુવા તૈસે હી તૂં ભી વેદ કે ગૂઢ અર્થ કો સમજ. વેદ કા ગૂઢ અર્થ યહ હૈ કિ કર્મ કે કરને સે કર્મ-કા નાશ હોતા હૈ. ઈસ વાસ્તે કર્મ કા કથન વેદમેં ક્રિયા હૈ. કિસી ક્રિયાજન્ય કર્મ સે આત્મા કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ એસા વેદને કથન નહીં ક્રિયા કયોંકિ આત્મા તો નિત્યહી પ્રાપ્ત હૈ, નિત્ય પ્રાપ્ત વાસ્તુ કી કિસી. ક્રિયા સે પ્રાપ્તિ હોતી નહીં, જૈસે કોઇ પુરુષ કહે કિ મેરેકો આકાશ કી પ્રાપ્તિ કિસ ક્રિયા સે હોગી, તખ સુનનેવાલા ઉસે કહતા હૈ, અરે, મૂર્ખ કહીં ક્રિયા કરને સે આકાશ કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ. આકાશ તો નિત્ય હી પ્રાપ્ત હૈ ઇસકી પ્રાપ્તિ કયા હોગી એસી ઇચ્છા કરના હી મૂર્ખતા કા ચિન્હ હૈ. ઇસ પ્રકાર કી બાત સુનકે સાધારણ મનુષ્ય ભી એસા ઉલ્લભા દેતે હૈં તો વિદ્વાન લોગ કયા કહેંગે ? આકાશ કી કિસી ક્રિયા સે પ્રાપ્તિ નહીં બનતી. આકાશ ભી ચેતન આત્મા મેં સુમેરુ પર્વત કે તુલ્ય હૈ. સુક્ષ્મ સે સુક્ષ્મ સર્વ જીવોં કે અન્તર ઓર બાહર જો વ્યાપ રહા હૈ. એસા પરિપૂર્ણ આત્મા કેસા હૈ ? વહ સર્વ વિદ્યેષોં સે રહિત ઓર સદા સુખ રુપ હૈ. ઇસમેં કુછ ભી સંદેહ કી બાત નહીં



હું કે આત્મા સ્વયં જ્ઞાનનું સ્વરૂપ છે. ઉપરોક્ત ક્રિયા સે  
જ્ઞાનનું કી પ્રાપ્તિ કહના સર્વથા અસંભવ છે, જેસે જલ મેં  
બી લહેરે હોતી હું. વે પૂછે કે જલ કિસ ક્રિયા હમ કી મિલેગા,  
ઓર વસ પૂછે કે મેરે કી સૂત કિસ ક્રિયા સે મિલેગા. ઇસી પ્રકાર  
ભૂખન કહે કે સ્વર્ણ કહાં ઓર કિસ ક્રિયાસે મિલેગા ? એસે  
પ્રશ્ન પૂછનેવાલે કી કેવલ મૂર્ખતા સિદ્ધ હોતી હું, તેસે હી તમ  
કહતે હો કે કિસી ક્રિયા સે આત્મા કો સુખ કી પ્રાપ્તી હોગી  
સો યહ તુમહારા કહના બી ઉન લહેરોં આદિ કે પ્રશ્ન કરને કે  
તુલ્ય હું. વે તો જડ પદાર્થ હું પરંતુ તૂ બુદ્ધિમાન મનુષ્ય હોકર  
એસી બાત કયોં કરતા હું.

વાસ્તવમેં સચ્ચિદાનન્દ સ્વરૂપ જો તૂં હી હું તો ફિર કિસ  
ક્રિયા સે સુખ કી પ્રાપ્તી આહતા હું. તૂં કેવલ અપની ભૂલ સે  
હી દુખ કો પ્રાપ્ત હોતા હું. જેસે કોઈ બનિયા અપને ઘર કો  
ભૂલ કે સારે બાજર મેં ફિરા ઓર દુખ પાયા, તેસે હી તૂં અપને  
કો નહીં જન કે નાના પ્રકાર કે ક્રિયાજન્ય કલેશોં કો પ્રાપ્ત  
હો રહા હું. ઇસી પર તેરે કો એક—

### બનિક અફીમ ઘર વિરમરણ ન્યાય

સુનાતે હું, સો તૂં ચિત લગા કર સુન. એક બનિયે કી દુકાન  
બાજર મેં થી ઓર ઉસકા ઘર જરા ફાસલે પર થા એક દિન  
એસા હુવા કે રાત્રી સમય જખ કુછ વર્ષા હો રહી થી તખ  
શરદી કી વજહ સે ઉસ બનિયે ને કુછ અફીમ ખા લિયા. વૈસી  
દશા મેં વહ બનિયા દુકાન સે ઘર કો ચલા. રાસ્તે મેં કિસી  
જગહ પેશાબ કરને બેઠ ગયા, તખ અફીમ કે નશે મેં ઉસકી  
આંખ લગ ગઇ. કુછ દેર બાદ ઉસકી આંખ ખુલી તો વહ અપને  
મનમેં વિચાર કરતા હું કે હમ ઘર કો ચલે થે, સો ઘર તો અબ  
તક આયા હી નહીં. વહ વહાં સે ઉઠ કે આગે ચલા ઓર ભય-  
ભીત હો ગયા. ફિર અપને ઘરકી જાંચ ઉસકો નહીં રહી તખ  
જિસકા ઘર આવે ઉસકો અપના ઘર સમજ કે વહ દરવાજે કે

किवाड जोलने लगा. वे घरवाले कहने लगे और झीन है. तब  
 वह अनिया वहां से लगा. जैसे ही और भी अनेक गृहों में  
 जा के लागता रहा आभिर दैवयोग से उसीका घर आ गया,  
 वहां सेकानी रास्ता देखा ही रही थी, तब सेठल गर्म पानी से  
 पैर धोके रसोई लगे और पलंग पर विराज गये, हुक्का गुडा-  
 गुडाने लगे. तब कहते हैं कि सुभ तो अपने ही घर में है,  
 क्योंकि जब तक मैं अपने घर को प्राप्त नहीं हुवा, तब तक  
 दूसरे ग्रहों में जा के अनेक प्रकार के तिरस्कारजन्य दुष्ण को  
 प्राप्त हुवा, जब अपने ग्रह में आया तभी सुभ को सुभ प्राप्त  
 हुवा. तैसे ही तू अपने सत्चित् आनन्द स्वरूप को भूल के  
 किसी क्रिया से सुभ की प्राप्ति चाहता है. यह धृष्टा अपने स्व-  
 रूप के अज्ञान से ही दुष्ट है, सो स्वरूप के ज्ञानसे ही दूर होगी.  
 वह स्वरूप कैसा है ? नित्य ही प्राप्त है—जैसा समझना ही  
 नित्य प्राप्त की प्राप्ति है, और किसी क्रिया से प्राप्ति की प्राप्ति  
 किसीने भी नहीं कही है, और जो किसी क्रिया से प्राप्ति कही है,  
 सो तो अनात्म पदार्थ की ही प्राप्ति होती है. जैसे कुम्हार की  
 क्रिया से घट की प्राप्ति है और पुरुषों को दंड आदिकों के  
 प्रहाररूप क्रिया करने से सर्प आदिकों के नाश रूप फल की  
 प्राप्ति होती है. इसी प्रकार पंडाध पुरुष को बलनरूप क्रिया  
 से ब्राम आदि की प्राप्तिरूप फल होता है, और रसोई करनेवाले  
 को पाक क्रिया से नाना प्रकार के पदार्थों काविकासरूप फल होता  
 है, और संस्काररूप क्रिया से मल की निवृत्ति और गुण की प्राप्ति  
 रूप फल होता है. जैसे क्रियाजन्य कर्म से ये फल होते हैं परंतु  
 आत्मा तो धन क्रियाओं में से किसी भी क्रिया का फल नहीं  
 है, क्योंकि जो आत्मा पूर्व में नहीं हो तो उत्पादरूप क्रिया से  
 होता संभव हो सकता है परंतु आत्मा तो अज है, इसीसे आत्मा  
 का नाश भी नहीं होता है क्योंकि जिसका जन्म होता है उसीका  
 नाश होता है, जैसे घट पर आदि. यदि आत्मा किसी एक देश  
 में हो तो गमनरूप क्रिया से प्राप्त होवे परंतु आत्मा को तो  
 वेद ने सर्वव्यापी कहा है. आत्मा साययव हो तो विकाररूप  
 क्रिया का फल होवे. परंतु आत्मा को तो श्रुति ने निरवयव कहा



है. जैसे ही आत्मा में मैल हो तो मैल की निवृत्तीरूप किया का इल होवे परन्तु आत्मा को वेदने निर्मल कहा है, गुण की प्राप्तीरूप किया का इल भी तभी हो सकता है जब गुणादि पदार्थ आत्मा से जुड़े हों. वास्तव में गुणादिक आत्मा में कल्पित होने से आत्मा के स्वरूप ही है, जैसे शुक्ती में जो रजत कल्पित होता है, सो शुक्ती का स्वरूप ही है, इसी से आत्मा को वेद ने निर्गुण कहा है. श्रुति इस प्रकार कहती है—

अकोट्यः सर्व भूतेषुगूढः सर्वव्यापी सर्व भूतान्तरात्मा ।  
कर्माधिक सर्व भूतादि भाससाक्षी येता केवलो निर्गुणश्च॥

हे शिष्य ! प्रथम तेने कहा था कि मैं सुख की प्राप्ती और दुःख की निवृत्ती चाहता हूँ सो तेरा कहना तभी बन सकता है जब आत्मा में दुःख हो और सुख नही हो. वास्तव में आत्मा सदाही सुख रूप है, और सुखादिक आत्मा के गुण और धर्म नही है, किन्तु आत्मा के स्वरूप ही है इसी से किसी भी किया की जरूरत नही है. इस रीति से पूर्व में अनेक प्रकार के दृष्टांत, प्रमाण, युक्ति और न्याय कहे हैं सो केवल आत्मा को सुखरूप और स्वयंप्रकाश रूप जानने के वास्ते कहे हैं. जैसा सुखरूप और स्वयंप्रकाश आत्मा तू ही है.

(२) ॥ अथ सत्संग रत्न ॥

शिष्य पूर्व सुने अर्थ को अपना दृढ निश्चय करने के वास्ते पूछता है-हे लगवान, आपने अनेक प्रकार के दृष्टांत और सिद्धांत कहे कि आत्मा को सर्व गुण और धर्मों से रहित सुख रूप कथन किया, इसीसे किया का निषेध किया और स्वयम् प्रकाश होने से सर्व वस्तुओं का भी निषेध किया है. इस रीति से आत्मा को सुख रूप और स्वयंप्रकाश कथन किया सो मैंने उसी प्रकार से जाना और आपने कहा कि वह आत्मा तू ही है. इस बात को मैं कैसे निश्चय करूं कि मैं ही सुख रूप और स्वयंप्रकाश हूँ और प्राप्त वस्तु की प्राप्ती में किसी भी किया को

કથન નહીં ક્રિયા, કિન્તુ કહ્યાં કે ઉસકા જ્ઞાન હોના હી પ્રાપ્તી  
હૈ. ઈસ પ્રકાર જો આપને કહ્યાં ઉસ પર સે મેં જાનના ચાહતા  
હું કે ઉસકા જ્ઞાન હોના કેસે સંભવ હૈ સો આપ કૃપા કરકે  
ખતાઈએ.

શ્રી ગુરુઉવાચ-હે શિષ્ય: યહ બાત તો હમને પૂર્વે ભી કહી  
થી કે જબ તૂં સત શાસ્ત્ર ઓર સતસંગ રૂપી દરવાજે મેં દાખિલ  
હોગા તબ તેરેકો "અહં બ્રહ્માસ્મિ"એ સી ચોટ લગેગી ઓર વૈસી  
દશામેં તૂં બચ્ચે કી તરહ ચિલ્લાવેગા. યહ સુન શિષ્ય બોલા-  
હે ભગવન મેરી બુદ્ધિ અલપ હૈ. મેં થોડે મેં નહીં સમજ સકતા  
હું. આપ વિશેષ પ્રકાર સે સમજાધએ-સત સંગ કિસ કો કહુતે  
હૈ. સતશાસ્ત્ર કોન સે હૈ. સત સંગ કા કારણ ઓર સ્વરૂપ  
કયા હૈ, ઉસકા ફલ કિસ પ્રકાર હોતા હૈ, ઉસકી અવધિ કયા હૈ,  
ઓર જિસ શાસ્ત્ર કો આપ સત કહુતે હો ઉસમેં સતપના કયા  
હૈ? કયોંકિ આત્મા સે ભિન્ન કોઈ ભી અનાત્મ વસ્તુ સત નહીં  
હૈ એસા જો આપને કહ્યાં ઉસ પર સે ચે શંકાએ ઉત્પન્ન  
હુઈ હૈ.

ગુરુ કહુતે હૈ, હે શિષ્ય ! યદપિ આત્મા સે ભિન્ન કોઈ  
ભી અનાત્મ વસ્તુ સત્ય નહીં હૈ, તથાપિ સત્યતા દો પ્રકાર કી  
હોતી હૈ એક તો વ્યાવહારિક સત્યતા ઓર દૂસરી પારમાર્થિક  
સત્યતા પારમાર્થિક સત્યતા તો વેદમેં નહીં પરંતુ વ્યાવહારિક  
સત્યતા વેદમેં હૈ જૈસે સત્ય વચન કહુને વાલે કો સત્યવાદી કહુતે  
હૈ; તૈસે હી સતવસ્તુ પ્રતિપાદન કરનેવાલા વેદાંત શાસ્ત્ર હૈ. ઈસસે  
ઉસકો સત કહ્યાં હૈ ઓર વેદાંત શાસ્ત્ર સે ભિન્ન જો પાંચ ન્યાય  
વૈષેશિક આદિક શાસ્ત્ર હૈ સો દ્રવ્ય, ગુણ, પ્રમાણ, પ્રેમ, આદિક  
અનાત્મ પદાર્થોં કા હી કથન કરતે હૈ ઈસી સે વે સત્ય નહીં  
કહુ જાતે હૈ, જૈસે કોઈ છે પુરુષ કિસી મંદિર મેં દર્શન કરને  
કો ગયે થે મસમેં પાંચ તો અંધે થે ઓર એક કાણા થા. વે  
નીચે લિખે અનુસાર દર્શન કરને લગે.



## (૧) અન્ધ, ઠાકુર, ન્યાય.

અધેને કહ્યા કે પૂજારીજી હમકો નેત્ર સે દિખતા નહીં  
ઈસલિયે ઠાકુરજીકા હમારે હાથ સે સ્પર્શ કરાધએ. તખ પૂજારી  
ખતા દિયા કે યે ઠાકુરજી હૈ. વે પાંચોં અધે હાથ લગાય ર  
ઠાકુરજી કા સ્પર્શ કરને લગે. એક કા હાથ અંગુલીકે લગા, દૂસરે  
કા પંજે કે લગા, તીસરે કા પેરોં કે લગા, ચૌથે કા ધડકે લગા  
ઓર પાંચવેં કા સિર કે લગા. ઇસ રીતિ સે જિસકા જહાં  
હાથ લગા થા, ઉસને વૈસાહી ઠાકુરજી કા સ્વરૂપ નિશ્ચય કિયા  
ઓર કાણે ને તો જૈસા ઠાકુરજી કા સ્વરૂપ થા વૈસાહી જાન  
લિયા. જખ વે ઇસ પ્રકાર દર્શન કરકે મંદિર સે બાહર આયે  
તખ આપસ મેં કહને લગે કે ભાઈ ઠાકુરજી કા કેસા સ્વરૂપ થા  
એકને તો અંગુલી જૈસા હી ખતાયા, દૂસરેને પંજે જૈસા ખતાયા  
તીસરેને ડડે જૈસા ખતાયા, ચૌથે ને સારંગી જૈસા ખતાયા ઓર  
પાંચવે ને ગોસે જૈસા ખતાયા. વે ઇસ પ્રકાર આપસ મેં એક  
દૂસરે કે ચિરુદ્ધ બકને લગે તખ ઉનકે પરસ્પર વિવાદ હો ગયા  
ઉસ સમય જહાં જો કાણા થા ઉનકી બાતેં સુન ર કે હંસતા રહ્યા  
કયોંકે વે પાંચોં હી વૃથા બકતે થે. એસે હી યે જો પાંચ શાસ્ત્ર  
હૈં સો અધોં કે સમાન હૈં. જ્યાં જો વેદાંત હૈં સો કાણે કે સમાન  
હૈં કયોંકે જૈસે કાણે કો ઠાકુરજી કા યથાર્થ જ્ઞાન થા, ઓર વે  
અધે કિસી એક અંગ કો હી ઠાકુરજી કહતે થે. તૈસે હી યે પાંચોં  
શાસ્ત્ર હૈં, કોઈ તો અન્નમય કોષ જો યહ સ્થૂન શરીર હૈં ઉસી કો  
આત્મા કહતે હૈં, ઓર કોઈ પ્રાણમય કો, કોઈ મનોમય કો, કોઈ  
જ્ઞાનમય કો ઓર કોઈ આનન્દમય કોષ કો હી આત્મા કહતે હૈં.

ઈસ પ્રકાર ત્રીન શરીર ઓર ઉનમેં જો પંચકોષ હૈં વે કિસી  
એક અનાત્મ્ય પદાર્થ મેં આત્મબુદ્ધિ કરકે નાના પ્રકારકે વિવાદોં  
સે ઉન અધો કી તરફ કલેશ કો હી પ્રાપ્ત હોતે હૈં, જૈસે કાણા  
ઠાકુરજી કે યથાર્થ સ્વરૂપ કો જાનતા હૈં સો ઉન અધો કી બાત  
કો સુનકે હંસતા હૈં વૈસે હી અન્નમય આદિ કોષ કો આત્મા  
માનકર અન્યથા બકતે હુવે સુન કે હંસી આતી હૈં, ઓર જૈસા  
આત્મા કા સ્વરૂપ હૈં વૈસા હી સતયિત આનન્દ સ્વરૂપ સે જો

शास्त्र कथन करता है वही उसमें सतपना है। इसी प्रकार जो पुरुष सत वचन बोलने वाला होता है उसकी आत्मा सुनके संशय दूर हो जाता है। तैसे ही आत्म वस्तु में जो कुछ भी संशय हो वह वेदान्त शास्त्र के आरम्भार श्रवण करने से निवृत्त हो जाता है, और जो नित्य प्राप्त आत्मा है उसकी स्मृति हो जाती है उसी को ज्ञात कहते हैं, इसीसे वेदान्त शास्त्र को सत कहा है। परन्तु उसको काणा भी कहते हैं क्योंकि केवल वेदान्त के पढ़ने से परोक्ष ज्ञान होता है परन्तु जब गुरुमुखा से वेदान्त के अर्थ का श्रवण होता है तब दोनों से ही आत्मा का अपरोक्ष ज्ञान हो सकता है। इस प्रकार दूसरा नेत्र गुरु है, और जो वही यह आत्मा कहे कि गुरु किसको कहते हैं तो सुन—

॥ दोहा ॥

वेद शास्त्र में कुशल है आत्म ब्रह्मस्वरूप ।

आम्हि तले आनी नही, यह होय लुपका लुप ॥

एक अभ्युदित आत्मा, करे यही उपदेश ।

देश काल अरु वस्तु का जमें नाही देश ॥

अर्थ स्पष्ट है परन्तु लाव यह है कि वेद शास्त्र के जनने में यतुर हो और आत्मा को ब्रह्मरूप करके जननेवाला और निस्पृही हो, याहे कोई राज्यों का भी राज हो तो भी उसे नेत्र के नीचे नहीं लावे, जिज्ञासु जनों को यही उपदेश करे कि तू येतन आत्मा एक अभ्युदित है और देश काल वस्तु के परिच्छेदों रहित है, इस प्रकार जिज्ञासु पुरुषों की बुद्धि में नाना प्रकार के जो भेद रूपा पक्षी जैसे हैं उनको ज्ञान रूपी ताली बजा के तत्काल उड़ा देवे और सतमार्ग में बलावे, सो सद्गुरु कहलाता है। ऐसे सत पुरुषों का संग और सत शास्त्र का विचार जो नित्य प्रति करते हैं उनका कल्याण होने में क्या संशय है ! वे तो सदा ही कल्याण रूप हैं, आप स्वतः संसार समुद्र से तरे हैं और दूसरों को भी तार देते हैं जैसे नौका तैरती है और अन्य को भी तार देती है। ऐसे सतशास्त्र का विचार और महा पुरुषों के संग ही का नाम सतसंग है। सतसंग ही के



કારણ આદિક કે સંબંધ મેં જો પ્રશ્ન ક્રિયા છે તેસકા ઉત્તર તું  
અર્થ શ્રવણ કર. જળ મનુષ્ય કે કિસી પૂર્વ જન્મ કે શુભ કર્મ  
ભોગ દેને કે અર્થ સન્મુખ હોતે હૈં. તથા ઉસકે અન્તઃકરણ મેં  
શુભ વાસના ઉત્પન્ન હોતો હૈં. ઉસ વાસના કે અનુસાર જો પુરુ-  
ષાર્થ ક્રિયા જાતા હૈં વહી પુરુષાર્થ સતસંગ કા કારણ હોતા હૈં,  
સતપુરુષોં કે વચનોં મેં ચિત્ત કી સ્થિતી હોના સતસંગ કા સ્વ-  
રૂપ હૈં, ઓર તત્ કથનં તત્ ચિન્તનં તત્ પરસ્પર બોધનં અર્થાત  
વારંવાર ઉસી સત વસ્તુ કા કથન કરના, ઉસીકા ચિન્તન કરના  
ઓર ઉસી કે પરસ્પર વિચાર કરકે અધિકાધિક જાનના યહી  
સતસંગ કા સ્વરૂપ હૈં. નિષ્કામ કર્મ સે લેકર મોક્ષ પર્યંત જો  
સાધન સાધ્ય પદાર્થ પ્રાપ્ત હોતે હૈં સો સતસંગ કા ફલ હૈં,  
ઓર સતસંગ કી અવધી તો કુંછ હૈં નહીં, પરંતુ જળતક કંઠમેં  
પ્રાણ રહે વહાં તક અથવા વિદેહ મોક્ષ પર્યંત સતસંગ અવશ્ય  
હી કરના ચાહિયે ફિર આપહી અવધી હો જાયેગી, યહી  
ઉસકી અવધી હૈં જળ ઇસ પ્રકાર કારણકો સ્વરૂપ કો ઓર ઉસકે  
ફલ તથા અવધી કો જાન કર નિત્ય પ્રતી સતસંગ કરેગા તથા  
દીર્ઘકાલ કે અભ્યાસ સે ઉસ સત વસ્તુ કા જ્ઞાન તેરે કો હોગા,  
ક્યોંકિ સત પુરુષોં મેં ઓર સતશાસ્ત્ર મેં યહી સતપના હૈં કિ  
અપને સહિત જિતના સ્થૂન ઓર સૂઝમ પસારા હૈં ઉસકો મિથ્યા  
કરકે જનાતે હૈં ઓર જો ચેતન આત્મા હૈં ઉસે સતરૂપ કરકે  
કથન કરતે હૈં, યહ સત્યવાદીપના ઉનમેં હોને સે હી વે સતકહે  
જાતે હૈં. સતશાસ્ત્ર કે અતિરિક્ત અન્ય ગ્રન્થ જો વસ્તુ કા યથાર્થ  
કથન નહીં કરતે હૈં, સો સભી અસત કહે જાતે હૈં, તેસે હીજો  
સત કા ઉપદેશ કરને વાલા ગુરુ હૈં ઉસસે ભિન્ન જો કંઠી માલો  
કે બાંધનેવાલે ઓર કાન મેં કુંક મારને તથા મંત્ર યંત્રકે સુનાને-  
વાલે ઓર ચોટી કાટકે ગેરુએ કપડે રંગને આદિ નાના પ્રકાર  
કે ચિન્હોવાલે હૈં, સો સખ અસત ગુરુ કહે જાતે હૈં. ઉનકા  
સંગ કરને સે જીવ ઇસ સંસાર સમુદ્ર મેં તિર નહીં સકતે ક્યોંકિ  
કાઠકે સંગ મેં લોહા તિરે પરંતુ લોહ કે સંગ લોહા નહીં તિરતા  
હૈં, ઇસી પ્રકાર સે વે તો આપહી કામ ક્રોધ લોભ મોહ રૂપ  
લોહ સમાન ભાર કો પ્રાપ્ત હો રહે હૈં, દૂસરે કો કૈસે તિરાવેગે.

ઇસસે જો પુરુષ એસે ગુરુ કા સંગ કરેગા સો

કુટા કાન રૂડક થૂક ન્યાય

કો કૈસે પ્રાપ્ત હોગા સો દિખાતે હૈં. એક ગૃહસ્થી એસા થા કિ અપને હાથોં સે કુછ કામ ઉસને નહીં કિયા ઔર ઉસકે ભાઈ પિતા આદિ જો કમાઈ કરકે ઉસકા પાલન પોષણ કરતે થે સો દૈવયોગ સે હૈજે કી બિમારી ચલને સે સારે મર ગયે. તખ ઉસ પુરુષ ને અપને મન મેં બિચાર કિયા કિ કમાઈ તો હોવે નહીં, ઔર ખાને કો દોનોં વક્ત ચાહિએ, ઇસ લિએ કોઈ એસા હુનર ધંધા કરના ચાહિએ કિ જિસસે તકલીફ નહીં હોવે, ઔર ખાને પીને કા-કામ ચલ જાય. ઉસને સખ કામોં કો અપને મન મેં વિચારા તો સભી મેં ઉસકો તકલીફ દિખાઈ દી. પરંતુ માંગના ઉસકો સુગમ માલૂમ હુવા. તખ બાબા કા સ્વાંગ બના કર નજદીક કે ગ્રામો મેં જા કે માંગ લાને લગા. ફિર લોગોં મેં જાન પહિચાન ભી હો ગઈ તખ તો ગંડા ગોલી ભી કરને લગા, ઔર ચેલી ચેલા ભી બહુત સે હો ગયે. કુછ ચેલે કહુને લગે કિ મહારાજ આપ કાહે કો તકલીફ ઉઠાતે હો. વહીં એક વહુત અચ્છા મકાન બનાવા દિયા ઔર મહારાજ ઉસમેં રહુને લગે. ફિર ઔર ભી ચેલે બહુત સે હોગયે ઔર ખૂબહી આનંદ કે તાર બાજને લગે. કોઈ તો પુત્ર કી ઇચ્છા કરકે ઉનકી સેવા કરે ઔર કોઈ ધન કી કામના કરકે સેવા કરે. ઇસ પ્રકાર જખ ગાડા ગુડકને લગાં તખ ઉન ચેલોં મેં કોઈ પુરુષ પરમાર્થ કે ભી જિજ્ઞાસુ થે, ઉનહોંને મહારાજ સે પૂછા કિ હે ભગવન ઇંસ દુખ રૂપ સંસાર સે યહ જીવ કીસ પ્રકાર મુક્ત હો સકતા હૈ, યહ ખાત આપ કૃપા કરકે હમારે કો બતા-ધયે ! તખ વે કહુને લગે કિ ભાઈ અભી તો તુમહારી જવાન ઉમર હૈ, બચ્ચે બચ્ચિયોં કા વિવાહ કરો, ફિર તુમકો બતા દેગે. અભી કયા જલદી હૈ. તખ ઉન ચેલા ને કાલ પાકે ફિર પૂછા કિ મહારાજ અબતો કુછ બતાઓ, ઉમર તો બીતી જતી હૈ, તખ બાબા ને કહા અરે, તુમ એસી જલદી કાહે કો કરતે હો, બેટોં



કે બહુ આનેદા ઔર પોતે પોતી હોને દો. ઇસ પ્રકાર વો લખોડ  
શાખવાલી બાતે કરતા રહ્યા. અન્ત મેં દૈવયોગ સે ઉસ બાબા  
કા શરીર શાન્ત હોગયા. તખ કુત્તે કી ચાની પ્રાપ્ત હુવા. ઉસ  
કે જિજ્ઞાસુ ચેલોં કો ગુરુસે મિલને કી કામના થી. વે ભી મર  
કે કુત્તે હી હુવે. ગુરુજી પહિલે હી સે હાડ ચાખતે ફિરતે થે.  
વે ચેલે ગુરુજી કો મિલ કર કહુને લગે કિ મહારાજ આપ ઔર  
કોન ગાંત કો પ્રાપ્ત હુવે હૈં. અબતો કુછ બતાઓ. તખ વહ  
કાન હિજાકે કહતા હૈ અરે મૈને તો ખાને પીને કે લિયે સ્વાંગ  
બનાયા થા ઔર મૈં કુછ ભી નહીં જાનતા થા. તખ વે ચેલે  
કહુને લગે કિ ત્રિકકાર હો તેરેકો ક્યોંકિ તૂં આપ ભી ડૂબા ઔર  
હુમેં ભી કુબાયા. ઇસી પર કહતે હૈં—

દોહા—ઝુઠે ગુરુ કે આસરે, ડૂબિ ગયે બહુ જીવી ।  
સચ્ચા સતગુરુ સેધયે, જસે પાવે પીવ ॥  
ઝુઠે ગુરુવા મરિ ગયે; હો ગયે ભૂત સમાન ।  
સચ્ચૈ ગુરુ સે પાધયે, સત વસ્તુ કા જ્ઞાન ।

જખ ઇસ પ્રકાર સત ઔર સત શાસ્ત્ર કા વિચાર ઔર  
મહા પુરુષોં કા સંગ કેઈ કરતા હૈ તભી વહ જીવ કદ્યાણુ કા  
ભાગી હોતા હૈ,

ચૌપાઈ

જે તિરિ ગયે તિરંગે જેતે  
અખ તિરતે હૈ કહું અરુ કેતે  
સો સાધુ સંગતિ સે જાનો  
દુજા ઔર ઉપાય ન માનો.

ઇસમેં બહુત લિખને કી જરૂરત નહીં હૈ. જિસ કિસી  
ઘર કી બુદ્ધિ હોતી હૈ વહ થોડ હી મે સમજ લેતા હૈ ઔ  
ઉસ કે સમજને કે લિયે એક—

कुंडलिया, लिपते हैं

सत संगति भलिमा कही लीनै यही प्रसाद ।  
 हम कहुया तुम सुन्या इस को रખना याद ॥  
 इसको रખना याद, पाद काहु से न कीजे ।  
 ने कोध साधू भित्ते, संग वाहु का कीजे ॥  
 लोभी लंपट लालची, धनसे रहना दूर ।  
 गुप्तानन्द निज रूप लभि, सदां अक भरपूर ॥

हे शिष्य तेरे को कर्ता बुद्धि है. इसी से तुझे आत्मा में कर्तव्य आंति हो रही है, जब तू और सर्व किया का त्याग करके एक सतसंग को ही करेगा तो उस से तेरी कर्तापने की आंति भिड़ जायगी, और आत्मा को अन्नरूप करके अपने आपही जानेगा कि वह कर्ता किया कर्म से रहित है.

॥ धृति श्रीसतसंग रत्न समाप्त ॥

[ ३ ]

## अथ निष्काम रत्न

कर्म कहे हैं वेद में, सुन तिनका विस्तार ।  
 एक निषिद्ध दून विधि, सो कहिये चार प्रकार ।  
 काम्य प्रायश्चित्त नित निमित्त, करो कामका त्याग  
 नित्त निमित्तक कीजिये, इलका तजि के राग ॥

अर्थ यह है कि वेद में जो कर्म का कथन किया है उसका विस्तार यह है—एक तो निषिद्ध कर्म कहाता है जिसको कभी नहीं करना चाहिये क्योंकि वह वेद विरुद्ध है, यदि कोई ऐसा पूछे कि निषिद्ध कर्म कौन से हैं तो सुन—



परस्त्रीगमन करना, जुवा खेलना, मदिरा भांस पाना, वेश्या का संग करना, चोरी करना जिन जूझके किसी की व्यवस्था करना, जुठ खेलना. कमती तोलना, धृत्यादि सभ निषिद्ध ही हैं. इस से ये कर्म कदापि नहीं करना चाहिये.

दूसरे विधि कर्म है सो चार प्रकार के हैं ( १ ) काम्य ( २ ) प्रायश्चित्त, ( ३ ) नित्य, और ( ४ ) नैमित्तिक. जिज्ञासु पुरुष काम्य कर्म और निषिद्ध का त्याग करके नित्य और नैमित्तिक कर्म को इस की धृष्टा से रहित होकर करे, तब उसे ऐसे कर्म से नित्य सुख की प्राप्ति होती है, और जो इस की धृष्टा रण कर करता है उसे अनित्यही इस मिलता है. इसी पर तेरे को अधिक

### राज मन्दिर मण्डूर न्याय

सुनाते हैं, सो अपने मन को सावधान करके सुन. किसी राजा का एक भवान् बनता था उसमें बहुतसे मण्डूर लगे हुवे थे. उन मण्डूरोंमें एक ऐसा मण्डूर था जो कामतो कर दे और मण्डूरी चुकाते समय नहीं ले, फिर जन्म गिनती होवे तब एक मनुष्य जहा निकले और जन्म मण्डूरी चुकावे तब कमती होवे. इस प्रकार एक मण्डूरकी मण्डूरी जन्म जाती थी. जो मण्डूरी चुकानेवाला कामदार था सो कहने लगा अरे मण्डूरों ! यह एक मनुष्य की मण्डूरी जन्म जाती है और गिनती पूरी होती है, वह केन मण्डूर है सो मण्डूरी नहीं लेता है. तब फिर जिन मण्डूरों के पास में यह रहता था वे कहने लगे कि हुजूर वो यह है, तब कामदार बोला अरे तुम मण्डूरी क्यों नहीं लेते. तब वह कहने लगा कि काम तो हमारा ही है मण्डूरी किससे लेवें, क्योंकि राजा तो सारी प्रजा का पिता है और प्रजा पुत्र के समान होती है, फिर पुत्र पिता से क्या मण्डूरी लेवे. ऐसी बातें उस मण्डूर की सुन के कामदार ने वह उकीकत राजा की कचहरी में जाकर कही, और आगिर जन्म ये सभ राजा के कान तक पहुँची तो राजाने कहा उस मण्डूर को हमारे पास लाओ. इस परसे कामदास उस मण्डूर को राजा के पास ले गया. तब राजा ने पूछा अरे तुम मण्डूरी क्यों नहीं

લેતે. ઉસને જૈસા કામદાર સે કહા થા વૈસા હી રાજા કો બી ઉત્તર દિયા. ઉસકી બાત સુન કે રાજા બડા પ્રસન્ન હુવા ઓર બોલા કિ તુમ હમારે પાસ રહા કરો, ઉસને કહા હુજર બહુત અચ્છા. ફિર રાજા કે પાસ રહને લગા, ઉસકા સચ્ચા વ્યવહાર ઓર નિષ્કામતા દેખ કે કુછ કાલ પાકર જ્યાદે કયા કહેં ઉસકો હી રાજા બના દિયા ઓર રાજા ખુદ હાકુરજી કે ભજન કરને કે વાસ્તે વન કો ચલા ગયા. યહ તો દષ્ટાંત હૈ. દષ્ટાંત યહ હૈ કિ રાજા કો નાઈ તો ઈશ્વર હૈ ઓર મજદૂર કી નાઈ યહ જીવ હૈ જિસકે અનેક પ્રકાર કે શુભ કર્મ કા ફલ હી મજદૂરી હૈ ઓર એસે ફલ કી કામના કા ત્યાગ હી નિષ્કામતા હૈ, જૈસે રાજા ને ઉસ મજદૂર કો અપને પાસ હી રખ લિયા થા, તૈસે હી ઈશ્વર નિષ્કામ કર્મ કરનેવાલે ભક્ત કે વશ હોકર વહ આપહી ઉસકે પાસ રહતા હૈ ઓર જિસ પ્રકાર રાજા ને સખ રાજા દે દિયા થા તૈસે હી વહ નિષ્કામી ભક્ત અપને આપકો હી ઈશ્વર કે અર્પણ કર દેતા હૈ ઈસ પ્રકાર નિષ્કામ કર્મ મહાન નિત્ય સુખ રૂપી ફલ હૈ જો સર્વ પાપોંકા નાશ કરનેવાલા હૈ, યહ બાત કહ શિષ્ય પ્રશ્ન કરતા હૈ-હે ભગવાન ! આપ કહતે હો કિ નિષ્કામ કર્મ સર્વ પાપોં કા નાશ કરતા હૈ સો યહ કહના આપકા બનતા નહીં કયોંકિ જો જ્ઞાનવાન હૈં વે ભી દુખ ભોગતે હુવે દેખને મેં આતે હૈ ઓર જ્ઞાન સે પૂર્વ ઉન્હોંને નિષ્કામ કર્મ કિયે તો ફિર ઉનકો દુખ નહીં હોના ચાહિયે. એસી શંકા હોને પર ગુરુ કહતે હૈં કિ નિષ્કામ કર્મ કરને સે પાપોં કી સર્વથા નિવ્રત્તી નહીં હોતી હૈ. જૈસે બીજ સે દો અંકુર નિકલતે હૈં એક તો નીચે કો જતા હૈ ઓર દૂસરા ઉપર કો આતા હૈ, નીચે કે અંકુર મેં પુરુષાર્થ નહીં ચલતા હૈ. ઉપર કે હી મેં પુરુષાર્થ ચલતા હૈ. તૈસે હી કર્મરૂપી બીજ સે ભી દો અંકુર નિકલતે હૈં, એક તો વાસના ઓર દૂસરા અદ્વૈત. અદ્વૈતસે સુખ દુખકા જો ભોગ હોતા હૈ સો દુર નહીં હો સકતા, પરંતુ વાસના રૂપી અંકુર ઉપર કે અંકુર કી નાઈ ફિર જતા હૈ, ઓર સર્વથા નાશ તો ઉસકા ભી નહીં હોતા હૈ. પરંતુ વિરોધી શુભ વાસના સે અશુભ વાસના



જો જન્માન્તર કે મલિન કર્મ સે હોતી હૈ સો પલટ કે શુભ હો  
જાતી હૈ, ઐસા અવસર પ્રાપ્ત હોને પર વિવેક વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન  
હો કે શ્રવણ મેં પ્રવૃત્તી હો જાતી હૈ. શ્રવણ સે જ્ઞાન હોકર  
સર્વ સંચિત આગામી કર્મોં કા નાશ નહીં હો જાતા હૈ, પ્રાચીન  
કર્મ કર્મોં ભોગને સે નાશ હોતા હૈ, ઇસ રીતિ સે સર્વ કર્મોં  
કા નાશ નિષ્કામ કર્મોં સે કહા હૈ. સો વાસના કે પલટ જાને કારણ  
સંભવ હૈ. સાક્ષાત નિષ્કામ કર્મ સે સર્વ કર્મોં કા નાશ નહીં  
હોતા હૈ. ઇસી સે જ્ઞાનવાન કો ભી સુખ દુખ હોતે હૈ ઇસ  
ખાત કો ભણી ભાંતિ સમજ કર શિષ્ય પૂછતા હૈ.

ભગવન ! આપને જો યહ નિષ્કામ કર્મ રત્ન કહા હૈ સો  
ઇસ મેં રત્નપના ક્યા હૈ ઔર નિષ્કામતા ક્યા હૈ, ઔર ઇસકા  
કારણ તથા સ્વરૂપ ક્યા હૈ ઔર ફલ તથા અવધી ક્યા હૈ, યહ  
સખ આપ હમારે કો સમજાય કે કહિયે.

ગુરુ કહતે હૈ, હે શિષ્ય. શ્રુતિ સ્મૃતિ આદિ મેં અનેક પ્રકાર  
કે કર્મોં કા કથન કિયા હૈ સો સખ કર્મોં કા સાર ખીચકે મહાત્મા  
પુરૂષોં ને નિષ્કામ કર્મ કે રૂપ મેં જિજ્ઞાસુ પુરૂષોં કે વાસ્તે રખા  
હૈ યહી ઉસમેં રત્નપના હૈ ઔર ઇસ લોક તથા પરલોક કે પદાર્થોં  
કી કામના ઇસમેં નહીં હૈ યહી ઇસ મેં નિષ્કામપના હૈ. શાસ્ત્રો  
મેં સકામ કર્મ કે ફલ કો અનિત્ય કહા હૈ ઔર નિષ્કામ કર્મ  
કે ફલ કો નિત્ય કહા હૈ, જૈસે ગીતા મેં ભગવાન કહતે હૈ—

શ્લોક ॥ નેહાભિક્ષમ નાશોસ્તિ પ્રત્યવાયો ન વિધતે ।

સ્વલપમપ્યસ્ય ધર્મસ્ય ત્રાયતે મહતો ભયાત ॥

ઇસ પ્રકાર ઐસે શાસ્ત્ર કા બારંબાર શ્રવણ કરના હી  
નિષ્કામ કર્મ કા કારણ હૈ, ઔર કિતી ભી લૌકિક, વૈદિક આદિ  
પદાર્થોં કી કામના નહીં કિન્તુ કેવલ અપને કલ્યાણ કી કામના  
હી ઉસકા સ્વરૂપ હૈ, ઔર અશુભ વાસના કી નિવૃત્તિ હોના  
ઉસકા ફલ હૈ. અશુભ વાસના નિવૃત્ત નહીં હો તખતક નિષ્કામ  
કર્મ કરે, ઔર જખ અશુભ વાસના અપને અંતઃકરણ મેં નહીં  
શહે તખતકી કરે, યહી ઉસકી અવધી હૈ. ફિર મહદોષ નિવૃત્ત

હો જાતા હૈ ઇસી મલદોષ કો અશુભ વાસના કહતે હૈં. સો નિષ્કામ કર્મ સે દૂર હોની હૈ.

ભગવાન ને સખ કર્મો સે ઓર નિષ્કામ કર્મ હી કો શ્રેષ્ઠ કહા હૈ. ઓર ઉસકે કરનેવાલા જો પુરુષ હૈ ઉસકો સર્વ તપસ્વી જ્ઞાનીને કર્મ સે ભી શ્રેષ્ઠ કહા હૈ. ચાંદ્રાયન કૃત્તિક આદિક ઉપાસના કરનેવાલે કો તપસ્વી ઓર શાસ્ત્ર કે પદ પદાર્થો કે જાનનેવાલે કો જ્ઞાની ઓર સકામ કર્મ કરનેવાલે કો કર્મી કહતે હૈં. ઇન સે અપરોક્ષ આત્મજ્ઞાની ઉંચા હૈ, ઇસ પ્રકાર નિષ્કામ કર્મ કરનેવાલે કો ભગવાન ને સખ સે ઉંચા કહા હૈ.

॥ ઇતિ શ્રી નિષ્કામ કર્મ રત સમાપ્તમ ॥

[૪]

## અથ ભક્તિરત્ન

દોહા—ભક્તિ નામ યક કહત હૈં, તિસકે સુન અખ ભેદ ।

નોંધા, પ્રેમા, અરુ પરા, યોં કહત શાસ્ત્ર વેદ ॥

વાસ્તવ મં નોંધા, પ્રેમા, પરા ભેદ સે ભક્તિ ત્રીન પ્રકાર કી હોતી હૈ. ઇસ પ્રકાર શાસ્ત્ર મં ભક્તિ કે ત્રીન ભેદ કહે હૈં.

દોહા—નોંધા નૌ પ્રકાર સે, ઇશ્વર મં ચિત લાય ।

યાહી સે ભક્તી કહી; ભય સખગત હો જાય ॥

અર્થ : નોંધા કહિયે નૌ પ્રકાર સે ઇશ્વર મં અપના મન લગાને સે નાના પ્રકાર કે જો જગત કે ભય હૈં સો સારે દૂર હો જાતે હૈં, ઇસી સે ઇસે નોંધા ભક્તિ કહતે હૈં.

શિષ્ય પૂછતા હૈ હે ભગવાન, વહ નૌ પ્રકાર કૌન સે હૈં જિનસે ઇશ્વર મં મન લગે સો આપ કૃપાકર કે બતાઈયે. ગુરુ કહતે હૈં, હે શિષ્ય, જિસ કથા મં પરમેશ્વર કા કથન હોતા હો ઉસકો ચિત્ત લગા કર શ્રવણ કરના, ઇસકો શ્રવણભક્તિ કહતે



॥११॥ धृतिर के जिन विशेषणों को अवलू किया हो उन विशेषणों का लिख लिख कथन करना कि धृतिर कैसा है, सत्यकाम है, सत्य संकल्प है, दयालू है, अंतर्यामी है, ओष्ठ है, परमानन्द स्वरूप है, व्यापक है, अजन्मा है, अविनाशी है, और असा यितघन देव है कि जिसका नाश कभी नहीं होता है, इसको धीर्तन कहते हैं ॥१२॥ जो धृतिर के विशेषण पूर्व कथन किये हैं उनको वारंवार याद करना ही उसकी नामस्मरण लक्ष्ति है ॥१३॥ जो पाद सेवन रूपी लक्ष्ति कही है सो प्रत्यक्ष में तो धृतिर के पादों का सेवन जनता नहीं क्योंकि धृतिर में परोक्षता धर्म है परंतु यत्न और अयत्न ये दो प्रकार के परमेश्वर के स्वरूप कहे हैं, इस में भूतत्मा तो यत्नरूप परमेश्वर का रूप है, और भूति आदिक अयत्नरूप है. इनके पैरों का पूजन करना ही परमेश्वर की पाद सेवन लक्ष्ति कही जाती है ॥१४॥ दो प्रकार का परमेश्वर का स्वरूप कहा है. उन दोनों का श्रद्धापूर्वक नाना प्रकार के धूप दीप पुष्पमाला चन्दनादिका जो लेपन करते हैं उसी को अर्थन लक्ष्ति कहते हैं ॥१५॥ इनके चरणों में प्रेम पूर्वक श्रद्धा लक्ष्ति से नमस्कार करने को चन्दना लक्ष्ति कहते हैं ॥१६॥ परमेश्वर में इस प्रकार दास भाव होना कि परमेश्वर ही मेरे कर्म के फल को देनेवाला है, और मैं उस का दास हूँ. इसी को दास भाव लक्ष्ति कहते हैं ॥१७॥ जैसे ज्वालों ने अपना सभा रूप जन के परमेश्वर को लब्ध था उसी प्रकार परमेश्वर को अपना सभा रूप जन के हृदय वस्तु याद रखने ही को सभाभाव लक्ष्ति कहते हैं ॥१८॥ और निज के शरीर से आदि लेकर स्त्री, पुत्र, धन, धत्यादिको अपने नहीं जाने किन्तु धन सभ्य को परमेश्वर के ही जाने, इसी को आत्मनिवेदन लक्ष्ति कहते हैं ॥१९॥

इस प्रकार नौधा लक्ष्ति का विवेचन है. अथ प्रेमा लक्ष्ति के सम्बन्ध में कहते हैं.

दोहा—प्रेमा प्रीति हरि से जड़ी, और न कष्ट सुहाय ।  
लक्ष्ति भाव्या जगत से, मन दर्शन में लाय ॥

જહાં પ્રેમ તહાં નેમ નહિં, તહાં ન વિધિ વ્યવહાર ।

પ્રેમ મગન જળ મન ભયે, કૌન ગિનૈ તિથિ વાર ॥

અર્થ—યહુ હૈ કિ જિસ કાલ મેં નૌધા ભક્તિ કે દઠ અભ્યાસ હોને સે ફિર પ્રેમાભક્તિ હોતી હૈ, તખ સખ પદાર્થો સે પ્રીતિ છૂટ કર એક પરમેશ્વર મેં હી પ્રેમ હોજતા હૈ, ઇસી સે પ્રેમાભક્તિ કહતે હૈં. ભક્તિ થોં કહા હૈ કિ મન જગત કી તરફ સે તો ભગતા હૈ ઓર પરમેશ્વર કી ઓર જતા હૈ. જૈસે વિષયા-સકત પુરુષ કા મન પરમેશ્વર મેં લગાને સે ભી નહીં લગતા હૈ, ઓર વિષય ભોગોં કી તરફ સ્વતઃ હી ચલા જતા હૈ, તૈસે હી પ્રેમી ભક્ત કા મન પરમેશ્વર કી ઓર તો સ્વતઃ હી જતા હૈ ઓર સંસાર કે વિષય ભોગોં મેં લગાને સે ભી નહીં લગતા હૈ. જલ જૈસે નીચે કી ઓર જાકે ઠહરતા હૈ તૈસે હી ભક્ત કા મન એક પરમાત્મા મેં હી જાકર ઠહરતા હૈ કયોંકિ ઉસ કે અન્તઃકરણ સે જો વૃત્તી ઉઠતી હૈ સો પરમેશ્વર આકાર હી હોતી હૈ, ઓર જો કુછ દેખતા હૈ સો સખ પમેશ્વર કા સ્વરૂપહી ઉસકો ભાસતા હૈ.

॥ શેર ॥

નગર મેં બાગ મેં બન મેં ફુલ આલમ નિહારા હૈ ।

જિંધર દેખું ઉંધર પ્યારે સભી જલવા તુમહારા હૈ ॥

ઇસી પર એક તેરે કો—

લૈલા મજનૂં ન્યાય

સુનાતે હૈં, સો યહુ હૈ કિ દિલ્લી કે કિસી બાદશાહ કી લૈલી નામ કી એક લડકી થી, ઓર લાહોર કે બાદશાહ કા મજનૂં નામ કા એક લડકા થા. જખ લૈલી ને મજનૂં કી તસવીર દેખી તખ પરસ્પર ઉતકા સ્નેહ બઢ ગયા. દિલ્લી કે બાદશાહ ને લૈલી કે નિકાહ કી તયારી કી તખ લૈલી ને કહા કિ મેં તો મજનૂં સે નિકાહ કરુંગી, ઓર કિસી કે સાથ નહીં કરુંગી. બાદશાહ ને હુકમ દિયા કિ દેશ દેશાંતરોં મેં બખર કરવા દો કિ અમુક રોજ લૈલી કા નિકાહ હોગા જો કોઈ મજનૂં હો સો આવે. તખ દેશ



દેશાંતરે મેં ઢંઢારા ફિરગયા. બહુત સે મજનૂં બન ર કે આવે, ઓર વહ સચ્ચા મજનૂં ભી આયા. બાદશાહ ને સારે દિલ્લી શહર મેં વહ ઢંઢારા ફિરવા દિયા કિ જિસકી દુકાન મેં મજનૂં મેં કુછ ભી લે સો દે દેના. હામ સરકાર સે મિલ જાયે, તમ કેમ દેશાંતરેસે જો અનેક મજનૂં બન ર કે આવે થે, સો દુકાન મેં અનેક પ્રકાર કી ચીજે લેતે રહે ઓર ખૂબ માલ ઉગાને લગે. વહ જો સચ્ચા મજનૂં થા સો તો દિલ્લી સે ત્રીન મીલ દૂર જમુના કિનારે પર રહતા થા. જમ નિઠાહ કા દિન આગયા, તમ સારે શહર મેં ખખર કરવાદી કિ આજ લૌલી કા નિઠાહ હોવા. મેં કોઈ મજનૂં હો સો આવે ઓર જો નિઠાહ કા મકાન મુકરેર કિયા થા ઉસમેં લૌલી કો સામને ખિઠાદિયા ઓર ખીચ મેં લોહે કી તવી ગરમ કરવા દી. મજનૂં આને લગે ઓર તપતી હુઈ તવી કો દેખે ઉલટ ફિરને લગે, જો ઉલટ ફિરકર ચત્રોઉનકો પીજરા પૌલ મેં રોક દિયે. વહાં વે વનાવટી મજનૂં ચક્કી ફેરને લગે, અન્ત મેં જો સચ્ચા મજનૂં થા સો ભી આયા ઓર ઉસને લૌલી કો દેખા તમ ઉસકી વૃત્તિ લૌલી મેં હી લગ ગઈ, ઓર જો વહ તવી ગરમ હો રહી થી ઉસ કી તરફ ઉસને દેખા હી નહીં ક્યોંકિ ઉસકી વૃત્તિ તો લૌલી મેં હી લગ રહી થી. લૌલી કે સિવાય ઉસકો દૂસરા કુછ ભી નહીં દીખતા થા. ઉસ સચ્ચે મજનૂં સે લૌલી કા નિઠાહ હુવા ઓર જો મજનૂં ચક્કી ફેર ર કેર દાના દલતે રહે, વહ તો દુષ્ટાંત હૈ. દુષ્ટાંત-વહ હૈ કિ બાદશાહ કી નાઈ પરમેશ્વર હૈ ઓર લૌલી કી નાઈ ભકિત હૈ ઓર મજનૂં કી નાઈ પ્રેમી ભકત હૈ, જૈસે સચ્ચે મજનૂં કો લૌલી મિલી હૈ તૈસે હી સચ્ચે પ્રેમી ભકત હી કો લૌલી રૂપી ભકિત પ્રાપ્ત હોતી હૈ, ઓર જૈસે જો મજનૂં ચક્કી પીસતે થે તૈસે હી સકામી જો ભકત જન્મ મરણ રૂપ ચક્કી કે ફેર સે નહીં છૂટે. ઇસ સંસાર રૂપી કૈદખાને મેં હી પડે રહતે હૈ. ઇસી પ્રકાર જો નિષ્કામ પ્રેમભકિત કો કરતે હૈ સો હી ઇસ જન્મ મરણ ચક્ર સે છૂટે હૈ. ઇસી કા નામ પ્રેમાભકિત હૈ. અખ પરભકિત કો દિખાતે હૈ—

## ॥ દોહા ॥

પરા ન પારાવાર દે, વ્યાપક એક સ્વરૂપ ।

ભક્તી હી સે પાઈયે, એસા રૂપ અનૂપ ॥

અર્થ યહ હૈ કિ જિસ સે પરે કોઈ પદાર્થ નહીં હૈ સો હી સર્વ પદાર્થોં કી અવધી રૂપ હૈ, ઓર સર્વ સે સૂક્ષ્મ હૈ. યહ પરા શબ્દ કા અર્થ હૈ, ઓર એસા વ્યાપક, ઉપમા સહિત, એક સ્વરૂપ, ભક્તી સે હી પ્રાપ્ત હોતા હૈ, યહી પરાભક્તીકા તાત્પર્ય હૈ, સો એસા વ્યાપક ઉપમા સે સહિત એક રૂપ એક બ્રહ્મહી કહા જતા હૈ.

શ્રુતી—ઇન્દ્રિયેભ્ય પરાહર્થા અર્થેભ્યશ્ચ પરં મનઃ ।

મનસ્તો પરા બુદ્ધિ બુદ્ધરે આત્મ મહાન પરઃ ॥

મહતો પર મવિક્ત મવિક્તાત પુરુષઃ પર ।

પુરુષાન પરે કિંચિત સઃ કાષ્ટાસા પરાગતિ ॥

અર્થ યહ હર્થાં કહિયે શબ્દ, સ્પર્શ, રૂપ, રસ, ગંધ, યે જો વિષય હૈ, સો પર કહિયે. ઇન્દ્રિયોં સે સૂક્ષ્મ ઓર વ્યાપક હૈ ઓર ઇન વિષયોં સે મન સૂક્ષ્મ ઓર વ્યાપક હૈ, ઓર મન સે બુદ્ધિ સૂક્ષ્મ ઓર વ્યાપક હૈ, ઓર વ્યગ્રિ બુદ્ધિ સે સમગ્રિ બુદ્ધિ રૂપ જો મહાન આત્મા હિરણ્યગર્ભ હૈ, ઉસકી સમગ્રી બુદ્ધિ સૂક્ષ્મ ઓર વ્યાપક હૈ, ઓર અવ્યક્ત માયા સે પર કહિયે. સૂક્ષ્મ ઓર વ્યાપક બ્રહ્મ આત્મા હૈ, બ્રહ્મ આત્મા સે પર કહિયે. સૂક્ષ્મ ઓર કોઈ નહીં હૈ, ઇસલિયે પરા ગતી કહિયે. બ્રહ્મ આત્મા સર્વ કી અવધી કહિયે. સીમા અથવા હદ હૈ, ઇસ પ્રકાર આત્મા કો સર્વ સે સૂક્ષ્મ ઓર વ્યાપક રૂપ કરકે જાનના હી પરા ભક્તિ કા સ્વરૂપ હૈ. વાસ્તવ મેં પરા ભક્તિ ઓર પરાક્ષ જ્ઞાન મેં કુછ ભી ભેદ નહીં હૈ. શિષ્ય કહતા હૈ—હે ગુરો, યહ જો આપને ત્રીન પ્રકાર કી ભક્તિ કહી હૈ ઇસકા કારણ કોન હૈ, ઓર ઇસકા સ્વરૂપ ઓર ફલ ક્યા હૈ, ઓર ઉસકી અવધી કિસ પ્રકાર હૈ, કયોંકિ કિસી ભી કાર્ય કા કારણ, સ્વરૂપ, ફલ તથા અવધી જાને બિના ઉસ



કાર્ય મેં યથાર્થ પ્રવૃત્તિ હોતી નહીં હો, ગુરુ કહને હો—હે શિષ્ય  
 પૂર્વ જન્મોં મેં જે નિષ્કામ કર્મ કિયે હો, ઉન કર્મોં કે સંસ્કાર  
 ઓર ઇસ જન્મ કે પુરુષાર્થ સે જે મહાપુરુષોં કા સંગ કિયા હો  
 ય ત્રીનોંહી ભક્તિ કે કારન હો, ઓર પૂર્વ જે ત્રીન પ્રકાર કી ભક્તિ  
 કથન કી હો ઓર ત્રીનોંકે ગુરુ ર લક્ષણ કહે હો, સોહી ભક્તિ કા  
 સ્વરૂપ હો, વિદ્યેષ દોષ કી નિવૃત્તી ઉસકા ફલ હો, જમ્મ તક સત  
 અસત વસ્તુ કા દહ નિશ્ચય નહીં હો તમ તક ભક્તિ કરે, ઓર  
 જમ્મ દહ નિશ્ચય હો જતય તમ નહીં કરે. યહી ભક્તિ કી અવધી  
 હો, ફિર સત અસત વસ્તુ કા વિચાર હી કિયા કરે.  
 ॥ ઇતિ શ્રીભક્તિરત્ન સમાપ્ત ॥

[ ૫ ]

## અથ વિવેક રત્ન

ઇસી મેં વિચાર સંબંધી કુછ વિવેચન ભી કિયા જાવેગા. જાગ્રત  
 અવસ્થા મેં સ્થૂત શરીર સે નાના પ્રકાર કે સ્થૂત પદાર્થોં કા  
 ભોગ રૂપી વ્યવહાર હોતા હો. ઐસે વ્યવહાર ઓર સ્થૂત શરીર  
 કો ઓર ઉસકી જાગ્રત અવસ્થા કો જાનનેવાલા મેં ઇન સર્વ સે  
 ગુદા હો. ઇસી પ્રકાર સ્વપ્ન અવસ્થા મેં જે ૧૭ તત્વ કા સૂક્ષ્મ  
 શરીર હો ઓર ઉસ મેં નાના પ્રકાર કે જે સૂક્ષ્મ ભોગ્ય પદાર્થ  
 હો ઉનકો ઓર સૂક્ષ્મ શરીર કો ઓર ઉનકી સ્વપ્ન અવસ્થા કો  
 જાનનેવાલા મેં ઉન સે ગુદા હી હો. તેસે હી સુષુપ્તિ અવસ્થા મેં  
 જે કારણ શરીર હો, ઓર ઉસ મેં જે સુષુપ્તિ કા ભોગ ઓર સુષુપ્તિ  
 અવસ્થા હો, ઇન સર્વ કા જાનનેવાલા મેં તો વહાં ભી સમ  
 સે ગુદા હી હો. ઇસ પ્રકાર ઇન ત્રીન શરીર કે વિવેક સે હી પંચ-  
 કોષોં કા વિવેક હો જાતા હો.

ત્રીન શરીર ઓર પંચકોષ સે આત્મા કો પૃથક જાનને કા  
 નામ યથાર્થ વિચાર હો. ઇસ પ્રકાર કે વિચાર સે હી નિત્ય અનિત્ય  
 પદાર્થ જાના જાતા હો, કયોંકિ યે ત્રીન શરીર તો વ્યભિચારી હો.  
 વાસ્તવમેં ઇસ સ્થૂત દેહ કી પ્રતીતિ સ્વપ્ન મેં નહીં હોતી હો ઓર

स्वप्न पदार्थों का जाननेवाला मैं वहां भी हूँ. सूक्ष्म शरीर सुषुप्ति में नहीं रहता है, और सर्व के अनुभव करनेवाला मैं तो वहां भी हूँ. सुषुप्ति का कारण शरीर है, जो जाग्रत स्वप्न में नहीं रहता है और सूक्ष्म स्थूल पदार्थों का जाननेवाला मैं वहां भी हूँ. इस प्रकार के विचार से ही तीन शरीर और उन में जो पंचकोष और तीन अवस्था है ये सभ व्यक्तियारी और अनित्य है और आत्मा अनुगत होने से नित्य कहलाता है. अतः आत्मा की नित्यता और अनात्मा की अनित्यता का जो दृढ निश्चय है, उसी को विवेक कहते हैं.

शिष्य प्रश्न करता है—हे भगवान, यह तो सभी जानते हैं कि शरीर आदि अनित्य है, और आत्मा नित्य है, जैसे विवेक ही से वैराग्यादि उत्पन्न होते हैं. परंतु ऐसा विवेक तो कभी पुरुषों को भी होता है, क्योंकि शरीर से लिन्न आत्मा का ज्ञान कर्म का हेतु है. यदि शरीर इपही आत्मा को जाने तो शरीर जन्म यही लक्ष्म हो जावेगा, फिर कर्म के फल को कौन भोगेगा? इससे भोगनेवाले को ज़ुदा ही मानते हैं, फिर उनको वैराग होना चाहिए, सर्व कर्मों से रहित होना चाहिए. परंतु इस प्रकार होता तो नहीं है. कर्मों को ही करते देखने में आते हैं सो इसमें कारण क्या है आप कृपा करके कहिये.

गुरु कहते हैं. हे शिष्य, यद्यपि कभी को देह से लिन्न और नित्य रूप करके आत्मा का ज्ञान है भी परंतु अकर्ता रूप से आत्मा का ज्ञान कभी को नहीं है. इसी से वैराग्य आदि उत्तम साधन नहीं होते हैं और जो तुमने कहा था कि ऐसा सभी जानते हैं कि आत्मा नित्य है, और शरीर आदि अनित्य है. सो तेरा कहना दुरस्त है, परंतु उनके निश्चय में भेद है, क्योंकि विवेकी पुरुष को तो अन्यथ व्यतिरेक युक्तियों के सम्बन्ध में विचारपूर्वक दृढ निश्चय है और अविवेकी का विवेक समझान वैराग्य की नाई होता है, इसी कारण अविवेक को शरीर आदि में आत्मभुक्ति होती है, और विवेकी को निश्चय होने से शरीर



આદિ મેં આત્મબુદ્ધિ નહીં હોતી હૈ, ઇસી સે વિવેકી કો વૈરાગ્ય  
 આદિ ઉત્પન્ન હોતે હૈં ઓર વિવેકી કો આત્મ-અનાત્મ કો દૃઢ  
 નિશ્ચયપૂર્વક વિવેકે હૈ નહીં. ઇસી સે વૈરાગ્ય નહીં હોતા  
 હૈ, અતઃ ઉસકો અવિવેકી કહતે હૈં. ઇસ પ્રકાર સુનકે શિષ્ય  
 પૂછતા હૈ, હે ભગવાન ! આપને યહ જો વિવેક કા કથન કિયા  
 હૈ ! ઉસમેં રત્નપના કયા હૈ ઓર ઇસ કા કારણ, સ્વરૂપ કયા  
 હૈ ઓર ફલ કયા હૈ ઓર ઉસકી અવધી કયા હૈ સો આપ  
 કૃપા કરકે કહિયે. ગુરુ કહતે હૈં કિ જૈસે રત્નોં સે અનેક  
 પ્રકાર કે સ્વર્ણ રજત આદિ અશરદિયેં સરાફે મેં પ્રાપ્ત  
 હોતી હૈં, તૈસેહી વિવેક રૂપી રત્ન સે સતસંગ રૂપી સરાફે મેં  
 અનેક કો વૈરાગ્યાદિ અશરદિયેં, રૂપયે પ્રાપ્ત હોતે હૈં ઓર જિસ  
 પ્રકાર દ્રવ્ય પદાર્થ સે વ્યાવહારિક સુખ કી પ્રાપ્તી હોતી હૈ, તૈસે  
 હી વૈરાગ્યાદિસે પારમાર્થિક આનન્દ કી પ્રાપ્તી હોતી હૈ, યહી  
 ઉસ વિવેક મેં રત્નપના હૈ.

પૂર્વ જો ત્રીન પ્રકાર કી ભક્તી કહીં થી સો વાસ્તવ મેં ઐસી  
 ભક્તિ સે ચિત્ત કી એકાગ્રતા હોકર સત અસત પદાર્થોં કા વિચાર  
 ઉત્પન્ન હોતા હૈ. ઇસ પ્રકાર વિચાર કરને પર પદાર્થોં સે નિત્ય  
 અનિત્ય વસ્તુ કા વિવેક ઉત્પન્ન હોતા હૈ. ઇસલિયે ભક્તિ ઓર  
 વિચાર યે દોનોં હી વિવેક કે કારણ હૈં ઓર નિત્ય અનિત્ય સે  
 તાત્પર્ય યહી હૈ કિ આત્મા તો નિત્ય હૈ ઓર જો વૈરાગ્ય આદિ  
 કે ઉત્તમ સાધન વિવેક સે હોતે હૈં, યહી વિવેક કા ફલ હૈ, ઓર  
 જ્ઞાન પ્રાપ્ત હોને પર્યન્ત ઉસકી અવધી હૈ, ઓર વહ વિવેક રત્ન  
 જો કહા હૈ ઉસે જિજ્ઞાસુ પુરુષોં કો અવશ્ય સમ્પાદન કરના  
 આહિયે કયાંકિ યહી જ્ઞાન કે અન્તરંગ સાધનોં કા મૂલ હૈ.

॥ ઇતિ શ્રી વિવેક રત્ન સમાપ્ત ॥

# अथ वैराग्य रत्न

॥ कुण्डलिया ॥

वैराग्य नाम यक्ष कहत है, उभय भेद तील जन ।

पर अपर दो कहत है, तिनका करं ज्ञान ॥

तिन का करं ज्ञान अपर का यह विस्तार ।

यत्तमान व्यतिरेक यक्ष छन्दस्य अर्ध वशीकार ॥

वशीकार है तीन विधि तीव्र तर तीव्र मन्द ।

जो धन को धारन करे सोई पाव गुप्तानन्द ॥

अर्थ यह है कि एकही वैराग्य के पर और अपर दो भेद हैं। इस में अपर वैराग्य के चार भेद हैं। यत्तमान, व्यतिरेक, येकेन्द्रिय और वशीकार, वशीकार भी मन्द तीव्र, और तीव्रतर ऐसे भेद से तीन प्रकार का होता है, ये सभी एक ही वैराग्य की तारतम्यता करके भेद कहे जाते हैं परंतु जितनी वैराग्यमाला है, उस से तात्पर्य सूक्ष्म स्थूल, लोक परलोक के जो पदार्थ हैं, उन सभी के त्याग करने की का है।

दोहा—भोग लोक परलोक का मन में रहै न राग ।

दारा सुत वित गेह का करना चाहै त्याग ॥

ऐसी जात भियार के छांडि गये नृप राज ।

धारण कर निरवेद को कीन्हा अपना काज ॥

अर्थ यह है कि स्त्री, पुत्र, धन, आदि इस लोक के जितने भोग पदार्थ हैं, और अमृत पान, अप्सरादिक जो ब्रह्म लोक के भोग हैं, उन सभी का राग मन से जिसने दूर किया है, और इनके त्याग करने की इच्छा जिसको उत्पन्न हुई है उस पुरुषको



એસા વિચાર કરના ચાહિયે કિ ઈન ભોગ પદાર્થો મેં સુખ હોના તો રાજા ભોગ રાજા કે છોડ કે વૈરાગ્ય કે કયોં ધારણ કરતે! ઈસો સે જાના જાતા હૈ કિ પદાર્થો મેં સુખ નહીં હૈ. જો પદાર્થો મેં સુખ હોતા તો ઉન રાજાઓં કે તો બહુત સે પદાર્થો પ્રાપ્ત થે. ઇસ પ્રકાર અપને ચિત્ત મેં વિચાર કરના ચાહિયે કિ વિષયોં કે ભોગ સે સુખ નહીં હોના હૈ, કિન્તુ વિષયોં કે ત્યાગ મેં જો સુખ પ્રાપ્તિ કી ઇચ્છા હૈ ઉસકો ત્યાગ કરના ચાહિયે, કયોંકિ જિન રાજાઓં કે સર્વ ભોગ પદાર્થો પ્રાપ્ત થે ઉન કે ભી સુખ નહીં હુઆ તો હમારે કે કહાં સે સુખ હોગા. ઇસ પ્રકાર સે જો વિચાર કરતા હૈ સો હી વાસ્તવ મેં મનુજ્ય હૈ. જો મનુજ્ય શરીર પા કે એસા વિચાર કરકે વૈરાગ્ય કે ધારણ નહીં કરતા હૈ વહુ ગર્દભ કે સમાન હૈ. ઇસી પર તેરે કે અંક—

### રાજા સાધુ શોક નિવર્ત ન્યાય

સુનાતે હૈં સો તૂં સુન. એક રાજા કે મંદ વૈરાગ ઉત્પન્ન હુઆ થા. મંદ વૈરાગ કા લક્ષણ હૈ કિ ન તો વિષયોં કા ત્યાગ હોના ઓર ન ભોગ હોના. ઉભયતા સંદેહ હી રહતા હૈ, ઇસ પ્રકાર વહુ રાજા દ્વાતોં તરફ સંદેહ કરકે શોકાતુર હુવા તખ કામદાર મંત્રી ભોગ ભી રાજા કી દશા દેખ કે સભી ચિંતા મેં રહે ઓર આપસ મેં વિચાર કિયા કરતે કિ રાજા કી તો એસી દશા હોગઈ કિ જૈસે કોઈ સર્પ ચૂહે કે ઘોખે મેં છઠ્ઠુંદર પકડ લેતા હૈ, તખ વહુ ઉસ કે ખાતા નહીં ઓર ન છોડતા હૈ, કયોંકિ ઉસકો ખાવે તો કોઠી હો જાવે ઓર, છોડે તો વહુ ઉસકે નેત્ર ફોડ દે. ઇસી પ્રકાર રાજા કે ભી કોઈ બડા ભારી ખેદ આકે પ્રાપ્ત હુઆ હૈ ઇસકી નિવૃત્તી કા કોઈ ઉપાય કરના ચાહિયે, કયોંકિ સચ્ચા મંત્રી ભી વહી હૈ જો અપને મહારાજા કે દુખ પ્રાપ્ત હોને પર ઉસકી નિવૃત્તી કા ઉપાય કરે, નહીં તો સુખ મેં તો બહુત મંત્રી હો જાતે હૈં. જખ ઇસ પ્રકાર મંત્રિયોંને વિચાર કરકે અચ્છે બુદ્ધિમાન પંડિતોં કે બુલા કે પૂછા કિ મહારાજા કે જો બડા ભારી શોક હુવા હૈ ઉસ કી નિવૃત્તી કા કોઈ ઉપાય આપ જતાઈએ. મંત્રિયોં કી ખાત સુનકે પંડિતોં ને કહા કિ શોક નિવૃત્તી તો કોઈ

साधू महात्मा करते हैं। उस से तुम किसी साधू को ढूँढके लाओ, तब मंत्री ने आरों तरफ़ ढूँढनेवाले भेज दिये। किसी जगह गुरु भेला दो साधू मिल गये, उस समय वे अपनी कुटिया को लीप रहे थे। ढूँढनेवालों ने उनको नमस्कार किया, और कहने लगे कि महाराज आप कृपा करके बलिये, हमारा राज भउ शोक को प्राप्त हुआ है, उसको शोकनिवृत्त कीजिये। तब गुरु ने कहा कि बहुत अच्छा, और येलेसे कहा कि जज्या राज के शोक को निवृत्त करो। वह मिट्टी से लरा हुआ ही बल दिया और उनके संग में राज की कयलूरी में आया, तब राज ने उस महात्मा की तरफ़ देखा। उसको जेठंग देखके उस राज को हंसी आई, और अपने पास में उसके वास्ते गादी पिछवा दी। वह तो मिट्टी से लरे हुवे शरीर से उस गादी पर अकम्भ गिर गया, क्योंकि उस ढंग दुनिया जेठंग इकीर, अर्थात् जैसे राज तैसे ही इकीर।

वह राज कहने लगा कि महाराज, आप में और गधे में कितना इर्क है, आप बताइये। वह महात्मा अपने और राज के बीच की जमीन हाथ से नापकर कहने लगा कि गधे में और हमारे में दो हाथ का इर्क है। तब तो राज सन्नित हो के बोला कि महाराज आपने तो हमारे को ही गधा बनाया। मैं किस रीति से गधा हूँ सो कहिये। उस महात्मा ने उत्तर दिया कि हमने अपनी युक्ति से तुम को गधा नहीं कहा है, किन्तु तुम्हारे जैसे को शास्त्र ही गधा कहता है।

श्लोक

आत्मानमःत्मास्थं त वेति भूढा,

संसार कुपे, परिवर्त तोयः ।

तिक्त्वा तमाइपम विषियान भुक्ते,

सहे नरो साक्षात् एव गर्दलः ॥

अर्थ यह है कि आत्मा को परमात्मा रूप करके तुमने नहीं जाना है, और संसार इपी रूप में पडे हुवे हो। इसी से तुम



मुठ हो, और आत्मा का जो व्यापक रूप है, सो भी तुमने नहीं जाना है, और यत्किञ्चित् वैराग्य के होने से पदार्थों में दृष्टि होने के कारण उनको भी नहीं भोग सकते हो। जैसे पुरुष को ही शास्त्र ने साक्षात् गर्हण कहा है, इस प्रकार के लक्षण तुम्हारे में घटते हैं, इसी से तुमको गर्हा कहा है। इस रीति से जब मन्द वैराग्यवाले को भी गर्हण कहा है तो जिस को सत्त्वा वैराग्य का अभाव है, उस के गर्हणपने में क्या संशय है। वह तो साक्षात् गर्हण ही है, उस से परे और गर्हण कौन होगा। यह दशा गृहस्थ की कही है।

जो वैराग्य को धारण करके विषयों का त्याग नहीं करता है, वह लाभ गर्हणों का गर्हण है। इस से जिसने घर आम छोड़ कर वैराग्य धारण किया है, उसको स्त्री सग तथा पसे का संग्रह नहीं करना चाहिये, क्योंकि ये दोनों वैराग्य का नाश करनेवाले हैं। महात्मा पुरुषों का तो वैराग्य ही धन है। वैराग्य जिसके नहीं होता है उसी को साधुलोग कंगला कहा करते हैं, और जिसको वैराग्य से भी वैराग्य होता है, वही सभसे उत्तम कहा जाता है। सर्व पदार्थों से वैराग्य को उत्तम और निर्लभ्य कहा है।

श्लोक—

भोगे रोग भयं, सुप्ते क्षय भयं, वित्ते नृपलात भयं,  
माने हानि भयं, जये रिपु भयं, रूपे जराया भयं ।  
शास्त्रे वाद भयं, गुणेषु अलु भयं, काये कृतान्ताद भयं,  
सर्वम् वस्तु भयाव नित्यं भव भिनिषु वैराग्यमेवाभयं ॥

इस रीति से महात्मा पुरुषों ने वैराग्य ही को सर्व पदार्थों से उत्तम और निर्लभ्य कहा है। यही कारण है कि वैरागवान् पुरुष सर्व पुरुषों से उत्तम और निर्लभ्य दिव्य है। इसी पर अर्थ—

## ( २ ) राज-वज्र न्याय

सुनाते हैं। एक राजा का वज्र किसी समय अपने स्वामी से छीन कर लेता था, तब वह राजा किसी और ही तरफ काम कर रहा था। इससे वज्र की छीन नहीं सुन सका, तो भी एक दो बार उस वज्र ने कहा, परन्तु राजा की निगाह, वज्र की तरफ नहीं हुई। तब वज्र हैरान हो के अपने धिक्कार देता हुआ चल पड़ा, और अहसास करने लगा कि देखा, यह भी मनुष्य है और हम भी मनुष्य ही हैं, परन्तु हम लोग मोह के वश होकर, कैसे दीन हो रहे हैं। हम तो महाराज महाराज करते हैं, और वह हमारी तरफ नजर करके भी नहीं देखता है, इससे धिक्कार है ऐसी दीनता को, जिस ने हमको दीन किया है, और ये लोग मोह ही हमारे से नीच कर्म करवाते हैं। इसी से धन का त्याग ही करना योग्य है। ऐसा विचार करके वह राजा का वज्र सर्व का त्याग कर वन को चला गया जहाँ राजा को भ्रमर हुई कि वज्र साहज तो संन्यासी बन के बनको चले गये तब राजा ने और मंत्रियों से कहा कि चलो वज्र को मनाके लावेंगे। राजा और दूसरे मनुष्य जहाँ पर वज्र था जहाँ पहुँचे और राजा ने वज्र को देखा कि वो लम्बे पैर पसारें जमीन पर पड़ा है। राजा उसके पास जा के मोलने लगा तब वज्र नहीं मोला। तो राजा दो बार बार छीन करने लगा तो भी वो नहीं मोला। तब राजा कहने लगा कि वज्र साहज आपने इस प्रकार कर्म से किया। तब वज्र ने कहा कि हाथ सिकोउ जहाँ से। इस प्रकार वज्र के उत्तर देने पर राजा ने बहुत सी भिनती की कि आप हमारा कसूर माफ़ कीजिये और शहर को चलिए। तब वज्र ने अपने मन में विचार किया कि एक ही दिन के वैराग से राजा हमारे आगे हाथ जोड़ के भिनती करता है तो जानता है कि यह वैराग कोई बड़ी चीज है। इस को त्याग नहीं करना चाहिये, क्योंकि जिस राजा के लय से हमारा शरीर क'पायमान होता था वो इस वैराग के बल से एक सूत्रे तृणवत् प्रतीत होता है। इस प्रकार विचारने लगा और राजा हैरान होकर



अपने नगर को लौट आया। वैराग की श्रेष्ठता के सम्बन्ध में  
हो। पुरुष के परस्पर—

### (३) श्रेष्ठता विवाह न्याय

और भी श्रवण कर. वह इस प्रकार है कि किसी जगह  
हो पुरुष रहते थे. एक ने कहा कि यलो लैया, ठाकुरल के  
दरशन करें, तब दूसरा कहता है कि ठाकुरल तो मैं ही हूँ.  
यह सुन प्रश्नकर्ता ने कहा कि तुम ठाकुरल हो तो मैं मुकुट  
तब उस ने कहा कि मैं कीट हूँ इस पर से दूसरे ने कहा कि  
मैं पुष्प हूँ. तब पहिले ने कहा कि मैं लवरा तो दूसरा ओला  
कि मैं सूर्य हूँ. तो पहिले ने कहा कि मैं कर्ण हूँ. दूसरे ने कहा कि  
मैं दानी हूँ. पहिला ओला कि मैं निरयाह हूँ. तब दूसरे ने कहा  
कि इस में आगे बढ़ने को और कोई भी रास्ता नहीं है. वास्तव  
में ऐसी निरयाह वैराग से ही होती है. इस से भी जाना जाता  
है कि वैराग से भंडा और कोई भी पदार्थ संसार में नहीं है.  
इस लिये जिज्ञासु पुरुषों को अवश्य चाहिए कि वैराग की ही  
धारण करें.

यह बात सुनके शिष्य पूछता है वैराग का कारन कौन है,  
उसका स्वरूप तथा इस क्या है, और अवधी कितनी होती है  
सो कृपा करिके बताईये.

श्री गुरु कहते हैं कि पूर्व जो नित्य अनित्य पदार्थों का एक  
विवेक हुआ है उससे अनात्म पदार्थ में दोष दृष्टि मुक्त है. यह  
पदार्थ दृष्टि वैराग्य का कारण है और विषयों का मन से त्याग  
करना वैराग्य का स्वरूप है, और दीनता से रहित होकर दीनों  
का सा स्वांग धारण करके फिरना ही वैराग्य का फल है, और  
संसार के जितने लोग पदार्थ हैं उन सभीको भृगुतृष्णा के जल-  
वत बनना जैसे भृगुतृष्णा के जल से किसी की भी च्यास दूर  
नहीं होती है, तैसे ही पदार्थों से किसी की तृष्णा नहीं जाती  
है. इस से उन के त्याग करने से ही अमृत भाव की प्राप्ति होती

હૈ. યહી વૈરાગ્ય કી અવધી હૈ. સર્વ વેદશાસ્ત્રોં સે વિદ્વાન પુરુષોં  
ને યહી તત્ત્વ નિકાલા હૈ, ઇસી સે ઇસકો રત્ન કહા હૈ.  
॥ ઇતિ શ્રી વૈરાગ્ય રત્ન સમાપ્તમ ॥

[ ૭ ]

## અથ ષટ્સમ્પત્તિ રત્ન

દોહા—એક સાધન કે બીચ મેં, પ્રાપ્ત હોય ષટ બાત ।

તાકો ષટ્ સંપત્તિ કહે, અબ બિન્ન ર સુન તાત ॥

દુષ્ટ વિષયોં સે રોકના, મન કર્મ ઇન્દ્રિય જ્ઞાન ।

યાસે સમ, દમ, કહત હૈં, સમુજિ કરો પહિયાન ।

અર્થ યહ કિ એક હી સાધન મેં ષટ્ પદાર્થોં કી બે પ્રાપ્તિ  
હોતી હૈ ઇસકો ષટ્ સંપત્તિ કહતે હૈં. અબ ઉનકો જુદા ર કહતે  
હૈં, તૂ સુન. શાસ્ત્રને જિન વિષયોં કા નિવેધ કિયા હૈ, ઉન વિષયોં  
સે મન કો રોકને કા નામ સમ હૈ ઓર પંચ જ્ઞાન ઇન્દ્રિયોં ઓર  
પંચ કર્મ ઇન્દ્રિયોં કો ઉન્હોં વિષયોં સે હટાને કા નામ દમ હૈ.  
અબ શ્રદ્ધા ઓર સમાધાન કે સંબંધ મેં કહતે હૈં :—

ત્રોટક છન્દ ।

તીજ શ્રદ્ધા કો પાય જખી, ગુરુ વદ વચત સત જન તખી  
ચોથા સમાધાન સમજ સોઈ, મન મેં વિક્ષેપ નહીં કોઈ ॥  
પંચમી ઉપરતી સુનુ ખ્યારે ॥ સાધન અરુ કર્મ સભી જરે ॥  
નેત્ર સે નારિ લખૈ જખહી ॥ તિહિ દુઃખ અગાર પિખૈ તખહી  
યહ છઠી તિતિક્ષા જોઈ લહે ॥ સો દ્વંદ્વ ધર્મ કા સર્મ સહે ॥  
આતપ અરુ શીત ક્ષુધા તિરણાસ્વપ્ને સમ જનિ સહે મૃષા





## अथ मुमुक्षुता रत्न

कवित ।

भोक्षहि की धम्मा को मुमुक्षता कहत सुधी, नको  
यह होय ताको मुमुक्षु पदियानिये ॥ सुण की हो  
प्राप्ति जेध दुण की निवृत्ती होध, भोक्ष का रूप  
यही वेदन में गानिये ॥ समिद्धपाणि होय सतगुरु  
के शरणु जये, धम्मर से अधिकता में बक्ति दी को  
ठानिये ॥ पूर्व पुण्य से गुरुदेव ने प्रसन्न होय  
तिन के प्रसाद गुप्त रूपहि को लनिये ॥१॥

अर्थ यह है कि सुधी कहिये ओछ है, पि नाम पुनी जिनकी  
असे ने महात्मा पुरुष है वे भोक्ष की धम्मा को मुमुक्षता कहते  
हैं. और जिस पुरुष में यह धम्मा उत्पन्न होती है उसको ही  
मुमुक्षु कहते हैं. ने असा पूछे कि भोक्ष का स्वरूप क्या है, तो  
सुन. अत्यन्त सुण की प्राप्ति और अत्यन्त दुण की निवृत्ति को  
भोक्ष कहते हैं. यह वेद में भोक्ष का स्वरूप कहा है जिस की  
प्राप्ति के वास्ते समिद्ध पानि कहिये कुछ दाय पै ओठ रण के  
सतगुरु के पास न कर धम्मर से भी अधिक उन की अनुकूल  
सेवा करे, तब असी सेवा करने से अथवा किसी पूर्वजन्म  
के निष्काम कर्म से गुरु प्रसन्न हो के आप ही कृपा करके  
जा अर्थात् धन्द्रिये उन सर्वका ने पति अर्थात् प्रश  
असा गूढ और सूक्ष्म ने चैतन्य आत्मा है उसको निजका  
स्वरूप करके जना हते हैं असी ने यह मुमुक्षता है सो  
अलौकिक रत्न है क्योंकि ने लौकिक रत्न है उनका तो भाल सशोभ  
में होता है. जेहरी उन के व्यापार को जयता है तब कीमत



करता है, परन्तु आत्मरूपी रत्न निराकार और अनमोल है। उस  
की प्राप्ति वास्ते जिज्ञासु सतसंग रूपी सरोइ में जाता है तो  
तहां सतगुरुही जोहरी है। वे कैसे हैं ? वे निराकार और गूढ़  
कहिये। तीनों शरीर और पंचकोशसे ढके हुवे आत्मा को साक्षात्  
स्वरूप करके जना देते हैं; इसमें जिज्ञासा ही कारण है। इसी से  
उसको रत्न कहा है। अतः यह तो जिज्ञासु को अवश्य ही  
प्राप्त करना चाहिये। शिष्य कहता है, हे भगवन! यह मुमुक्षुता  
रत्न तो हीन है परन्तु इसका कारण हीन है और स्वरूप क्या तथा  
इस क्या है और इसकी अवधी किस प्रकार है सो आप कृपा  
करके कहो।

गुरु कहते हैं, पूर्व जो साधन कहे हैं, सो परम्परा से तो  
सही कारण है परन्तु साक्षात् कारण पर संपत्तीही है, और  
इसका स्वरूप पूर्व छन्दमें कथन किया वही है। मोक्ष की धृष्टा  
को मुमुक्षुता कहते हैं, सोही इसका स्वरूप है और श्रवण की  
प्राप्ती ही इसका इस है, जन्म तक श्रवण दृढ नहीं हो तबतक  
करे, फिर नहीं करे। यही इसकी अवधी है।

॥ धृति श्रीमुमुक्षुता रत्न समाप्तम् ॥

[ ८ ]

## अथ श्रवणरत्न

प्रथम श्रवण का स्वरूप दिजाते हैं।

॥ होहा ॥

जो सुनने में आवत, सज्जली सरवन जन ।

अधिकारी के भेद से, जुदा जुदा पहिचान ॥ १ ॥

जो अधिकारी ज्ञान का, गुरु से पूछे तत् ।

महावाक्य के अर्थ का, सरवन करना नित ॥ २ ॥

अर्थ यह है कि जो कुछ सुनने में आता है सो सही  
श्रवण कहा जाता है। यह तो श्रवण का साधारण स्वरूप है।

धर्म, धर्म, धर्म की धर्म, धर्म का प्रयत्न, और ज्ञान, तैसही  
 देश, काल, अद्य, प्रागभाव और प्रतिभंधाभाव ये ती, सर्व  
 कार्य के कारण होने से साधारण कारण कहे जाते हैं, और जो  
 अकेली कारण हो वह साधारण कारण होता है, जैसे रसना  
 धर्म से रसका ही का ज्ञान होता है, सुगंध आदि का नहीं  
 होता है, तैसही जो श्रवण किसी अकेली के वास्ते हो, वह श्रवण  
 का असाधारण स्वरूप कहलाता है, जैसे महावाक्य का श्रवण  
 एक ज्ञान की धर्मवाले के ही वास्ते है इससे महावाक्य के  
 श्रवण को असाधारण श्रवण करते हैं, जो पुरुष आत्मज्ञान  
 की धर्मवाला है सो सत वस्तु को ही गुरु को पूछता है और  
 महावाक्य के अर्थ को ही बार बार श्रवण करता है क्योंकि हर  
 वक्त वेदान्त का चिंतन करने से संशय की निवृत्ति हो जाती है,  
 संशय ही पदार्थ के ज्ञान में प्रतिभंध होता है, इसी को असं-  
 भावना भी कहते हैं, वह भी दो प्रकार की होती है, एक तो  
 प्रमाणगत और दूसरी प्रमेयगत कहलाती है, प्रमेयगत को आगे  
 कहेंगे, यहां प्रमाणगत का विवेचन कहते हैं, प्रमाण कहिये  
 शास्त्रगत, अर्थात् इसमें असंभावना या संशय यह है कि  
 वेदान्त के वचन स्वर्ग या मोक्ष का कथन करते हैं इसमें जो  
 संशय है उसका प्रमाणगत असंभावना कहते हैं, वेदान्त शास्त्र  
 के बार-बार श्रवण करने से इसी प्रमाणगत असंभावना की  
 निवृत्ति हो के निस्संशय हो जावेगा, जैसे रत्न के परणनेवाले  
 जोहरी होते हैं जो नाना प्रकार की युक्ति सुना के उस रत्नवाले  
 को निस्संशय कर देते हैं, तैसही यह जो श्रवण है इसमें  
 अनेक प्रकार के जो संशय हैं जैसे वेदान्त शास्त्र के सुनने का  
 हमारे को अधिकार है वा नहीं है, अथ इस प्रकार श्रवण करने  
 से ज्ञान इल होता है, स्वर्ग प्राप्त होता है कि मोक्ष, अथवा  
 इसका सुनना निष्कल ही होता है, इस रीति से अनेक प्रकार के  
 संशय होते हैं, इन सर्व संशयों को जोहरी की नांछ जो गुरु  
 है सो अनेक प्रकार की युक्ति सुना के शिष्य को निस्संशय कर  
 देते हैं, आत्मा सर्व में होने से आत्मनिज्ञासा सर्व को ही  
 होती है, इससे श्रवण का सभी को अधिकार है और स्वर्ग को



તો વેદાન્ત ને બારંબાર અનિત્ય કહ્યા હૈ, અતઃ નિત્ય જો મોક્ષ  
 હૈ ઉસકે પ્રતિપાદન કરને સે વેદાન્ત કી સફલતા હૈ. ઇસી સે  
 વેદાન્ત મેં અપૂર્વતા હૈ. ઇસ પ્રકાર કી યુક્તી રૂપી બાધિની કો  
 દેખ કે સ્થાલરૂપી સંશય ભાગ જાતા હૈ. ઇસ રીતિ સે શ્રવણ  
 રૂપી રત્ન મેં જો નાના પ્રકાર કે સંશય હૈં ઉન સે જિજ્ઞાસુ કો  
 નિરસંશય હો કર શ્રવણ કરના ચાહિયે. ઇસી સે ઉસકો રત્ન કહ્યા  
 હૈં ઓર જિજ્ઞાસા હી શ્રવણ કા કારણ હૈ. પૂર્વ જો સાધારણ  
 વ અસાધારણ દો પ્રકાર કા શ્રવણ કહ્યા. સોહી ઇસકા સ્વરૂપ હૈ,  
 ઓર અસંભાવના કી નિવ્રત્તી ઇસકા ફલ હૈ. મનન કરને કા  
 સામર્થ નહીં હો તબ તક શ્રવણ કરતે રહના ચહી શ્રવણ કી  
 અવધી હૈ.

॥ ઇતિ શ્રી શ્રવણ રત્ન સમાપ્તમ્ ॥

[ ૧૦ ]

## અથ મનન રત્ન

દોહા

મનન તિસી કો કહત હ, મનસે કરે વિચાર ।

બૈઠિ ઇકાન્તિક દેશ મેં, સોધે સાર અસાર ॥

યુક્તિ બાધક ભેદ કી, અરુ પુનિ કહે અભેદ ।

તિનહીં કરકે દૂરિ હો,ય અસંભાવના ખેદ ॥

અર્થ યહ હૈ કિ પૂર્વ ગુરુમુખ સે મહાવાક્યોં કા જો  
 શ્રવણ ક્રિયા થા ઉસકો એકાન્ત સ્થાન મેં બૈઠ કે વિચાર કરકે  
 સાર ઓર અસાર કો સોધન કરને કો મનન કહતે હૈં. શિષ્ય  
 કહતા હૈ—

હે ભગવન ! આપને જો સાર અસાર કા શોધન કહ્યા સો  
 સાર કયા હૈ ઓર અસાર કયા હૈ ઓર ઇનકા શોધન કિસ પ્રકાર  
 હોતા હૈ સો આપ કૃપા કર કે કહિયે. ઇસ પર સે ગુરુ કહતે હૈં,

हे शिष्य पूर्व तत्त्वमसि, अहं ब्रह्मास्मि भत्यादि जिन महावा-  
क्यों का श्रवण कड़ा है उन सर्व वाक्यों के तीन २ पद होते  
हैं, अहं पद एव का वाचक होता है, ब्रह्म पद ईश्वर का वाचक  
होता है, अस्मद् पद चेतनमात्र का वाचक होता है. शुद्ध सतो-  
गुणवाली माया में चेतन का जो आभास पड़ा है, उस को  
ईश्वर कहते हैं, और भस्मिन सतो गुणवाली जो आविद्या है,  
उसमें चेतन का जो आभास है, उसको एव कहते हैं. इस  
प्रकार अल्पज्ञ एव अल्प शक्ति, पराधीनता, आदि अनेक एवत्व  
धर्मवाला है. माया में आभास जो ब्रह्म है, सो कैसा है !  
सर्वज्ञ है, सर्व सक्तिमान है, और स्वतंत्र है, इनके अनिरिक्त  
और भी ईश्वर धर्म, उस में अहुत हैं, परंतु एव ईश्वर के  
अल्पज्ञता, सर्वज्ञता, आदि जितने धर्म कहे हैं, सो सभ उपा-  
धिक धर्म हैं. वास्तव में उन के कोई धर्म नहीं है, क्योंकि यह  
माया और आविद्या उपाधी है, इसी से एव और ईश्वर में  
सर्वज्ञता और अल्पज्ञता का आरोपण किया जाता है. वास्तव  
में चेतन का कोई धर्म नहीं है.

अतः जो कोई धर्मों के सहित एव और ईश्वर की ऐक्यता  
कहता है वह महाभूर्म है, क्योंकि दोनों के धर्मों का आपस में  
विरोध है. फिर जिनको विरोध हो उनके सम्बन्ध में ऐक्यता कहना  
भूर्मता नहीं तो क्या है, जैसे कोई भस्मिन कर्म करनेवाले  
लंगी की आत्मण से ऐक्यता कहे तो वह संभव कैसे होगी.  
आत्मण का धर्म तो वेद अध्ययन आदि शुद्ध है और लंगी का  
धर्म भूत्र, विष्टा उठाना भस्मिन है, इस से उन धर्मों का विरोध  
है, और जब धर्मों को त्याग दें तो भगुण्य मात्र में ऐक्यता  
भव सकती है, उस में कोई भी विरोध नहीं.

जैसे घटाकाश और महाकाश की घट, मठ उपाधी के सहित  
ऐक्यता कहे तो नहीं बनता है क्योंकि घट में दस सेर अन्न  
समाता है और मठान में हजारों मन आ सकता है, फिर उनही  
ऐक्यता कहना कैसे अने. इससे उपाधि सहित ऐक्यता कहना विरुद्ध  
है. घट मठरूपी उपाधी और उस के जो आननरूप धर्म हैं उन



અમ કો ત્યાગ કે કેવલ આકાશમાત્ર કી એકતા બનતી હૈ. ઇસી પ્રકાર માયા અવિદ્યા ઓર ઉનકે સર્વજ્ઞતા અલ્પજ્ઞતા આદિ ધર્મો કે સહિત એકતા નહીં બનતી હૈ, પરંતુ ઉન સર્વ કો ત્યાગ કે ચેતન માત્ર એક હી હૈ, વહી સાર હૈ ઓર સર્વજ્ઞતા-અલ્પજ્ઞતા આદિ ધર્મો સહિત માયા અવિદ્યા અસાર હૈ. ઇસ પ્રકાર સે વિચાર કરે સાર ઓર અસાર કો બહી પ્રકાર નિશ્ચય કરના આદિએ.

અમ દુસરે દોઢે કા અર્થ કહતે હૈ. પ્રમેય કહિયે છવ અક્ષર એકત્વ, ગત કહિયે ઉસ મેં અસંભાવના અર્થાત્ સંશય ઓર બેદ અર્થાત્ દુઃખ રૂપી બેદ કી બાધક ઓર અબેદ કી સાધક બે બુક્તિયાં હૈં ઉન સે પ્રમેયગત અસંભાવના કો દૂર કરે. યદિ એસા કહેં કિ પ્રમેયગત અસંભાવના ક્યા હૈ, તો સુન.

યહ બે વેદાન્ત શાસ્ત્ર કે વચન છવ અક્ષર કે બેદ કો અથવા અબેદ કો કથન કરતે હૈં, કચકા નામ પ્રમેયગત અસંભાવના હૈ. ઇસકી નિમિત્તિ કે વાસ્તે બેદ કે બાધક, ઓર અબેદ કે સાધક બુક્તિપૂર્વક મહાવાક્યોં કે અર્થ કા બારંબાર ચિંતન કરના આદિયે. ઇસી કો મનન કહતે હૈં. અપને ચિત્ત મેં ઇસ પ્રકાર વિચાર કરેં કિ વાસ્તવ મેં દ્વૈત હૈ નહીં, ક્યોંકિ યદિ પરમાર્થ સે દ્વૈત હો તો ઉસકી નિવૃત્તી નહીં હોની આદિયે. કહતે હૈં કિ પરમાર્થ સે એક ચેતન સતરૂપ ત્રિકાલબાધ હૈ. બે વસ્તુ પરમાર્થ સે સત હો ઉસકી ત્રીન કાલ મેં નિવૃત્તી હોતી નહીં હૈં ઓર દ્વૈત કી તો અદ્વૈત જ્ઞાન સે તિમિતી હો જતી હૈ. ઇસસે દ્વૈત માયા માત્ર હૈ. એ માયા ઓર ઉસકા કાર્ય પ્રપચ મિથ્યા હોને સે મુઝ ચેતન્ય મેં દ્વૈત કર સકતા નહીં. જેસે વાસ્તાવિક રસ્તે મેં સર્પ હૈ હી નહીં તો ફિર વહ ફિસકો કારંગા, તેસેહી વાસ્તાવિક માયા કા સ્વરૂપ હી સિદ્ધ નહીં હોતા હૈ. ઇસી સે માયા કો અચિન્ય શક્તિ કહા હૈ. બે બુક્તિ કે આગે કહર નહીં સકતી. યહ બુક્તિ યહ હૈ કિ યદિ માયા કો સત્ય કહેં તો બી કીક નહીં ક્યોંકિ સત્ય વસ્તુ કા નાશ નહીં હોતા હૈ, ઓર માયા કા જ્ઞાન સે નાશ હો જતા હૈ, ઇસસે માયા સત્ય નહીં કહી જતી, ઓર બે માયા

के सत्य हों, तो भी जात नहीं बनती, क्योंकि माया और माया के कार्य की जगत, स्वप्न, और सुषुप्ति तीनों हाल में प्रतीति होती है, इसलिये असत्य भी नहीं कही जाती है।

सत्य असत्य दोनोंको मिलाके हों तो भी कीच नहीं क्योंकि जब सत्य असत्यही संभव नहीं तो मिलानेकी जात कहाँ, इससे किसी रीति से भी मायाका स्वरूप नहीं बनता, और यदि ऐसा हों कि माया चेतन से भिन्न है तो भी जात नहीं बनती क्योंकि चेतन से माया भिन्न है, तो जिस देशमें माया है उस देशमें चेतन का अभाव होगा और चेतन के तो वेद ने सर्वव्यापी कहा है, इससे वेद विरोध होगा, अतः भिन्न कहना भी नहीं बनता है, यदि ऐसा हों कि माया चेतन से अभिन्न है सोभी नहीं बने, क्योंकि चेतन स्वरूप में स्थिती होने के ही मोक्ष कहते हैं, जब नाना प्रकार के साधनों से चेतन स्वरूप में स्थिती होगी तो मोक्ष दशा में एव के साथ माया फिर चिपट जावेगी, जिस से सभ साधन निष्फल होवेग।

अतः माया के अभिन्न कहना भी नहीं बनता है और फिर भिन्न अभिन्न मिलाके हों सो भी नहीं बनेगा, यदि मायाको सावयव हों तो भी नहीं बने क्योंकि माया सावयव हो तो मायाकी प्रतीति होनी चाहिये परन्तु वह नेत्र से किसी को प्रतीत होती नहीं है, और जो माया के निरवयव हों तो उससे जगत् की उत्पत्ति नहीं होनी चाहिये, क्योंकि निरवयव पदार्थ से किसी की भी उत्पत्ति देने में आती नहीं है, मृत्तिका आदि सावयव पदार्थों से घट आदि की उत्पत्ति देने में आती है, निरवयव से किसी की उत्पत्ति नहीं होती है, इससे माया के उपादान कारण कहा है परन्तु निरवयव उपादान नहीं होता है, इससे माया के निरवयव कहना भी बनता नहीं, और सावयव निरवयव मिला के हों सो भी नहीं बनेगा, क्योंकि सावयव निरवयव तो उसका स्वरूप बना ही नहीं तो मिला के कैसे बनेगा, किन्तु किसीकी रीति से मायाका स्वरूप सिद्ध नहीं होता है, इससे मिथ्या माया से द्वैत नहीं होता है, जैसे मिथ्या सर्प



से रज्जु विषवासी नहीं होती है। तैसे ही मिथ्या भाया से चेतन आत्मा में द्वैत नहीं होता है। भाया उसे कहते हैं कि है तो नहीं और है ऐसी भासे।

जैसे आलगर की आल तैसेही अहम आत्मा का वास्तव से भेद नहीं है। और भेद की नाई प्रतीति होती है, इसी को भाया कहने हैं, और जो उपर नौ युक्तियां कही हैं उनसे भाया का स्वरूप ही नहीं बनता है तो आत्मा से अहम जुदा कैसे होगा, और जो आत्मा से अहम को जुदा कहे तो आत्मा से जो बिनन है सो सभ्य अनात्मा ही कहा जाता है। इससे अहम ली आत्मा से जुदा होगा तो यह ली अनात्मा ही होगा।

अहम को अनात्मा किसी वेदशास्त्र ने अंगीकार किया नहीं है, इसी से जाना जाता है कि आत्मा से अहम जुदा नहीं है और जो आत्मा को अहम से जुदा कहे सो ली बने नहीं, क्योंकि जिस देश में आत्मा है उसी देश में अहम नहीं होगा, और अहम को तो वेदने सर्वव्यापी कहा है, अतः वेद से विरोध होगा। यह किसी ली आस्तिक जन को अंगीकार नहीं हो सकता, इससे आत्मा ली अहम से जुदा नहीं है, अहम और आत्मा दोनों एक ही वस्तु के नाम हैं। जैसे वृक्ष और तरु दोनों पर्याय हैं। जैसे एक ही आकाश का उपाधी भेद से बार नाम कहे हैं, तैसे ही उपाधी के भेद से चेतन के अनेक नाम कहे जाते हैं, जैसे घट उपाधी से घटाकाश कहते हैं और जल उपाधी से जलाकाश कहते हैं, आदल की उपाधी से मेघाकाश कहते हैं, और सर्व पदार्थों के अन्तर आहुर होने से महाकाश कहा जाता है, परंतु आकाश में कोई टुकड़े नहीं होते हैं, वह तो एक ही है, तैसे ही, कूट कहिये मिथ्या बुद्धि और चिदाभास उनमें जो निर्विकार चेतन है, वही कूटस्थ कहा जाता है, और बुद्धि व अज्ञान में चेतन के आभास को एव कहते हैं। शुद्ध सतोगुणवासी भाया में चेतन के आभास को ध्विर कहा है, और सर्व पदार्थों के अन्तर और आहुर जो व्याप रहा है, उसको अहम कहते हैं। इस रीति से नामों का ही भेद है। वस्तु

હા બેઠે છે નહીં. અર્થાત્ અગ્નિ એ આત્મા જુદા નહીં છે, આત્મા  
ઓર અગ્નિ હોનાં એક હી થિતન કે નામ છે, ઓર અગ્નિ આત્મા  
હા જે બેઠે જનનને છે. ઉનકે સિયે વેદોં મેં બેઠે હા કથન કિયા  
છે. બેઠે દહવાલે હા પશુ બી કહા છે, ઇંસાને બી જનના જનના  
છે કિ વેદ અગ્નિવાન હા બી અબેઠે મેં હી તાત્પર્ય છે.

જળ એક પ્રકાર હી યુક્તિપૂર્વક મહાવાક્યોં કે અર્થ હા  
ચિંતન કરેગા, તબ અગ્નિ આત્મા હા અબેઠે નિશ્ચય દોહરે એક  
પરિપૂર્ણ આત્મા હી બાંહેગા, ઓર જે અનાત્મ પદાર્થોં હા બેઠે  
બાંસતા છે. એા બી યુક્તિ સે વિચાર કરને પર નહીં બાંહેગા,  
એા યુક્તિ વદ છે કિ જિતના પૃથ્વી હા કાર્ય ઘર, પર, વૃક્ષ, પદાર્થ  
આદિ છે એા સબી પૃથ્વી રૂપ હી છે, તેસે હી પૃથ્વી જલ હા  
કાર્ય દોને સે જલ રૂપ હી છે. ઇસી પ્રકાર જલ અગ્નિ હા કાર્ય  
દોને સે અગ્ની રૂપ હી છે, એસે હી અગ્નિ વાયુ હા કાર્ય દોને  
સે વાયુ રૂપ હી છે. વાયુ આકાશ હા કાર્ય દોને સે આકાશ  
રૂપ હી છે, ઓર માયા વિશિષ્ટ ઈંધર સે આકાશ હી ઉત્પત્તી કહી  
છે એા ઉસકા કાર્ય દોને સે માયા વિશિષ્ટ રૂપ હી છે. ઉસ મેં  
જે માયા ભાગ છે એા તેા પૂર્વ કહી રીતી સે મિથ્યા છે, ઓર  
થિતન ભાગ અગ્નિ આત્મા રૂપ એક હી છે.

ઇસ રીતી સે બી દ્વેત નહીં છે, ક્યાંકિ કિસી બી તરફ હો  
ચલેા આકાશ તેા એક હી છે, તેસે હી વિધી મુખ કરેકે કેજો તેા  
આત્મા સે હી સર્વ હા વિધાન કરના પડેગા ઓર જે નિષેધ  
મુખ કરેકે કેજો તેા આત્મા મેં હી સખકા નિષેધ કહના હોગા.  
કિસી બી રીતિ સે દ્વેત નહીં જનના છે, તેરી કહના મેં હી  
દેત છે. એા કહના માત્ર હી છે, જે તુઝ અધિષ્ઠાન સે જુદી નહીં  
છે. કહિત વસ્તુ અધિષ્ઠાન સે બિન્ન નહીં હોતી છે. એસી  
યુક્તિયોં હા વારંવાર વિચાર કરને હા નામ મનન છે, ઇસ પ્રકાર  
મનન કરને સે સાર હા પ્રહણ હોતા છે.

યદી ઉસમેં રત્નપના છે, ઓર શ્રવણ હી ઉસકા કારણ  
છે. ક્યાંકિ શ્રવણ બિના મનન નહીં હોતા છે, ઓર સાધારણ,  
અસાધારણ, બેઠે સે હો પ્રકાર હા ઉસકા સ્વરૂપ છે, પ્રમેયગત



असंभावना की निमन्त्री इसका इंस है। महावाक्यों का अर्थ  
 इस निश्चय नहीं हो तो तब तक चिन्तन करना—यादिये, और जब  
 इस निश्चय हो जावे तब नहीं करना यही इसकी अवधि है।

॥ प्रति श्री मनन रत्न समाप्तम् ॥

[ ११ ]

## अथ निदिध्यासन रत्न

—:—:—

होला—निदिध्यासन ताको कहे, लम्ब हिले नहीं होठ ।  
 विरती के प्रवाल में, होय नहीं कोय जोर ॥  
 प्रती सजति यों उठे, अंतःकरण मंजार ।  
 जैसे पुंजे से छुटे, दृष्ट नही तार ॥

अर्थ यह है कि पूर्व जो महावाक्यों के अनुसार लय ब्रह्म  
 के अस्त्य का विवेचन किया सो युक्तिपूर्वक चिन्तन करने से जब  
 इस हो गया है, तो फिर इसमें बाह्य धारियों के व्यापार की, और  
 होठ हिलाने की कुछ जरूरत नहीं, अंतर ही अंतःकरण से  
 प्रतियों के प्रवाल को बजावे, और जोर कड़िये विजती अनात्मा-  
 धर प्रती नहीं होने दे, अर्थात् अंतःकरण में से सजती कड़िये  
 ब्रह्माकार प्रतियों का अभ्युद प्रवाल जैसे बसे कि जैसे रश्मि के  
 तूलको जैयने से तार अंध जाता है, और दृष्ट नही, इसी  
 प्रकार प्रती का प्रवाल होने को निदिध्यासन कहते हैं।

निदिध्यासन ३पी वृक्ष इस होने पर तत्काल ही इस होता है  
 जैसे वृक्ष के जाने में कुछ देरी नहीं लगती है किन्तु प्रथम  
 जमीन की सहाय करने में ही देरी होती है, भीज तो जल्दी  
 पोया जाता है, और फिर जल सिंचन रजवाली से आदि लेकर  
 जो हिलागत करनी है, इसमें देरी लगती है, परन्तु हिलागत  
 करने से वह वृक्ष द्रढता को प्राप्त होकर इस जल्दी होता है,

તેસે હી નિદિધ્યાસન રૂપી જો વૃક્ષ હૈ ઉસે ઉપદેશરૂપી બીજ મેં  
કુછ દેરી નહોં લગતી હૈ. પરંતુ જમીન રૂપી અન્તઃકરણ કે મલ-  
વિક્ષેપ કી સફાઈ કરને મેં દેરી લગતી હૈ.

ઉપદેશ અર્થાત શ્રવણ તો હર એક જગહ હો જતા હૈ, પરંતુ  
બીજરૂપ જો શ્રવણ હોતા હૈ ઉસકી મનનરૂપ હિક્ષાજત મેં દેરી  
લગતી હૈ. ક્યોંકિ અનેક પ્રકાર કી ચુકિત સે ચિન્તનરૂપી  
હિક્ષાજત કરની પડતી હૈ. જિસસે ઉસ શ્રવણરૂપી બીજ સે મનન-  
રૂપી પૌધા કુછ કાલ પા કે દ્રઢ હોતા હૈ, પરંતુ દ્રઢ હોને કે  
બાદ વહ નિદિધ્યાસનરૂપી વૃક્ષ કે રૂપ મેં હોકર જ્ઞાનરૂપી  
ફલ કો જલદી હી ઉત્પન્ન કર દેતા હૈ. એસે જ્ઞાનરૂપી ફલ કે  
ખાને સે અજ્ઞાનરૂપી કુધા દૂર હોકર દુખ કી સદાકે લિયે નિવ્રત્તી  
ઓર પરમાનન્દ કી પ્રાપ્તી હોતી હૈ. ઇસી કારણ જિજ્ઞાસુ  
પુરુષોં કો નિદિધ્યાસન રૂપ વૃક્ષ કી પુષ્ટી કરની ચાહિયે, ક્યોંકિ  
યહ મહાન ફલ કો દેતા હૈ. જૈસે કિસી રત્ન સે મહા દ્રવ્ય  
કી પ્રાપ્તી હોતી હૈ. પરંતુ ઉસ કે નાશ હોને કે અનેક ભય રહતે  
હૈ; પરંતુ ઉક્ત જ્ઞાન રૂપી ધનકા તો કોઈ ભી નાશ નહોં કર  
સકતા હૈ, ચોર ન ચોરે, રાજ ન ડ'ડે, ન કોઈ ભૂટ સકે. ગુપ્ત  
જ્ઞાન રૂપી મહાન ધનકી એસી મહિમા અનાડી લોગ નહીં  
જાન સકતે હૈ.

ઇસી સે નિદિધ્યાસન કો રત્ન કહા હૈ. મનન હી ઇસકા કારણ  
હૈ. ઓર જો બ્રહ્મ મેં અન્તઃકરણ કી વૃત્તિયોં કા તૈલ ધારાવત  
પ્રવાહ હૈ સોહી નિદિધ્યાસન કા સ્વરૂપ હૈ. વિપરીત ભાવના  
કી નિવ્રત્તી ઇસકા ફલ હૈ. યદિ કોઈ એસા પૂછે કિ વિપરીત  
ભાવના કિસકો કહતે હૈ, તો સુન, જૈસે સ્વર્ગાદિક અનિત્ય હૈ,  
તિનકો નિત્ય જાનના ઓર સ્ત્રી, પુત્ર, અશૌચ્ય હૈ, તિનકો  
શૌચ્ય જાનના. ઇસી પ્રકાર કૃષિ, વાણિજ્ય, મદિરાપાન, આદિ  
દુખ રૂપ હૈ. તિનકો સુખ રૂપ જાનના, ઓર શરીર આદિ અનાત્મ  
હૈ, તિનકો આત્મ રૂપ સમજના. યે ચાર પ્રકાર કે કાર્ય અવિદ્યા  
કે કારણ જૈસે ઉલટ સમજે જાતે હૈ, વૈસેહી અવિદ્યા સે યહોં દ્રષ્ટાંત  
મેં શુદ્ધ સત ચિદાનન્દ જન્મ મરણ તથા પુણ્ય પાપ સુખ દુખ



સે રહિત એક પરિપૂર્ણ બ્રહ્મ સ્વરૂપ એસા જો આતમા હૈ ઉસકા અસત જડ દુખ કા ભોગનેવાલા માનતા હૈ, ઇસી કો વિપરીત ભાવના કહતે હૈ, જિસકી નિવ્રત્તી નિદિધ્યાસન સે હી હોતી હૈ. ક્યોંકિ વારંવાર બ્રહ્માકાર વ્રત્તી કે હોને સે જીવ ભાવ દૂર હોકર બ્રહ્મભાવના હોને સે અપને કો બ્રહ્મ રૂપહી કરકે જાન સકતા હૈ, ઇસસે જીવ ભાવ દૂર હોતા હૈ. ઇસ પ્રકાર વિપરીત ભાવના કી નિવ્રત્તી નિદિધ્યાસન કા ફલ હૈ. જખતક જીવ બ્રહ્મ કી એકતા કા દઢ નિશ્ચય નહીં હો તખતક નિદિધ્યાસન કરે ઓર જખ દઢ નિશ્ચય હો જાવે, તખ વ્રત્તી કી પરિસંજ્યાન નહીં કરે, યહીં ઇસકી અવધી હૈ.

॥ ઇતિ શ્રી નિદિધ્યાસન રત્ન સમાપ્તમ્ ॥

[ ૧૨ ]

## અથ જ્ઞાનરત્ન

કવિત ॥ વેદરૂપ ઉદ્ધિ મેં જ્ઞાન રત્ન સુધા સમ,  
કરકે યતન તાકો મથિ કે નિકાલિયે, ગુરુ દેવ વિષ્ણુ  
હૈ યુક્તિ કી નેતી કરિ, વાર વારકો અભ્યાસ હી  
મથન કરિ પાલિયે, જીવ દેવ અધિકારી નિરબલ  
હોય રહા, ખ્યાય જ્ઞાન સુધા અસુર અહંકાર ગાલિયે,  
કીની હૈ જુગત ભયો વિષ્ણુગુપ્ત સુધા સુરોં પિલાય કર કો  
અસુરો કો જાલિયે ॥૧॥

અર્થ યહ હૈ કિ એક કાલ મેં દેવતા દૈત્યોં સે નિરબલ હો  
ગયે તખ હાર માનકર કે વિષ્ણુ ભગવાન કે પાસ આકે કહુને  
લગે કિ હો ભગવાન ! હમ દેવતા તો નિરબલ હો ગયે હૈં. આપ  
કૃપા કર કે કોઈ એસી યુક્તિ કીજિયે કિ હમારે કો બલ કી પ્રાપ્તિ

हो। तब विष्णु भगवान्, देवताओं और दैत्यों को धक्का कर कहुने लगे कि यलो समुद्र को मथन करके अमृत निकाल के तुम्हारे को पिलावे। अब इस सम्बन्ध में बहुत विवेचन करने से कुछ प्रयोजन नहीं है, जो शीघ्र आत द्रष्टान्त अनुकुल है सो आगे लिखी जावेगी। यहां द्रष्टान्त में विष्णु भगवान् की नाई गुरु है और समुद्र नाई वेद है। जिस में अमृत के समान ज्ञान रूपी रत्न है। इस की प्राप्ति के लिये सतसंग लेकर निदिध्यासन पर्यंत जो साधन कहे हैं सोई यत्न हैं। इन यत्नों से ज्ञान रूपी रत्न निकालना चाहिये, गुरुओं से जो नाना प्रकार की जिन युक्तियों द्वारा बोध सम्पादन किया है उन की रस्सी बनाके उससे पार-भार अलयास रूपी मथन करे। ऐसे अलयास को पालना अर्थात् पुष्ट करना चाहिये और यह एवही देवताओं की नाई है जो निरञ्जल कहिये अपने व्यापक ब्रह्मभाव को लूट के अनेक प्रकार के एतव धर्मों को निश्चय करके तुच्छता को प्राप्त हो रहा है। यही इस में निरञ्जलता है। इस पर तेरे को अंक

### आध अकरी न्याय

सुनाते हैं। सो यह है कि किसी एक वाधिन ने आध जया था। उसी काल में किसी कारणवश वह वाधिन तो लग गई और उसका अन्धा वहीं पड़ा रह गया। तब किसी गालिये ने उसे उठाकर अपनी अकरीयों में मिला लिया। वह शेर का अन्धा, अकरीयों का दूध पीकर उनके संग में वास आया करता था। वह अपने को जोड़ता समझने लगा, और काल पा के अड़ा हो गया। तब किसी दिन उन अकरीयों को देख के किसी जन का एक शेर बला आया उनको पकड़ ने के वास्ते बला। वे अकरीयें लय की भारी लगने लगी, और उनके साथ वह शेर भी आगा। तब जन का शेर ने कहा अरे भूर्भूतू इसा शेर है। अकरीयों के संग में आगता फिरता है। तब वह बोला कि मैं शेर कैसे हूँ। मैं तो जोड़ता हूँ। यह सुनकर वह जन का शेर कहुने लगा अरे भूर्भूतू कुछ विचार के देख, जैसे शेर लुभ है, तैसाही शेर तू भी है, इन अकरीयों में कहे को फिरता है। तू देख तो सही, जैसा हमारा



स्वरूप है, तैसा तेरा स्वरूप है, तब उन व्यक्तियों में रहनेवाले शेर ने उस जन के शेर की तरफ देखा और फिर आपने शरीर की तरफ देखा तो जैसा रंग रूप उसका था तैसाही अपने को भी देखा, तब उसको कुछ संस्कार हुए आये और उस जन के शेर को दहाड़ लगाई और जिन कर्मों के संयोग से शेर का शरीर रखा था वे भी हुए आये तब तो वह कूदने लगा और अपने को शेर रूप जनने लगा और उन व्यक्तियों को भार भार के आने लगा।

इस संघर्ष में दृष्टांत यह है कि यह चेतन आत्मा ही एक शेर है, जिसे मन रूप व्याप्तिये ने शरीर तथा इंद्रिय रूपी व्यक्तियों के साथ मिला दिया है, यह चेतन आत्मा शरीर व इंद्रियों में मिलकर उनके जो धर्म हैं उनमें वृथा ही अंगी-कार करने लगा अर्थात् स्थूलोद्भूत, सूक्ष्मोद्भूत, असा अद्भुत करने अपने को शरीर मानने लगा, और इस प्रकार शरीर व इंद्रियादि के धर्मों को अपने जनने लगा, तब नाना प्रकार के व्यवसाय धर्मों का अपने में आरोपण करके नाना प्रकार के दुष्कों को प्राप्त हुआ, फिर किसी पुण्य कर्म के प्रभाव से जन के शेर के नाईं को विचारवान महात्मा पुरुष हैं उनसे मिलाप होने पर जब वे जन के शेर की नाईं उसे समझाते हैं कि अरे तू तो शुद्ध सच्चिदानन्द ब्रह्म स्वरूप है, फिर अपने में शरीर इंद्रियादि के धर्मों को क्यों आरोपण करता है, तू तो उत्पत्ती नाश रहित परिपूर्ण सर्व धर्मों से रहित ब्रह्म स्वरूप है, जैसे जन के शेर ने दहाड़ लगाई थी, तैसे ही महात्मा पुरुष "अहं ब्रह्मास्मि" ऐसी दहाड़ सुनाते हैं, तब व्यक्तियों के शेर की नाईं को जिज्ञासु है, उसको पूर्व को अनेक बार वेदान्त शास्त्र का श्रवण होने से उसके संस्कार अंतःकरण में सुक्ष्म रूप से स्थिति होने के कारण गुरुजनों ने मुण्डकोपनिषद् से अचन सुनते ही उनके मन से "मैं ब्रह्म रूप हूँ" ऐसी स्मृति आ जाती है, और वह अपने को ब्रह्म रूप जानता है।

इस प्रकार व्यक्तीयता को व्यवसाय है सो हट जाता है, यही निरवसता इस देवतारूपी शिव में हो रही है, जैसे विष्णु



अमृतान ने समुद्र से अमृत रत्न को निराल के देवताओं के  
पिताया तब वे अल को प्राप्त होकर अमृतों को भार्ये, तैम  
ही यदा विश्वरूप गुरु ने समुद्ररूपी वेद के गुणरूपी नाई के ज्ञान  
रत्न से उसको नाना प्रकार की युक्ति रूपा रत्नों से अमृत करके  
अधिकारी पुरुषों को पियाया, तब उन्होंने अल आवरूपी अल  
को प्राप्त करके परिष्कृत अक्षररूपी अमृतों को भार्ये, और  
तैम विश्व ने, देवता और अमृतों का आपस में विवाद हुआ  
तब युक्ति से मादनीरूप वास्तु दिया तब उस रूप को देव के  
अमृत मादित हो गये, उस समय देवताओं को सुखा और  
अमृतों को सुरा पिता के उनका विवाद मिटा दिया, तैमही देव  
रूपी श्रव और अनात्म अक्षररूपी अमृतों का वे आपस  
में विवाद है उसको मिटाने के लिये विश्वरूपी गुरु अनन्त प्रकार  
की गुप्त प्रगट युक्ति करके परिष्कृत अक्षररूपी अमृत को  
ज्ञानरूपी अमृत प्रत्यक्षित करके जला देते हैं. यह अमृत का  
अर्थ है.

अमृत ज्ञान का कुछ ध्यान दिया जायेगा. ज्ञान क्या है अमृत  
कोई पूछे तो सुन. जिस से पदार्थों की ज्ञान होये उसको ज्ञान  
कहते हैं, पदार्थों की ज्ञान तीन प्रकार से होती है. कहीं तो  
अनुमान से ज्ञान होती है. पर्यन्त बन्धनान, कहीं स्मृतिरूप  
करके ज्ञान होती है. जैसे यह महात्मा, और कहीं उद्देश्य करके  
ज्ञान होती है. जैसे यह महात्मा, इसी प्रकार ज्ञान की तीन  
प्रकार के होते हैं. अमृत ज्ञानों को दिखाने हैं. जहां पर्यन्त आदि  
में बन्धन आदि का ज्ञान है सो परेश ज्ञान होता है. परेश  
ज्ञान के और भी अद्भुत भेद हैं सो न्याय के ग्रन्थों में लिखे  
हैं, परन्तु यह अनुमान ज्ञान हेतु अंश में तो प्रत्यक्ष ही होता  
है और माध्यमश में अनुप्रतीतिरूप होता है. सो भी प्रत्यक्षता  
को लेकर ही तो बन्धी आदि का परेश ज्ञान है. इसका कारण  
होता है. और जो पूर्व होय महात्मा आदि की ज्ञान कराता है  
उसको स्मृति ज्ञान कहते हैं. उसके भी अद्भुत भेद हैं.

कोई स्मृति यथार्थ ज्ञानजन्य संस्कारों से होती है सो  
यथार्थ स्मृति कही जाती है, और अमृतज्ञानजन्य संस्कारों से



जो स्मृति होती है वह अथार्थ स्मृति नहीं होती है, उनके भी आशंका है कि वेक है, कोई बात संक्षेप में सीधी हो परन्तु पूर्वद्रष्टृ पदार्थ के ज्ञानजन्य संस्कार विद्यमान होने और सादृश्य वस्तु का दर्शन आदि होने से यह स्मृतिज्ञान अपने विषय का ज्ञान करता है, परन्तु यह भी पूर्व द्रष्टृत्व प्रत्यक्षता को लेकर ही तब आशंका स्मृति करता है, सो तब आशंका में तो स्मृतिरूप है और पूर्व द्रष्टृत्व आशंका में प्रत्यक्षरूप है, इससे यह भी प्रत्यक्षरूप होने से प्रत्यक्ष ही साहायता को लेकर अपने विषय सिद्धी करता है, जो उदाहरण पदार्थ की ज्ञात करनेवाला ज्ञान कहा जाता है,

जैसे यह महात्मा है, सो के प्रकार का होता है, कहीं तो श्रोत्र हृदय से प्रत्यक्ष होता है, सो शाब्दिक ज्ञान कहा जाता है और यही यक्षु हृदय करके होता है, सो आक्षुब्धज्ञान कहा जाता है, और कहीं प्राण हृदय से होता है सो प्राणजज्ञान कहा जाता है, और जहाँ त्वया से ज्ञान होता है, सो त्वयाजज्ञान कहा जाता है, और जो रसना से होता है सो रसनाज्ञान कहा जाता है, और जो मन से होता है सो मानसज्ञान कहा जाता है, जैसे गुण दृश्य का जो ज्ञान है सो मानस प्रत्यक्ष कहा जाता है, और शब्द का ज्ञानश्रोत्र से प्रत्यक्ष होता है, तैसे ही रूप का ज्ञान यक्षु से प्रत्यक्ष होता है और गंध का ज्ञान नासिका से प्रत्यक्ष होता है, और ठंडे गर्म का ज्ञान त्वया से प्रत्यक्ष होता है, तैसेही रसका ज्ञान रसना से प्रत्यक्ष होता है,

इस रीति से प्रत्यक्ष ज्ञान पट प्रकार का होता है, परन्तु यह प्रत्यक्ष ज्ञान भी दो प्रकार का होता है, एक तो प्रमा और दूसरा अप्रमा कहा जाता है, जैसे रज्जु में अंधकार आदि दोष सार्थ आदि का जो ज्ञान है सो भ्रम ज्ञान कहा जाता है, और रज्जु का जो रज्जु रूप से ज्ञान है सो प्रमा ज्ञान होता है, इसी का यथार्थ ज्ञान भी कहते हैं, यह तो ज्ञान का साधारण लक्षण है, और जो केवल एक आत्मा का ही ज्ञान है वह असाधारण लक्षण है, जैसे नेत्र से एक रूप का ही ज्ञान होता है,

સો ઉસકા સાધારણ લક્ષણ હૈ. ઔર યદિ એસા પૂછે કિ આત્મા કા જ્ઞાન કૌન પ્રમાણ સે પ્રત્યક્ષ હોતા હૈ, તો સુન, યહ કહના એસા હૈ, જેસે કોઈ કહે કિ સૂર્ય કા પ્રકાશ કિસ લૌકિક પદાર્થ સે હોતા હૈ ?

ઇસ બચન કો સુન કે દૂસરા પુરુષ કહતા હૈ, અરે મૂર્ખ, જિતને લૌકિક પદાર્થ હૈ, સો તો સારેહી સૂર્ય કે પ્રકાશ સે પ્રકાશવાન હોતે હૈ; સૂર્ય કો કૌન પ્રકાશ કર સકતા હૈ ? તૈસેહી જિતને પ્રમાતા, પ્રમાણ પ્રમેય, જ્ઞાતા, જ્ઞાન જેય, દ્રષ્ટા, દર્શન, દશ્ય, કરતા, ક્રિયા, કર્મ, યે સખ ત્રિપુટી હૈ. જો જ્ઞાન સ્વરૂપ આત્મા કે પ્રકાશ કો પાકર જ્ઞાનવાલી હોતી હૈ. આત્મા કા જ્ઞાન ઇન સે નહીં હોતા હૈ કયોંકિ યે તો સભી અનાત્મ ઔર ઔર જડ હૈ; ઇસ પ્રકાર કે પદાર્થ સે કિસી કા પ્રકાશ હોતા નહીં પરંતુ જેસે અગ્નિ સે તપા હુઆ લોહા દૂસરે પદાર્થો કો પ્રકાશ કર સકતા હૈ ઔર જલા ભી દેતા હૈ, ઔર ઉસ અગ્નિ કે પ્રકાશ કરને મેં ઔર જલાને મેં ઉસ લોહે કી સામર્થ નહીં હોતી હૈ. તૈસેહી યહ જો પ્રમાતા પ્રમાણ આદિ ત્રિપુટી હૈ, સો આત્મા કે તાદાત્મ સંબંધ સે જ્ઞાનવાલી હોતી હૈ, તખ ઇનકે કિસી પદાર્થ કા જ્ઞાન હોતા હૈ, પરંતુ આત્મા કા જ્ઞાન ઉનસે કેસે હોવે, આત્મા તો સ્વયં પ્રકાશ હૈ. ઔર સર્વ ત્રિપુટી કો પ્રકાશ કરતા હૈ. ઇસ પ્રકાર કા ચેતન આત્મા તૂ હી વ્યાપક બ્રહ્મ સ્વરૂપ હૈ. એસા તૂ હી હૈ.

ઇસી બાત કો તૂ અપના નિશ્ચય કર. જખ એસા તુઝે દઢ નિશ્ચય હોગા, તખ ઉસી કો તૂ દૃઢ અપરોક્ષ જ્ઞાન જાનના. યહ જ્ઞાન શ્રોત્ર સંબંધી વાક્ય સે હોતા હૈ, પરંતુ વાક્ય કો પ્રકાર કે હોતે હૈ. એક તો મહાવાક્ય ઔર દૂસરે અવાંતર વાક્ય હોતે હૈ. જો વાક્ય અસ્તિ રૂપ સે બોધ કરે ઉસસે પરોક્ષ જ્ઞાન હોતા હૈ. જેસે દશમાં અસ્તી. ઇસ વાક્ય સે દશમ કા પરોક્ષ જ્ઞાન હી હોતા હૈ, ઔર જહાં વાક્ય એસા બોધ કરે કિ દસવાં તૂ હૈ વહાં વાક્ય સે અપરોક્ષ જ્ઞાન તત્ત્વમસિ, અહં બ્રહ્માસ્મિ, પ્રજ્ઞાનમાનંદં બ્રહ્મ, અયં આત્મા બ્રહ્મ, આદિ મહાવાક્યોં સે હોતા





काल में जे किसी पदार्थ में चित्त की दृढ़ आसकती हो, उसीका श्रवण काल में वारंवार चिन्तन होता है, उसको भूत प्रतिबन्ध कहते हैं, और लावि यह है कि जैसे प्रारब्ध कर्म. यह भी अनेक प्रकार का विलक्षण होता है, जैसे किसी एक ही कर्म को दस शरीरों का आरंभ करना है, और पहिले शरीर में ही तत्त्व-मयी आदिका महावाक्य का श्रवण होने से भी ज्ञान नहीं होगा, क्योंकि आगे नौ जन्म आधी पडे हैं, सो ही ज्ञान के प्रतिबन्ध हैं.

जैसे सनकादिकों ने वामदेव आदि अधिकारी प्रज को ज्ञान का उपदेश किया परंतु प्रतिबन्ध के होने से भाता के गर्भ में ही पूर्व के श्रवण से ज्ञान हो गया. यह वार्ता शास्त्रों में प्रसिद्ध है. तैसेही सरत के तीन जन्म आधी रहे थे. जन्म उन की निवृत्ति हुई तब उसको ज्ञान हुआ. उसको आगाभी प्रतिबन्ध कहते हैं. तीसरा जे वर्तमान प्रतिबन्ध है, सो चार प्रकार का होता है. एक तो विषयों में आसकती, दूसरा बुद्धी की मन्दता, तीसरा पूर्व काल में जे वेद वादियों के वचनों का श्रवण किया है, उनके संस्कारों से अनेक प्रकार की वेद विरुद्ध खेदकी तर्क जिनको कुतर्क कहते हैं, और चौथा दुराग्रह विपर्याय है.

इस जन्म को अनेक जन्मों में जन्म धर्मों का दृढ़ निश्चय होने से श्रवण काल में जन्म लावना बनी रहती है, और लावना नहीं होती, इसी को दुराग्रह जनना. जन्म तक यह विपर्याय होता है, तबतक मैं हूँ ऐसा ज्ञान नहीं होता है. इसी से उसको प्रतिबन्ध कहते हैं. भूत प्रतिबन्ध की और वर्तमान प्रतिबन्ध की तो उपाय करने से निवृत्ती हो जाती है, परंतु तीसरा जे लावी प्रतिबन्ध है. उसकी निवृत्ती विलक्षण कर्म के भोगने से ही होती है, इस से इस में पुरुषार्थ नहीं चलता है, परंतु प्रथम दोनों की तो पुरुषार्थ करने से निवृत्ती हो जाती है. इसलिये जिज्ञासु पुरुषों को उनकी निवृत्ती अवश्य करना चाहिये क्योंकि ज्ञान के प्रतिबन्ध से रहित होने ही मोक्षरूपी फल की प्राप्ति होती है.



वासना भी ज्ञान की प्रतिध्वंश होती है, और वासना का प्रकार भी होता है। एक तो शुद्ध वासना जिज्ञासु का होता है और जन्मों का नाश करनेवाली है, और दूसरी भलीन वासना होती है, भलीन वासना तीन प्रकार की होती है, एक तो लोक में पूरे ज्ञान की जे भ्रमण है उसे लोक वासना कहते हैं। दूसरी वैद वासना है, और वह अनेक प्रकार की होती है। त्रैश वैद अद्भुत अच्छी है, त्रैश जति सभसे उत्कृष्ट है, त्रैश अग गारा है, सर्व शरीरों से त्रैश शरीर अच्छा है, आदि इस प्रकार की सही वासना भलीन कही जाती है, और जन्मों के देनेवाली होती है, और तीसरी शास्त्र वासना होती है जो भी कोई तो पाठ वासना होता है और कोई अर्थ वासना आदि, इस प्रकार शास्त्र वासना के भी अद्भुत लोह हैं, परंतु ये सही भलीन वासनाओं हैं, और जन्मों के देनेवाली हैं, इस लिये यह वासना भी ज्ञान का प्रतिध्वंश होने के कारण त्याग करने के योग्य है, छद्म प्रतिध्वंश अभिनेश है, उसी को सांज्य मत में भलत्तत्व कहते हैं, और वेदांतवाले उसे हृदय ग्रन्थी और सूक्ष्म अहंकार भी कहते हैं। पूर्व के सूक्ष्म संस्कारों का द्रढ अभ्यास होने से जो अनात्म स्थूल सूक्ष्म संघात है उसे आत्मा रूप करके जानने और अवलोकन में भी यही लावना अपनी रहने से इस को प्रतिध्वंश कहा है।

उक्त प्रकार की लावनाओं का त्याग करना चाहिए क्यों कि विरोधी की निवृत्ति लुपे बिना कार्य की सिद्धि होती नहीं है, इसी लिये विरोधी की निवृत्ति की आवश्यकता है, इस रीति से प्रतिध्वंश से रहित जो यथार्थ ज्ञान है वह मोक्षरूपी फल की प्राप्ति करता है, जो पुरुष आरों साधन सम्पन्न हो और जिसकी शुद्धी सर्व प्रातिध्वंशों से रहित हो उसको केवल भलावाक्य के अर्थ का अवलोकन होता है "मै ब्रह्म हूँ" इस प्रकार ब्रह्म आत्मा के अकत्व को सुनते ही द्रढ निश्चय हो जाता है, इस प्रकार के ज्ञानवान पुरुष लक्षण शास्त्रों में नीचे लिखे अनुसार कहे हैं।

## श्लोक

अक्रोध वैराग्य जितेन्द्रियत्वं क्षमा दया सर्वे प्रिय-  
त्वं ॥ निर्लोभ दाता भय शोकहीनं ज्ञानं प्रलब्ध्वा  
दश लक्षणानि ॥१॥ निरदोऽ निरविवादश्च निशं-  
कश्च निरंकुशः ॥ तृप्तश्च कृतकृतश्च ज्ञानं च पट  
लक्षणं ॥२॥

अर्थ यह है कि (१) क्रोध रहित होना, (२) वैराग्यवान  
होना (३) जितेन्द्रिय अर्थात् छोटे विषयों से मन तथा इंद्रियों  
को रोकनेवाला होना (४) क्षमावान होना (५) दयावान होना  
(६) प्राणी मात्र पर विशेष प्रकार का प्रेम करनेवाला होना  
(७) निर्लोभी होना (८) दाता अर्थात् अन्नज्ञान का देनेवाला  
होना (९) भयहीन अर्थात् जन्म मरण के भय जिसके गये हैं  
और (१०) सांसारिक पदार्थों के वियोग में जिसे शोक नहीं है,  
ये दश लक्षण उसी में होते हैं जिसको ज्ञान की प्राप्ति हुई है।

ज्ञानी पुरुषों के लक्षण और भी होते हैं: निरदोऽ अर्थात्  
किसी प्रकार का किसी से दुःख नहीं करते हैं विवाद भी किसी से नहीं  
करते, निशंक अर्थात् आत्म वस्तु में कोई भी शंका उन को  
नहीं है, और किसी वेदशास्त्र की आज्ञाकारी अंकुश उन के  
सिर पर नहीं होता। किसी से वे निरंकुश हैं, आत्मा में ही  
तृप्त होते हैं, और कृतकृत्य हैं, इस पर भगवानने कहा है:—

श्लोक—यस्य आत्मरतिरेवस्य हात्मतृप्तिश्च मानवे ।

आत्मन्येवयश्च संतुष्ट तस्य कार्यं न विद्यते ॥

विज्ञानवान किसी पदार्थ से तृप्ति को प्राप्त नहीं होता  
है और लोभिक तथा वैदिक सर्व कार्यों से रहित होता है।  
अतिरिक्त उक्त पट लक्षण और दस ऐसे सोलह लक्षण ज्ञान-  
वानों के होते हैं। इनके और भी अमानित्व आदिक अद्भुत हैं



तात्पर्य यह है कि जिनने लक्षण जिज्ञासु में होते हैं वे प्रयत्न-साध्य होते हैं और ज्ञानवान में वे स्वाभाविक ही होते हैं।

इस बात को सुन के शिष्य कहता है, हे भगवन ! यह ज्ञे आपने ज्ञान का कथन किया है जिस में ज्ञान का कारण है, और उसका स्वरूप तथा इस कहा है, और उसकी अवधि किस प्रकार है, सो ये सभ, आप कृपा करके बताइये।

गुरु कहते हैं- हे शिष्य ! अथ तू ज्ञान के कारण आदि का श्रवण कर. प्रथम तो विवेक आदि चार ज्ञान के कारण हैं, परंतु ये चारों कारण श्रवण में प्रवृत्ति द्वारा हैं. क्यों कि अद्विभुज का तो श्रवण में अधिकार ही नहीं होता है, और श्रवणादिक ज्ञे तीन हैं सो भी असंभावना और विपरीत भावना की निवृत्ति द्वारा ज्ञान के कारण हैं, और साक्षात् कारण तो श्रोत्र संघर्षी महावाक्य ही होते हैं. वे ही ज्ञान के मुख्य कारण हैं. सत्य मिथ्या का विचार कर के शुच अहं की अकृता का निश्चय किया है वाही ज्ञानका स्वरूप है, और सर्व प्रकार के कर्मों से रहित हो के अहमाधार वृत्ति का कारण करके विचारना ही ज्ञान का इस है. जैसा अज्ञान जल में शरीर में अलंकार था कि मैं शरीर हूँ, वैसा ही अलंकार ज्ञान होने पर शुद्ध आत्मा में होता है. इसी को ज्ञान की अवधि कहते हैं. इस रीति से ज्ञान रत्न का कथन किया.

॥ इति श्री ज्ञान रत्नम् समाप्तम् ॥

[१३]

## अथ. ज्वनमुक्त रत्न.

सवैया छन्द

ज्वनमुक्त भये जग में, जिन आत्म पूरण अहं-  
निहारया ॥ पिंडरु प्राण के संयोग हू ते, भेद अरु

બ્રાંતિ કા મૂલ ઉખારયા ॥ પરારબ્ધિસંયોગ સે દેહ  
વૈ નિત, સંચિત ઔર અગામી કો જરયા ॥ શુષ્ક  
તુણવત ભરમત હૈ તન, ઇષ્ટ અનિષ્ટ અદૃષ્ટ અધારા ॥

અર્થ યહ હૈ કિ જગત મેં જીવનમુક્ત વહી હૈ જિસને  
આત્મા કો પરિપૂરણ બ્રહ્મ રૂપ કરકે જાના હૈ. પિંડ પ્રાણ કે  
સંયોગ હોને સે પંચ પ્રકાર કી જો બ્રાંતિ હૈ સો દિખાતે હૈ:-  
ભેદ બ્રાંતિ, કર્તા ભોગતાપને કી બ્રાંતિ, સંગકી બ્રાંતિ, વિકાર  
બ્રાંતિ, ઔર બ્રહ્મ સે ભિન્ન જગત કે સત્યપને કી બ્રાંતિ. ઇન  
પંચ પ્રકાર કી બ્રાંતિ કી નિવૃત્તિ જિન પંચ દ્રષ્ટાંતોં સે કી જાતી  
હૈ વે દ્રષ્ટાંત યે હૈ; બિંબ-પ્રતિબિંબ કે દ્રષ્ટાંત સે ભેદ બ્રાંતિ  
કી નિવૃત્તી હોતી હૈ, સ્ફટિક મેં લાલ વસ્ત્ર કે લાલ રંગકો પ્રતીતિ  
કે દ્રષ્ટાંત સે કર્તા ભોગતાપને કી બ્રાંતિ કી નિવૃત્તી હોતા હૈ,  
ઘટાકાશ કે દ્રષ્ટાંત સે સંગ બ્રાંતિ કી નિવૃત્તી હોતી હૈ, રજ્જૂ મેં  
કલ્પિત સર્પ કે દ્રષ્ટાંત સે વિકાર બ્રાંતિ કી નિવૃત્તી હોતી હૈ, ઔર  
કનક કે કુણ્ડલ કે દ્રષ્ટાંત સે બ્રહ્મ સે ભિન્ન જગત કે સત્યપને  
કી બ્રાંતિ કી નિવૃત્તી હોતી હૈ, ઇસ પ્રકાર કી બ્રાંતિ સે જો નાના  
પ્રકાર કા ભેદ ભાસતા હૈ, ઇસ ભેદ કા ઔર બ્રાંતિ કા મૂલ કહિયે  
જો અજ્ઞાન ઇસકો ઉખારયા અર્થાત જ્ઞાન રૂપી અસંગ શસ્ત્ર સે  
જિસને કાટ દિયા હૈ, ઔર જિસકા પ્રારબ્ધ કે અનુસાર વ્યવહાર  
હોતા હૈ, ઔર જિસને સંચિત ઔર અગામી કો, જ્ઞાનાગ્નિ  
દ્વંધકર્માણું તમાહુ: પાંડિતમ્ બુધા:-ઇસ જ્ઞાન રૂપી અગ્નિ સે  
જલા દિયા હૈ ઔર સુખે તુણ કી નાઈ પ્રારબ્ધ કે બલ સે જિસકા  
શરીર સંસાર મેં ફિરતા હૈ, ઇષ્ટ કહિયે અનુકૂલ ઔર અનિષ્ટ  
કહિયે પ્રતિકૂલ અદૃષ્ટ એસે દોનોં કે બલ સે વહ વિચરતા હૈ.

ઇસ પ્રકાર અહંકરતા કે ભાવ સે રહિત જીવનમુક્ત પુરુષોં  
કા વ્યવહાર હોતા હૈ. યે સારા વ્યવહાર એસા હૈ કિ જૈસી ભાંડો  
કી સંધ્યા હોતી હૈ, ઔર જૈસે કુમહાર દંડા લગા કે ચક્રકો ફિર  
દેતા હૈ, તેસે હી પ્રારબ્ધ રૂપી ડંડે સે શરીર રૂપી ચક્રકર ફિરતા  
હૈ, જિતના વેગ ચક્રકર મેં ચડતા હૈ, ઉતને સમય તક ફિરતા હૈ.



ઔર એમ જાણે છે કે હવે જાતા છે. તેણે હી પ્રારબ્ધ કરી આજ સારું લેા જાતા છે.

પરંતુ સર્વ જ્ઞાનવાન જીવનમુક્તોં કા વ્યવહાર એક જા નહીં હોતા છે. કયાંક પ્રારબ્ધ કર્મ રાજા કે વિલક્ષણ હોતે છે. પ્રારબ્ધ કે અનુસાર વ્યવહાર એી વિલક્ષણ હોતા છે. કિસી કા પ્રારબ્ધ કર્મ રાજાપાલન કા હી હોતા છે જેણે જનક રાજા કા કિસી કા પ્રારબ્ધ શિક્ષાવૃત્તિ કા હેતુ હોતા છે જેણે કત્ત. જડ જરતાદિક. કિસી કા પ્રારબ્ધ કર્મ જ્ઞાન સે ઉત્તરકાલ મેં નિવૃત્તી કા હેતુ હોતા છે જેણે વાજપદ્મ્ય આદિ કા. કિસી કા કર્મ એસા હી હોતા છે કિ જ્ઞાન સે ઉત્તરકાલ મેં અધિક બોગાં મેં પ્રવૃત્તિ કા હેતુ હો જેણે સિખરંધ્રજ કા.

પ્રસ પ્રકાર જીવનમુક્ત મહાત્માઓં કા કહીં તેા પ્રવૃત્તિ કા વ્યવહાર ઔર કહીં નિવૃત્તી કા વ્યવહાર દેખને ઔર સુનને મેં આતા છે. પરંતુ પ્રારબ્ધ કે વિલક્ષણ હોને સે વ્યવહાર એી વિલક્ષણ હી હોતા છે. પરમાર્થ મેં તેા સર્વો કા એક હી નિશાન છે. સેા નિશાન કયા છે ! જેં અક્ષરવરૂપ હૂં એસા જે જનને કા છે. સેા એક હી જાત છે. પ્રસ મેં કિંચિતમાત્ર બેદ નહીં છે. ઔર જિતના બેદ પ્રતીત હોતા છે સેા સર્વો પ્રારબ્ધ કર્મ સે બાસતા છે. સેા પ્રારબ્ધ એી એસા છે જેણે સુકિત મેં રજત કલિપત હોતા છે તેણે મેં અક્ષા આત્મા સર્વ કા અધિષ્ઠાન હોને સે મેરે મેં કર્તા કિયા કર્મ રાજા કલિપતરૂપ છે, કિર કોઈ તેા લિંગ સંન્યાસ પારણ કરકે વિચરતે છે, કોઈ તીર્થ મેં હી પ્રારબ્ધ કે આધીન વિચરતે છે, કોઈ વિધી કર્મ કા હી કરતે છે ઔર કોઈ વિધી કા નહીં હી કરતે છે. પરંતુ જેણે આકાશ મુવે સે લિપાયમાન નહીં હોતા છે તેણે હી જીવનમુક્ત કિસી કર્મ સે લિપાયમાન નહીં હોતે છે. કયાંક વે તેા નિરુપદ છે.

જિન કા સુકિત કા એી મધ્યજ નહીં હોતી છે ઉન કે સમાન ઔર કોઈ મનુષ્ય, દેવતા તથા વર્ણ આશ્રમવાલા નહીં હોતા છે. પ્રસી સે ઉન કા અતિ આશ્રમી ઔર અતિ આશ્રમી એી કહતે છે. એણે જીવનમુક્ત વિદ્વાન કિસી પુણ્ય પાપ કર્મ સે લિપાયમાન

नहीं होते हैं। याहें वे किसी विधी कर्म को करें याहें न करें। यह मुन शिष्य शंका करता है। हे लगवान जिन संध्या गायत्री आदि कर्मों को पाप निवृत्ती के वास्ते वेद ने कथन किया है उन कर्मों को जवनमुक्त नहीं करेगा तो उसको भी पाप होगा। इस परसे गुरु कहते हैं:—

हे शिष्य, वेद ने पाप निवृत्ती के वास्ते संध्या गायत्री कर्म का जो कथन किया है सो सभ दिन के तथा सभ पुरुषों के वास्ते करना नही कड़ा है, किन्तु किसी हाल में उनके करने का निषेध भी दिया है। जैसे सूतक पातिक में उनका निषेध भी दिया है। ऐसे ही ज्ञानवान के लिये भी सर्व कर्मों का निषेध ही कथन किया है, क्योंकि उनके घर में सूतक और पातिक दोनों होते हैं।

कुलुडलिया।

ममता माँ भर गह, पुत्र उपज ज्योव ॥ सूतक पातिक  
हो लुये, घर में रही न सोव ॥ घर में रही न सोव,  
केसे अण करिये सन्ध्या ॥ शास्त्र वर्जित कर्म सोव करे  
सोई जतनो अन्धा ॥ गुप्त माँहि फिरिया लप्पे सो नर  
भूरण जन ॥ सन्ध्या गायत्री विना सदा अक  
निरवान ॥ १ ॥

जिस के घर में अक सूतक के होते सन्ध्या गायत्री का निषेध कड़ा है फिर जिसके यहां सूतक पातिक दोनों धक्के हों उसको क्या करना चाहिए ? वह तो निषेध रूप ही है, क्योंकि जवनमुक्त ज्ञानवान पुरुष विधि के भी फिरक नहीं होते हैं। वे तो विधी और निषेध दोनों के सिर पर पैर धरके चलते हैं। केवल प्रारब्ध के आधीन उनका व्यवहार होता है। उनकी क्रिया का नियम नहीं होता है। इसी से उन को जवनमुक्त कहते हैं। शिष्य शंका करता है—



हे जनपन ! यह ते उपनमुक्त के सम्बन्ध में आपनि  
कहा है सो तो जन्म सिद्धि हो तो ऐसा दिना है पञ्च भूतों  
उपलब्धयन्त्र क्या है सो आप पूरा करके जनायें।

गुरु कहते हैं, हे शिष्य ! तीन शरीर और पंच कोषों में  
ते कर्ता मोक्षतापन का परिष्कृत आह्वार हो रहा है, यही  
उपलब्धयन्त्र है, जैसे, और आदि के वास्तविक कारणों में  
है और इनके द्वारा में लक्ष्यही पेशों में गिरी गले में नीचे  
जल और लक्ष्य रस्सी से आंध्र कर इसे कारणों में शेष होने  
है, और पदरेकार सिपाही किसी रणवाली करता है, यदि वह  
कभी आह्वार निश्चयना आह्वार तो इसके शिर में उदा भारते है,  
तैसा ही अज्ञानी पुरुषों को लक्षणही नीचे गले में पडा है  
और ममतापना गिरी पेशों में पडी है, और पदार्थों में ते  
प्रोति है सो ही रस्सी है, इस से लक्ष्य आंध्र के रणे है, और  
अज्ञान इषी कारणों में आंध्र कर रणा है, और भाव इषी  
सिपाही पदरेकार रहता है, यदि वह कभी अज्ञान इषी कारणों  
से निश्चयना आह्वार तो भाव इषी सिपाही आह्वार में उदा  
भारता है, तब वह आंध्र में पडा पडा शेष है, और नाना  
प्रकार के जन्म मरण इषी दुर्गा को मोक्षता है, यही इस उप  
को उप को उपलब्ध यन्त्र है और यह अपने आपही आंध्र  
है, किसी दूसरे ने नहीं आंध्र है, जैसे मर्कट भूरी आंध्र के छोड़ता  
नहीं है, और जैसे कोई पुरुष किसी स्थान को आथ कर ले  
और समझे कि मुझे वृक्ष ने पकडा है, वास्तव में इस पुरुष  
ने ही वृक्ष को पकडा है और वह इसको छोड के तो छूट जाता है,

तुझे नहीं पकडया जगत ने, तेने ही पकडया आनि ।

ज्यों नलिनी का सूयटा, धागे पकडया ननि ॥

इसी तरह तीन शरीर और पंच कोषों में इस उप  
आत्मा ने ही आह्वार किया है, यही इसका उपलब्ध यन्त्र है,  
जन्म यह इस परिष्कृत मलिन आह्वार को छोड देता है तब  
यह आंध्र से छूट जाता है, यही इसका उपलब्ध भाव है, स्थूल

શરીર કે ઔર પ્રાણ કે સંયોગ હોતે હોતે બંધ ભ્રાંતિ કી નિવૃત્તી  
 ઔર બ્રહ્માકાર વૃત્તી કી સ્થિતી કે હી જીવન મોક્ષ કહતે હૈ.  
 જીવન મુક્તી કે સુન કે પ્રસન્ન ચિત્ત હોકર શિષ્ય પૂછતા હૈ,  
 હૈ ભગવન ! યહ જો આપને જીવનમુક્ત કા કથન કહા કિયા હૈ  
 સો ઉસકા કારણ કોન હૈ ઔર ઉસકા સ્વરૂપ તથા ફલ કયા હૈ,  
 ઔર ઉસકી અવધી કિસ પ્રકાર હૈ. સો આપ કૃપા કરકે બતાધયે.

ગુરુ કહતે હૈ, હૈ શિષ્ય ! પૂર્વ જો જીવ બ્રહ્મા કા એકત્વ  
 રૂપી દૃઢ નિશ્ચય કે અપરોક્ષ જ્ઞાન કહા થા, સો દૃઢ અપરોક્ષ  
 કહા જ્ઞાન હી જીવનમુક્તિ કા કારણ હૈ, ઔર પૂર્વ કહા હૈ  
 કિ શરીર કે હોતે બંધ ભ્રાંતિ કી નિવૃત્તી ઔર બ્રહ્માકાર વૃત્તિ  
 કી સ્થિતી હી જીવન મુક્તિ કા સ્વરૂપ હૈ. જીવન મુક્તિ કે  
 પાંચ પ્રયોજન કહે હૈ. સો યે હૈ. જ્ઞાન રક્ષા વિષ્ણુ વાદા અભાવ  
 તથા તપ દુષ્ઠ કી નિવૃત્તી ઔર મુખ કી પ્રગટતા. યે જો પાંચ  
 પ્રયોજન કહે હૈ સો હી જીવન મુક્તી કા ફલ હૈ, ઔર વિદેહ  
 મુક્તી પર્યંત ઉસકી અવધી હૈ. વેદ રૂપી સમુદ્ર સે અનેક સાધન  
 રૂપી યત્ન કરકે વિદ્વાન પુરુષોં ને જીવન મુક્તી રૂપી રત્ન નિકાલા  
 હૈ, યહી ઉસમેં લક્ષ્મી કે સમાન રત્ન પાના હૈ. જીવનમુક્ત  
 પુરુષોં કે લક્ષણ ઇસ પ્રકાર હોતે હૈ.:-

શ્રુતિ:—

ઉંડં ન શિખા ન યજ્ઞોપવીતં ન છાદનં ચરતિ પરમહંસઃ ।

શ્લોક:-કંથા કોપીન વાસસ્તુ ઉંડે દગ્ધ ધ્યાન તત્પરમ્ ।

એકાકીરમતે નિત્યં તં દેવા બ્રાહ્મણું વિદુઃ ॥ ૧ ॥

નિરાશિસ મનારંભં નિર્નમસ્કારમસ્તુતિઃ ।

ક્ષીણું ચ ક્ષીણકર્માણું તં દેવા બ્રાહ્મણું વિદુઃ ॥ ૨ ॥

ન ભતિ કારણું તાત ગુણઃ કલ્યાણ કારણમ્ ।

સ્થિતવૃત્તિ ચંડાલોપિ તં દેવા બ્રાહ્મણું વિદુઃ ॥ ૩ ॥

॥ ઇતિ શ્રી જીવનમુક્ત રત્ન સમાપ્તમ્ ॥



[ ૧૪ ]

## અથ વિદેહમુક્ત રત્ન

—:૦:—

કવિત—વિદેહ મોક્ષ કે મંજાર પડા ઝગડા અપાર કહે' ખાત  
જે હજાર કહેા કોન સે કી માનિયે ॥ કોઈ તો  
કહત યહ ઇશ્વર સે અભેદ હોય કોઈ તો કહત  
શુદ્ધ બ્રહ્મહુ સે જનિયે ॥ ઔર કોઈ કહે કિસી  
લોક માહી' મોક્ષ હોત સે કોઈ તો કહત તાસે  
ઉલટહુ આનિયે ॥ ભેદ ઔ અભેદ નાહી' વિધી  
ઔ નિષેધ નાહી. આન જન ખેદ નાહી'. ગુપ્તરૂપ  
જનિ કે ભ્રમ સખ ભાનિયે ॥ ૧ ॥

અર્થ યહ હૈ કિ યહ જે વિદેહ મોક્ષ હૈ ઇસમે' અનેક પ્રકાર કા  
શાસ્ત્રકારોં કા કથન હૈ. ઇસમે' કિસ કી ખાત માને' ઔર કિ  
સકી નહી' માને', ક્યોંકિ કોઈ તો વિદેહ મોક્ષ મે' ઇશ્વર સે અભેદ  
કહતે હૈ' ઔર કોઈ શુદ્ધ બ્રહ્મ સે અભેદ કહતે હૈ', કોઈ કિસી  
લોક મે' લોક મે' જને કો મોક્ષ કહતે હૈ. કોઈ પુનરાવૃત્તિ નહી'  
માનતે હૈ' ઔર કોઈ પુનરાવૃત્તિ માનતે હૈ'. ઇસી પ્રકાર કોઈ કર્મ  
સે મોક્ષ માનતે હૈ', ઔર કોઈ શિલામે' હી મોક્ષ માનતે હૈ',  
ઇસ તરહ કેઈ લોગ અપની અપની કલ્પના અનુસાર અનેક  
ખાતે' કરતે હૈ'. હમણી અપની કલ્પના કે અનુસાર કહતે હૈ' કિ  
ખંધ ઔર મોક્ષ દોનોં હી કલ્પના માત્ર હોને સે વાસ્તવ મે'  
કલ્પિત હૈ, ઔર યે સખ ભ્રમરૂપ હૈ',

સર્વ કા અધિષ્ઠાન ગુપ્ત આત્મા હૈ. ઇસમે' ભેદ અભેદ,  
વિધી નિષેધ, આના જના, પુણ્ય પાપ, સુખ દુખ આદિ જે અવિદ્યા

ક્રી જલ પ્રતીત હોતી હૈ સો સભી બ્રમરૂપ હૈ, પરંતુ જૈસે રજજૂ કે અજ્ઞાન સે સર્પાદિક બ્રમ ભાસતે હૈ, ઔર રજજૂ કે અપરોક્ષ જ્ઞાન સે સભી બ્રમ શાંત હો જતા હૈ, તૈસે હી ગુપ્ત આત્મા કે અજ્ઞાન સે આના જના બંધ મોક્ષ આદિ જો કુછ પ્રતીત હોતા હૈ સો સભી આત્મા કે યથાર્થ જ્ઞાન સે નિવ્રત્ત હો જતા હૈ, ફિર કહીં જને કી ઇચ્છા નહીં હોતી હૈ, જૈસે ઘટ કે કૂટને સે ઘટાકાશ કહીં ભી નહીં જતા હૈ, ક્યોંકિ આકાશ નહીં હો તબ તો જના આના સંભવ હો સકતા હૈ, પરંતુ આકાશ તો સર્વત્ર પરિપૂર્ણ હૈ, ફિર જતા કહાં ?

શિષ્ય શંકા કરતા હૈ, હે ભગવાન ઘટ કે કૂટને સે ઘટાકાશ કા મહાકાશ મેં અભેદ હોતા હૈ, આપ કૈસે કહતે હો કિ ઘટાકાશ કહીં નહીં જતા હૈ. ઇસી પ્રકાર શરીર રૂપી જો ઘટ હૈ ઉસકે નાશ હોને સે ઘટાકાશ રૂપી જો જીવાત્મા કા મહાકાશ રૂપી ઇશ્વર સે અથવા મહાકાશ રૂપી શુદ્ધ બ્રહ્મ સે જીવાત્મા કા અભેદ કૈસે નહીં હોતા હૈ ? મેરે વિચાર સે તો જરૂર જીવાત્મા કા અભેદ માનના ચાહિયે. ઇસ શંકા કે ઉત્તર મેં ગુરુ કહતે હૈં:—

હે શિષ્ય ! ઇશ્વર સે જીવ કા અભેદ માનેં સો નહીં બનતા હૈ. ક્યોંકિ જૈસે એક હી બિંબકા એક પ્રતિબિંબ તો દર્પન મેં હોતા હૈ ઔર દૂસરા જલ મેં હોતા હૈ તબ એક ઉપાધી કે નિવૃત્તિ હોને સે દૂસરી ઉપાધી કે પ્રતિબિંબ સે એકતા કહેં સો નહીં હોગી ઔર જો બિંબ સે અભેદ કહેં તો વહ ભી નહીં બનેગા, ક્યોંકિ પ્રથમ જિસકા ભેદ હોવે ઉસી કા અભેદ હોતા હૈ ઔર જિસકા ઉપાધી સે ભેદ પ્રતીત હો ઉસકા ભેદ નહીં હોતા હૈ. વહ ઉસકા સ્વરૂપહી હૈ ઇસલિયે બિંબ સે ભી અભેદ કહના નહીં બનતા હૈ, તૈસે હી બિંબ જો શુદ્ધ ચેતન ઔર પ્રતિબિંબ જીવ બનતા હૈ, તૈસે હી બિંબ જો શુદ્ધ ચેતન ઔર પ્રતિબિંબ જીવ ઇશ્વર જલ દર્પણ નાંઈ હૈ. ઇશ્વર મેં માયા ઔર જીવમેં અવિદ્યા વ ઇશ્વર જલ દર્પણ નાંઈ હૈ. ઇશ્વર મેં માયા ઔર જીવમેં અવિદ્યા રૂપી ઉપાધી હૈ, એક અવિદ્યા ઉપાધી કે નિવૃત્તિ હોને સે માયા ઉપાધીવાલા જો ઇશ્વર પ્રતિબિંબ હૈ ઉસકે સાથ જીવ પ્રતિબિંબ ઇશ્વર એકતા કહના નહીં બનતા હૈ, ઔર બિંબરૂપ જો શુદ્ધ ચેતન હૈ ઉસમેં અભેદ કહના તભી બને જબ ઉસમેં ભેદ હોં.



अतः उससे किसी वस्तु का भेद कहना अनता नहीं, क्योंकि चेतन में वास्तव में तो कुछ है ही नहीं, और कल्पित है, ऐसा कहें तो उससे कुछ भेद सिद्ध होता नहीं है, क्योंकि जैसे कल्पित रजत से शुक्ती में भेद होता नहीं है तैसे ही भुज शुद्ध आत्मा में माया अविद्या उपाधी जिसमें प्रतिबिम्ब धर्म तथा लव और धनके सर्वज्ञता अदपज्ञता आदि जो धर्म हैं सो सभ भेद में कल्पित होने से भेद और अभेद कहना नहीं अनता है, भसलिये सर्व द्वैत कल्पना से रहित एक में ही परिपूर्ण हैं.

श्लोकः—

किं करोमि क्व गच्छामि किं ब्रह्मामि त्यजामि किम् ॥

आत्मानं पुरितं सर्वम् मला कल्पांशु ना यथा ॥१॥

जब भस प्रकार जन के शरीर का बोध होगा, तब पुनरावृत्ति से रहित हो सकेगा. इसी को विदेह मोक्ष कहते हैं. शिष्य कहता है, हे लगवन, वह जो आपने विदेह मोक्ष कहा भसमें उत्तम देश उत्तरायन काल और किसी सिद्ध आसन आदि की अपेक्षा होगी. ऐसी शंका के होने पर--

गुरु कहते हैं, हे शिष्य जैसा पूर्व में लवनमुक्त पुरुष का जो वर्णन किया है उस देहपात होने में किसी उत्तम देश का, उत्तरायन काल का, और आसन विशेष का किसी वेदशास्त्र ने विधान नहीं किया है, क्योंकि ज्ञान से उत्तर काल में लवनमुक्त अवस्था में ली किसी वेदशास्त्र की विधी उस पर नहीं है तो देह के अंत होने पर विधी का होना कैसे संभव होगा. ऐसे विद्वान पुरुष का लते समय तथा भरते समय जो व्यवहार होता है, सो सारा ही प्रारब्ध के आधीन होता है, और कोई विधी उस पर नहीं होती है, भससे किसी ली ध्यानादि की उसकी जरूरत नहीं.

श्लोकः—

तीर्थे स्वपच्यगेहे वा नष्ट स्मृति परित्यजन् ।

ज्ञानस्य सभ काले ही विमुक्तः केवलं यतिः ॥

धर्मी से ज्वनमुक्त पुरुष को विदेह भोक्ष के वास्ते कोई भी विधि आदिक की अपेक्षा नहीं है।

आहे तीर्थ में आहो स्वयं के अहं में पिंड प्राण का वियोग होवे आहो व्याधी से हलाकार करते हुवे आहो सावधान होकर अहं चिंतन करते हुवे किसी भी प्रकार से उसके शरीर का पात हो, उसने तो जिस काल में गुरु द्वारा महावाक्यों का उपदेश श्रवण किया उसी काल से वह सर्व शोकों से रहित है, और उसी काल से मुक्त है, फिर उसको कौन विधी की जरूरत है, इस प्रकार के जो ज्ञानवान निरंकुश हैं उनको किसी वेद विधी की शंका नहीं होती है, क्योंकि वे वेद के दास नहीं होते हैं और किसी वर्ण आश्रम का भी अलिमान उनको नहीं रहता है।

श्रुति:—

वर्णश्रमाभिमानेन श्रुतिदासो भवेन्न नरः ।

वर्णश्रमविहीनश्च वर्तते श्रुतिमूर्धनि ॥ १ ॥

अर्थ यह है कि जो वर्णश्रम का अलिमानी होता है सो ही वेद का चिंकर होता है, और जो ज्वनमुक्त विद्वान है, सो किसी वर्णश्रम का अलिमानी नहीं होता है, धर्मी से उसपर वेद का उंठा नहीं है, इस लिये वह सभ वेद शास्त्र को छिंमल करके वर्तता है, यही कारण है कि उसके विदेह भोक्ष में कोई भी विधी नहीं है क्योंकि मुक्त तो ज्ञानकाल से ही है, परंतु शरीर का बोध होने से विदेह भोक्ष कहा जाता है, और यह जो साधन साध्य रूप जितना कथन किया है, सो सारा तेरी उक्त शंका की निमृत्ती के वास्ते है, क्योंकि पूर्व ग्रन्थ के आरंभ में तेरे को सुभ प्रार्थी की वांछा हुई थी, सो आत्मा को सुभ रूप न जानने के कारण हुई थी, वह सुभ रूप तू ही है, तेरेसे भिन्न और दूसरा है ही नहीं, और तू ही सुभ स्वरूप है धर्मी को ज्ञान कराने के लिये सत्संग से लेकर विदेह भोक्ष पर्यंत जो कुछ कथन किया गया है सो सभ तेरी ही दृष्टी को लेकर कहा गया है हमारी दृष्टी में तो ऐसा—



श्लोकः—

न चोत्पत्तिर्नोविरोधो न च बंधोऽस्ति साधके ।  
न भुभुक्षुरनमुक्तश्च धृत्येषा परमार्थता ॥ १ ॥

अर्थ यह कि हे शिष्य ! कोई उत्पन्न ही नहीं हुआ तो नाश किसका होवे, और प्रथम कोई अन्ध ही नहीं तो उसके वास्ते साधन कैसे होवे, और कोई भुभुक्षु ही नहीं तो मुक्त कहां से होवे, ये तो परमाथ से ही नहीं है, हम तो ऐसा जानते हैं, तू भी ऐसा ही जान, सुख की प्राप्ति की और प्राप्ति की प्राप्ति की इच्छा मत कर, तू सदा चेतन आत्मा सुखरूप प्राप्त ही है, इस आत्मा को सुन के शिष्य कहता है—

हे भगवान ! मैं चेतन आत्मा सुखरूप और नित्य प्राप्त ही हूँ, इस की प्राप्ति की शंका मेरी निवृत्त हो गई है, अब मेरे को कुछ भी शंका नहीं है, परन्तु यह जो आपने विदेह मोक्ष कहा इसका कारण कौन और इसका स्वरूप तथा इल क्या है, और इसकी अवधि किस प्रकार है सो बताइये.

गुरु कहते हैं, हे शिष्य ! सत्संग से लेकर ज्ञान पर्यंत जो साधन साध्य पदार्थ कहे हैं सो परंपरा से तो सही कारण है परन्तु साक्षात् कारण ज्ञानमुक्ति ही है, और पुनरावृत्ति से रहित होना इसका स्वरूप है, और अपने स्वरूप की ज्ञात होना और उसी की तरह वृत्तियों का प्रवाह चलना यही इसका इल है, नदियां जैसे समुद्र में जाके समाप्त होती हैं तैसे ही ब्रह्म आत्मारूप समुद्र में ब्रह्माकार वृत्तियों की समाप्ति ही इसकी अवधि है

॥ धृति श्री विदेहमुक्ति रत्न समाप्तम् ॥

॥ धृति श्री यौदह रत्न गुप्तसागर सम्पूर्ण ॥

धृति श्री यौदह रत्न गुप्तसागर सम्पूर्ण.

શ્રીગણેશાય નમઃ

## અથ ગુપ્ત જ્ઞાન ગુટકા પ્રારંભ

અથ મંગલાચરણ લિખ્યતે

અથ શ્રી આદિ મેં મંગલાચરણ લિખ્યતે હૈં, સો મંગલા-  
ચરણ ત્રીન પ્રકાર કા હોતા હૈ, એક વસ્તુ નિર્દેશ રૂપ, દૂસરા  
નમસ્કાર રૂપ, ત્રીસરા આશીર્વાદ રૂપ, મંગલાચરણ હોતા હૈ,  
અથ કે આદિ મેં મંગલાચરણ ચાહિયે, કયોંકિ પૂર્વ વૃદ્ધ જો  
આચાર્ય હુયે હૈં ઉનકી રીતી સે.

( વસ્તુ નિર્દેશરૂપ મંગલ )

દોહા—નિર્ગુણ સગુણ પરમાત્મા, વસ્તુ તાહિ પિછાન ।  
ભિન્ન ભિન્ન કીર્તન કો, નિર્દેશ હિ લે જન ॥

( નમસ્કાર રૂપ મંગલ )

ચૌપાઈ—અમુરન કો જો કરે સંહારા, તિનકો નમસ્કાર હૈ હમારા ।  
લક્ષ્મી પાર્વતી પતિ હોઈ, ભજતન કો સંતત ભજે સોઈ ॥

( આશીર્વાદ રૂપ મંગલ )

સોરઠા—શિષ્ય વાંછિત સ્વયં વાંક્ષ, કરત પ્રાર્થના જો નર ।  
યાસો દૂર બહે ભ્રાંતિ, આશીર્વાદ તાકો કહત ॥

૨ ( મૂલ ચક્ર સવૈયા છંદ )

મૂલ-ચક્ર માહિં ગણેશ વિરાજત, સ્વાદ ચક્ર માહિં ક્રિયા અજ  
વાસા ॥

નાભિ કમલ મેં વિશ્વ વિશ્વંભર । હૃદય કમલ મહું મહાદેવ  
નિવાસા ॥



कंठ कमल में वसे देवी नित । त्रिकुटी कमल मह' सूर्य उभासा ॥  
सहस्र कमल दल आप विराजत । जके प्रकाश सभी परकासा ॥  
भमगुप्त स्वप्नसे न्यारे नही । कछुकाको नभाओ' छोड़ो अवभाया ॥

लावनी होहो'वाली : अज्ञानाशक

३. पारलुभासी

लावनी सुन पारलु भासी । कटे सण जन्म भरन कांसी ॥ १ ॥  
यैत में थींता यह कीजै । कि यह तन घड़ी घड़ी छीजे ॥  
कीजिये धंसमें कष्ट विचार । कोन वस्तु है सार असार ॥

होहा—सत्य वस्तु है आत्मा, मिथ्या जगत असार ।  
नित्यानित्य विवेक यह, लिजे पात विचार ॥

फिरै क्या मथुरा अरु काशी ॥ १ ॥  
वैशाख यह वक्त तुझे पाया । सभी जुंठी जनो काया ॥  
यहां कोई रहने नहीं पाया । कालने सण कोई जाया ॥

होहा—भोग लोक परलोक के, तिनका त्यागो राग ।  
तिनकी रहे न कामना, कलत ताहि वैराग ।

जगत से रहना उदासी ॥ २ ॥  
जेठ में यतन यही करना । भिटै सण जन्म और भरना ॥  
मन धींद्रिय विषयते परिहरना । कीजिये संतन का शरना ॥

होहा—श्रद्धा करि गुरु वेद में, मन को कर समाधान ।  
कर्म कर्म के साधन त्यागो, सहो मान अपमान ॥

तितिक्षा तासों परकासी ॥ ३ ॥  
पाद में सत संगत करना । वहां तुझे पावे सण भरमा ॥  
तुझे वहां होवे निभासा । मोक्ष की लगे देरी आशा ॥

होहा—परमानंद की प्राप्ति, सण अनर्थ का नास ।  
यह धृष्टा मन में रहे, कहे मुमुक्षु तास ॥



તિસી સે પાવે અવિનાસી ॥ ૪ ॥

સાવન મેં શરનાગત હોના । પૈર સત ગુરુ કે ધોપીના ॥  
સાફ હોવે તેરા સીના । રંગ ફિર રૈની કા દીના ॥

દોહા-તત્ત્વમસિ કે અર્થ કા, કરેં તોહિં પરકાસ ॥  
સંશય શોક નસેં સવતેરે, હોય, અવિધા નાસ ॥

હોય અમરાપુર કા વાસી ॥ ૫ ॥

ભાદો મેં ભરમ તભી નાશૌ । પ્રેમ ભકતી ગુરુ પરકારૌ ॥  
ઈશ્વર સે અધિક જન સેવો । સુફલ માનુષ તન કર લેવો ॥

દોહા-બ્રહ્મવેત્તા વક્તા શ્રુતી, ગુરુકા લક્ષણુ જન ।  
ઈચ્છા જને મોક્ષ કી, સોઈ શિષ્ય પહિચાન ॥

બુદ્ધિ જળ શિષ્ય કો પહિચાની ॥ ૬ ॥

કવાર મેં કરના યહી ઉપાય । તત્ત્વમસિ સરવન મેં મન લાય ॥  
જીગતિ સે કરો મનન અભ્યાસ । કાલ પાકર હોવે નિદિધ્યાસન ॥

દોહા-નિદિધ્યાસન કે અંત મેં, એસા હોવે ભાન ।

બ્રહ્મ આતમા એક હૈ, લખિ યહી બ્રહ્મ કા જ્ઞાન ॥

હાનિ જિસે હોવે ચૌરાસી ॥ ૭ ॥

કાર્તિક મેં કર્મ સભી નાસા । જ્ઞાન જળ ઉર મેં પરકાસા ॥  
આપના આપ રૂપ ભાસા । ઉસી કા દેખૂં તમાસા ॥

દોહા-વાર પાર હમરા નહીં, નહિં દેશ કાલ તે અંત ।

મેં હી અખંડિત એક હું, સળ વસ્તુકા તંત ॥

મેં હી હું ચેતન અવિનાસી ॥ ૮ ॥

અગાહન મેં જ્ઞાન અગ્નિ જાગી । લોક સળ દાજન કો લાગી ॥  
પૂજિ દિયે શિવ બ્રહ્મા વિષ્ણુ । કૂકી દિયે રામ ઔર કૃષ્ણ ॥

દોહા-જલત જલત એસી બઢી, નિસકા વારન પાર ।

ઈશ્વર જીવ બ્રહ્મા અરૂ માયા, પૂજિ દિયા સંસાર ॥



વિના ઇંધન નહિં પરકાસી ॥ ૯ ॥

પૂષ મેં પૂરણુ આયે આપ । જહાં કોઈ નહીં પુન્ય નહીં પાપ ।  
જયેં અળ્ય કહો કોન કા ખપ । છૂટયા સળ જન્મ મરણ સંતાપ ॥

દોહા—જ્ઞાતા જ્ઞાન ન જોય કંચુ, ધ્યાતા ધ્યાન ન ધેય ।

મમ નિજ શુદ્ધ સ્વરૂપ મેં, ઉપાદેય નહિં હોય ॥

કરું અળ્ય કિસડી તલાશી ॥ ૧૦ ॥

માહ મેં મિટી મિલન કી ભૂખ । જહાં કોઈ નહિં આશિક માશૂક ।  
ઇશક ફિર ફૈસે બહાં હોવે । કાહેકો વૃથા કાલ ખોવે ॥

દોહા—તુઝ ચેતન શુદ્ધ સરૂપ મેં, નહીં આશિક માશૂક ।

લક્ષ રૂપ મેં માર નિશાના, કહા વૃથા વિલોવે થૂંક ॥

કરાવે કયોં જગ મેં હાસી ॥ ૧૧ ॥

વસંત ઋતુ ફાગન મેં આવે । ખેલ સળ પરારબંધ રચવાવે ॥  
અતર ચુલાલ જ્ઞાન રોરી । ખેલતે ભરભર કે ઝોરી ॥

દોહા—હોલી અવિદ્યા ફૂકિ કે, હો ગયે ગુપ્તાનંદ ।

સમઝેંગે કોઈ સુધર વિવેકી, કયા સમઝે મતિ મંદ ॥

જગત કી ઉઠી ધૂલિ ખાસી ॥ ૧૨ ॥

પટ કે પર નૌકા જળ લાયા । પાઠ જળ અધિક માસ આયા ॥  
કલેવર જિસમેં બદલાયા । લાવની તેરહ માસ ગાયા ॥

દોહા,—અધિક માસકા અર્થસુન, અધિક પિછાન ।

કલેવર બદલ્યા યહિ જનો, આપ રૂપકાજ્ઞાન ॥

જહા નહિં દાસ અરૂ દાસી ॥૧૩॥ ટેક

૪ લાવની

પિવેજી ગુપ્ત જ્ઞાન ગુટકા । દૂરી હોવે સળ હી ખટકા ॥ ટેક  
કિયા હૈ ઇસકા જિસને પાન । નરોં મેં ઉસકો હી નર જાન ॥  
ઔર તો સગહી જનો નાર । ગારગિ ને સભામેં કહી પુકાર ॥

દોહા—બ્રહ્મદારણ્ય કે બીચમેં, લિખા યહી સંવાદ ॥

વચકંની કે વચન સુન, પંડિતોં ક્રિયા વિવાદ ॥

બોધ વિનુ ખાય મરે ભટકા ॥૧॥ ટેકા

કોઈ તો રખતે હૈં ઉપવાસ । કોઈ તો કરતે કર્મ ઉપાસ ।

કિસી કે જાય ક્રિયા વનવાસ । કોઈ તો જગ મેં ફિરે ઉદાસ ॥

દોહા—કોઈ ચૌરાસી ધૂની તપૈં, કરેં જંતર મંતર ખેલ ॥

ચામ જલાવેં આગમેં, ઉર મલૈ ન જ્ઞાનકા તેલ ॥

ભરમ કૈસે છૂટે શટકા ॥૨॥

કિસી કે ગલે મેં પડા સંનાસ । કોઈ તો બને ઈસકા દાસ ।

કોઈ કે સનકા બનાતે જોટ । કિસીને કીના ઘોટમ ઘોટ ॥

દોહા—કોઈ પઢ વ્યાકરણ કાવ્ય કોષકો, કરેં વેદકે પાઠ ।

પંડિત વહેકર ભવમેં વિચરેં, ખૂબ લગાયા ઠાઠ ॥

સમજ ન બાતનમેં અટકયા ॥૩॥

કરે નિબંધોં કા સતસંગ । તભી કુછ ચહે જ્ઞાન કા રંગ ।

તભી જીતે માયા કા જંગ । ભ્રમ કી ઉતર જાય સખ ભંગ ॥

દોહા—ગુપ્ત ગલીચે ખેઠકર, કીજૈ યહી વિચાર ।

બ્રહ્મ રૂપ હૈ આતમા, સખ ઝુંઠા જગ વ્યોહાર ॥

ખેલ સખ બાજીગર નટકા ॥૪॥

૫ લાવની

સોઈ નર જનો બ્રહ્મચારી । જિને વશ કીની સખ નારી ॥ટેકા॥

પ્રથમ ગુરુકુલ મેં કીયા બાસ । ફેર ક્રિયા વિદ્યાકા અભ્યાસ ॥

જિને સખ તજી જગત કી આસ । નહીં કહુ રખતે અપને પાસ ॥

દોહા—આઠ ભાંતિ મૈથુન કહા, તાકા કીના ત્યાગ ।

કંચન કાંચ એક કરિ જાને, નહીં કિસી મેં રાગ ॥



करी आत्म पदकी तयारी ॥१॥॥॥  
 विवेक वेंराज्य लुपे सपन्न । विषय ते रेफि लियो है मन ॥  
 प्रगटे जिनके पूरेण पुन्य । जगत में वही पुरष है धन्य ॥  
 होला—ऐसी धारना धारीके, भयछा उपल येह ।  
 कोहं को संसार है, को देही को देह ॥

आत जिन ऐसी श्रीमारी ॥२॥  
 देर लिया सतगुरु का सरना । विधी से परशान को करना ॥  
 मिटे सय जनम और भरना । हर होवे सय ही भरमा ॥  
 होला—गुरु ऐसी कृपा करो, मिटं भेद का पाप ॥  
 भेद भ्रम छुटे विना, मिट नहीं संताप ॥

अविद्या छुटि जय सारी ॥३॥  
 जे नहीं करते हैं यह काम । सोई जूट अलखारी जन ।  
 भवाये केश और दाही । लरमी भडी लावत है गादी ॥  
 होला—करना था सो ना किया, दोर कुल लाही लाज ।  
 जुठे स्वांग बनावता, सरे न ऐ कहु काज ॥  
 गर्भ भूर्ज की भति मारी ॥४॥॥॥

### ६ लावनी

भूष शिर डीना घोटम घोट । भूज लहं भूछ और दाही ॥  
 कोर जे का लगाते रंग । कोर तो रहते नंग निछंग ॥१॥  
 गले में रुद्राक्ष माला । लरम का दूरा नहीं जला ॥  
 होला—कोर विद्या का अध्ययन कर भूष मुनावे वात ।  
 त्याग वराग कहैं औरन को, आप पसारै हाथ ॥  
 लगी है तृष्णा अति गादी ॥२॥॥॥  
 वांचते शास्त्र और पुराण । वेद के हते हैं परमान ।  
 सोल ने ऐसी भति मारी । दिरे ज्यों नारी व्यलियारी ॥

होदा—काम कीय मरु दोन ही नयन अग घट में जान ।

क्या पड़िन क्या मूरजा, दोनों अरु सुमान ॥

दाहिनी आशा नही हाडी पडा

भुज किया नग का बजा बाज । अने है पड़िन उ मदापन ।

आर इस मूरज से किये बजा । लगाने कपड में लडा रन ॥

होदा—दोगन से यों कहत है, हम संन्यासी लोग ।

हमको कुछ मूरजानही, सय तनिर दिये घर के लोग ॥

होदे जगसागर आडी पडा

कैसे हम केन संन्यासी । पदी नल आशा ही हांसी ।

लज्या नही भितन आविनासी । हांसे हम वसने है हांसी ॥

होदा—हाया हासी ना लगी, शिर पर धरया संन्यास ।

पुंथकेप वपु तीनको, हीना नाही सादे ॥

### ७ लावनी

मजहज ही हांसी नही हाडी पडा

मजहज हा पडा गले में है । आपको समझत नाही अंध ॥

वश्य जती हा करके त्याग । हेर आश्रम में करते राग ॥

लगी है घरसे हुनी आग । अटकत डालत कैसे हाग ॥

होदा—विषय भांस ही लालसा, तनिर दिया आतमरूप ।

औरनको उपदेश सुनावे, आप पडा अव रूप ॥

लज्या नही पुरज परमानंद पडा

हरे जे आश्रमका अभिमान । वही नर पशु वेद के जन ।

औरन से आहत है जडा मान । मान मर पी मती हो मजहजान

होदा—जुही कर अंधा हुआ, पडा मान मोतिया बिंद ।

हसाहु दिशा को पडाअधेरा, छिपगया आतम चंद ॥



ફેર ફેસે હોવેઆનંદ ॥૨॥

આપકો માનત હૈ કરતા । વહી નર જનમેં અર મરતા ।  
ગર્ભ કી અગ્ની મેં જડતા । ખાનિ ચીરાસી મેં ફિરતા ॥

દોહા—કર્તા ક્રિયા કર્મકા, છૂટા નહીં હંકાર ।

ચામધર્મ અપને કર માને, સોઈ નર જનો ચમાર ॥

સોઈ તુમ જનો મતિકા મંદ ॥૩॥

તબે કરતા મતિકા હંકાર । તેરા હૈ રૂપ જો અપરંપાર ।  
ગુપ્તકી સમઝ દેખ દુક્યાર । છોડ સખ સેવ પંથ આજાર ॥

દોહા—તુહિ આતમ ચેતન શુદ્ધ હૈ, નહીં કર્મકા લેશ ।

કર્તા ક્રિયા કર્મ છોડિકે, દેખો અપના દેશ ॥

તુહી હૈ આનંદન કા કંદ ॥૪॥

૮. લાવની.

ધસ કાયા નગર મંઝાર । વસે યક રાજન પતિરાજ ॥ ૧૬૬ ॥

રાજા હૈ જિસકા અપરંપાર । નહીં કુછ હદ બેહદ શુમાર ॥

સદા વહુ બના રહે યક તાર । તિસે કોઈ કર નહીં સજ્જા ઝર ॥

દોહા—સદા અખંડિત એક રસ, જામે લાભન હાન ।

સોતો અપના આપ હૈ, સો હમ લિયો પિછાન ॥

મુધર જાવે સખ હી કાજ ॥૧॥

ઘોર ઝૂકે જનો રાજ । કાલ ડા સખ હી હૈ ખાજ ॥

તિસે કલ્લી કાલ નહીં ખાતા, કહીં સો આવે નહીં જતા ॥

દોહા—આપૈ રાજ આપૈ પરજ, આપ કરૈ સખ કાજ ।

આપહી બન્યો દિવાન મુસદ્દી, આપહી રહા વિરાજ ॥

જિને યહ સાજ સલી સાજ ॥૨॥

જહાં કોઈ માલ ન બજના । વહાં પર નહીં દફતરખાના ॥

જહાં પર નહીં કોઈ હિલકાર । નહીં કોઈ ચોટી પહરેદાર ।

દોહા—એસા નિરભયરાજ હૈ, જહાં કોઈ નહીં ઢગચોર ।

નિરાકાર હૈ સખી વિભૂતી, ચલે ન કિસીકા જોર ॥

જહાં પર ભરમ સખી રાજ ॥૩૧॥

મિલા હુમૈ બિન પરજા કા રાજ । જહાં કોઈ બીગરે નાહીં કાજ ॥

સખી હૈ અમરાપૂર કા સાજ । જહાં કોઈ નહીં કાજ નહીં લાજ ॥

દોહા—ગુપ્ત રાજ કો જો કરૈ, સો ભૂપન કા ભૂપ ।

તાસુ સમાન ઓર નહીં દૂજ, કિસકી દીજ ઊપ ॥

દેખ તિસકો સખહી લાજ ॥૩૨॥

### ૯. લાવની.

ખેલ બાજીગરકે સારે । દેખ કર મતભૂલો ખારે ॥ ૩૩ ॥

રચી બાજીગરને બાજ । કિ રચના બહુત ઘની સાજ ॥

કોઈ તો જની કોઈ તાજ । કોઈ તો પંડિત કોઈ કાજ ॥

દોહા—રચિકર જખ દેખન લગા, મિલા તિસીકે સંગ ।

નિરાકાર કો ભૂલલિકર, દેખન લાગા અંગ ॥

દેખતા પંચ ભૂત સારે ॥૩૪॥

નિદ્રામે ભાસતા હૈ સ્વપના । કોઈ તો પરકા કોઈ અપના ॥

દેખતા હૈ સખહી રચના । સખી વહુ નિદ્રા કા સપના ॥

દોહા—જગત માહીં દેખતા, નાના જગત અપાર ।

જૈસે તાર છુટયા પુંવેતે, સખ પુંવેકા વિસ્તાર ॥

આપ સે કછુ નહીં ન્યારે ॥૩૫॥

ભઈ જખ આપ રૂપકી ભૂલ । દેખતા સૂક્ષ્મ અરુ સ્થૂલ ॥

કલપના કારણ કી હોવે । અવસ્થા મુખોપતિ જોવે ॥

દોહા—એસા મન યહ બાજીગર હૈ, કરકૈ દેખ ખિચાર ।

મનન ભાવ જખ છૂટે યાકા, તવ હોવે નિસ્તાર ॥



કામ ઓર ક્રોધ સભી હારે ॥૩॥  
જસ હુક કરેકે દેખ વિચાર । કુઠા હૈ મનકા સભી અકાર ॥  
આપના સુખ રૂપ હૈ સાર । જસુ મેં કબહું ન હોય વિકાર ॥

દોહા—શુદ્ધ સ્વરૂપ પ્રકાશ મેં, ના કોઈ ચિત્ત સમંદ ।  
જો માનત હૈ શુદ્ધ રૂપમેં, તે નર મૂરખ અંધ ॥

ફિરત જગમેં મારે મારે ॥૪॥

### ૧૦. લાવની

તિરજ્યા જમ આપ આપના નૂર । કરતા સખ હમસે હો ગયા દૂર દે.  
કહો અખ ક્યા કીજે પ્યારે । ખુલે સખ અંધ મોક્ષ તારે ॥  
જપું અખ કહો કોનકા જપ । મેં હી હું પૂરણુ આપે આપ ॥

દોહા—દેશકાલ અરુ વસ્તુમેં, વ્યાપી રહ્યો ભરપૂર ।  
સભી જગતકે અંતકે બાહર. નહિં નેરે નહિં દુર ॥

સભી વદુ મેરા નૂર જહૂર ॥૫॥  
કૈસે અખ કીજે કર્મ ઉપાસ । મૈલ નહીં ના કાહુકે દાસ ॥  
કિયા હમ લેઃ ભરમ કા નાસ । કમી કી દૂરી ગર્ભ સખ કોંસ ॥

દોહા—ભરમ માંહી ભરમત ફિરા, ખના દેવકા દાસ ।  
જ્ઞાન પ્રકાશ ભયા ઘટે અન્દર, હુઠ અવિધા નાસ ॥

દેવ કહુ હમને નાહીં દૂર ॥૬॥  
કુટ્યા વર્ણુ આશ્રમ કા અભિમાન । કિયા હમ વેદ નીરકા પાન ॥  
કુટે સખ માન ઓર અપમાન । કુટી સખ લોક વેદકી કાન ॥

દોહા—કરતા કિયા કર્મકા, છુટિ ગયા હંકાર ।  
જ્ઞાન અગ્ની પરગટ ભર્ષ, કર્મ ભયે જરિષ્ઠાર ॥

અધ્યક મેં હી મેં ભરપૂર ॥૭॥  
જો નર માનત હૈ કરના । કિન્હી કો જન્મ ઓર મરના ॥  
નુપતો પ્રદિયે નિષ્કર્મ । જિસમેં નહીં જન્મ ઓર મરના ॥

દોહા—તુમ ચેતન શુદ્ધ સ્વરૂપમે, નહિં ક્રિયા કી ગંધ ।

એ માને કૂટરથ રૂપમે, સો પામર મતિ મંદ ॥

કરો અબ કરતા મતિકા ચૂર ॥૪૧॥

### ૧૧. લાવની

બતાઉં કહા જ્ઞાન કા રૂપ । જહાં પર નહિં છાયા નહિં ધૂપ ॥૪૨॥

જહાં પર નહિં સૂક્ષ્મ સ્થૂલ । નહીં કોઈ પંચકોશ કા મૂલ ॥

જહાં કોઈ નહીં મૂલ નહિં તૂલ । નહીં કોઈ શાખા ફલ અરુ ફૂલ ॥

દોહા—જહાં ચંદ સૂર તારા નહીં, નહિં પંચ ભૂત કા લેશ ।

જહાં નહીં તન માત્રા, નહીં કાલ નહિં દેશ ॥

કહો ફિર કિસકી દીજે ઉપ ॥૪૩॥

જહાં નહિં સ્વર્ગ નહીં કોઈ । જહાં નહિં દેવ દનુજ દોઈ ॥

જહાં પર પુરુષ નહીં લોઈ । જહાં કજુ પાઈ નહિં ખોઈ ॥

દોહા—જ્ઞાન ધ્યાન જહાં કો નહીં નહીં મોક્ષ નહીં બંધ ॥

વેદ પુરાણ શાસતર નહીં, નહીં ગાયત્રી છંદ ॥

વહાં કોઈ પડતા નહિં ભવ કૂપ ॥૪૪॥

જહાં નહિં જીવ ઈશ માયા । નહીં કોઈ ધર્મ કર્મ પાયા ॥

જહાં નહિં સાદી અન્નાદી । નહીં કોઈ વાદ ઓર વાદી ॥

દોહા—નહીં વર્ણ નહીં આસરમ. ના કોઈ જતી ન પાંતી ।

ના કોઈ ન્યારા રહે, ના કોઈ રહતા સાથ ॥

હમ સબ દેખા દરકિ કર સૂપ ॥૪૫॥

કહે કોઈ ઘી કા કહા સવાદ । મૂઢ નર વિરથા કરે વિવાદ ॥

જગુ મેં નહીં અંત નહીં આદિ । નહીં કોઈ સાધન સિદ્ધ સમાદી ॥



દોહા-કોઈ જીવ બ્રહ્મકી એકતા કા, નિશ્ચય કહતે જ્ઞાત ।  
 દ્વેત અદ્વેત જહાં પર નહીં, કહે સો મૂરખ જન ॥  
 જહાં કોઈ નહીં ઊપ અનૂપ ॥૪૧॥

## ૧૨. લાવની

આત્મા વ્યાપક બ્રહ્મ સ્વરૂપ । જસુ કે નહીં રંગ નહિં રૂપ ॥૪૨॥  
 અવસ્થા ત્રીનોં સે ન્યારા । નહીં વહ રક્તપીત કારા ॥  
 નહીં વહ અગ્ની ને જારા । પવન સે સૂખત ના પ્યારા ॥

દોહા-શસતર સે કટતા નહીં, જલસે ભીગે નાહિં ।  
 જૈસે ઘત દૂધ મેં વ્યાપક, સભી ઠોર કે નાહિં ॥

યહી તુમ તિસકા જનો ૩૫ ॥૧૧॥  
 નહીં કભી જમેં નહિં મરતા । નહીં કોઈ સુખ દુખ કો ધરતા ॥  
 નહીં કષ્ટ ભોગે નહિં કરતા । નહીં કહીં સ્થિર નહીં ચરતા ॥

દોહા-હાથ પર જિસકે નહીં ના કોઈ પિંડ ન પ્રાન ।  
 ના વહ પાંડિત મૂરખા, ના કષ્ટ જન અજન ॥

નહીં કભિ જિસમેં પ્યાસ ન ભૂખ ॥૨૧॥  
 નહીં કભિ સોવે નહિં જાગે । નહીં વહ સ્થિર નહિં ભાગે ॥  
 નહીં કષ્ટ ગ્રહણ કરે ત્યાગે । નહીં કભી ધ્યાન માહિં લાગે ॥

દોહા-અસ્મિંભાતિ કરિ રમિ રહા, સભી ઠોર કે માહિં ।  
 સભિ કષ્ટ કરતા સા દિખે, કષ્ટ ભી કરતા નહિં ॥

જસુ મેં રંક નાથ નહિં ભૂપ ॥૩૧॥  
 સદા હૈ સત ચેતન આનંદ । જસુ મેં કોઈ દુખ નહિં દુઝ્ડ ॥  
 ફેરભી સમજત નાહીં અંધ । વહી હૈ સખ સિદ્ધન કા સિદ્ધ ॥

દોહા—હસ્તી છિપૈ ન ધાસમેં, કરકે દેખ વિચાર ।

સો ગુપ્ત આપના રૂપ હૈ, સખ કરતા જ્ઞાન ખ્યોહાર ॥

જનમ મેં નહીં ઉક નહિં ચૂક ॥૪૧॥

### ૧૩. લાવની

જરા ટુક કર કર દેખો ગોર । તેરેસે નહીં દૂઝ કોઈ ઓર ॥૪૨॥

જીવ હોય તૂહી પરકાસા । તુહી ફિર મધિર હો ભાસા ॥

તુહી હૈ જગત જલ માયા । તુહી હૈ પિંડ પ્રાણ કાયા ॥

દોહા—જીવ વિના નહિં આતમા, જીવ વિના નહિં પ્રભ ॥

જીવ વિના સીવો નહીં જીવ વિના સખ ભ્રમ ॥

કરો ટુક વિચાર બલકા જોર ॥૪૩॥

જાગ્રત મેં સખ હી તેરા ખ્યાલ । સુપને મેં દેખો વોહી હાલ ।

અવસ્થા સુષોપતી આવે । જાગ્રત સ્વપન નહીં પાવે ॥

દોહા—તુરિયા મેં દેખન લગા, સુષોપતી ભી નાહિં ॥

સભી અનાતમ કલપીતજનો, અધિષ્ઠાન કે માહિં ॥

કાહે કો જૂઠા મચાયા શોર ॥૪૪॥

જભી તુરિયેકો છિટકાવે । તભી તુરયા તિતકો પાવે ॥

વહાં સે ઉલટી નહીં આના । આપ મેં આપહીમિલિ જના ॥

દોહા—વિશ્વ નહિં તેજસ પ્રાણ કછુ, નહિં તુરિયા તો માહિં ।

સ્વ સ્વરૂપ નિજ જ્ઞાનધન, મૈં તૂ બિખત હે નાહિં ॥

વહાં પર ચલો ન કિસકા જોર ॥૪૫॥

ભયે થિત આપ રૂપ મેં આપ । જહાં પર લગે ન કિસકી છાપ ॥

ગુપ્ત મેં સદા રહો ગરગાપ । મિટા ધ્રુવ જનમ સંતાપ ॥



દોહા-ઈસ દરજે કો સો પાવે, જિનકે વિમલ વિવેક ।  
તજકે સખ સંસાર કો, થક લઈ ગુરં કી ટેક ॥  
નિરખ્યા જગ આપના બેહર ॥૪॥

## ૧૪ લાવની

હીરા તુઝે ખાદિયા કચરે મેં । દેખે કયા પોથી પતરેમેં ।  
ફિર કયા મયુરા ઓર દાશી । દરે ઇસ તન કી તલાશી ।  
જહાં તુઝે પાવે અવિનાશી । કરે સખ કાલ કર્મ ફાંસી ॥

દોહા-વસ્તુ તો ઘર મેં ઘરી, બાહર ફૂંઢન જાય ।  
કહો તાકોં કૈમે મિલે, દીને ખાત ખતાય ॥

કહા હૈ પાની પથરે મેં ॥૧॥

જભી મત ગુરુ શરને આવે । વસ્તુ કા તખ વ્યારા પાવે ।  
વચન મેં કીજે પરતીતી । વસ્તુ કે પાને કી રીતી ॥

દોહા-શ્રદ્ધા કરી ગુરુ વેદ મેં, તખ પાવે કુછ ભેદ ।

જ્ઞાન પ્રકાશ હોય ઘટ અંદર, દૂર હોય સખ ખેદ ॥

બહે મત અપને ચતુરે મેં ॥૨॥

જહાં તૂ પાવે સમતા ભાવ । દૂર હો ચિત તેરેકી દાહ ।

કેર તુઝે મિલે એસા દાવ । જરા દુક ધર આગે કો પાંવ ॥

દોહા-સમદર્શી હો વિચરના, ના કહીં રાગ ન દોષ ।

ભયો જ્ઞાન જવ નાશી અવિદ્યા, છવત પાયો મોક્ષ ॥

એક સમ બૂટે મુથરે મેં ॥૩॥

ગુપ્ત સાગર મારા ગીતા । જગત સખહી લાગા થોથા ।

કુરુવ ને એસો કીયા વિચાર । જગત કા જુઠા સખી આચાર ।

દોહા-બ્રહ્મ આતમા એક લખિ, કિયો ભેદકો અંત ।

કૃપા કન્યા યોં કહે. કોઈ જને વિરલા સંત ॥

બહે મત મન કે તખરે મેં ॥૪॥

૧૫. લાવની

ચહે કોઈ રામ કહો ચહે શ્યામ । લખે નિજ રૂપ હો પૂરણ કામ ।  
રજ્ય અધિષ્ઠાન હૈ એક । કલ્પના હોવે વામે અનેક ॥  
સીપી મેં રૂપે કા ભ્રમ હોય । રવિ કિરનોં મેં નીર કહૈ કોય ।  
દોહા—અધિષ્ઠાન અજ્ઞાન તે; ભ્રમ હોવત બહુ ભાંત ।

જ્ઞાન હુયે નિજ વસ્તુ કો; સખ ભ્રમ હોવત શાંત ॥  
સભી કો એક આપ વિશ્રામ ॥૧॥  
પુર્વે સે ખીંચત નિકસત તાર । તાર સખ પુર્વે કા વિસ્તાર ॥  
બ્રહ્મ મેં ચોં હોવત સંસાર । બીજ મેં કલી ફૂલ ફલ ડાર ॥

દોહા—જગ હોવત અજ્ઞાન કર જ્ઞાન હોત જગ હાન ।  
જૈસી ઇચ્છા કર આપ મેં હોવત સોઈ પિછાન ॥  
યાહી કે કલ્પિત હૈં સખ નામ ॥૨॥  
પૂરણ પદ વશિષ્ઠાદિ ગાવેં । વેદ નિત અભેદ બતલાવે ।  
સંત ભી ચોંહી સમજાવે । દ્વૈત સે જનમ મરન પાવે ॥

દોહા—દ્વૈત મિટા અદ્વૈત હુવા જખ સખ જગ બ્રહ્મ વિલાસ ।  
સત ચિત આનંદ શુદ્ધ રૂપમેં નહીં જીવ આભાસ ॥  
યાહી વિધિ હોવત હૈ આરામ ॥૩॥  
સુરદુર્લભ તન યહ જનો ગુપ્ત ગુરુ ઇષ્ટ હૃદય ઠાનો ।  
ઇસ્ત વિન બ્રષ્ટ હો જગ માય । ઇષ્ટ લખિ શ્રેષ્ઠ આપ હો જય ॥

દોહા—જેઇસ્ઠી જિસ રૂપકા, ધ્યાન ધરે સિધ હોય ।  
મૂલ ધ્યાન ધર ભૂલ નિકાલો, નિર્ભય હોકર સોય ॥  
ધૂમે નહીં પંચ કોપકા ગામ ॥૪॥

૧૬. લાવની

આપના ઇસ્ત આપહી જન । ઔર સખ કુડે ઇસ્ત પિછાન ॥૫॥  
તુહા હૈ સખ ઇસ્તન કા ઇસ્ત । ભૂલ કર કયોં હોતા હૈ બ્રષ્ટ ।  
તેરી તો એસી મતિ મારી । ફિરે જયોં નારી વ્યભિચારી ॥



દોહા—અપને પતિ કો છોડિ કર, કરૈ ઓર કા સંગ ।  
સો પામર જિત તિત ડોલત હૈ, હો ગઈ હૈ મતિ ભંગ ॥

ભૂલિ ગઈ અપને પતિ કા જ્ઞાન ॥ ૧ ॥

જખી દૂજે કો સમઝા ઇસ્ત । જ્ઞાન સખ હોગયા હૈ નષ્ટ ।  
જખી તૂ હો ખૈઠા હૈ દાસ । ઇસ્ત પડી ગલે મેં ફાંસ ॥

દોહા—ઇસ્ત આપનો આતમા, જકો કીનો ત્યાગ ।

ઝૂંઠે ઇસ્ત ખનાય કર, સર ન એક હુ કાજ ॥

ઉલટ કર અંતર લાવો ધ્યાન ॥

છોડ સખ ઇસ્ત દેવકી આસ । કરો નિજ અંતર અપને વાસ ।  
ઝૂંઠ જનો બુદ્ધિ ચિદાભાસ । જ્ઞાન સે હૌવે ધનકા નાસ ॥

દોહા—આપ રૂપ કુટસ્થ કા, નહીં બ્રહ્મ સે ભેદ ।

ભેદ ભાર જખસે ધર્યો, તખસે પાયો ખેદ ॥

સમજ એસા કયોં હુવા અજન ॥ ૩ ॥

આપસે ભિન્ન જનતે ઇસ્ત । વહી નર પાતે હૈં બહુ કસ્ત ।  
ગુપ્ત ગલિયારે મેં આવે । ઇસ્ત કહિં દૂંઢા નહિં પાવે ॥

દોહા—આપના આપ પિછાનિ કે, તજે ઇસ્ત કી ખાત ।

વૃક્ષ ખીજસે ન્યારા નહીં, મૂલ ફૂલ ફૂલ પાત ॥

ધુરુ કો પાઈ સુખ કી ખાન ॥ ૪ ॥

### ૧૭. લાવણી

યહા કોઈ નહીં રામ નહીં શ્યામ । સદા યક તૂહી પૂરણ કામ ટેકા  
આપહી રચતા સખ વિસ્તાર । જિસકા કછુ નહીં વાર નહીં પાર ॥  
રચિ કર ભૂલિ ગયા હૈ આપ । તભી ફિર તપતા તીનોં તાપ ॥

દોહા—દેવ ખનાયા ઇશિ કો, આપ ખના હૈ દાસ ॥

આપહિ અપને ગલે મેં, ઘાલિ લઈ હૈ ફાંસ ॥

ક્રિયા હૈ તુજને હી સખ કામ ॥ ૧ ॥

તુજે યહ કદિપ લઈ માયા । ફેર ઉસે તુજ કો ભર માયા ॥  
આપ કો માનન લગા શરીર । મિલા જ્યોં જલ કે માહીં ક્ષીર ॥

દોહા—ખડુત કાલ ભરમત ફિર્યો, અખ તો સમજ ગંવાર ।

ઔસર ચૂકા જાય હૈ, ફિર પડેગી યમકી માર ॥

તભી તૂ રોયેગા ઉસ ધામ ॥ ૨ ॥

અખ તૂ સમજ અપને કો આપ । છોડ સખ રામ કૃષ્ણ કો જાપ ॥  
સદા યક તૂહી આપહિ આપ । કહાં સે લાયા ભેદ કા પાપ ॥

દોહા—જન્મ મરન તોમેં નહીં, નહિં સુખ દુખ કી ગંધ ।

જીવ ભાવ કો છોડીદે, તુહિ પૂરણ પરમાનંદ ॥

જહાં પર નહીં ધ્યાન નહીં જ્ઞાન ॥ ૩ ॥

જખ તૂ પાવે ગુપ્તાનંદ । તખી હોય તેરે કો આનંદ ।  
વહાં પર કોઈ નહીં દુખ દ્રંદ્ર । જહાં નહિં પરકાશત હૈ ચંદ ॥

દોહા—વહાં પર ગોવર્ધન ખસે, લાગી બ્રહ્મ સમાધિ ।

કહન સુનન મેં હૈં નહીં, ગતિ કછુ અગમ અગાધ ॥

જહાં પર સખ સિધ હોતે કામ ॥ ૪ ॥

### ૧૮. લાવની

રમ્યા સખ જગહ મેં રાધેશ્યામ । શ્યામ ખિન ના કોઈ ખાલી કામ ટો  
હુઈ ઇચ્છા કીના વિસ્તાર । ગુન તીનોં મેં સખ સંસાર ॥  
સભી કા એક આપ આધાર । જૈસે માલા મેં સૂત્ર કા તાર ॥

દોહા—અસ્તિ ભાંતિ પ્રિય દેખ લો, વ્યાપક નંદકિશોર ।

પંચ ભૂત તીનોં ગુણ માહીં, પૂરણ હૈ સખ ઠોર ॥

મિટા તુજા કો જલાવો કામ ॥ ૧ ॥

કોઈ ખન પરવત મેં જાવે । કોઈ તન ઉલટા લટકાવે ।  
કોઈ કાશી ગંગા ન્હાવે । દ્વારિકા છાપ લે હરખાવે ॥



દોહા-ચિત ચંચલ ઈંદ્રિય મન રોકે, વન મેં ધારે ધ્યાન ।  
ધ્યાન મિટા ચંચલતા વ્યાપી, યહ તો કચ્યા જ્ઞાન ॥

ઇસસે સરે નહીં કહુ કામ ॥ ૨ ॥

પ્રથમ નિષ્કામ કર્મ કરના । પુનઃ ચિત ઇશ્વર મેં ધરના ।  
ચતુષ્થ સાધન હોય સમ્પન્ન । ગુરુ કી લેવે જાય શરન ॥

દોહા-પ્રેમ ભાવ ગુરુમેં કરે, ધારે ભક્તિ સુજન ।  
ગુરુ પ્રસન્ન ઉપદેશ કરે, જબ છૂટે તન અભિમાન ॥

સભી મેં સુઝત આતમરામ ॥ ૩ ॥

ગુપ્ત ગુરુ કૃપા મિલા આરામ । લખાયા સખમેં સુન્દર શ્યામ ।  
મિટા જગ ખેદ હુવા ખુશિયાલ । મૂલસે ગઈ અવિદ્યાજાલ ॥

દોહા-ગોવર્ધન યોં કહે કૃષ્ણ વિન, ઓર નહીં કર ગૌર ।

સત ચિત આનન્દ શુદ્ધ રૂપમેં, ચલે ન કિસકા ભેર ॥

ગુરુ મેં નહીં રૂપ નહિ નામ ॥ ૪ ॥

### ૧૯. લાવની

હમહૈં ઉન સંતન કે દાસ । જિનેં સખ તણ જગત કી આસ ॥ ટેકા ॥  
કિયા હૈ વિજન દેશમેં વાસ । જગત સે રહતે સદા ઉદાસ ।  
કારિ દમ સખી કર્મકી કાંસ । આપકો જના ચિદ આકાસ ॥

દોહા-ઇસ ધારા પર વિચરતે । સદા રહે નિરદ્વંદ્વ ।

જનત હૈ કોઇ જનન હારે, કયા જનેં યે અંધ ॥

કિસી કો દેતે નહીં તરાસ ॥ ૧ ॥

નહીં કુછ દંભ કપટ માયા । ઉલટિ મન આતમ મેં લાયા ।  
જગત સખ ચેતન કી ગયા । કભી તિન વ્યાપે નહિં માયા ॥

દોહા જગ કે માહીં યોં રહે, જ્યોં પદમ પત્ર જલ ખીચ ।

નહાયે નિરમલ જ્ઞાનસે, સખ છુટી અવિદ્યા કીચ ॥

નહીં કુછ રખતે અપને પાસ ॥ ૨ ॥

જિનહોં કે જ્ઞાન વનિજ વેપાર । ઓર નહિં કરતે ફજ કાર ।  
જગત મેં લિપતે નહીં વિકાર । સભી કુટા જાના આકાર ॥

દોહા—ચેતન નિરમલ શુદ્ધમેં, ના કછુ હુવા ન હોય ।

એસી જાકી દષ્ટિ હૈ, સાધ કહાવે સોય ॥

જિનેં સખ કાટી મજહુબ કી ફાંસ ॥ ૩ ॥

સંત વિચરત ઇન પંથમેં । ખાત ગાઈ સદ અંથન મેં ।  
ગુપ્તે જિન ખોજિ લિયા જગ મેં । ફેરિ નહીં આવત હૈ ભગ મેં ॥

દોહા—ગોવર્ધન સોં કહત હૈં. સંતો લક્ષણ ઉહ ।

ધૂનિશ્ચય જિનકા ભયા, તિનકે દેહ ન ગેહ ॥

ભઈ હૈ મૂલ અવિધા નાસ ॥ ૪ ॥

## ૨૦. લાવની ચાલ દૂન.

સજી ચલો મુહાગિન સાજ આજ ઘર પી કે ।

અજી એજી પિયા કે ખેગિ બુલાઈ હૈ ।

ચલના પડે જરૂર સવારી સાજી કર આઈ ॥ ૧ ॥

તેરે વારિ ખડે લનિહાર ત્યાર અખ હો લે ।

અજી ઉજી જરા અખ અખિયાં તો ખોલો ॥

કર પ્રીતમ ઘર કી સુર્ત શબ્દ કુછ મુખ સેતિ ખોલો ॥

અખ ઘર પ્રીતમ કા ધ્યાન માન મદ તજી કે ।

અજી એજી મોહ મમતા કે સખ ત્યાગો ॥

ગૃહ છોડિ પિતા કા ચલો ચરણ અખ પ્રીતમ કે લાગો ॥

શેર—ભૂલી ફિરે ઉસ સજન કે કર અંદરની ખ્યાલ કે ।

વહ જ્ઞાનરૂપી દે એસી, કાટે અવિધા જલ કે ॥

શુભ ગુન કે ભુષણ પહિરિકે છાંડો સભી ધનમાલ કે ।

તૂ ઉસ્સે પરદા મત રખે વોહ જાને તેરે સખ હાલ કે ॥



અખ કર આગે કા સૂલ મૂલ ગહિ રાખો ॥  
 અજ એજ પિહર મેં ઉમર ગમાઈ હૈ ॥ ૧ ॥  
 અખ તજો કુટિલ પરિવાર ભાર કો પટકો ।  
 અજ એજ છોડિ કર મમતા મોઈ કો ॥  
 પરિછિન્ન પિતા હંકાર વિષય તજ પાંચો ભાઈ કો ॥  
 તૃષ્ણા ચિન્તા અરુ ચાહુ મુહેલી ત્યાગો ।  
 અજ એજ કુસંગતિ સખ અશનાઈ કો ।  
 રાગ દ્વેષ અરુ હર્ષ તજો સખ માન ખડાઈ કો ।

શેર—જલ શીલ કા અશનાન કરકે તિલક તત કા કીજયે ।  
 ભક્તિ પરેમા માલ ગલ મેં સાજ યહ સજ લીજયે ॥  
 કરની કે કપડે પહિર કે નિષ્કામતા રંગ દીજયે ।  
 સોલહ કરો શૃંગાર અખ જસે દેખિ પીતમ રીઝિયે ॥

પીતમ કો પ્યારી લગી ફેર ડર કિસકા ।  
 અજ એજ સભી કે મન કો ભાઈ હૈ ॥ ૨ ॥  
 યહ પાયા અટલ મુહાગ ભાગ પિછસે સે,  
 અજ એજ સોહાગિન સુખભર સોઈ હૈ ।  
 જો હોના હોય સો હોય વૃત્તિ જન અંતર મોઈ હૈ ॥  
 અંતરમુખ સુખ કો અનુભવ કરકે જાન્યા.  
 અજ એજ ભેદ જન તોડિ દિયા જડદા ।  
 જખ ખુલિ ગયે જ્ઞાન કપાટ ભરમ કા ફાંટિ ગયા પડદા ॥

શેર—પંચકોષત્રય દેહ કા પડદા પડ અજ્ઞાન તે ।  
 શમશેર સતગુરુ કો દર્ઘ કાટયા નિજતમ જ્ઞાન તે ॥  
 તોડિ બંધન વિચરતી કુછ કામ નહીં ધન ધામ તે ।  
 આદૃષ્ટ તે વ્યાહાર હોય નાતા નહીં કષ્ટ ચામ તે ॥

યોં હોય એકમએક મૌજ મેં રહતી,  
 અજ એજ જીવનમુક્તી કો પાઈ હૈ ॥ ૩ ॥

હુઈ વિરતી અમ્હાકાર ચાર સે મિલિ કે ।  
 અણ એણ ઉસીને ભેદ જનાયા હૈ,  
 પડા ગર્ભ લોહ પર લવ જલ માંહિ સમાયા હૈ ॥  
 દિયે સિંધુ બિંદૂ ત્યાગિ ભેદ જલ કા,  
 અણ એણ ઉપાધ સખ હી દૂરિ ડારી ।  
 હુઈ શુદ્ધ સચ્ચિદાનન્દ આજ યહ પ્રીતમ કી ખ્યારી ॥

શેર--સિંગાર સોલહ સાણ કે પાયા પતિ કે રૂપ કો ।  
 તણ કર પિતાકે ધામકો તિર ગઘ ભવ કે કૂપ કો ॥  
 ગુપ્ત સૈન પિછાનિ સજની પાવે રૂપ અનૂપ કો ।  
 સમજે ચતુર પરખીન કોઈ સમજાવે કો બેકુફ કો ॥

જન ક્રિયા આપના કાજ લાજ સખ તણ કે,  
 અણ એણ ચતુર કી યહ ચતુરાઈ હૈ ॥ ૪ ॥ ચલના પડે જર ॥

દોહા--ત્રય કાલે દો ઉજરે પતલે પંચ પ્રકાર ।  
 સુભર ચાર કઠોર દો ચે સોલહ સિંગાર ॥  
 ॥ ઈન ષટ્દસ શ્રંગારોં કો જિજ્ઞાસુ મેં ધરાતે હૈ ॥  
 દોહા--આવરણ દોષ કાલે ત્રય, ઉજલે દો કર્મ ઉપાસ ।  
 પંચ પાતલે કામાદિક કર, મન મેં હાય હુલાસ ॥  
 પુષ્ટ ક્રિયે હૈં જસુ ને, વિવેકાદિક જે ચાર ।  
 સતશાસ્ત્ર સતસંગ દો કાઠે, ચે અધિકારી કે શ્રંગાર ॥

## ૨૧. લાવની ચાલ ડૂન.

મત પડે ભરમ કે કૂપ રૂપ લખ અપના,  
 અણ એણ મનુષ તન તુઝકો પાયા હૈ ।  
 કર દેખો તત્ત બિચાર કૌન તુહ કહાં સે આયા હૈ ॥ ૨૬ ॥



યહ તન ધન સચ્ચા જાનિ ખેલ મેં લાગા,  
અણ એણ વિસરી ગયા અપની સુધિ સારી ।  
ખાન પાન મેં લગ્યા વિષયોં કી બદિ ગર્ભ બીમારી ॥  
ઈસ ચમક્યામ કો દેખિ ફિરત હૈ કૂલ્યા,  
અણ એણ કુફર કે પલડે મેં કૂલ્યા ॥  
બકને લગ્યા તુફાન, જમા સખ અપની કો ભૂલ્યા ॥

શેર—માયા કે મદ કોપી કે, ફિરતા અવિધારાત મેં ।  
ચશમ અંદર કે મિચે, ફંસ ગયા જાતજમાત મેં ॥  
જૈસે કરની દેખિ કે, હસ્તી પડ્યા હૈ ખાત મેં ।  
અંકુશ ખાતા શીશ મેં, બંધિ કે વિષોં કી ખાત મેં ॥  
ચોં મોહ જાલ મેં ફંસા જીવ મરતા હૈ, અણ એણ કષ્ટ કષ્ટા-  
તર પાયા હૈ ॥ ૧ ॥ યહ વિષય ભોગ સખ બિજલી કા ચમકારા  
અણ એણ પસારા બિગડી જાય છિન મેં ॥ મુક્તી હિત યુક્તી કહે  
ખાત મનકી રહ જાય મન મેં ॥ ઔસર કે ચૂકે હોય ફેર પછતાના,  
અણ એણ કાજ અખ કર લીજે અપના છોડો સખ પરમાદ જગત  
યહ રૈન માહિ સપના ॥

શેર—અખ છોડો વાદ વિવાદ કો યાદ કર નિજ રૂપકો ।  
આકાર દષ્ટી છાંડિ કે સમજો ન રૂપ અરૂપ કો ॥  
જો પરકાશતા હૈ સર્વ કો, સો સર્વ મેં ભરપૂર હૈ ।  
યહ રમજ સમજો આરિફોં કી વોહિ તેરા નિજ નુર હૈ ॥

જીસ કો કહતે હૈં વેદ અર્થ કો લે કે. અણ એણ સો અપના  
આપ બતાયા હૈ ॥ ૨ ॥ કર વેદ ગુરુ સે પ્રીતિ રીતિ કો પાવે ॥ અણ  
એણ ઈશ કો એસી હૈ નીતિ ॥ ચહે લાખોં કરો ઉપાય ઔર વિધિ પાવે  
નહીં રીતિ ॥ અખ મુનિયે કરિકે ખ્યાલ હાલ કહું સગરા ॥  
અણ એણ ચતુષ્થ સાધન કો કરના ॥ સખ ત્યાગો કરમ ઉપાસ  
ફેર લે સતગુરુ કી શરણા ॥

શેર-વિધીસે ગુરુદેવ કે બકિત સે પરસન કરે ।  
જતા આતા કૌન હૈ જન્મતા અરૂં કે મરે ॥  
વિધિ ઔર નિષેધ દોનોં કર્મ કે કહુ કે કરે ।  
ફલ તાસ કે પુન્ય પાપ કા કૌન સુખદુખ કે ધરે ॥

સતગુરુ સે પરસન કરે વિધી સે જાકે, અણ એસી સખ  
સંદેહ મુનાયા હૈ ॥૩॥ જખ મુનિ કે શિષ્ય કી બાત હાથ કે  
ઠાયા ॥ અણ એણ કહ્યા સો હમ કે સખ જાન્યા ॥ મન બુદ્ધિ  
કર સમાધાન લગા કે દોનોં કાના ॥ તુઝ મેં નહીં આવન  
જાવન જન્મ ઔર મરના ॥ અણ એણ વિધી નિષેધ નહીં  
જાગડા ॥ પૂન્ય પાપ કે સુખ દુઃખ ફલ કા તુઝમેં નહીં રગડા ॥

શેર-યે ધરમ સુક્ષ્મ સ્થલ કે બુદ્ધિ સહિત આભાસ મેં ।  
તૂ તો હૈં સખકા સાક્ષી રહતા હૈ ઇનકે પાસ મેં ।  
ચેતન્ય જ્ઞાન સરૂપ હૈ હસ્તી છિપે નહીં ઘાસ મેં ।  
તુઝ મેં ક્રિયા કર્મ એસા જિમિ નીલતા આકાશ મેં ॥

મુન ગુપ્ત ગુરુ સે જ્ઞાન ખુલ ભ્રમ તાલા । અણ એણ  
ભરમ કા મૂલ ઉડાયા હૈ ॥ ટેક ધૃતિ ॥

## ૨૨. અથ લાવની: ચાલ દૂન ॥

અખ લખી નિશચલ કી રીતિ પ્રીતિ સોં પ્યારે । અણ એણ  
જગત મેં ઔર નહીં દુઝા ॥ હુયે જ્ઞાનરૂપ ઔતાર ભરમ કા  
ફેડિ દિયા ફૂજા ॥ ટેક ॥ સાગર કાઠ કરિ દિયા સેતુ જગત કે  
માહીં । અણ એણ જીવ ચઢિ ચઢિ ઉતરે પારા ॥ દિનમેં સૌ  
સૌ વાર તિનોં કે નમસ્કાર મહારા । અચરજ જગમેં હુયે  
ઔર બહુતેરે ॥ અણ એણ સહી કે સિર પૈ મૌર સાજા ।  
તજિ વિદ્યા કા હંકાર લિખી જિન ભાષા નહિં લાપા ॥



11 Լ Զ ԶԻԽԵ ԻԿԻԿ ԻԿՏ ԼԵԿՏ ԻՏ ԽԱՆՏ ԶԵՏ ԿԱԶ  
1 ԻՏ ԶԻԿԵ Լ ԻՏ ԽՍԻ ԻԿՏ ԻՏԻԿԵ ԻՏ ԼԵԿԵ  
Լ ԶԻԿԵ Լ ԶԻԿԵ Լ ԶԻԿԵ ԻՏ ԽՍԻԿԵ ԼԵԿ ԵՂ.Կ  
1 Լ ԶԻԿԵ ԶԻԿ ԶԻ ԶԻ ԶԻԿԵ ԻՏԻ ԻՏԻ ԶԻ ԶԻԿ ԻՏԻԿԵ--ԵԼԵ

11 Զ ԶԻԿԵ ԶԻԿ ԶԻ ԶԻԿԵ ԶԻԿ ԶԻ ԶԻԿ  
ԶԻԿԵ ԶԻԿ 1 ԶԻ ԶԻԿԵ ԶԻԿ ԶԻԿԵ ԶԻԿ ԶԻԿ 1 ԶԻԿԵ  
ԶԻԿԵ ԶԻԿ ԶԻԿԵ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿԵ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ  
1 ԶԻԿԵ ԶԻԿԵ ԶԻԿԵ ԶԻԿԵ ԶԻԿ 1 Զ 1 ԶԻԿ Զ ԶԻԿ ԶԻԿ  
ԶԻ ԶԻԿ ԶԻԿ 1 ԶԻԿԵ ԶԻԿԵ ԶԻԿ ԶԻ ԶԻ ԶԻԿ ԶԻԿ

11 Զ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿԵ ԶԻ ԶԻԿԵ ԶԻ ԶԻԿԵ  
1 Զ ԶԻԿԵ ԶԻԿ ԶԻԿԵ ԶԻ ԶԻ ԶԻ ԶԻԿ ԶԻԿ  
11 Զ ԶԻԿԵ ԶԻ ԶԻ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ  
11 Զ ԶԻԿԵ ԶԻ ԶԻ ԶԻ ԶԻԿԵ ԶԻ ԶԻԿԵ--ԵԼԵ

1 ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ  
1 ԶԻԿ ԶԻԿԵ ԶԻԿԵ ԶԻԿ ԶԻԿ 1 ԶԻԿԵ ԶԻԿ ԶԻԿ  
ԶԻԿ ԶԻԿ 1 ԶԻԿԵ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿԵ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ  
ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ 1 Զ 1 ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ  
ԶԻ ԶԻԿ ԶԻԿ 1 ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ

11 ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ

1 ԶԻԿ ԶԻԿԵ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ

11 ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ

1 ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ ԶԻԿ

ક્રિયા કર્મકાંડ કો ધુરિ ધુરતા કરકે । અણ એણ છુટા દર્ધર્શવર  
કી પૂજા ॥ ૩ ॥ જિસે અપની અપની ઠોર કાંડ સખ રાખે । અણ  
એણ વિદુત કી યહ વિદતાઈ હૈ ॥ નિશ્ચલ કા કથન હૈ અચલ  
અચલ કો દિયા દિખાઈ હૈ । નહિં લક્ષ માંહિ કોઇ પક્ષ દક્ષ  
યહ કહતે । અણ એણ પક્ષ મેં કુખ્યા સંસારા ॥ વે કિસકી  
કરતે પક્ષ વેદ વેદાંગ ભયે પારા ।

શેર—ધન્ય હૈં ઉસ પુરુષ કો સાજ જસકો યહ સજયા ।

ઉસીને સંસાર મેં વિદ્યા કા પાયા હૈ મન ॥

નિષ્કામ હોકે વિચરતે રાજ રહે ઉસકી રત્ન ।

તીનોં ભુવન કે બીચ મેં ઉંચી ગડી તિન કી ધન ॥

### ૨૩. અથ લાવની : ચાલ દૂન.

અખ કરો કુંભ અશનાન ઘાટ તિરખેની, અણ એણ કાલ  
અખ તુઝકો પાયા હૈં, મત ફંસે ભરમ કે જાલ સખી યહ જૂઠી  
માયા હૈ ॥ ટેકા ॥ તર તીવર ધાર વૈરાગ યહી તિરખેની । અણ  
એણ આતમા તીરથ મેં નહાવો ॥ કર વિષય દેશ કા ત્યાગ  
કિનારે તિરખેની આવો । નિજ આતમ તત જ્ઞાન અક્ષય વટ  
પરસો ॥ અણ એણ સરસ્વતી સાર વેદ ટાહો । મલિન વાસના  
મેલ સલી અખ મલિ મલિ કે ધોવો ॥

શેર—અંતઃકરણ કે કપડે કો સાફ કરકે ધોધયે ।

સાપુન કર્મ નિષ્કામ ભક્તિ દોનુ વો કર સોહિરે ॥

લક્ષણ કહે હૈં શાસ્ત્ર મેં એસે ગુરુ કો બેધયે ।

મૂલ અવિદ્યા મેલ કો ગુરુ ચરણે સંગમ ખોધયે ।

જખ તિરખેની કા નહાન સફલ હોતા હૈ । અણ એણ ભ્રમ  
કો ધોય બહાયા હૈ ॥ ૧૧ ॥ ભમરા આતમા ચેતન પૂરણ સખ  
મેં અણ એણ રતી અખ તિસ માંહી કીજે ॥ દ્વાજ દેવ કર



દ્વાર અર્થ આશ્રમ કા મુનિ લીજે । આશા તૃષ્ણા કરિ ત્યાગ  
આસરમ પાવે ॥ અણ એણ યાત્રા જખ હોવે પૂરી । ફિર રહા  
ચોરાસી લાખ કર્મ કી પડી કંઠ ઘૂરી ॥

શેર—યહ પર્વ અખ તિસકો મિલ્યા પાચા હૈ અપને આપકો ।  
આત્મા તીરથ શાંત મેં ખોયા હૈ તીનોં તાપ કો ॥  
મેલા મિલોની કો ગઈ ફિર જપૈ કિસકે જપ કો ।  
દરશન હુયા દીયાર કા ખોયા હૈ પુન્યરૂ પાપ કો ॥

સોઈ તિરખેની કે તટ પર વૈઠે ડટકે । અણ એણ મજા કુછ  
તિસકો પાચા હૈ ॥ ૨ ॥ દારાગંજ દારા ત્યાગ ધલાહી પાવે ।  
અણ એણ ધલેહુ આમાદ ક્રિયા જિસને ॥ જીની મેં ઝલક રહા  
આપ ભેદ કી ગંધ નહીં જિસમેં । સતસંગતિ નૌકા ઉતર  
ભવધારા ॥ અણ એણ નહીં હૈ જિસમેં વાર પારા । વ્યાપક  
એક અખંડ સભી શામિલ સખસે ન્યારા ॥

શેર—ઇસ ત્રિધિ સે તીરથ ક્રિયા તિસયોગ યજ્ઞ સખહી ક્રિયા ।  
સ્વયં પિત્ર કો ઉધાર કે સખ દાન અવની કા ક્રિયા ॥  
સંસાર મેં ઉસ પુરુષ કા સફલ હૈ દિયા લિયા ।  
રૂપ અપના નીર ગંગા છનિ કે જિસને પિયા ॥

કોઇ સમજે સૂરમા રમજ હમારા દેશી । અણ એણ માયા  
કા જાલ ઉડાયા હૈ ॥ ૩ ॥ માયા કે જાલ મેં ફંસે મૂઢ અજાની ।  
અણ એણ ધર્મ અપને સે ભાગે હૈ ॥ પકડી લોભ કી નાડિ  
ભાડ ઝાંકન કો ભાગે હૈ । તજિ દિયા જ્ઞાન અધ્યયન લોભ કે  
ફંદ મેં ॥ અણ એણ કર્મ અપને કો ત્યાગા હૈ । વ્યભિચારિન  
જ્યોં ફિરે ચાટ વિષયોં કી લાગ્યા હૈ ॥

શેર—ધર છાડિ કે કયોં નીકસે કાહે કો મુખ કારા ક્રિયા ।  
ભૂલે શબ્દ સંન્યાસ કો કલદાર મેં મન કો દિયા ॥

વિરથા હૈ સંસાર મેં એસે સંન્યાસી કા જિયા ।

કૌડી ફિરત હૈ માંગતા ખાતા હૈ ઉલટા ક્રિયા ॥

નહીં ગુપ્ત સૈન કો સમજે મૂઢ અનારી । અજ એજ અખજ ખાજે કો ખાયા હૈ ॥૪૧॥ ટેક ॥૪૧૥

## ૨૪. અથ લાવની : ચાલ દૂન.

અખ હુયા કુલ કા અન્ત સન્ત યહ કહતે । અજ એજ સોમ-  
વતી સમતા કો ધારો ॥ માવસ મમતા કો ત્યાગ રાગ અરુ  
દ્વેષ સહી મારો ॥૪૨॥ સ્થાહી સંશય કો કાઢિ મૂલ સે પ્યારે ।  
અજ એજ જ્ઞાન કી ધારા નહાવો ॥ નિષ્કામ નિશાન હિલાય  
ધાય ગુરુ સંગમ પર આવો ॥ સતગુરુ સે કરો મિલાપ સુક્લ  
હોય મેલા । અજ એજ કર્મ કી કાલિખ કો ધોવો ॥ કરિ કે  
એસે અશનાન ફેર નિરભય હોકે સોવો ॥

શેર—એસા ક્રિયા અશનાન જિસકો ગોતા લાય કે ।

સો નિરભય હોકે સોવતા વિરતી થકી હૈ જય કે ॥

પાયા અમોલક વસ્તુ કો વહ ક્યોં મરે ફિર ધાયકે ।

અંતર કી અગ્ની ખુઝગઈ નિજ રૂપ અપના પાયકે ॥

હર હાલ હંસી હર હાલ ખુશી મેં રહતે । અજ એજ મૂલ  
સંસૃતી કા જરો ॥૪૩॥ સખ જૂઠા યહ પરપંચ રંચ નહીં સચ્યા ॥  
અજ એજ ફેર કયા મજબૂત ગીત ગાવે ॥ શાસ્ત્ર વેદ પુરાણ  
સહી યહ કહિ કે સમજાવે ॥ નહીં સમજે મૂઢ ગંવાર વેદ કા  
આશા । અજ એજ ચાલ વહી ભેડાં કી ચલતે ॥ ફંસિ ગયે  
મજબૂત કે જલ અવિદ્યા અગ્નિ મેં જલતે ॥

શેર—મજબૂત કો દેખિ કે મિરઘા ફિરત હૈ ધાવતા ।

ભટકિકે મર જત હય નહીં ઉસકી પ્યાસ ખુઝાવતા ॥



તેસે હી યહ જીવ મૂરખ વિષય સુખ કો ચાહતા ।

તિન હેતુ ધનકે કાજ જગ મેં નાના સ્વાંગ બનાવતા ॥

સખ કહતે સંત પુકાર વિષય દુખ રૂપા । અજી એજી તને  
અખ અપને કો તારો ॥૨૧॥ જો ક્રિયા તુએ સંન્યાસ આશ કરે  
કિસકી । અજી એજી કામ ક્યા ક્ષેતર તુએકો ॥ યહી બડા અફ-  
સોસ ખાત સુનિ સુનિ હોતા મુએકો ॥ કોઈ બને વૈરાગી ખાકી  
ખાક રમાવે ॥ અજી એજી અર્થ વે તિસકા ભૂલે હૈં । સમુજાવે  
કો તિસે લોભ કે ઝલે ઝૂલે હૈં ॥

શેર--કહે વેદ પુકારી કે સો વૈરાગી નહીં ।

સો હી વૈરાગી હય સહી તિરલોકી સે રાજી નહીં ॥

કહતે વૈરાગી આપકો સખ ખાત હય તિનકી વહી ।

માલ મંદિર મેં ભરે પુડિયોં કી ચઢી રહી હૈ તથ ॥

જિસે વેદ કહે વૈરાગ ખખર નહીં ઉસકી, અજી એજી રાત  
દિન બકેં મહારો મહારો ॥૩૧॥ તજી કર અપની મર્યાદ સ્વાદ ક્યા  
આયા । અજી એજી લોભ કી અજર ફાંસ ભારી । ક્યા ગિરહી  
ક્યા સંન્યાસ લોભ કો ખા લિયા બ્રહ્મચારી ॥ જખ છોડિ દિયા  
ઘર બાર ખવાર કયોં હોતા । અજી એજી માગિ કર દુકડે કો  
ખાવે । અપની અનુસાર ચહે જાગે ચહે સો જાવે ॥

શેર--યહી મતા હય સંત કા નિત જપે અપને આપકો ।

સ્વતંતર હોકે વિચરતા તજીકર પરતંતર પાપકો ॥

ગુરૂદ્વાર મેં ક્યા કામ હૈ ધર છોડ દિના આપકો ।

ગુપ્ત અપના આપ હૈ ફિર જપે કિસકે જાપ કો ॥

પંથો મેં સંત નહીં પડે પડે સોષ બહતે, અજી એજી જ્ઞાન  
કે અંજન કો સારો ॥૪૧॥ ધીતા ॥

## ૨૫. અથ લાવની: ચાલ દૂન

શેર-હાલ દોરે કા લિખે સુન લિખ્યે ચિત લાયકે ।

જે આયા દેખન સુનન મેં સખહી કહતે ગાય કે ॥

યે જીવ દોરા કરત હૈ જંગલ આય કે ।

ભૂલ્યા હુકુમ સરકાર કા રહા રૈયત મેં ઉલઝાયકે ॥

હાકિમ પતિ હાકિમ જીવ કરે જગ દોરા । અજી એજી બૈઠી  
કે માયા અસવારી ॥ જખ કરકે દેખિ જાંચ તણી ગલતી નિકલી  
સારી ॥ ટેકા ગલતી ગિરદાવરજન પરદા પટવારી । અજી એજી  
સણી યહ વેદ જાલ વસ્તા । સતસંગી સડક જાન યહિ સીધા  
રખ્યા રસ્તા ॥ સખ હાલ યહિ એક હવલદાર તુમ જાનો ॥  
અજી એજી કાયદા કર્મકાંડ ભાસ્યા, નાનાપન નંખરદાર હુકુમ  
ભુગતન લાગ્યા સારા ॥

શેર-વૈર વલાઈ ચલે તડવિ તામસ ધાય કે ।

ન્યાવ નાઈ મન માનકર હાકિમ પે પહુચે જાયકે ॥

ચિત્ત ચૌકીદાર સે હાકિમ કહે સમુઝાયકે ।

પ્રારબ્ધ જગીર ખાવો સરકારી કામ ખનાયકે ॥

રૈયત રજેગુણ જુલવાય કહા સમઝાય કે ॥ અજી એજી  
ખડાયા દીજે સરકારી ॥ ૧ ॥ યે માન અમીન જુલાય હુકુમ દિયા  
તિસકો ॥ અજી એજી માપ જલદી કીજે ખ્યારે ॥ જે પડ જગી  
ચૂક દિશે જગ જંગલ મેં મારે ॥ સુનકે હાકિમ કા હુકુમ ચલા  
કુરતી સે ॥ અજી એજી માપ કા સાજ લિયા સારા । ઝગડે કી  
ઝંડી ગાડ શિસ્ત જિને જાંધી એકતારા ॥

શેર-વેદ કે કાનૂન મૂજિળ કામ તિસકો સખ કિયા ।

કર્મ ફલ કો ત્યાગ કે મુક્તિ રિશવત સે હુયા ॥



કરકે સફાઈ કામ કી સખડી તિસે દિખલા દિયા ।  
સંતિ લીજિયે સરકાર અખયહ કામ હમ નિસ વિધિ કીયા ॥

સખ ઉંચ નીચ લઈ માપ રહી નહીં ખિસ્વા । અણ એણ  
નહીં છોડી હલકી ભારી ॥૨૧॥ હમ ગેરી યતન જરીઅજાન કા  
ગઠા ॥ અણ એણ કાયા ભૂમી કો માપ ગિરી । જખ નિકલી  
પંચલિ કોંપ ખેત તીનોં મેં દખલ કરી ॥ નિસ ચોરાસી લાખ  
ખેત તીનોં મેં ॥ અણ એણ ચાર હિસ્સે કિની સારી, ઇક્કિસ  
લાખ ચઢી કાગજ કે મંઝારી ॥

શેર—સત રૂપ જે સરદારપુર તિસસે યહ દૌરા ચલ્યા ।  
ભવાનપુર તાંડા પડયા ખાગ મેં ડેરા ઢલ્યા ॥  
પાપ પાંડવ ગુફા દેખી આસપુર મેં જ રલ્યા ।  
ભય ખડે ભીલાવાડ મેં ફેર કાંગલી લૂ મેં જલ્યા ॥

ફિર દેખ્યા લોભ લંગૂર ડાક ખડિ મારે । અણ એણ કરી  
જખ મુદ્દા ઘાટ ત્યારી ॥૩૧॥ જહાં નામ નરમદા નહાય મૈલ સખ  
ધોયા ॥ અણ એણ હવા હુરમત કી ખૂબ ઉડી । તિસતે આગે  
ચાલ સવારી વાકાનેર ખડી ॥ વહ વંકા મારગ જાન પહુંચતા  
કોઈ ॥ અણ એણ માન કી મનવર મેં આયે । કામાદિક રસ્તા  
વિષ્ટ ઘાટ અમઝેરે કો પાયે ॥

શેર—આમનાય અમઝેરે મેં ધી, અખિકા દેવી રહે ।  
જે સમઝે યાકે અર્થ કો પાપ જન્મોં કે દહે ॥  
સત રૂપ જે સરદારપુર હૈ ઉરમેં ઉલટા આ રહે ।  
ફીર દૌરે કા ઝગડા ચુકયા નિજ ધામ અપના પારહે ॥  
ઇસ ગુપ્ત દો કા સાર ચાર કોઈ સમઝે, અણ એણ પાર  
સખ હોવે નરનારી ॥૪૧॥ટંકા॥

દોહા—મુસ્તાજર માયા મેં કુંસે બહુ ગયે વહીવટદાર ।  
 છુટિ ગયે માયા જલ સે સોઈ ઉતરે પરલે પાર ॥  
 લેવે સાર સુગંધ કો તજ દુરગંધ અસાર ।  
 પાવે અપને રૂપ કો સખ છૂટે ભરમ વિકાર ॥

## ૨૬. અથ લાવની: રંગત ખ્યાલ

કાયા મંદિર માહિં પિયારે આતમ જોતી લિંગ રહે ।  
 મનીરામ હૈ તિસકા પુજારી તરહુ તરહુ કે ભોગ ધરે ॥૧૮૬॥  
 ગોણુ પુજારી ઔર આઠ હૈં અપને અપને કાજ ચલે ।  
 શબ્દ, અરૂ સ્પર્શ, રૂપ, રસ ગન્ધ કો લેકે હાજિર ખલે ॥  
 નૌ તો પૂજા કરે જ્ઞાન સે મન બુદ્ધિ ચિત્ત હંકાર મિલે ॥  
 દસ પુજારી હૈં કર્મકાંડ કે કરતે અપને કર્મ ભલે ।  
 સખ મિલિ પૂજા કરે હૈં દેવ કી જનમ જનમ કે પાપ દહે ॥૧૮૭૬॥  
 ધૂપ દોપ હૈં સાધન સારે અરૂ જિતને પતરા પોથી ॥  
 નિજ આતમ ચિતિરેક જો કિરિયા ઔર સભી જાને થોથી ॥  
 સત ચિત આનન્દ તીન પુખ્ત ધરિ નિશ્ચય મેં બુદ્ધિ સોતી ।  
 મન બાણી કી ગમ્ય નહીં જહું મંદ હોય સખહી જોતી ॥  
 આપ સ્વયં પરકાશ બિરાજે નેતિ નેતિ કર બેદ કહૈ ॥૧૮૮॥  
 જોતી સરૂપ હૈ આપ તુ હી ફિર કિસ જોતી કી આસ કરે ।  
 અંતર બાહર ભન કાલમેં સખહી કા પરકાશ કરે ॥  
 બુદ્ધી અરૂ અજ્ઞાન મેં આકે તુહી રૂપ આભાસ ધરે ॥  
 અહું બ્રહ્મ યહુ વિરતી કરકે તુહી આવરણ નાશ કરે ॥  
 સખ તેરી ચમક કી દમક પડી હૈ પવનરૂ પાની સભી વહે ॥૧૮૯॥  
 ગુપ્તરૂપ પરગટ આપ બિરાજે તેરે તો મર્યાદ નહું ॥  
 આદી અનાદિ શબ્દ કહે દો તેરે તો કોઈ આદિ નહીં ॥  
 વેદ શાસ્ત્ર મેં નાના ઝગડે તુઝ મેં તો કોઈ વાદ નહીં ॥  
 માયા અવિદ્યા બ્રહ્મ ઈશ મેં તુઝમેં કોઈ ઉપાધિ નહીં ॥  
 કાલ કા ભય નહીં જરા ભી તુઝ મેં કાહે કો વૃથા દુખ સહે ॥૧૯૦॥



## ૨૭. લાવની: રંગત ખ્યાલ (પ્રશ્ન ૩૫)

ખબર નહીં હૈ અપને ઘર કી ઔરોં કે ઘર કી ખાત કરે ।  
 કૌન પુરુષ ઈસ કાયા નગર મેં રાતદિના પરકાશ કરે ॥૮૬॥  
 ચંદ્ર સૂર તારાગણ અગ્ની વિદ્યુત વાયક સખ ભાસે ।  
 જાગત સ્વપ્ન સુષોપતિ તુરિયા ચાર અવસ્થા પરકાસે ॥  
 તુરિયેતિત અરૂ અધકાર કો યા કાયા મેં કૌન લહે ।  
 લિયા દિયા અરૂ ખાયા પિયા પહિલી વાર્તા કૌન કહે ॥

શેર—સખ હાલ કા હોય ખ્યાલ જિંસમેં કૌન કુવત પાયકે ।  
 કહને મેરે પર ગૌર કર મન આપને કો લાયકે ॥  
 અંતર મેં કરો વિચાર કયોં મરે ખાહર ધાયકે ।  
 જાતા આતા કૌન હૈ સખહી કહો સમજાય કે ॥

તન શહર કા ખોજ કરો કૌન જન્મે અરૂ કૌન મરે ॥૧॥  
 ઈશ્વર જીવ કહત હૈ કિસ કો ભેદ કા કારણ દિખલાવો ।  
 કયા સ્વરૂપ ઔર દેશ કાલ હૈ વસ્તુ તિનકી બતલાવો ॥  
 ગુણ શક્તિ અરૂ વાચા કૌન હૈ કયા કરતે અરૂ કયા ખાતે ।  
 કૌન દેશ તિનકે વિચરન કો જહાં પે ચે આતે જાતે ॥

શેર—ચેતન નિત સમાન હૈ ફિર ધર્મ ઉલટે કયોં કહે ।

એક તો સર્વજ્ઞ હૈ અદ્વૈત દૂન કયોં ચહે ॥

એક તો કરતા નહીં અરુ એક કર્તા કયોં રહે ।

એક તો આનન્દમય હૈ એક દુઃખ કયોં સહે ॥

જખ વહુ ભજન કરે ઈશ્વર કા ફિર કેસે ઉસે આજાદ કરે ॥૨॥  
 તત્ત્વ પદ કા વાચ્ય કહા હૈ કૌન લક્ષ કહલાવે હૈ ॥  
 મહાવાક્ય મેં વૃત્તી કૌનસી જો તિનકા ભેદ મિટાવે હૈ ॥  
 અહું બ્રહ્મ યહુ જ્ઞાન કહાવે સો યહુ હોતા હૈ કિસકો ॥  
 યા તન મેં રહે કૌન અજ્ઞાની હમને બતલાવો ઉસકો ॥

શેર—પ્રક્રિયા સખડી કહો વેદાંત કે સિદ્ધાંત કી ।

જીસે જાનિ કે જ્ઞાની પુરૂષ ખાત કરતે જ્ઞાન કી ।

જિસ કરકે કરતે ધ્યાન કો વહ કૌન ખાતા ધ્યાન કી

સમાધિ કે વિધન સાધન ખાત કહ અષ્ટાંગ કી ॥

કે પ્રકાર કી હૈ વહ સમાધી જિસકર ચોગી ચોગે કરે ॥૩૧॥

કાલ કા લય કિસકો રહતા હૈ કૌન બંધ અરૂ કયા મુક્તિ ॥

મુક્ત હોય અરૂ બંધ સે છૂટે સભી કહો તિનકી ચુકતી ॥

જ્ઞાન કે સાધન કૌન પિયારે કિસકો કહતે હૈ ભક્તિ ॥

કે પ્રકાર કી કેસે કરતે બતલાવો કરકે સકિત ॥

શેર—પંચકોશ અતિતઆતમ કૌન કારણ સે રહે ।

સખકે શામિલ મિલ રહા કેસે અકરતા હો રહે ॥

ગુપ્ત પરગટ એક હૈ કયોં અપની લજજત ખો રહે ।

કુંસિ કે અવિદ્યા જલ મેં ઈસ જગત મેં કયોં મોં રહે ॥

વ્યાપક બ્રહ્મ સ્વરૂપ કહતે હૈ કેસે હૂમે કેસે તિરે ॥૪૧॥

ધૃતિ પ્રશ્ન

૨૮. પૂર્વ પ્રશ્નોં કે ઉત્તર : લાવની ચાલ દૂન

કર ઘર અપને કી ખબર સખર સે સોવે ॥ અજી અજી આતમા  
સખકા પરકાસી ॥ સત ચિત આનન્દ રૂપ સ્વયં પ્રકાશ હૈ અવિ-  
નાશી ॥૨૯॥ જખ સ્વપ્ન અવસ્થા હોય નહીં કોઈ જોતિ ॥ અજી  
અજી ભાસતા જગત જલ સારા । સખ જોતિ જવાભાસ નહીં  
તુઝ દષ્ટા સે ન્યારા ॥ જો કહી અવસ્થા ચાર જાગ્રત અદિ ॥  
અજી અજી પંચમી તુરિયેતીત જાનો ॥ ઈન સખ કા વ્યભિચાર  
એકરસ આતમ પહિયાનો ॥ જિસે અંધકાર પ્રકાશ ભાસતે દોનોં  
અજી અજી ઉસે આભાસ બતાયા હૈ ॥ લેના દેના જાન બૂલ  
સખ ઉસમેં હી ગાયા હૈ ॥



શેર-ચેતન્ય જે ફૂટરથ હે તિસકી શક્તિ પાયકે ।

આભાસ અન્તઃકરણ મેં સખ ખ્યાલ ખરતેં આયકે ॥

ખ્યાલ કી પહિલી કલી મેં કહે પરસન ગાય કે ।

પુરી અષ્ટિકા મેં ગવન હોય સુન લીજિયે ચિત લાયકે ॥

જન્મ મરતા સ્થૂલ વિદારી પટકા । અણ એણ આતમા  
જાવે નહીં આસી ॥૧॥ માયા મેં પડ્યા આભાસ ઈસ કહલાવે ।  
અણ એણ અવિદ્યા માહિ છવ કહિયે ચહિ કહતે તિનકા રૂપ  
બેદ ઉપાધી સે લહિયે ॥ અણ દેશ કાલ વસ્તુકા હાલ કહું  
સગલા અણ એણ ઈશ કે ત્રીન દેશ ભાળે ॥ સૂત્રાતમ વૈરાટ  
ત્રીસરે અવ્યાકૃત રાળે ॥

શેર-ભૂત ભવિષ્યત વર્તમાન કાલ તિસકે હૈં સહી ।

સમિપ્તી સ્થૂલ સૂક્ષ્મ કારન યે વસ્તુ કહી ॥

આઠ ગુણ હૈં માયા શક્તિ ઓંકાર વાચા હુઈ ।

અણ છવ કે સુન લીજિયે દુઃક સમઝ કે મેરી કહી ॥

હૈં નેત્ર, હૃદય, કંઠ, દેશ ચહ ત્રીનાં । અણ એણ અવસ્થા  
ત્રીન કાલ ભાસી ॥૨॥ ઈંદ્રી અરૂ સ્થૂલ હૈં તિસકી વસ્તુ । અણ  
એણ અતૂર દશ ગુણ નિસર્ગ રહતે ॥ ધિરિયા શક્તિ જાન વૈખરી  
ખાનીકો કહતે । એા કર્તા પુન્યપાપ સુખ દુખ ખાતા । અણ  
એણ લોક લોકાંતર કો જાવે ॥ દૂત રહે અસંગ નહીં કછુ કરે  
નહી ખાવે ॥

શેર-ચેતન નિત્ય સમાન હે ધરમ ઉલટે થોં કહે ।

માયા અવિદ્યા બેદસે કરતા અકરતા ખનિ રહે ॥

કરતા મતીકે બેદ સે સુખ અરૂ દુખ કો સહે ॥

નિષ્કામ હોય ઈશ્વર કો ભજતા આનંદતામેં હો રહે ॥

ત્વં પદ વાચક જીવ ઈશ તત્ પદ કા અજ એજ અસી  
પદ લક્ષણે સુખ રાસી ॥૩૧॥ હોય ચિદાભાસ કો જ્ઞાન વહી  
અજ્ઞાની ॥ અજ એજ સભી પ્રક્રિયા કો જાની ॥ નહિં પ્રક્રિયા  
કા અંત વાત જિસકી કરતે જ્ઞાની ॥ વિધિ, ઈચ્છા, હઠ, વિશ્વાસ,  
ધ્યાન ઉપયોગી ॥ અજ એજ આદિ મેં વિધન ચાર રહતે ।  
સાધન હૈં તિસકે આઠ યોગી જિસે નિરવિઠલપ કહતે ॥

શેર—અભ્યાસ કી કર તારતમ્યતા ભેદ તિસકે બહુત હૈં ।  
ભય રહતા અંતઃકરન મેં અજ બંધ મુક્તિ કહત હૈં ॥  
બંધન વિપોં કી વાસના ત્યાગ કો મુક્તિ કરે ।  
તજ રાગ કી મુક્તિ યહી ફિર મુક્ત આપે હો રહૈં ॥

જ્ઞાન કે સાધન અજ ભક્તિ બહુ રંગા અજ એજ ભક્તિ  
વહી કાઠે સખ કાંસી ॥૪૧॥

શેર—નોંધા પ્રેમા પરા ભક્તિ કરતે હૈં ક્રિયા ભેદ સે ।  
દૃષ્ટા હૈ પંચો કાયો કોષ તેં ન્યારા કહેં ॥૧॥  
જૈસે મિલા આકાશ સખમેં ગુન દોષ નહિં ધારન કરે ।  
તૈસે નિજતમ દેહ કે ધર્મોં સે નહિં જન્મે મરે ॥૨॥  
ભરમ કે વશ કરમકર ભૂલ્યા હૈ અપને રૂપકો ।  
નિદ્રામેં કંગાલ હોઈ સ્વપના બે આવે ભૂપકો ॥૩॥  
આતમ તો પ્રભરવરૂપ હૈ પરકી ઉપાધી કો ધરે ।  
ઈસ હેતુસે યહ કૃપતા તજકર ઉપાધીકો તરે ॥૪॥  
ગુપ્ત આતમામેં ભરમ કરકે અંતૂર વો બાહર ભાસતા ।  
એક રસ રહતા સદા આપહી આપ ઉજસતા ॥૫॥



## ૨૯. લાવની ચાલ દૂન.

આ મુને જિ કોમુ ને જ્વાલની લીલા મહારાજ પે મૂલ કિસને  
ખાઈ હૈ । અજમ તમ્હ શ્રી મૂલ સખી વહ કહાં મે આઈ  
પોચા અહીં મિત્ર પ્રાપ્ત નિષ્ક હો દે ચરણ પૂજાવે, મહારાજ  
અહીં સુર અમુર સર્વ હૈ । બન દે માલની મૂલ મુલા દિન  
કી સર્વ હૈ ॥ અહીં બને દેવ અહીં બને પુરંદર રાજા, મહારાજ  
સર્વ સર્વ સર્વ સર્વ હૈ । કરે અપમન નૃત્ય તાલ સુરમે  
અહીં ચાઈ હૈ ॥

મેઁ-અહીં પદામન બધે મુનિજન ધ્યાન તેરા કરિ રહે ।  
અસનદ મેં હોડે મગન કોઈ મુક્તિ છવન બન રહે ।  
સર્વ અસરિક કરે કોઈ દાનમેં મન દે રહે ।  
કેઈ સેજન પ્રેમ મેં દે કેઈ મિત્રા લે રહે ॥  
કેઈ પદિત બનકે વેદપાઠ પઢતે હૈ ॥  
મહારાજ હરિજન હર ગુન ગાઈ હૈ ॥૧॥૧૬॥

અહીં પે મન સખી અહીં સંચિત હૈ, મહારાજ ચાર હા પર  
કિષ્ક હૈ । અહીં જાગ અહીં કુચ શત્રુ અહીં કરે બલાઈ હૈ । થહ  
અસન તેં જ્વાલ શ્રી અલ નિરાલી, મહારાજ દેખે દેખી નહીં  
ખાઈ હૈ । સર્વે જાન હર જાન એક નહીં મિલે મિલક હૈ ॥

મેઁ-અહીં એકી જાન હૈ દુઃખાન આતમ હો રહે ॥  
દૂન નિરાલીઓ અમદ મેં ચિત છનકે મો રહે ॥  
કેમ બદ મૂલ અહીં પે મુલમે પદા લે રહે હૈ ॥  
તરિક નિરા જાન શ્રી આપની જાગાં મેં કહિ રહે ॥

અહીં અહીં કેમ દે મૂલ મુલી પે મન અલે બાવે, મહારાજ  
નહીં પે હો હવલ હૈ ॥૧૭॥૧૮॥ પે ચિત રમે હૈ એક મેં એક  
અલે ॥ મહારાજ પે માયા મેં કિષ્ક હૈ ॥૧૯॥ પદાવર મેં હો

નાશ નહીં કશું પૈરે દિખાઈ હૈ ॥ તૂ કોતુક કરકે દેખે ખલક તમાશા  
મહારાજ ચતુર ભૂલે ચતુરાઈ હૈ ॥ સ્વરૂપ કો વિસારિ રૂપ મે  
રહે હુલાઈ હૈ ॥

શેર—માયા બે એસી આપકી નિકસે નહીં યોગી યતી ॥  
ત્યાગ બંધનકી ક્રિયા કો ઉસમેં ફિર કરતે રતી ॥  
ત્યાગ સંગ્રહ કે વિષય મેં બેખબર જિનકી મતી ॥  
નીર ખિન સંસાર મેં ફૂળે હૈં અચરજ સી ગતી ॥

મી૦ ॥ ઈન ખુલે નયન સે ખવકત પૈરે દિખાઈ ॥ મહારાજ  
નૈન ખિન સખ મિટિજાઈ હૈ ॥ ૩૧ ॥ ઈશ્વર માયા બધ અવિદ્યા  
દાનોં, મહારાજ જહાં લોં શ્રવણ સુનાઈ હૈ ॥ ઇન્દ્રિય મનકા વિષય  
તત્વજન કહ સમુગ્રાઈ હૈ ॥ નહીં અંદર બાહર નહીં દૂર નહીં  
નેરે ॥ મહારાજ વેદ નેતિ કહિ ગાઈ હૈ, સ્વયં સચ્ચિદાનંદ સદાઈ હૈ ॥

શેર—શુદ્ધ હૈ ચતન્ય હૈ વહ નિત્ય પ્રહ્લાનંદ હૈ ॥

નિર્મલ નિજતમ હૈ સદા ન કોઈ માયા ગંધ હૈ ॥

પ્રકાશ ન પહુચે કોઈ જહાં સર્વ જ્યોતિ મંદ હૈ ॥

ગુપ્ત હૈ સો પ્રગટ દીખે ગુપ્ત ગુપ્તાનંદ હૈ ॥

મિ૦ ॥ યે વિષય વાસના મય દુખરૂપ સદાઈ ॥ મહારાજ યે મહરમ  
ગુરુ સે પાઈ હૈ ॥ ધ્રુવ નિશ્ચય હો ગયા આપ અપને ધ માહીં  
હૈ ॥ ૩૨ ॥

## ૩૦. લાવની ચાલ દૂન

તુહીં વ્યાપક પ્રહ્લ અખંડ નહીં જહં લીલા, મહારાજ અપન  
મેં આપ હુલાયા હૈ ॥ સ્વપ્ને કા પરપંચ જાગીકર કહું ન પાયા હૈ  
॥ ૩૩ ॥ સખ તેરેહી ફુરને કા હૈ વિસ્તારા, મહારાજ નહીં કશું તુઝ  
સે ન્યારા હૈ ॥ કર દેખો તત્વ વિચાર સભી મિથ્યા સંસારા હૈ ॥  
કહિં નહિં અશિક માશૂક સભી યહ ઝઠા મહારાજ નહીં કોઈ મરે  
ન મારા હૈ ॥ સુન ગીતા કો જ્ઞાન કૃષ્ણ કો યહ નિરધારા હૈ ॥



શેર—અબ શેર યામેં લિખત હૈં, સમઝે સોઈ નર શેર હૈ ॥  
 સમઝે સો પાવે આપકો, બિના સમઝે ફેર હૈ ॥  
 સખ ફેન તરંગ તુષાર જલ મેં પડત ધૂમર ઘેર હૈ  
 યક તોય સે કુછ બિન્ન નાહીં, દષ્ટિ માંહી ફેર હૈ ॥

કર દેખો દિલ મેં જ્યાલ હુયા નહીં હોગા । મહારાજ નહીં  
 કોઈ જપ જપાયા હૈ ॥૧૧૮૬॥

જૈસે સુખરણ મેં ભૂપણ બને અનેકા । મહારાજ એક નહીં મિલે  
 મિલાયા હૈ ॥ કંઠે, કુંડલ, અરૂ નાથ, કંદોરા, જુખ બનાયા હૈ ॥  
 જખ દેખે નાના રૂપ ભૂલિ ગયા સોના મહારાજ મોલ તિસકા  
 કરવાયા હૈ ॥ જખ કાંટે ધરા સરાફ તલી એક સુવરન પાયા હૈ ॥

શેર—તૈસેં જગત હૈ આતમા મેં, કનક મેં ભૂષન યથા ।  
 નીર માહી લહર જૈસે, સીપીમેં રુપા તથા ॥  
 આકાર દષ્ટિ છોડિકે, ટુક સમઝ લે ઉસ યાર કો ।  
 યાર હૈ દિલદાર દિલ મેં, દેખિ અજખ બહાર કો ॥

તૂ નહીં રજ નહિં સ્વેત ન કાલા પીલા । મહારાજ નહીં ખોયા  
 નહીં આયા હૈ ॥૧૧૮૭॥ જૈસે નલ માહીં દીખત નીલા કાલા ।  
 મહારાજ જનોં તંબૂ તનવાયા હૈ ॥ ધૂલિ ધૂમ અરૂ મેઘ ગગન  
 નહીં લિપે લિપાયા હૈ ॥ એસા હૈ આતમ અદ્ભૂત રૂપ તુમહારા ।  
 મહારાજ ત્રિપે નહિં દેહ ચિકારા હૈ જો દેખન મેં આવે સલી  
 યહ જૂઠ પસારા હૈ ॥

શેર—રહેતા સદા તુહીં એક રસ, દૂજે કા તુઝમેં લેશનાં ।  
 આરંભ અરૂ પરણામ નાહીં, દેશ અરૂ પરદેશ ના ॥  
 સાદી અનાદિ કો નહીં, સખ કદપના કા અંત હૈ ।  
 તુહીં સદા બિખરત રૂપ હૈ, કોઈ સમઝે વિરલા સંત હૈ ॥

કરતા કિરિયા ઓર કર્મ સભી હૈ જૂઠા । મહારાજ જનોં સ્વપને  
કી માયા હૈ ॥૧૧૮૬॥ ચોં હોય જગત કા અંત, સંત યહ કહતે ।  
મહારાજ વેદ ને એસે હી ગાઈ હૈ ॥ નેતિ નેતિ કહિ શબ્દ તુઝે  
યહ સૈન લખાઈ હૈ ॥ ચે ચારયું બૈઠહાર ચલ્યા નહિં ચારા ॥  
મહારાજ સભી જૂઠી ચતુરાઈ હૈ । પઠિ પઠિ વેદ પુરાણ કરી જગ  
માહિં ઠગાઈ હૈ ॥

શેર—કોઈ ગુપ્ત સે પરઘટ કહે, પરઘટ જો ગુપ્તાનન્દ હૈ ।

કોઈ ધુરો ચલતા કહે, સો ચલતા પરમાનન્દ હૈ ॥

વસ્તુ મેં કછુ ભેદ નહીં, કહન માહીં ફેર હૈ ।

જૈસે વન કે પશુ કો, કોઈ બાધ કહે શેર હૈ ॥

કોઈ કહે બ્રહ્મ કોઈ કહે ઉસી કે માયા ॥ મહારાજ ભેદ તસમેં  
નહીં લાયા હૈ ॥૧૧૯॥

## ૩૧. ખ્યાલ રંગતી દૂન

મત પડે ભરમ કે જાલ ખ્યાલ સુન મેરા । મહારાજ વાત  
વેદોંને ગાઈ હૈ ॥ તુહી સન્નિધાનન્દ સભી તેરી રોશનાઈ હૈ ॥૧૨૦॥  
જબ હુવા ભર્મ તો લગા બેલ કે માહી, મહારાજ સુધી અપની  
વિસરાઈ હૈ । તરહ તરહ કે રંગ રંગ મેં સુરતિ લગાઈ હૈ ॥ ઉસ  
સૂરત મેં મૂરત કા હો પ્રતિ બિંબા ॥ મહારાજ વહી આભાસ  
કહાઈ હૈ । સોન કરે કરતા વનિકે માને મન માહીં હૈ ॥

શેર—ભર્મ કે વશ કર્મ કાર ફિરતા હૈ માયા ઠાઠ મેં ।

વો અવિદ્યા હોકે તેરે મારે, સીરકી ટાટ મેં ॥

તૂં ખુશી કરિ માનતા, લાગતા વિષય કી ચાટ મેં ।

અજબ નુમા ચીજ કો, દેખન લગા હૈ હાટ મેં ॥

મીઠ ॥ ઈન સખી ચીજ કા બીજ નજર નહિં આવે, મહારાજ  
વિજય બિનુ ફિરે ભુલાઈ હૈ ॥૧૨૧॥ ચક્ર સુન્નલીંત પર ચિત્ર રંગ



जहु लार्, महाराज बिना हर लिप्ता बितेरेने । पोषे न  
मिो भारता नाही तेरेने । यो जम वश होकर इंसा सत्य माने  
है ॥ महाराज करे है कर्म को उतनार्थ । एहन को ए आले,  
अपर बाहीमे उल्लार्थ ॥

शेर-निरपथ में अपथन समझ, करता जे डाले कर्म को ।

धर्म धर्मी से जुदा सो मानता है धर्म को ॥

देश धारा तीत आतम, देयता क्या यर्म को ।

पर को अपना जनता सप्य छोडि दिनी शर्म को ॥

मी० ॥ यो शर्म छोडि के फिरता भारा भारा, महाराज हुवा  
अज्ञान के मांही है ॥२॥ अधिष्ठान के ज्ञान बिना बिना जग  
लासे । महाराज सर्प रज्जु में परकासे ॥ रज्जु ज्ञान से सर्प  
तली वह बाही में नासे । जे अज्ञानते उपजत है जे जमे,  
महाराज ज्ञान होता ही भिरिजार्थ ॥ इंड ज्ञानते तस्कर का लय  
होवत है नाही ॥

शेर-पाप पुन्यों से अलछिदा, कृष्ण गीता में कडा ।

अज्ञान वश हो जव, ये भुद आप संकट सह रहा ॥

वाशिष्ठ में श्रीराम से परसंग ऐसा चल रहा ।

अज्ञान अपने आपके से, वृथा ही नर जल रहा ॥

मी० ॥ यह विध सली करने काहै विस्तारा । महाराज देय  
अनुभव के माही है ॥३॥ जे सत चित आनन्द व्यापक ब्रह्म  
कहावे महाराज वेद नित अलेद कहि गार्थ ॥ नेति नेति कहि  
यदि श्रुति नही उल्लार्थ थाह पाध ॥ फिर डौन धलछिदा शामिल  
दिस को कहिये ॥ महाराज लेद ही गंध नही राध ॥ ज्यों  
वंधा का पुत्र किसी ने देया है नही ॥

शेर-येतन निरमल शुद्ध है, सो कली छिपता नही ।

सर्व का परकाश है, वह सर्व में लिपता नही ॥

આનન્દ ગુતાનંદકા, વહ પ્રકટ મેં જતા નહીં ।

એક રસ વહ ખસ રહા, પકડે એ કહીં આતા નહીં ॥

મી૦ ॥ હૈ રવયં સચ્ચિદાનંદ નહીં કહુ કરતા, મહારાજ સમજે  
ધ્રુવ વાત જનાઈ હૈ ॥

## ૩૨. કવ્યાલી

નજરોં સે કિસ કો દેખે, તૂઝ સે નહીં ન્યારા ।  
જો દેખને મેં આવે, સખ જૂઠું હૈ પસારા ॥૧૬૥  
કરતા હૈ જૂઠા વંધા, ફિરતા હૈ વંધ્યા વંધ્યા ।  
પહિ ગયા કરમ કા કંધા, દેખા ચહત હૈ ન્યારા ॥૧૭૥  
જખ આપને કો ભૂલ્યા, મુખ મેં પડા હૈ ધૂલા ।  
સહને ફિરે વહુ શૂલા, સમજે નહીં ઇશારા ॥૧૮૥  
કાયા કા કોટ કાયા, જૂટે હૈ મન અરૂ વાચા ।  
તુંહીં આપ ઈન મેં સાંચા, કહુ કીજિયે વિચારા ॥૧૯૥  
તન કો બનાકે સુથરા, વાંચત હૈ પાથી પતરા ।  
કરતા ફિરે બહુ યત્રા, ઠગી ખાયા જગ સારા ॥૨૦૥  
કરતા હૈ કાવ્ય કથની, કરતા ખખર નહિં અપની ।  
ભૂલ્યા હૈ દેખિ પતની, મંદિર કો ખૂબ સંભાર્યા ॥૨૧૥  
બોલો ગુપ્ત કસ તન મેં, ફિરતા હૈ કયા વન વન મેં ॥  
ધ્રુ નિશ્ચય કીજે મન મેં એસા હૈ રૂપ તુમહારા ॥૨૨૥

## ૩૩. કવ્યાલી

ગફલત મેં દૈસે સોવે, શિર કાલ કા નગારા ।  
વિપયોં કે મુખ મેં ભૂલ્યા, કરતા નહીં વિચારા ॥૨૩૥  
જિસ દિન દુની મેં આયા, સંગ મેં કહુ નહીં લાયા ।  
યહાં દેખ્યા માલ પરાયા, કરતા હૈ મહારા મહારા ॥૨૪૥  
વિપયોં કો વિપવત જાની. ઇશ્વર કો સત પિછાનો ।  
યહ સીખ હમારી માનો, મૃગ નીરકા યહ ગારા ॥૨૫૥



સંસાર હૈ યહ સ્વપના, ઇસમેં નહીં કોઈ અપના ।  
 જૂઠી સખી યહ રચના, મુત માત તાત દારા ॥૩૥  
 વચતા ન રાજ રાના, સખ કાલ કા હૈ ખાના ।  
 એસા કયા લયા દિવાના, સમઝે નહીં ગંવારા ॥૪૥  
 અખ કીજે કામ એસા, કહતા હૈ વેદ તેસા ।  
 તાજ દીજે એસા વૈસા, કયોં કરતા હૈ મુંહ કારા ॥૫૥  
 પાવે ગુપ્ત હોવે મુક્તા, લિપતા નહીં કહિં છિપતા ।  
 ધુ પ્યાન મેં નહિં રૂકતા, વ્યાપક હૈ રૂપ અપારા ॥૬૥

### ૩૪. કંવાલી

રંગ દેખિ કર દુનિયાં કે, અપને કો આપ ભૂલા ।  
 જૂઠી સહી યહ માયા, ફિરતા કયા ફૂલા ફૂલા ॥૭૬૥  
 યહાં પર નહીં જખ આયા, તખ કિસકી થી યહ માયા ॥  
 અખ કાહે મેં મન લાયા, કયોં ખોવતા હૈ શુલા ॥૮૥  
 મન વિષયોં મેં નહીં દીજે, ઇશ્વર કા નામ લીજે ।  
 અખ કાજ યહીં કર લીજે, છીજે અવિદ્યા મૂલા ॥૯૥  
 ઇસમેં ન ગલતી કરની, કર રામ નામ કી તરનો ।  
 ભવ જલ સે પાર કરની, સુખ ધામ કા હૈ જૂલા ॥૧૦૥  
 જખ ગુપ્ત ગોવિન્દ જાને, સખ હી કરમ કો ભાને ।  
 જો લાવે ચોટ નિશાને, પાવે મુક્તિ દ્વાર ખુલા ॥૧૧૥

### ૩૫. કંવાલી

કયા સોવે રૈનિ અંધેરી, યહ જગત જાલ સ્વપના ॥  
 દેખો ન ખોલિ અંખિયાં, ઇસમેં નહીં કોઈ અપના ॥૧૨૬૥  
 ધન માલ ઘોડા હાથી, સંગ મેં બહુત હૈ સાથી ।  
 માતા પિતા મુત નાતી, જૂઠી સહી હૈ રચના ॥૧૩૥  
 જેતા કષ્ટ માલ ખજાના, સંગ મેં ચલે નહીં આના ।  
 ફિર હોયગા પછતાના, જખ સ્વાંસ કા હોય ખિયાના ॥૧૪૥  
 રાજ ધની અરૂ કંગલા, કરે ચાલે ખાલી ખંગલા ।  
 આખિર મિલા હૈ જંગલા, ઇસ કાલ સે નહીં બચના ॥૧૫૥

પહિરો સત સંગતી ચોલા, ગુપ્ત જ્ઞાન કા લે ગોલા ।  
પાયા વક્ત અનમોલા, ધ્રુવ ધ્યાન મે નિજ જ્યના ॥૪૧॥

### ૩૬. કંવાલી

લાખોં કરોડા દેખે, હુમ નંગે પૈરોં જાતે ।  
ધન જોડિ જોડિ રખતે, કોડી નહીં વે ખાતે ॥૪૨॥  
અખડી તો સખડી જાની, હુમ કહતે ખાત પુરાની ।  
નૌ શેર બાદશાહ જાની, અસી ગંજ ખજાને લાતે ॥૪૩॥  
પૈસા ન ખૈરાત દિયા, તમ કોપ ખુદા ને કિયા ।  
અગ્ની કો સંભાલા લિયા જલ બલ ભસમ હો જાતે ॥૪૪॥  
ઇસ દેશ માલવે માહીં, યક ભિક્ષુ બેરહમન આહી ।  
કોડી ન ધર્મ મેં લાઈ, સખ લુટિ ગયે માલ અંધાતે ॥૪૫॥  
તન ધન કા ગર્ભ ન કરના, સખ હી કે સિર પર મરના ।  
અખ ગુપ્ત ધ્યાન કો ધરના, જાતે સભી અરૂ આતે ॥૪૬॥

### ૩૭. કંવાલી

સુનિલ મુસાફિર પ્યારે, દો દિન કા હૈં યહ ડેરા ।  
કરની કરો કોઈ એસી પાવે સ્વરૂપ તેરા ॥૪૭॥  
ચોની છુટે ચૌરાસી, યમ કી કંટે ફાંસી ।  
પાવે તુઝે અવિનાશી, હોવે નહીં ફિર ફેરા ॥૪૮॥  
નિષ્કામ કર્મ કો કિજે, ભક્તિ કે રસ પીજે ।  
ફિર જ્ઞાન તિલક કો લિજે, કહના કરો અખ મેરા ॥૪૯॥  
પાકર કે અપના રૂપા, હોજ ભૂપન કા ભૂપ ।  
સો સખસે અજબ અનૂપા, કછુ દુરિ નાહિ નેરા ॥૫૦॥  
યહ જ્ઞાન લખો ગુપ્તાઈ, સુન લિજે આખૂ માઈ ॥  
હુમ કહતે હૈં સમઝાઈ છુટિ જાય પાપ કા ઘેરા ॥૫૧॥

### ૩૮, કંવાલી

કાયા નગર મેં ખસિ કે, કયા હો રહા દિવાના ।  
લાખોં કરો ચતુરાઈ, આખિર કો તુઝકો જાના ॥૫૨॥



ભૂદયા હૈ ધામ ધન મેં, ફિરતા અવિદ્યા વન મેં ।  
 કુછ સોચતા નહિં મન મેં, ખાતા વિષય રસ ખાના ॥૧॥  
 કયા સોતા રૈનિ અંધેરી. લગતી નહીં કછુ દેરી ।  
 કરતા હૈ મેરી મેરી, છિન હોય માલ વિરાના ॥૨॥  
 ઇસ માનુષ તન કો પાયા, નહીં ધ્યાન ધની સે લાયા ।  
 ફિર અંત મેં પછતાયા, મિયા કર ચલે પયાના ॥૩॥  
 કહતા હૈ ગુપ્ત પુકારી, સમજો ન મૂઠ અનારી ।  
 કરિ રામ ભજન કી ત્યારી, જંઠા હૈ સભી જમાના ॥૪॥

### ૩૯. શબ્દ પદ, ભજન, હિતકારી

કહતા હું તોહૈ સનઝાય કે અબ્ધ સુન જ્યાતી કી રીતિ ॥૧॥  
 અંતઃકરણ સે નિકસી વૃત્તી, ઈન્દ્રિય દ્વાર વિષય મેં ચરતી ।  
 ભંગ આવરન જિસકા કરતી, ફલ દેતા તિસે જનાય કે ।  
 યહ અઝત વાદ કી નીતિ ॥૨॥  
 જિસ સ્થલ મેં ભર્મ જો હોવે । વૃત્તિ જાય વિષય કો જોવે ।  
 નહીં આવરણ ભંગ જો હોવે । દયિ તિમિર જાય કે ॥  
 ફિર હોય પન્નગ કી ભીતી ॥૩॥  
 સોધ નિમિત્ત હૈ તિસકે જ્ઞાનમેં । દોનોં કદિપત અધિષ્ઠાન મેં  
 અનિર્વચની યહ સુનો કાન મેં । ચિત્ત અપને કો લાયકે ।  
 મન મેં હોવે મજબૂતી ॥૪॥  
 અધિષ્ઠાન દોનોં કા ચેતન । રજજી વૃત્તી જડ આચેતન ॥  
 પર રજજી જ્ઞાન સે હોવે વિલેપન । ઉપજે અજ્ઞાન સે આયકે ।  
 ચીઠી આચરજ ચીતી ॥૫॥  
 માયા કે પરિમામ હૈં જોધ । ચેતન કે વિવર્ત હૈં સોધ ॥  
 સમ સ્વભાવ વિપરીત જો હોધ । રૂપ અન્યથા જાહિં કે ॥  
 યહ લિખા ભજન અવધતી ॥૬॥

### ૪૦. ભજન

જિનોં કે ઉડ ભરમ કે કોટ, યહ રમજ સમજ મેં આધ ॥૧॥  
 જૈસે સર્પ જ્ઞાન હૈ મિથ્યા, તૈસે જગો જગ કી સત્તા ॥

આતમ મેં નહિં હિલતા પત્તા, નહિં શુદ્ધ મેં ખોટ ॥  
 યહુ બાત વેદને ગાઈ ॥૧॥  
 સો વિચરત હૈ હોય નિશંકા, કાલ બલી કા કરગયે ફંકા ॥  
 ફિર કયા તીનકો રાજ રંકા, નહિં ખાતે યમકી ચોટ ॥  
 સખ શંકા ધોય વહાઇ, ॥૨॥  
 જાપ તાપ અરૂ કંઠી માલા, દુઠા સખી ભસ્મ કા તાલા ॥  
 કર મેં લિયા જ્ઞાન કા ભાલા, મુખ હાલત નહીં હોંઠ ॥  
 ફિર કયોં કરતે કઠિનાઈ ॥૩॥  
 ફિકિર નહીં જાને આનેકા, શોચ નહીં પીને ખાનેકા ॥  
 માલ નહીં રખતે આનેકા, ગિંની રખે ન નોટ ॥  
 ખાતે હૈં દૂધ મસાઇ ॥૪॥  
 ગુપ્ત જ્ઞાન હિરદૈ મેં રખતે, જોમન માને સોઇ બકતે ॥  
 કંગલા ધની બરાબર લખતે, નહીં બડાઈ છોટ ॥  
 જિન વસ્તુ અમોલક પાઇ ॥૫॥

## ૪૧. ભજન

ભૂદ્યા નિજ અપને આપકો, હોગયા માયા કા ચેહરા ॥૧॥  
 માયા કારણુ અહુ નિશિ ડાલે, જૂઠું તુફાન બહુત સે બોલે ॥  
 હિરદે કી અંથી નહીં બોલે, કરને લાગ્યા પાપકો ॥  
 ઘટ અંદર હુવા અંધેરા ॥૨॥  
 ગૃહસ્થી છોડી મૂંડ મુંડવાયા, તૌ ભી તુઝકો તત્ત્વ ન પાયા ॥  
 દંભ પખંડ બહુત સા લાયા, તજિ દિયા હરી કે જાપકો ॥  
 ચેલા ચેલી ને ઘેરા ॥૩॥  
 ઔષધ ગાલી કરને લાગે, ગાંઠિ લગાય બાંધતે તાગે ॥  
 મૂરખ લોગ પૂજને લાગે, બડા સિદ્ધ મિલા હૈ તાસુ કો ॥  
 ચોફિર દે રહે ફેરા ॥૪॥  
 કોઠી બંગલા ખૂબ બનાવે, ખાના વસ્તર અચ્છા લાવે ॥  
 કહૈ ઓરતે ઓર કમાવે, ખાયે હૈં તીનોં તાપકોં ॥  
 કરતે હૈં મેરા મેરા ॥૫॥  
 પાને નિકસે ગુપ્ત રૂપ કો, ઉલટે જાય પડે ભયકે કૂપકો ॥



કો સમજાવે બેવફૂદ કો, જાને લગે રિસાત કો ॥  
કહના માનત નહિં મેરા ॥૫૫॥

## ૪૨. ભજન

સમજત નાહિં ગુરુ સૈનકો, લગિ ગયા હગનીકે ચારે ॥૧૬૫॥  
દોય રૂપ ધરી જગ કો હગતી, કનક કામની હોકર લગતી ॥  
સ્પર્શ દિયે શેર જ્યોં જગતી, સખ દૂરિ કરે સૂખ ચૈનકો ॥  
તોહિં પઘડિ પઘડિ કર મારે ॥૧૬૬॥  
બરે તપસ્વી મારે બન મેં, કામ રૂપ દોય તિન કે મન મેં ॥  
ચતુર બચે નહિં લાખોં જન મેં, ભરમાવત બાંકે નૈન કો ॥  
ફિર ગભી વાસ મેં જરે ॥૧૬૭॥  
કનક ભલ્યોં કા કરતા નાસા, ગલ મેં ગરિ લોભ કા ફાંસા ॥  
ત્યાગી કો ઉપજાવે આસા, લગિ ગયે કોડી લેન કો ॥  
કયા ભવ સાગર તે તારે ॥૧૬૮॥  
આમ આમ સખહી તજિ દીને, વન મેં જાય વસેરે કીને ॥  
લોભ બલી ને બાધિ મેં દીને, ભૂલિ ગયે જ્ઞાન અધ્યયન કો ॥  
ફિરતા હૈ ધની કે લારે ॥૧૬૯॥  
બોજત નાહી ગુપ્ત જ્ઞાન કો, ધન હિત બોજત સખ જહાન કો ॥  
દેખો તમાશા બેઈમાન કો, દિન કહને લાગ્યા રૈનિ કો ॥  
બનિ રહે મહંત બરે ભારે ॥૧૭૦॥

## ૪૩. ભજન

અખ દેખો ધ્યાન લગાય કે, ઘટ ભીતર જગ તમાશા ॥૧૭૧॥  
નેત્ર રૂપ દેખને જાવે, શ્રવણ શબ્દ મુનન કો ધાવે ॥  
ગંધ નાસિકા નિત ઉઠી આહે, ત્વક ખુશ હોય સ્પર્શ ખાયકે ॥  
રસના કર રસ કી આસા ॥૧૭૨॥  
મન સંકલ્પ બોરે હો જતા, ચિત ચિતવન મેં તત્પર પાતા ॥  
અહંકાર આહે મેં રાત્યા, બુદ્ધિ નિશ્ચય મેં જાય કે ॥  
જલ અશન પ્રાણ ચહેં ખાસા ॥૧૭૩॥  
વાયક કહે બેખરી બાની, વસ્તુ અહણુ કરત હૈં પાણી ॥

રતી ભોગ અરુ મલ ત્યાગાની, ગુદા શિસન હરશાય કે ॥૩૧॥  
ચલતે હૈં ચરણ ખુલાસા ॥૩૨॥  
કામ કોથ અરુ અશા તૃણા, સખહી રચિ રહે અપની રચના ॥  
સુષોપતિ અરુ જાગ્રત સ્વપના, ગુણ વરતે તીનોં આયકે ॥  
પડિ ગયા માયા કા ફાંસા ॥૩૩॥  
ગુપ્ત જંગ હોતા દિન રાતી, દેવ અસૂર તિનકી દ્વય જાતી ॥  
રાજા મંત્રી લે લે સાથી, ફોજ લઈ સજવાય કે ॥  
દાનોં કા રૂપિ ગયા રાસા ॥૩૪॥

## ૪૪. ભજન

જંગ મચ્યા કાયા કોટ મેં, લડતે હૈં શૂર લડાઈ ॥૩૫॥  
જિયા રામ હૈં જિસકા રાજા, મનીરામ કો અપ્સર સાજા ॥  
દિયા હુકમ અખ કીજે કાજા, મત રહે મન કી મોટ મેં ॥  
અખ જલદી કરો ચઢાઈ ॥૩૬॥  
ખુલે કોટ કે નૌ દરવાજે, જિંનકે માહીં દેવ વિરાજે ॥  
અપને સાજ સહી ઉન સાજે, લડને લગે ગોલક ઓટ મેં ॥  
સજ થાલે પંચ સિપાહી ॥૩૭॥  
અસુર સેન કા બજા નગારા, દેવન કા ગઢ ઘેરા સારા ॥  
હોતી આવે મારો મારા, દે લિયે વિષયોં કી લોટ મેં ॥  
ચાલે હૈં દેવ પરાઈ ॥૩૮॥  
મનીરામ અપ્સર જખ બોલા, મુનોં શીલ તુમ કૈસે ડાલા ॥  
ઉલટી કરો સસતર કા ઝોલા, અખ શત્રૂ આગયા ફેટ મેં ॥  
ગુરુ વિષ્ણુ કરે સહાઈ ॥૩૯॥  
ઉલટી શીલ ને શસતર મારા, પકડી કામ ધરની પર ડારા ॥  
દેવ લિયે નિજ નિજ હથિયારા, ચૂકત નાહીં ચોટ મેં ॥  
જખ દેવન કો જય પાઈ ॥૪૦॥  
સુર અસુરોં કી હુઈ લડાઈ મનીરામ અપ્સર હૈં ભાઈ ॥  
જિયારામ કી હુઈ સહાઈ, ઇસ ગુપ્ત જંગ કે ફેટ મેં ॥  
ધ્રુવ દેખો ધ્યાન લગાઈ ॥૪૧॥



દોહા-કાયા ગઢ કે નગર મેં, રાજ આતમ રામ ॥  
 મન દિવાન જસકા રહે, કરે શુભાશુભ કામ ॥  
 જસ રાજ કા મંત્રી, નીતિ નિપુણ જો હોય ।  
 દુષ્ટ ચોર તિસ રાજ મેં, રહન ન પાવે કોય ॥  
 કામાદિક જો અસુર હૈં, શીલાદિક હૈં દેવ ।  
 દંડ દેત તિનકો સદા, તખ કરૈ રાવ કી સેવ ॥  
 અસુર સભા કે ખીચ મેં, તીન બડે સરદાર ।  
 કામ ક્રોધ અરુ લોભ જો, તીનોં નર્ક દુવાર ॥

### ૪૫. ભજન

મત ક્ષેં કર્મ કે કીચ મેં, તૂં ચેતન સદા અકરતા ॥૧૬॥  
 કરમ વિકરમ કા લેશ નહીં હૈ, અકરમ કા કોઈ દેશ નહીં હૈ ।  
 મજબ પંથ કોઈ લેષ નહીં હૈ, યોં કહા વેદ કે ખીચ મેં ॥  
 તૂં જન્મેં નાહીં મરતા ॥૧૭॥  
 જિસકે પડા કર્મ કા ફંદા, સો નર હુવા જગત મેં અંધા ।  
 છિપ ગયા આતમ પૂર્ણ ચન્દા, પડિ ગયા અંધેરી ખીચ મેં ॥  
 દુખ ચૌરાસી કે ભરતા ॥૧૮॥  
 વિધી નિષેધ લગે દો ફાંસા, સમજત નહીં વેદ કા આસા ॥  
 કેસે છૂટે યમ કી ત્રાસા, ફંસિ ગયા ખીચમ ખીચ મેં ॥  
 ફિર જન્મ જન્મ કે મરતા ॥૧૯॥  
 પઠિ પઠિ વેદ હુયે અભિમાની, ગુપ્ત મતે કી બાત ન જાની ।  
 કરતા બુદ્ધિ તજતા જ્ઞાની, નહિં વહતા ઉદક મરીચ મેં ॥  
 સો ભવ સાગર સે તરતા ॥૨૦॥

### ૪૬. ભજન

જિન જાન્યા અપને આપકો, સો નિર્ભય હોકે સોવે ॥૨૧॥  
 હિરદે કી અંધી જન તોડી, સંસોં કી સખ મટકી ફોડી ॥

વિધિ નિષેધ કી ઉઠિ ગઈ જોડી, ફિર જપૈ કૌન કે જાપકો ॥  
કરમન મેં કૈસે રોવે ॥૧॥

મૂલ અવિદ્યા ગઈ મૂલ સે, આતમ મેં ભાસી થી ભૂલ તેં ॥  
કર્મ લોગ સખ હોત તૂલ સેં, ફિર તપૈ કૌન કે તાપ કો ॥  
જો હોના હોય સોધ હોવે ॥૨॥

સંસૈ વિષયર્થ મિટિ ગયા સાંસા, આતમ બ્રહ્મ રૂપ કર ભાસા ॥  
હર વક્ત દેખતે વહીં તમાશા, ચેતન શુદ્ધ પ્રકાશ કો ॥  
ફિર મૈલ કૌન કા ધોવે ॥૩॥

ગુપ્ત હોય જખ ગુપ્તહિ પાવે, મિલતેહિ ધ્રુવ અચલ હો જાવે ॥  
જો કોઈ ઇસ સાગર નહાવે, સો જોવે તીનોં તાપ કો ॥  
જખ એક બ્રહ્મ જોવે ॥૪॥

## ૪૭. શબ્દચૌસર

તૂં કઈ બેર ચૌસર હારા, જરા ખેલ સમજ કર બાજી ॥ટેકા  
માયા ચૌપડ જીવ ખેલારી, લોક બ્રહ્મડ બને સખ કચારી ॥  
દેવ મનુષ્ય જહં ફિરતી સારી, જખ તિરગુણ પાસા ડારા ॥  
ફિર એસી રચના સાજી ॥૧॥

લગા ખેલ મેં આપન ભૂલા, સ્વયં સરૂપ સે ભયો પ્રતિકૂલા ॥  
નખ સિખ છાઈ અવિદ્યા મૂલા, જખ ભૂદયો રૂપ અપારા ॥  
બનિ બૈઠા પંડિત કાજી ॥૨॥

બ્રહ્મ ભૂલિ કર જીવ કહાયો, આપ માન તન મેં મન લાયો ॥  
ઈશ્વર કો જખ જીવ બનાયો, જખ જાન્યો આપકો ન્યારા ॥  
ફિર બના ઇશ કા પાજી ॥૩॥

હરી નરદ કો ફેર પિયારા, જખ આવેગા દાવ તુમહારા ॥  
પકિ ઘર આવે સોલોં સારા, નહીં ગર્ભ વાસ મહં જારા ॥  
છુટે જન્મ મરન હૈ રાજી ॥૪॥

ગુપ્ત ગુરુ અરુ ગુપ્તહિ ચેલા, ગુપ્ત ભયા હૈ જિન કા મેલા ॥  
ગુપ્ત જ્ઞાન સે જગત ઢકેલા, ભયો મૂલ ચંદ ઉજ્યારા ॥  
યહ જન્મ રચા હૈ તાજી ॥૫॥



## ४८. भजन

तू सदा स्वयं परकाश है, फिर किसका ध्यान धरे है ॥१॥  
 क्या है अहं कहां है माया, कैसे तिनको जगत उपाया ॥  
 धृतिर एव कहां से आया, तू जपै कौन का जप है ॥  
 जन्मे अरु कौन मरे है ॥२॥  
 अहं नपुंसक जड है माया, कहां जगत स्थान बनाया ॥  
 एव धृति सभ तेरी छाया, तू परकाशन का परकाश है ॥  
 कली जन्मे नहीं मरे है ॥३॥  
 गुरु वेदका पटको पकड़ा, कहां से लाया झूठा उगड़ा ॥  
 बिना पंथ की वाट है दगड़ा, जहां नहीं धरनी आकाश है ॥  
 दूधे अरु कौन तरे है ॥४॥  
 तीन शरीर कहां से आया, कैसे पंथों कोष बनाया ।  
 कहां से पंथ क्लेश लगाया, जहां नहीं बुद्धि चिदाभास है ॥  
 चित्त मन से सदा परे है ॥५॥  
 गुप्त भतेका पंथ निरासा, जहां नहीं कोई कंठी माला ।  
 अंध मोक्ष का तोड़ो ताला, तू सभ स्वासन का स्वास है ॥  
 कुछ भूल से नहीं परे है ॥६॥

## ४९. भजन

तुं आप सच्चित्तानन्द है, फिर किसकी इरे माला ॥१॥  
 सत्त पद तुम जनो सोई, तीन काल में आधि न छोड़ ॥  
 चेतन ते न्यारा नहीं सोई सो, परकाशक निसपंद है ।  
 दुक तार अशम का जला ॥२॥  
 मुज्य प्रीति का विषय है जेई, आनन्द रूप पिछानो सोई ।  
 चेतन तासे जुदा न छोड़, सो सदा सुख को सिंध है ॥  
 दुक छोड जगत का नाला ॥३॥  
 माला का मतलब सुन प्यारे, जैसे मण्डिते न्यारे न्यारे ।  
 तैसे देव मनुष्य है सारे, चेतन सदा सुखंद है ॥  
 तू सभ डालन का डाला ॥४॥

ત્રીન શરીર અરુ ત્રીન અવસ્થા, ત્રીન કાલ અરુ સભી વ્યવસ્થા ।  
 તુઝ ચેતન કી સખ મેં અસ્થા, જહાં કોઈ નહીં દુખ દ્રંદ હૈ ॥  
 ફિર ક્યોં કરતા મુહ કાલા ॥૪૧॥  
 ગુપ્ત મતે કી ખાત જનાઈ, સો તુમ સાંચી જાનો લાઈ ।  
 યામેં ઝૂંઠ નહીં હૈ રાધ, તું સખ સિંધન કા સિંધ હૈ ॥  
 કર દેખો મૂલ ઉજલા ॥૪૨॥

### ૫૦. ભજન મોટર

ઈસ તન કે અંતર ભાગ મેં, યક મોટર અજબ ચલી હૈ ॥૪૩॥  
 પાંચોં ભૂત રજોગુણ મિલકર, હુધ તયાર જબ મોટર બનકર ॥  
 મનુવા હાવર ઐઠા સંભલકર, ફિર ઐલ વજયા સાગ મેં ॥  
 ફિરને લગી કલી કલી હૈ ॥૪૪॥  
 નાભી કંઠ સડક બનવાઈ, જસ પર મોટર આનિ ચઢાઈ ॥  
 શબ્દ કા ભોંપૂ દિયા બજાઈ, લગી વીજલી જઠરા આગિ મેં ॥  
 ચિમકી જબ નલી નલી હૈ ॥૪૫॥  
 જિસમેં ચેતન આનિ વિરાજા, સો કહિયે રાજન પતિ રાજ ।  
 દિયા હુકુમ જબ મોટર સાજા, જાય બિડચા હૈ બાગ મેં ॥  
 જહો ખિલ રહી કલી કલી હૈ ॥૪૬॥  
 એસી મોટર અજબ ચલાઈ, મીલ ઘડી કી ગિન્તી લાઈ ।  
 ઇંદ્રીસ સહસ્ર છઃ સો લાઈ, ઇસ મોટર કે અંદાજ મેં ॥  
 ફિર ઉડન લગી ધુલી હૈ ॥૪૭॥  
 તૂં નહીં મોટર ઐઠન વાલા, ફિર ક્યોં કરતા હૈ મુંહ કાલા ।  
 અંધ મોક્ષ કા તોડા તાલા, ઉલજા ક્યોં કરમ વિભાગ મેં ॥  
 કયા કુવેં ભાંગ ધુલી હૈ ॥૪૮॥  
 ઇસ મોટર કા ખેલ નિરાલા, સમુદ્ર નદિ ગિને ન નાલા ॥  
 પિછે લાગ્યા વૈરી કાલા, કૂંક દેત હૈ આગ મેં ॥  
 બચના કોઈ ગુપ્ત બલી હૈ ॥૪૯॥

### ૫૧. ૫૬

ફલ ગુપ્ત પ્રગટ સત સંગ મેં, ફિર કયા કરના બાકી હૈ ॥૫૦॥



ભોગ અદૃષ્ટ દૃષ્ટિ મેં આવે, બિના રાગ સખ મેં વરતાવે ।  
 બાલક વત સવ ખેલ બનાવે, નિત ચેતન સદા અસંગ મેં ॥  
 યહ સખ ચેતન ઝાંકી હૈ ॥૧॥  
 શબ્દ સ્પર્શ રૂપ રસ ગંધા, ઇન્દ્રિય કા ઇન્દ્રિય સંબંધા ।  
 નિત ન્યાસ આતમ નિરબંધા, જ્યોં અનુભવ શબ્દ પ્રસંગ મેં ॥  
 યહ ખુદ અપના સાખી હૈ ॥૨॥  
 વિન કરતા કરતા કહલાવે, સો કરતા નહિં ચલે ચલાવે ।  
 જૈસે પતિ પુત્ર કહલાવે, સખ રંગ ઉસીકે રંગ મેં ॥  
 નહિં સ્વેત રક્ત ખાકી હૈ ॥૩॥  
 ગુપ્ત મુક્ત કી યહી નિશાની, મૂરત મેં સૂરત લાસાની ।  
 અહં બ્રહ્મ યહ બોલો બાની, જ્યોં વ્યાપક અંગી અંગ મેં ॥  
 ધ્રૂ મૂલ જગત નાખી હૈ ॥૪॥

### પૂર. ભજન

જિસકો પાયા અમોલક લાલ, વહ કિસકી આસ કરેગા ॥૧॥  
 મુખભર સોચે તત્ત તખત પર, જ્ઞાન ગલીચા લાય બખત પર ॥  
 ફિર ક્યો મમતા કરે જગત પર, ખુશ રહે તીનોં કાલ ॥  
 ક્યોં પચ પચ જગત મરેગા ॥૨॥  
 જિનકો નહીં કુછ લેના દેના, હુવા નહીં કુછ આગે હોના ॥  
 વરતમાન મેં વર્તે ક્યોં ના, તોડ ભરમ કા જાલ ॥  
 ચોં કારજ સભી સરેગા ॥૩॥  
 પસારખ સે જો કુછ વર્તે, તિસમેં હર્ષ શોક નહીં કરતે ॥  
 વે કબહૂ જન્મેં નહીં મરતે, નહીં રખતે ધન માલ ॥  
 ભવજલ સે પાર તિરેગા ॥૪॥  
 ગુપ્તરૂપ મેં હૈ મસ્તાને, ટૂટે સભી કુફર કે ખાને ॥  
 જાનન યોગ્ય સભી જિન જાને, નહીં કંસે વેદ કે જાલ ॥  
 ક્યોં ઝૂઠી સાખ ભરેગા ॥૫॥

### ભજન ૫૩.

જિસકા બહુત કરે હંકાર, યહ પાની કે સા પાલા ॥૧॥

पंच भूत करके जकड़ी है, कर्म योग से आट जड़ी है ॥  
 रज वीरज की गांठ पड़ी है, करके द्वेष भियार ॥  
 नित भूँ है भैल का नाला ॥१॥  
 जिसके जालिं अडापन मान्या, औरन को नीचा करि जान्या ।  
 हरि तजि आय विषय रस जाना, लक्ष्मिनिन आरो वरुं यभार ॥  
 लभ तुलसीदास हुवाला ॥२॥  
 जिसके जालिं अहुत मन लाया, धन योवन; स्वप्ने की माया ॥  
 थिर नहिं रहे किसी की काया, जूँठा सभ परिवार ॥  
 अथ तोड लरभ का ताला ॥३॥  
 अपने मन बुद्धि को लावो, गुप्त गली से जल्दी आवो ।  
 जभ कुछ आगम लेह को पावो, छूटे सभ विस्तार ।  
 कर पकड ज्ञान का लाला ॥४॥

### ५४. लजन

जेलत है जेल भिलारी, जग में लिपते नही विकार ॥१॥  
 नाना विधि करत है किरिया, जिनको पद पाया है तुरिया ।  
 उनके सभही कारज सरिया, आशा तृष्णा द्वेष भार ॥  
 यदि गये ज्ञान असवारी ॥२॥ ध्यान योग नही करे समाधी,  
 पार ब्रह्म है अनंत अनादी ॥ वाद करै तो आत्मवादी  
 सभ जना जगत असार ॥ यदि गध है ज्ञान जुमारी ॥३॥  
 सभ कुछ करते कुछ नही करते, ना कली जन्मे ना कली भरते ।  
 काल अगिनी में वह नही जलते, व्यापक रूप अपार ॥  
 कुछ नही ललके नही लारी, ॥४॥ गुप्त गली में दाग जेलते ।  
 रंग पियकारी जालिं जेलते, जे कोर्ध भिले तिसी पे जेलते,  
 नर हो याहे नार ॥ करते अपने अनुसार ॥५॥

### ५५. लजन

रया है आञ्जल का जेल, लूले है द्वेष तमासा ॥१॥  
 क्षिति जल पावक और समीरा, गगन रया है अति गंभीरा ।  
 जिनके भीय में चेतन हीरा, भिन जाती भिन तेल ॥



કસાઈ દિશિ હુયા ઉજસા ॥૧॥ જગ અંદ સૂર પરકાસા ॥  
અનલ વિદુત તારાગન બારે, અંધકાર પરકાસા ન નાકે,  
દોનો કા મિલા દિયા મેલ, ॥ કોઈ કરે ન કિરી કા નાસા ॥૨॥  
પહિલી સૂક્ષ્મ કૃષ્ણ રચાઈ, મન મિલા સ્થૂલ બનાઈ ।  
પંચ બંધ દિયે જિસમેં લગાઈ કરને બાજે રેલ ॥  
ફિર પાપ પુન્ય હોય બાસા ॥૩॥ ગુપ્ત રૂપ સે કાંઈ વિશાળે,  
બુદ્ધિ ભેદ કરે નાના સાજે ॥ આજે દોલ જ્ઞાન કા બાજે,  
બિગડ જાય સખ જેલ, જળ સમઝે વેદ કા આસા ॥૪॥

### ૫૬. ભજન

ઈસ રાજ આતમ સમ કો મન નરવા જેલ દિખાવે ॥૧॥  
મન નરવે ને જેલ બનાયા, બિના હુયા સખ કર દિખલાયા  
રાજ કો તિસને ભરમાયા, કરતા અચરજ કે કામ કો ॥  
બિના હાથ પૈર ભગ જાવે ॥૨॥  
જાગ્રત મેં સ્થૂલ તમાસા, વિષય દેહ ઈંદ્રી પરકાસા ॥  
દેવ ત્રિપુટી કરે ઉજસા ॥ રચે પંચ ભૂત કે ગામ કો,  
વિષયો કે બંધ લગાવે ॥૩॥  
દેહ ઈંદ્રી કો છિટકાવે, સ્વપને માહી ઝોર બનાવે ॥  
કંઠ દેશ નાહી મેં જાવે, તજ કર નેતર ધામ કો ॥  
કેર કઈ કઈ જેલ ખિલાવે ॥૪॥  
સુસોપતિ મેં ગુપ્ત જો હોવે, જાગ્રત ઝોર સુપન કો ખોવે ॥  
ધારણ માહી મુખ સે સોવે, તજ ગયા રૂપ ઝોર નામ કો,  
કુદ અપને રૂપ સમાવે ॥૫॥

### ૫૭. ભજન

જિનોં કે ઉડિ ગયે નામ નિશાન, રાજ થે ચક્રવર્તી ॥૧॥  
બલ પૌરુષ જિન કે વિખ્યાતા, સિખી પુરાનત મેં સખ ગાથા ।  
જિનકી સમતા કોઈ ન પાતા, બહુત કરે થે અભિમાન ॥  
હાથાં સે તોલતે ઘરતી ॥૨॥  
જિનકે તુંગ અગાર બને હૈં. કોટ કિલા અરુ બહુત તને હૈં ।

સેનાપતિ અરુ કોપ ઘને હૈ ॥ જિનોં કે બંદીજન કરે ગાન ॥  
 ચંદ્ર મુખી મહલોં ચરતી ॥૨૧॥  
 તિનકા ખોજ રહા નહી રાઈ ॥ ઔર કિસી કી કહા ચલાઇ ।  
 જિનકો સુર્ત હરી સે લાઈ ॥ સોઈ ઉભરે સંત સુજન ॥  
 પાયે આપ રૂપ મેં ચિરતી ॥૩૧॥  
 જો નર ગુપ્ત જ્ઞાન પાતા હૈ । ઉસકો કાલ નહી ખાતા હૈ ॥  
 સો કહિં આવે નહીં જતા હૈ ॥ યોં કહતે વેદ પુરાન,  
 સખ મૂલ અવિદ્યા મરતી ॥૪૧॥

### ૫૮. ભજન

એક દિન જંગલ હોય મુકામ, છુટિ જાયગેં મહલ અટારી ॥૧૮૬॥  
 ભૂલિ ગયા વિષયોંકે મુખ મેં, હડહડ હંસે કાલ કે મુખ મેં ।  
 હા હા કાર કરત હૈ દુખ મેં ॥ નહીં જયે હરિ કા નામ ॥  
 ચઢિ આઈ કાલ અસવારી ॥૧૯॥  
 મૂરખ નોંદ ભરમ કી સોવે । શિર પર કાલ ખડા નહિ જોવે ॥  
 અંતઃકરણ કો ક્યોં નહીં ધોવે ॥ સખ સિધ હોવેં કામ ॥  
 હોય નાસ અવિદ્યા સારી ॥૨૦॥  
 જ્ઞાન રવિ ઘટ મેં પરકાસે । જગત જાલ સ્વપના સા ભાસે ॥  
 અંધકાર અજ્ઞાન જો નાસે ॥ જખ હોય બ્રહ્મ મેં ધામ ।  
 ચઢિ જાવે જ્ઞાન ખુમારી ॥૩૦॥  
 ગુપ્ત પરઘટ જો કછુ ભાસે આપ રૂપ સે સખ પરકાસે ॥  
 કલિપત અધિષ્ઠાન મેં નાસે ॥ હૈ કિસકે દરમિયાન ॥  
 નહીં રજત સીપ સે ન્યારી ॥૪૦॥

### ૫૯. ભજન

લગા દધ સત ગુરુ ને તાલી, ખુલ ગયે બજર કે તાલે ॥૧૮૭॥  
 રસ્તા સાફ નહિં કોઈ ભાટા, કાલ કર્મ કે જલિ ગયે કાંટા ॥  
 સૌદા હુઆ સીસ કે સાટા, જ્ઞાન કી અગ્નિ કો જાલી ॥  
 જલિ ગયે અવિદ્યા જાલે ॥૧૯॥  
 અંતર કી વસ્તુ પરકાસી । મેં ચેતન યહ દશ્ય વિનાસી ॥  
 મૈ હી હૂં સખકા કા પરકાસી, ॥ ખિલી સખ મોંસે હરિયાલી ॥  
 ઘોયે દાગ દિલોં કે કાલે ॥૨૦॥



ज्ञान भाखिं ऐसा दिया भंतर ॥ तुल्य चेतन रहता है स्वतन्त्र ॥  
 हरथ सबी उद्विग्न तुल्य अंतर ॥ देव क्या बेरों और काली ॥  
 तुल्य करै सखी उजियाले ॥३॥  
 गुप्त रूप से ओझड़ि रहता, ना कष्ट करता ना कष्ट रहता ॥  
 काल अग्नि को तूही दहता; उमर तेरी झूझ नहीं आली ॥  
 छुटि रहै ज्ञान के नाले ॥४॥

## ६० राग भिलावल

निज आत्म आनंद में जे जन नित राते ॥  
 आठ पहर तिस अमल में रहते हैं भाते ॥१॥  
 मोह जल झंसी कटी दुर्ध अंध जुलासा ॥  
 निरस्य होकर देखते सख अलक तमासा ॥२॥  
 दूटा घट अज्ञान का लाया ज्ञान का उंडा ॥  
 काम कर्म आलास का हो गया सत अंडा ॥३॥  
 धृष्ट, माया, जगत, की सख मिटी उपाधी ॥  
 पार अहं से परसिया सो सुद्ध अनादी ॥४॥  
 काल जल यमराज का दहतर सख झाडा ॥  
 अहं रूप मैदान में अंडा जिन गाडा ॥५॥  
 अज्ञानंद आनन्द में आनंदित रहते ॥  
 अहं लोक वैकुण्ठ लो नाही कष्ट रहते ॥ ६ ॥  
 सर्व मित्र निष्कपना त्यागी संतोषा ॥  
 पिना आपने आपके और नहीं लरोसा ॥१॥  
 गुप्त गलिये सोवते लाया ज्ञान का तडिया ॥  
 दिन मुन ताली लगी रही अधि जगी अंजिया ॥ ८ ॥

## ६१. राग भिलावल

सख देवन के शीश में यक आत्म जेती ॥  
 सदा दियाली संत की तिस भाही होती ॥ १ ॥  
 लिपना पढना यातुरी, अरु पत्रा पोथी ॥  
 निज आत्म जने पिना, सखी है बोथी ॥ २ ॥

ગાંધાર કી પૂજા કરે, પકવાન મિઠાઈ ॥  
 પૂજે નહીં આતમ દેવ કો, સખ ઉમર ગમાઈ ॥ ૩ ॥  
 દેવી દુરગા પૂજતે, ઓર હોરો કાલી ॥  
 દેહી અન્દર દેહરા, જહાં દેવ દેવાલી ॥ ૪ ॥  
 શૂન્ય સિંહાસન લગ રહા, પરદા નહીં પહેરા ॥  
 ખસ્તી ડોંગર દેહરા, નહીં જંગલ સહેરા ॥ ૫ ॥  
 વ્યાપક હૈં સખ ઠોર મેં કર દેખ વિચારા ॥  
 ભૂલે ભરમ આચાર મેં, નર મૂઢ ગંવારા ॥ ૬ ॥  
 સખ કે શામિલ મિલિ રહા, અરુ સખ સેં ન્યારા ॥  
 રુપ રેખ જાકે નહીં, પીલા અરુ કાલા ॥ ૭ ॥  
 ગુપ્ત રુ પરઘટ એક હૈ, જહાં નાહીં દૂજા ॥  
 પૂજા પૂજક પૂજ્ય કા, તોડા ભ્રમ દૂજા ॥ ૮ ॥

### ૬૨. શિષ્ય શંકા કી ખિલાવલ

ભગવન આતમ એક હૈ, યહ આપ મુનાયા ॥ પૂજા પૂજક ભાવ  
 કો, સખ ભરમ ખતાયા ॥ ૧ ॥ નાના વિધિ જગ ભાસતા, કહો  
 કહાં સે આયા ॥ આતમ મેં કિરિયા નહીં, યહ કિસે ખનાયા  
 ॥ ૨ ॥ ત્રીન કાંડ હૈં વેદ મેં, યહ કહિ સમુઝાયા ॥ કર્મ ઉપાસન  
 જ્ઞાન કા સાધન ખતલાયા ॥ ૩ ॥ કૌન સત્ય કો જૂઠું હૈ, દોઢ  
 કહતા વેદ ॥ કહીં તો ઉત્પત્તિ કહે, કહિં કહે નિપેધા ॥ ૪ ॥ કથન  
 ક્રિયા હૈ કર્મ કા, મરને પરયાંતા ॥ કહીં ત્યાગ સખકા કહા, ભજિયે  
 ભગવન્તા ॥ ૫ ॥ ઈશ્વર કરતા વેદ કા, સખ કહે પુકારી ॥ દ્વિવિધિ  
 વચન સમજો નહીં, યહ શંકા મહારી ॥ ૬ ॥ સમર્થ આપ  
 દયાલુ હો, મેં બુદ્ધિ ખોયા ॥ ભરમી રહા સંસાર મેં, જન્માન્તર  
 રોયા ॥ ૭ ॥ ગુપ્ત ભેદ સમજાય કે, કહિ દિજે સારા ॥ આપ  
 ખિના યા જગત મેં, કોઈ નહીં ઉદ્ધાર ॥ ૮ ॥

### ૬૩. પૂર્વ પ્રશ્નો કો ઉત્તર (ખિલાવલ)

આધિકારી કે ભેદ સે, સખ વેદ કહાની ॥ ગૂઢ વચન હૈં વેદ કે,  
 સમજત નહીં પ્રાની ॥ ૧ ॥ અજ્ઞાની સહ કામ કો, કરને કો



કહતા ॥ જો જિજ્ઞાસુ જ્ઞાન કા, તિસકો નહીં ચહતા ॥ ૨ ॥ કર્મ  
તજન કે વાસ્તે, સખ કર્મ કરાવે ॥ કામ્ય કર્મ છુટવા કે, નિષ્કામ  
બતાવે ॥ ૩ ॥ કર્મ ઉપાસન સો કરે, જા કે મલ વિદ્રેપા ॥ અન્નર  
કો શુદ્ધી ભઈ ફિર કરે ન એકા ॥ ૪ ॥ પરવતીમેં વેદ કા, મન  
સમજો આસા ॥ સદા નિવ્રત્તિ કહત હૈ દૂરે ભવ પાસા ॥ ૫ ॥  
વિવિધ ભાંતી જગ ભાસતા તિસકો સુનિ લીજે ॥ યહ સખ માયા  
જલ હૈ નહીં ભૂલિ પતીજે ॥ ૬ ॥ જેસે સોયા નીંદ મેં ભાસતા  
હૈ સ્વપ્ના ॥ કોઈ અપના કોઈ ઓર કા મિથ્યા સખ સ્વપ્ના  
॥ ૭ ॥ ગુપ્ત આતમ અજ્ઞાન તે સખહી કુછ ભાસે ॥ જ્ઞાન હોત  
નિજ રૂપ કા ફિર સખહી નાસે ॥ ૮ ॥

### ૬૪. ખિલાવલ

મંદ અંધ કે બીચ મેં, રજજુ સર્પ મેં ભાસે ॥ અરુ સીપી કે  
અજ્ઞાન તેં રુપા પરકાસે ॥ ૧ ॥ જેસે મરુસ્થલ ભૂમિ મેં, હોય  
જલ પરતીતિ ॥ તૈસેં તરુકર ઠૂંઠ મેં ચો જગ કી રીતિ ॥ ૨ ॥  
જેસે નલ મેં દેખિયે ઘટ મઠ બહુ નામા ॥ ગગન એક કા એક  
હૈ, નાહીં કુછ નાના ॥ ૩ ॥ જ્યોં જલ માહીં કલપતે, બુદ બુદ  
તરંગા ॥ જલ સે કુછ ન્યારે નહીં જલ હી સખ અંગા ॥ ૪ ॥  
અગ્ની મહીં કહત હૈં, બહુ દીપ મસાલા ॥ લાલ ટેન અરુ  
ખિજલી, વિષ ફુલી ઉજલા ॥ ૫ ॥ લોહ મેં શસતર ઘને, સખ  
ઘડે લોહારા ॥ જ્યોં કા ત્યોં લોહા રહૈ, કલ્પિત હથિયારા ॥ ૬ ॥  
સોનેમેં ભુષણ બહુત, સખ ઘડે સોનારા ॥ સોના સોના હી  
રહે, નહીં ધરે વિકારા ॥ ૭ ॥ પરજા પતિને ઘટ ઘડે; માદી બિન  
કાહી ॥ ગુપ્ત આતમ મેં જગત કો, એસે લખ ભાઈ ॥ ૮ ॥

દોહા—સીપી રૂપ રજજુ સર્પ મરુસ્થલ જલ કા ભાસ  
વહ કાટે નહીં વહ ખિકે નહીં ખાવે પ્યાસ ॥

### ૬૫ ચાલ ખનજર

સમજે નહીં મૂઠ ગંવારા, તન સુખા સુખા કે મારા ॥ ૨૫ ॥  
રખતે ઉપાસરુ રાજા, અંતર સે નહીં ખોળ્યાજી ॥ ઉપર કે મેં

અચારા ॥ ૧ ॥ પચ તીરથ મેં અશનાના ॥ ખાતા હે સૂક્ષ્મ  
ખાના છ, કરને લાગે સંધારા ॥૨॥ કુછ સમજના નહીં મનને,  
કયા કમુર કયા તનને છ ॥ કરને કા કામ વિસારા ॥ ૩ ॥  
મુનિ કર ગુપ્ત જ્ઞાન કી ખાતા ॥ કર્મો મેં કરતે માથા છ ॥  
હો ગયા આતમ હુત્યારા ॥ ૪ ॥

૬૬ ચાલ બનનરો

મન મરે નહીં તન મારે, કરિ યતન બહુત સે હારે ॥ ૧ ॥  
બાંબી કો ફૂટે કોઇ, નહીં દુઃખ સર્પ કો હોઈ છ ॥ વહુ રહતા  
બાંબી મંઝારે ॥ ૧ ॥ પગ બાંધિ વૃક્ષ મેં લટકે ॥ મન કે  
ચલને કો અટકેછ ॥ કરતે હૈં યતન બરે ભારે ॥ ૨ ॥ મન  
કારન તન કો મારે, ઉપવાસ વૃત બહુ ધારેછ ॥ સખ અંગ  
અગ્નિ મેં જરે ॥ ૩ ॥ મન ગુપ્ત રૂપ હો રહતા ॥ નહીં  
ખાત કિસીસે કહતા છ ॥ સખ મન કો જલ પસારે ॥ ૪ ॥

દોહા—મનરે મિહીં પીસિ કે, ઉપર લાઢૂં આગ ॥

તો ભી ચંચલ નામિટે, ઊઠ ઊઠ જવે ભાગ ॥

૬૭. ચાલ બનનરો ।

સમજે ક્યોં ના મન મેરા, મત કરે વિષયોં કા ફેરા ॥૧॥ યહ  
યહ નિશી તોહી જરાવે, ફિર અંત સમય ઉઠિ જાવે છ, તખ  
હોવે દુઃખ ઘનેરા ॥ ૧ ॥ જૂઠા ધન બહુત કમાયા વિરથા હંકાર  
બઢાયા છ, ફિર અંતકાલ ને ઘેરા ॥ ૨ ॥ કૈદી સા પકડા જોવે  
કયા જખાખ વહાંપે સુના છ કુછ ચલે નહીં બલતેરા ॥ ૩ ॥  
જે કિયે કર્મ ગુપ્તાર્થ લેખા હોય રાઈ રાઈ મુખ કાલા કીજે  
તેરા ॥ ૪ ॥

દોહા:—ચલે નહીં બાલસ્ટરી, નહીં રિશખત કાનૂન ॥

વહુ સચ્ચા દરબાર હૈ, કરૈ અન્યથા કવન ॥

૬૮ ચાલ બનનરો ।

આતમ ચેતન અવિનાસી નહીં પડે કાલ કી ફાંસી ॥ ૧ ॥  
અસા હૈ રૂપ તુમહારા, જિસમેં કલિપત સંસારાછ કરકે દેખા



તદ્વાસી ॥ ૧ ॥ નિરાકાર નહીં આકાશ જિસમેં કુછ નહીં  
પસારાજી કહિં આવે ના કહિં જાસી ॥૨॥ એસે નિશ્ચય કો ધારે  
યમ કી ફરદી કો પારેજી ગટ ઘટ મેં આપ નિવાસી ॥૩॥ સુનિ  
ગુપ્ત મતે કીવાની વેદાને સાખિ બખાનીજી આતમ ચેતન  
સુખરાસી ॥ ૪ ॥

### ૬૯. ચાલ બનજારા ।

દેખો નિજ રૂપ તમાસા, નિજ અંતર કીજે વાસા ॥ ટેક ॥ ઇંદ્રિય  
અરૂ તિનકે દેવા, કુછ જાનત નાહીં લેવાજી, તુહુ કરે સખકા  
ઉજિયાસા ॥ ૧ ॥ તુહીં સખ દેવન કો જાને, તુઝકો કોઈ નાહીં  
પિછાનેજી, તુહીં આપ સ્વયં પરકાસા ॥ ૨ ॥ કોઈજીવ ઈશ નહીં  
માયા, તુહુ આપ નિરંજન રાયાજી, કોઈ નાહીં સેવક દાસા  
॥ ૩ ॥ હૈ ગુપ્ત રૂપ અવિનાસી, અખ તોડિ દેવ કી ફાંસીજી,  
ફિર હોય અવિદ્યા નાસા ॥ ૪ ॥

દોહા :- જે સમજે ઈસ સૈન કો, લખે આપ  
નિરખાન । કર્મ કીય છુટે સભી, દિલ મેં હોય  
આરામ ॥ સખ વેદાન્ત કા સાર યહ, લખે પ્રભ  
નિજ આપ । માયા ઈશ્વર જીવ જગ, છાંડિ  
ભર્મ સન્તાપ ॥

### ૭૦ અસાવરી

યક ચતુર નાટકી આઈ, જિન દિયા અખાડા. લાઈ ॥ લિયે  
દેવ મનુષ ભરમાઈ, તિરયક કી કિને ચલાઈ ॥ ટેક ॥ ઝોલે સે  
સૂત નિકાલા, સો તીન તાર કરડાલા ॥ બટ અહુંકાર કા ઘાલા.  
ડોરી મજબૂત બનાઈ ॥ ૯ ॥ તિસ ડોરી મેં સખ અન્ધે, કિયે દેવ  
મનુષ સખ અન્ધે ॥ સખહી ગલ ડારે ફન્દે, માનન લગે છોરે  
બડાઈ ॥ ૨ ॥ તીનન કો દેવ બનાયા, જખ અપના હુકુમ સુનાયા ॥  
કાહુ પર કરની ન દાયા, જૈસા કરે તૈસા ભુગતાઈ ॥ ૯ ॥ જખ  
હુકુમ કિયા હૈ જારી, તીનોં ને ખાત વિચારી ॥ રચિ દીની ચોંદ

ક્યારી, તિરલોધી અજળ બનાઈ ॥ ૪ ॥ ક્ષિતિ પાવક જલ અરુ  
પવના, આધાર માણી' સખ ભવના ॥ જિનમે' હોય આવા  
ગવના, યદ દિના પંથ ચલાઈ ॥ ૫ ॥ વિષયોં કી ઠાલક બાજી,  
મુન મુન કે હુયે સખ રાજી ॥ મન મોહન રચના સાજી, દેખન  
લગ લોગ લુગાઈ ॥ ૬ ॥ કર્મોંકા ટિકિટ જૈસા લિયા, ઉન વૈસા  
દરજા દિયા ॥ સખ પાને અપના કિયા, કચુ નહીં ચતુરાઈ ॥ ૭ ॥  
જિસે નાટક મેં મન લાયા, તિસે ગુપ્ત ભેદ નહીં પાયા ॥ વેદોં  
મેં સભી સમજાયા, ઠગની કી ધુલિ ઉડાઈ ॥ ૮ ॥

### ૭૧. અસાવરી

હુમેં નગર કુંઠિ લિયા સારા, પાયા નહીં મીત હમારા ॥  
દસહું દિશ પડા. અન્ધારા સખ અંગ વિરહ ને જારા ॥ ૧ ॥  
મેં તો પહિર ગલે બિચ સેલી, વન પરવત ફિરી અકેલી ॥ સખ  
દેખી હાટ હવેલી, કુંઠે હૈં શહર બજારા ॥ ૨ ॥ તીરથ વરતાદિક  
કરતી, નિત ધ્યાન મીત કો ધરતી ॥ બડે દુર્ગમ દેશેં ફિરતી,  
સખ અંગ અગ્નિ મેં જારા ॥ ૩ ॥ સખ તજિ દિયા ઘર કા ધંધા,  
નિત પઠી ગાયત્રી સંધ્યા, ઉલટા ગલે પડિ ગયા ફંદા, કર્મોં કા  
ગહન વન ભારા ॥ ૪ ॥ હમ દોનોં કાન ફડાયે, શિર લમ્બે  
કેશ બઢાયે ॥ સીંગી અરુ નાદ બજાયે, સહી કઠિન છૂરી કી  
ધારા ॥ ૫ ॥ હમ બને યતી સન્યાસી, ઘર છોડિ હુવે બનવાસી  
નહીં કયી લોભ કી ફંસી, કાહે કો કિયા મુખ કારા ॥ ૬ ॥ યમ  
નિયમ પ્રાણાયામા, કરતે હૈં આઠો યામા ॥ પાયા નાહિં નિજ  
ધામા, ફિરી ચૌરાસી કી ધારા ॥ ૭ ॥ કરિ દેખી નાના કિરિયા,  
પદ પાયા નહીં હમ તુરિયા ॥ ત્રથા હી પચ પચ મરિયા, ખોયા  
હૈ જમાના સારા ॥ ૮ ॥ જખ ગુપ્ત ગલી મેં આયા, સતગુરુ  
ને ભેદ બતાયા ॥ સખ હી ચેતન કી છાયા, વ્યાપક હૈ રુપ  
તુમારા ॥ ૯ ॥

### ૭૨. અસાવરી

જખ ગુરુ મિલે બ્રહ્મ જ્ઞાની, તખ બોલે અમૃત બાની ॥  
બતલાઈ નૂર નિશાની, સખ કુંઠી દેત કહાની ॥ ૧ ॥ જખ મુને



યથારથ વચના, સખ મિટી કર્મ કી રચના, નિજ બોધ રૂપ મેં  
 જચના. યહ બાત સુની રસ સાની ॥ ૧ ॥ જિસ કારન ભરકત  
 ડાલે, વહ ઘટ ઘટ માહીં બોલે ॥ જખ ધરી કાટે પર તોલે,  
 તખ પાવે પદ નિરબાની ॥ જિમિ બ્યાલ દામ મેં ભારે ॥ એસાહી  
 જગત પ્રકાસે ॥ ૨ ॥ અધિઘાન જ્ઞાન તેં નાસે ॥ જો રોપ રહે  
 સો જાની ॥ ૩ ॥ જૈસે નવ મેં ઘઠ મઠ નામા ॥ યોં શુવ અક્ષ  
 મેં જાના ॥ સખ ભેદ ભરમ કો ભાના ॥ જહ મન પહુંચે નહી  
 બાની ॥ ૪ ॥ જખ તીર લક્ષ મેં તાના ॥ માયા કે ભર્મ કો  
 માના ॥ તખ ભેદ અગમ કો જાના ॥ સખ મિટી ગધ બેંચાતાની  
 ॥ ૫ ॥ દિની ગુરુ જ્ઞાન સીરોહી ॥ સખ મૂલ અવિદ્યા બોઈ ॥ જો  
 હોના હોય સો હોઈ ॥ કછુ લાભ રહા નહીં હાની ॥ ૬ ॥ કિયે  
 જપ તપ નેમ ઉપાસા ॥ છુટિ નહીં મન કી અસા ॥ દેખા નિજ  
 રૂપ તમાસા ॥ તખ પાધ સુખ કી દાની ॥ ૭ ॥ છુટા ગુપ્ત જ્ઞાન કા  
 જોલા ॥ સખ ઉડા ભર્મ કા ટોલા ॥ હોગયા મેહર કા જોલા,  
 નહીં પડતે ચારો બાની ॥ ૮ ॥

### ૭૩. અસાવરી

કહતે હૈ વેદ સિમરિતી ॥ યહ શુવ કલા નહીં મરતી ॥ નહીં  
 જન્માદિક કો ધરતી ॥ કયોં ભૂલિ ભર્મ મેં ફિરતી ॥ ૧ ॥ જૈસે  
 મદ પી હો મતવારા ॥ કચુ તનકી રહે ન સંભારા ॥ ગીરી અવત  
 મૈલી ગારા ॥ તખ લોટન લાગે ધરતી ॥ ૨ ॥ જખ વિધિયન મેં  
 મન દિના ॥ કરતા અંહકાર જો દિના ॥ તખ શુવ આપકો ચીન્યા ॥  
 ભૂલ્યા નિજ અપની સુરતી ॥ ૩ ॥ સ્વપને મેં બહુત ધન પાયા ॥  
 પુત્તર પોતે અરૂ માયા ॥ કછુ અર્થ કિયા નહીં ખાયા ॥ જૂંઘી  
 સખહી પર વિરતી ॥ ૪ ॥ કર્તા કર્મ અરૂ કિરિયા ॥ તજિ તિનકો  
 પાયો તુરિયા ॥ સખ કર્મ ઈસી સે જરિયા ॥ જખ પાવે આપ  
 નિરવતી ॥ ૫ ॥ નિજ આતમ રૂપ અપારા ॥ જિસમેં મિથ્યા  
 સંસારા ॥ સો માહીં નહીં કછુ ન્યારા ॥ કરો બ્રહ્માકાર અખ  
 વિરતી ॥ ૬ ॥ યહ સુન સતગુરુ કી બાની ॥ સો અતિશય સુખ  
 કી બાની ॥ યાતે ચિર હોવે પ્રાની ॥ છુટ નહીં બાહર ચરતી  
 ॥ ૭ ॥ જખ હોય દહ અભ્યાસા ॥ પાવે નિજ રૂપ ખલાસા ॥

કિરે ચમ કી રહે ન ત્રાસા । સખ મૂલ અવિદ્યા જરતી ॥ ૭ ॥  
 ગુરુ ગુપ્ત બેઠ અતલાયા । સખ કૂંઠા જલ ઉડાયા ॥ શિષ્ય સેવક  
 ભાવ મિટાયા । જળ શુભ કલા પાવે ચિરતી ॥ ૮ ॥

### ૭૪ અસાવરી

યદ્દે દેખ્યા બ્રહ્મ તમાસા । સખ ક્યા બરમ કા કાંસા ॥ પાયા  
 નિજ રૂપ જુલાસા । દસ હું કિશિ હુયા ઉત્તસા ॥ ૧ ॥ ઐસા  
 હું રૂપ હમાસા । નદી બૌનિક બૂત પસારા ॥ સખ શામિલ સખ  
 સે ન્યારા । નદી આગમ નિગમ કા રાસા ॥ ૨ ॥ કોઈ આતમ  
 દેહ જતાવે । મન ઈન્દ્રિય પ્રાણ સુતાવે ॥ કોઈ જુદિ કો સમજાવે । યો  
 પાપો જલુત નિરાસા ॥ ૩ ॥ કમી નીન દેહ મેં અરકયા । કમી  
 પંચ કોપ મેં બરકયા ॥ પાયા નદી નિરગુણ લરકા । સખ કિયા  
 ઉમર કા નાસા ॥ ૪ ॥ કોઈ પૂજા નિલક જતાવે । કોઈ ગાયત્રી  
 જપયાવે ॥ કોઈ માતા કો હલયાવે । કોઈ કહને સેવક દાસા  
 ॥ ૫ ॥ હમેં મિલે જલુત અલગેરી । ગલ ગરે મજબ કી બેરી ॥  
 કરતે હું આંખ બરી રેરી । જતલાતે હું પરકાસા ॥ ૬ ॥ કોઈ  
 મિલે અગમ કે ભેરી । જિન મૂલ અવિદ્યા છેરી ॥ સચિદ્ગ બ્રહ્મ  
 કી વેરી । ઘર અંદર હુયા હુલાસા ॥ ૭ ॥ જળ સુને વથારથ  
 જયના । તમ રૂપ પિઝાના અપના ॥ મિટિ ગર્ભ કુતર્ક કી રચના ।  
 જળ હાસ નરગુણ પાસા ॥ ૮ ॥ અખ સોયે ગુપ્ત ગલીચે ।  
 નદી જના ઉપર નીચે ॥ આનંદ મેં ઉમરિયા બીતે । સખ દુરિ  
 હુયા હું સાંસા ॥ ૯ ॥

ટીકા—બ્રહ્માનંદ આનન્દ મેં, આનન્દ રહે હમેશ ।

જા આનન્દ કા જગત મેં, આનન્દ હૈ લવલેશ ॥

### ૭૫. અસાવરી

યદ્દે તન મેંના મેંના । સખ જોડો ફેકર ફેના ॥ ૧ ॥ જા ગાયર  
 મન જલુલગ જાવે । સો યદ્દે કુછ ભી ફેના ॥ માયા કલિપત વિદ્યે  
 જન્યા હું । મુગ જલ જાનિ જાદેના ॥ ૨ ॥ સોવત રંક સ્વપ્ન હોય  
 સુજા । સજ કરત સંગ સેના ॥ જગત ભીખ ઘરે ઘર માંગે ।



તખડું પેટ ભરેના ॥૨૧॥ તન તિરિયા મુત આપને માનત ચે સખ  
કાલ ચવેના ॥ ઈન સંગ તજ સંગ હરિ કા કરિયે । હરિ હરિ  
મુખ સે કહના ॥૩૧॥ સો હરિ ગુપ્ત પ્રગટ સંતન સંગ । ઉનકા  
મુનિયે કહના ॥ ધ્રુવ વહ કૃપા કરત ખિન કારણ । મુખ કે કહિ  
કહિ ઐના ॥૪૧॥

### ૭૬. દાહરા

જાના તુઝે જરૂર હૈ । કર્મોં કે ધામ કો ॥ સૌદા કરો નેકી કા ।  
ભજિકે રામ નામ કો ॥૨૬॥ કયોં ભૂલતા હૈ દેખિકે । ચમક  
ચામકો ॥ ચલના પડેગા યાર । તજિકે ધામ વામ કો ॥૩૧॥ બાજે  
નગારા કૂંચ કા સુખહ વ શામકો ॥ લેને ન પાવે સંગ મેં ।  
કોડી છદમ કો ॥૨૧॥ સમજા હૈ સત્ય તૈને । ઇસ જૂઠે લિજમ  
કો ॥ કૈદીસા પકડા જાયગા ॥ યમ કે મુકામ કો ॥૩૧॥ કહતા  
હૈ ગુપ્ત પુકારિકે । મન બેધમાન કો ॥ બિગડા અનાદિ કાલ કા ।  
કરતા ન કામ કો ॥૪૧॥

### ૭૭. દાહરા

સ્વપ્નેમેં સ્વપ્ના દેખિકે । હોતા ફિરૈ ખુવાર ॥ બઢિકે અવિદ્યા-  
રન્ય મેં કયોં ભૂલતા હૈ યાર ॥૨૬॥ જૈસે નદી મેં ગિર ગયા ।  
બહને લાગ્યા મજધાર ॥ તખ તક નહીં આરામ હૈ । પકડે નહીં  
કિનાર ॥૩૧॥ દેહી મિલી હૈ મનુષ્ય કી । કછુ કિજિયે વિચાર ॥  
ડારો અવિદ્યા જાલકા । સિર આપને સે ભાર ॥૨૧॥ કરના બે  
આજ હૈ । કલ કી નહીં ઉધાર ॥ નાહીં ખબર છિન એક કી ।  
કખ આનિ પકડે કાર ॥૩૧॥ ગુપ્ત ગોવિન્દ કો જપો । અમ રાગ  
દોષ જર ॥ છોડો અખાડા લોભ કા । ઇસ મારહી કો માર ॥૪૧॥

### ૭૮. દાહરા

નેહંદી કે જૈસે પાત મેં । લાલી રહી સમાય । કાયા મેં તૈસે  
બ્રહ્મ હૈ બોજન કો કહાં જાય ॥૨૬॥ વૃથા હી બાહર ભટકતા ।  
બોજે નહી સતભાવ ॥ બાહર સે ઉલટી મોટી કે । અંતર કો  
વિરતી લાય ॥૩૧॥ ઢંઢન વાલે કો કુઠિલે । ઇસ ઢંઢાહિ કે માય ।

અંતર વ બાહર એક રસ । કયોં મરતા ધાય ધાય ॥૩૧॥ યદ્યાપ  
અપના આપ હૈ । સતગુરુ બિના નહીં પાય ॥ ગહેના ગહે દે  
બીચ મેં । કોઈ દેત હૈ બતલાય ॥૩૨॥ ગુપ્ત આપના આપ હૈ ।  
દષ્ટિ ન મુઠિ આય ॥ જબ તક ન જાને આપકો । બન બન મેં  
ભરકે ખાય ॥૩૩॥

### ૭૯. દાહરા

દિલ દીજે ન સંસાર ચાર છાંડ જાતે હૈ ॥ લાખોં કરો ઉપાય ફિર  
હુંદે ન પાતે હૈ ॥૧૮૬॥ પ્રીતિ મેં જો મુખ હુચે હમકો જલાતે હૈ ।  
ખાન પાન ધામ ચે નાહીં સુહાતે હૈ ॥૧૯૧॥ જિનખીન ઘડી નહીં  
ખીતતી અબ દિવસ જાતે હૈ ॥ કોઈ ચન્દ રોજ બીચ મેં હમ  
ભી સમાતે હૈ ॥૨૦૧॥ દિલ માહીં દિલ કો દેય કે મુહબબત લગાતે  
હૈ ॥ એક દિન વિયોગ કો । અવશ્ય પાતે હૈ ॥૨૦૩॥ જાને બિના  
નિજ ગુપ્ત કે ચાં દુખ પાતે હૈ ॥ ચાર મિત્ર દોસ્તી । સબ ઝૂંઢે  
નાતે હૈ ॥૨૦૪॥

### ૮૦. દાહરા

ગાના મુનાના આહિયે । જો ગૈબી ખ્યાલ હૈ ॥ ગંધર્વ હુવા તો  
ક્યા હુવા । વાકિફ ન હાલ હૈ ॥૨૦૬॥ તાનારીરી મેં ફંસ મરયા ।  
કરતા કમાલ હૈ ॥ દાતઓ અનુદાત । નહીં સ્વર કી સંભાલ  
હૈ ॥૨૧૧॥ નહીં તાર કાટ ચામ લોહા । તરમા ન ખાલ હૈ ।  
અનહદ કે બાજે બજ રહે । તબલા ન તાલ હૈ ॥ મુરસદ કી  
ઠાકર ખાયકે । હોતા નિંહાલ હૈ ॥ કથની કથી તો ક્યા હુવા ।  
કોરા કંગાલ હૈ ॥૨૧૩॥ ઉસ ગાને કો જાન્યા નહી, જો ગુપ્ત માલ  
હૈ । ધન કાજ આયુ જો મરયા ઘર માહી લાલ હૈ ॥૨૧૪॥

### ૮૧. દાહરા

મથન ક્રિયા હૈ વેદ કા કથિ કથિ કે કહતે હૈ ॥ જાને બિના નિજ  
રૂપ કે ભવ જલમેં બહતે હૈ ॥૨૧૬॥ લોલ કી અગ્નિ લગી તિસ  
માહિ દહતે હૈ । તજિ લાજ કો અકાજ કર દમડી કો ચહતે હૈ  
॥૨૧૮॥ મિત્ર નીત્રતી નહીં મુખ હોય કયોં દુખ સહતે હૈ । અષ્ટ-



દસ પ્રસ્થાન જે વિદ્યા કે સહતે હૈ ॥૨૧॥ ધન ધામ કાજ રાજ મેં  
હુકુમતિ કે સહતે હૈ, કથની કરે વેદાંત કી હમ અસંગ રહતે હૈ  
॥૩૧॥ જાન્યા હૈ ગુપ્ત જ્ઞાન સો આમાન રહતે હૈ, તજિ કે વસ્તુ  
સાર નહીં અસાર ગહતે હૈ ॥૪૧॥

## ૮૨. દાદરા

હરહાલ મેં કર જ્યાલ કો, તુહ કોન તેરા હૈ, યહ જગત માયા  
જાલ યહાં તેરા ન મેરા હૈ ॥૧૮૬॥ ભૂલ્યા ફિરે કયા ભર્મ મેં સ્વપ્ને  
કા ડેરા હૈ. ધન ધામ ધામ અરૂ તનય જૂઠા બખેરા હૈ ॥૧૯૧॥  
સખ ફીકે રંગ જહાન કે જહાં મન કો ગેરા હૈ, કુછ સમજિકે  
કર કાજ નહીં ચૌરાસી ફેરા હૈ ॥૨૦૧॥ ગુરૂ વેદ મેં વિશ્વાસ કરિ  
જે ભેદ હેરા હૈ, કહતે અખંડિત આતમા નહીં દૂર નેરા હૈ ॥૨૦૩॥  
સમજો ન ગુપ્તજ્ઞાન કયોં હૈરાન હોરહા હૈ, જિસકો તૂ સમજે દૂર  
મેં તેરા હી ચેહરાહૈ ॥૨૦૪॥

## ૮૩. દાદરા

જેસે કેસે કે થાલ મેં, પાતા નહીં હૈ સાર ॥ તેસેહી દેખો ખોજકે  
મિથ્યા સભી સંસારા ટેકા પકડ્યા હૈ તેને આયકે, યહ માયા કા  
વિકાર ॥ પચિ પચિ કે મરતા રાત દિન, કરતા નહીં વિચાર  
॥૨૧૧॥ છોડે બિના છૈ નહીં, જૂઠા ભી યહ આસાર ॥ અખ જનો  
અપને રૂપ કો, પટેકો ન સિર તે ભાર ॥૨૧૨॥ છોડો સભી પરમાદ  
કો, લાવો ધની સે તાર શિર ઉપર કાલ ગાજતા, કરતા નહીં  
ઉધાર ॥૨૧૩॥ દેખૈ હૈં અપની આંખસે લગતી નહીં કછુ વાર,  
લાખોં ફિરોડો ચલિ ગયે, કહતા હૈ ગુપ્ત પુકાર ॥૨૧૪॥

## ૮૪. દાદરા

કયા તો અપની હૈ નહીં, માયા કહાં તે હોય, સમજો ન અપને  
રૂપ કો, ઈન દોનોઉં કો ખોય ॥૨૧૮॥ બીતી જે ભૂત કાલ મેં,  
નિસકો ન મનમેં જોય, ભાવી કા સોચ મત કરો, જે હોની હોય  
સો હોય ॥૨૧૯॥ વરતે જે વર્તમાન મેં, દેખો ન આપ સોય ॥  
પૂછે કયા પડિત જોશિયોં, નહીં ટારી સકતા કોય ॥૨૨૦॥ નિશ્ચિત

હોકર કિન્નિયે, કરને કે ચોગ સોય, તજિદે કરતા હંકાર કો, કરના  
રહે નહીં કોય ॥૩૦॥ ઈસ ગુપ્ત ભેદકો લખો, દેખો ન એક દોય,  
સાચુન લગા કે જ્ઞાન કા, કરતા મતિ કો ધોય ॥૩૧॥

દોહા—વૈદ ઔષધી દેત હૈ, પથ કો દેચ બતાય ।

કુપથ છોડિ સેવન કરૈ, તખલી ખ્યાધી જાય ॥

જીવ આતમા કે લગ્યો, બડો રોગ અજ્ઞાન ।

ગુરુ વેદ બતલાવતે, ઔષધ તિસકી જ્ઞાન ॥

જ્ઞાન દવાઈ જમ લગે, કુપથ તજે વિષ ભોગ ।

પથ વિવેક સેવન કરે, તખ આતમ હોય નિરોગ ॥

## ૮૫. દાદરા

અંદા ન બન તૂં દેખ અજબ તેરી શાન હૈ, અપને કો આપ  
ભૂલિયર હોતા હૈરાન હૈ ॥૧૦૦॥ સાક્ષી હૈ વહ સર્વ કા જો ઉર  
મેં બસ રહા, બેદ ભેદ બિન સદા કરતા જો ગાન હૈ ॥૧૦૧॥ તેરી  
અમર પાય કે અમરતા જહાન હૈ, નામ રૂપસે જુદા ઉસ કી પિછાન  
હૈ ॥૧૦૨॥ અનેક એક હૈ નહીં, ક્યા કહો બખાન હૈ, આપને દિલ  
મેં હમેશ હોતા ભાન હૈ ॥૧૦૩॥ ગુપ્ત સેન જાન તૂં, કરદે મુકામ  
હૈ, ધ્રુવચ મરૂપ મેં ન હોત હાનિ હૈ ॥૧૦૪॥

## ૮૬ દાદરા

આમ કે ઇસ ગાંમ મેં રહના કિસી કા નાય, ધન ધામ બામ નાશ  
વંત ક્યોં રહા લુભાય ॥૧૦૫॥ નામ રૂપ સે રહિત આપ સખાહી માય  
સ્વ મરૂપ, જાનને સે જગત જલ જાય ॥૧૦૬॥ દૂધ મેં ઘત દેખલે  
ખાને સે સ્વાદ આય, વિશ્વ માહી વિશ્વ નાથ સખ મેં રહ્યો  
જાય ॥૧૦૭॥ અપની આખ મંદતા સે અંદ દો દિખાય, હાય હાય  
હાય કષ્ટ ઇસ કી ભૂલ ખાય ॥૧૦૮॥ ગુપ્ત રૂપ હૈ અનૂપ ઉસકો  
લેવે પાય, ધ્રુ ઉસી આનંદ મેં ચિત્ત દીજિયે હારાય ॥૧૦૯॥



## ૮૭. દાદરા

જાને વિના સરૂપ કે નાહીં આરામ હૈ, પાયા હૈ જન્મ મનુષ્ય  
તો કર ચેહી કામ હૈ ॥૮૬॥ સમજા હૈ સત્ય તેને જૂઠા મુકામ હૈ,  
આખિર ફના ચે હોયગા, ખલકત તમામ હૈ ॥૮૭॥ કર વિચાર  
દેખિયે, જો મોક્ષ ધામ હૈ, દિન વ્યતીત હોગયે, અખ કુછ કયામ  
હૈ ॥૮૮॥ ખ્યાલ જાલ કા વના, યહ ચમક ચામ હૈ, ફંસિ કે  
અવિદ્યા ફંદ મે ખનતા ગુલામ હૈ ॥૮૯॥ આનન્દ ગુપ્ત હો રહા,  
અનામ નામ હૈં ધ્રુસ્વયં સરૂપ મેં ન લગતા દામ હૈ ॥૯૦॥

## ૮૮. દાદરા

મેહમાન સુખહ શામ કા, કિસ ખ્યાલ મેં ખેલે, માન કહી માન  
કુછ સામાન તો ખેલે ॥૮૯॥ ખાને કો તુઝે ચાહિયે, કયા જાય કે  
ખાયગા, ખન પડે સો હાથ સે કુછ દાન તો દેલે ॥૯૦॥ અપના  
જિસે તૂં માનતા સ્વપ્નસા જમાના, સંત વેદ કહ તુઝે ઉનકી તો  
માનલે ॥૯૧॥ કર્મ કે વસ ફંસતા હૈ ધુસતા ખુશી સે જા, ચલતે  
સમય મેં સામને, સખ કર સે કર મલે ॥૯૨॥ ધ્યાન ધર ઉસ રામ  
કા તેરી ખબર જો લે, ધ્રુ ગુપ્ત ઔર ના ખને તો નામ તો લે  
લે ॥૯૩॥

## ૮૯. દાદરા

ચલ ઉઠ સંભલ કે દેખ, કયા બાકી હિસાબ હૈ, લેખા ધની જો  
લેવેં, કયા દેવે જવાબ હૈ ॥૯૪॥ ભૂત કા યહ પૂત મૂત સે ખના  
હુવા, અપના ઇસે તું માનતા ચે હી અજબ હૈ ॥૯૫॥ ચમક દમક  
ચાંદની, બિજલી સી હૈ, છટા ખુટ્ટા હુવા સમજેં નહીં. કરતા બિજબ  
હૈ ॥૯૬॥ અકડ મકડ છોડા, જોડાં નેહ રામ સે, યહ પ્રપંચ એસા  
હૈ, જસા વો ખવાબ હૈ ॥૯૭॥ મન કાં લે તન સે ચલો સત ગુર  
શરણ મેજા, ધ્રુ ગુપ્ત મિલે મુક્ત હો ચેહી સવાબ હૈ ॥૯૮॥

## ૯૦. કંવાલી ઔર પ્રકારકી

જખ અપને આપ કો જાન્યા શહી, સખદિન દુની પલ માહીં બહી  
જખ આપહી આપ વિરાજ રહા, તખ ઔર કિસી કા તો ખોદ નહીં

પારેકા જળ માયા અવિદ્યા કા પાપ કરા તળ ક્રિયર જળ કા  
 બેઠ મિટા, સળ કરતા મિરિયા કર્મ છુટા, કહીં કરના તો હુવા  
 સફરહી નહીં પાપા અપાંગ ન યાગ સમાપી કરે નહીં સમ  
 રહીમ કા ધ્યાન કરે, નહીં તસવી માહા રો જાપ કરે, મમ રૂપ  
 અક્રિયા મેં ક્રિયા નહીં પાપા સળ ઠેલ અઠેલ મિટા ઝગડા, અપન  
 મેં જના ન કષ્ટ ઝિગડા, ભ્રમ બેઠ કા દાર દિયા પગડા, સળ  
 વેઠ કતેવ કી જાત વહી પડા નહીં શુદ્ધ મૂલ અરૂ મૂલ નહીં  
 ઉસ ગુપ્ત ગણી મેં તો બૂલ નહીં, વહાં પુન્ય અરૂ પાપ કી બૂલ નહીં,  
 તહાં એક અરૂ કોય કી ગમ નહીં પડા

## ૯૧. કંવાલી

મુઝે નિદ્રાલગી જળ સૂતા પરા, ઉસ સ્વપ્ને મેં કોય લગતરોં કિરા,  
 જળ જાગી ઉઠા તળ કેળન લગા, કહિં આયા ગયા ન વહાં હી  
 પરા પારેકા જેસે ચલને દીશા કા ભરમ દોગતય, જાના પૂરખ  
 તજકર પશ્ચિમ જાય, જળ જાનિ પરી તળ કયા ચિરમાય. જહાં  
 જાના વહાં મેં ન બૂલજરા પાપા કોઈ વાર કહે કોઈ વાર કહે,  
 કોઈ નહી કહે કો વાર કહે, કોઈ બીચ કહે કોઈ કિનાર કહે, બકિ  
 બકિ કર વૃથા હી મૂઠ મરા પાપા કોઈ દેશ કહે પરદેશ કહે, કોઈ  
 જાહી કહે કોઈ શેપ કહે, કોઈ શિવશ્ચ કહે કોઈ માંદેશ કહે, નામાં  
 કા બેઠ હું વસ્તુ જરા પડા તેસે આતમ એક હી નામ ધને.  
 કોઈ જીવ કહે કોઈ બ્રહ્મ બને, સળ બેઠ ઉપાધિ હી કૃત બને ।  
 રો ન આતા ન જાતા ન જન્મ મરા પડા

## ૯૨. કંવાલી

જેસે અપકાર મેં રજજુ પરી, તિસે કોળિ આહી કા ભરમ હુવા.  
 જળ દીપક લેકર કેળ લઈ, તળ રજજુ કી રજજુ હી સર્પ ગયા  
 પારેકા તેસે આતમ અકરતા શુદ્ધ સદા, અજ્ઞાન રો માનત કરતા  
 જુદા શુદ્ધ વેઠ રો કતાંરે બેઠ છિદયા. તળ એક અઠેલ ન જન્મા  
 મુયા પાપા જેસે સીપી મેં રૂપ પ્રકાશત હું. તેસે આતમ મેં  
 જગ ભાસત હું, અધિષ્ઠાન જ્ઞાન તે નાશત હું, રો તો તીનાહી  
 કાલમેં જંઠા કહા પાપા જેસે નાબી કમલ કસ્તૂરી આહે, વહ



મૂરખ મિરઘા દર લહે, તેસે આપહી ચેતન શુદ્ધ થાહે, જાને જોજિ  
રહા સોતો નાહિં ખુયા ॥૩૧॥ જિસ આનંદ કી તુલિ ચાહુ હુમ,  
વહુ ગુપ્તાનંદ તુહુ આપ સહી, તેરેતે બિના લવલેશ નહીં, યહ  
વેદ વિચારે ને ટેરી કહ્યા ॥૩૨॥

### ૯૩. કંવાલી

હમ ચારિઉ પુકારિ પુકારી કહે, તિસપર લી સમજત મૂઠ જુદા,  
યુગ યુગ મન્યન્તર કદપ કદપ, કહતે આવેં હમ એક સદા ॥૩૩॥  
નહીં ત્યાગે કરમ સદા કરતા, તિન કે બસિ વહે જનમે મરતા ॥  
તિસ બોઝેકા સિર પર ધરતા ॥ ફિરતા કર્મોંકી લાદ લદા ॥૩૪॥  
હમને બહુતા સમઝાયે લિયા ॥ તુહુ પાવેગા વૈસાહી જેસા ક્રિયા,  
ઈન કામાદિક કો ખાયલિયા ॥ સમઝે નહીં મસ્ત વૈસાખા ગદા  
॥૩૫॥ હમ તત્ત્વમસી સે આદિ કહે ॥ જાને જોજિ લિયે તાકે પાપ  
દહે ॥ સો ભવસાગર મેં નાહિં વહે ॥ જાને જાને તત્ત્વ દાનોં  
પદા ॥૩૬॥ જિન માયા અવિદ્યા કો દૂરિ કયા ॥ સખ ધર્મ તિનોંકા  
ચૂર ક્રિયા ॥ ઈસ વાચ્ય અરથ કો ધૂર ક્રિયા ॥ પાયા ગુપ્ત લક્ષ  
તવ હુયે મુદા ॥૩૭॥

### ૯૪. કંવાલી

જિન આતમ તત્ત્વ વિચાર લિયો ॥ તીન ઔર વિચાર ક્રિયો  
ન ક્રિયો ॥ જે જીવન મુક્ત ભયે જગ મેં ॥ વોહ બહુતે કાલ  
જિયો ન જિયો ॥૩૮॥ જૂઠે ધન હિત ઉપાય ક્રિયા ॥ ચત્તી વર પૈસા  
ન એક લિયા, જિન આતમ ધન કો ત્યાગ દિયા તો લિયા કિ લિયા  
કિ લિય લયા ॥૩૯॥ ધન દાન ક્રિયા બડા માન લિયા ॥ ઈશ્વર કા નામ  
કભી ન લિયા ॥ જે કર્મ ક્રિયા સહુ કામ ક્રિયા ॥ તો ક્રિયાકિ ક્રિયા  
કભા કિ ક્રિયા કે ક્રિયા ॥૪૦॥ પિવે ગાંજ અરસ ઔર ભાંગ કહી ॥  
કહીં પિવે શરાબરૂ દૂધ દહીં ॥ જખ પ્યાલા અમીરસ નાહીં  
પિયા ॥ તો પિયા કે પિયા કે પિયા કે પિયા ॥૪૧॥ કભી સ્યાસ  
હુયા કભી શેર હુયા ॥ યજ્ઞાદિક કરકર દેવ હુયા ॥ માનુષ તન પાકર  
શેર મુયા ॥ તો હુયા કિ હુયા કિ હુયા કે હુયા ॥૪૨॥ કભી નીચ  
કર્મ કરી ગવ હુયા ॥ યોગાદિક કર કર સિદ્ધ હુયા ॥ નર કા

તન પાકર ફેર મુયા । તો મુયા કે મુયા કે મુયા કે મુયા ॥૫૫॥  
 તન તેલ ફુલેલ લગાય લિયા । કપડે તન ધોધર પાક દુયા ॥  
 નહીં અન્તઃકરન કો સાફ દિયા । ધોયા કે ધોયા કે ધોયા કે ધોયા  
 ॥૬૧॥ જમ ધામ તજ ધન માલ જોયા । ડર ડારી સભી બન  
 મેં સોયા ॥ વહ મૂલ અજ્ઞાન નહીં જોયા । તો જોયા કે જોયા  
 કે જોયા કે જોયા ॥૭૧॥ જમ પલંગ નેવાડ પેં શયન દિયા તકિયાડ  
 બિછોના ખુબ દિયા ॥ વહ ગુપ્ત ગલીચા નાહિં દિયા । તો સોયા  
 કે સોયા કે સોયા કે સોયા ॥૮૧॥

દોહો—કરમ પરાયે આપમે, માનત સોઈ અજ્ઞાન ॥

જિસકે હૈં તિસકે લખે, સોઈ જ્ઞાની જન ॥

જ્ઞાન ઉસી કો કહત હૈં, સુનિયે કરકે કાન ॥

જેસી હોવે વસ્તુ જો, તેસી લેવે જન ॥

જિન પકડયા હૈ મૂલ કો, શાંખા તજ અનેક ॥

લાભ બહુત થોડા સરમ, કરિકે દેખ વિવેક ॥

ત્યાગ કિયા જિન એક કા, વસ્તુ ગાહી અપાર ॥

તાકો એક અનેક નહિં, ચાહે જોવો વરસ હજાર ॥

## ૯૫. કંવાલી ઓર પ્રકારકી

મજા જગ લેતે હૈં વોહી ચાર । જો હરિ નામ કમાને વાલે ટેકા  
 દયા કરિ દેતે દ્રવ્ય લૂટાય । સંગ દુરજન કા મન સે હટાય ।  
 સંગ હરિજન કે વો ચલિજાય । શુભ ગુણ ઠાઠ જમાને વાલે ॥૧॥  
 કરતે કર્મ કરેં નિષ્કામ । ચરન સે જાતે સન્ત કી ધામ । દેખતે  
 સળઘટ આતમ રામ ॥ રંગ હરિ રંગ રમાને વાલે ॥૨॥ વિન્દ્ય  
 કો દેખેં સ્વપ્ન સમાન ॥ તન કા ત્યાગ કિયા અભિમાન ॥ ન  
 કરતે કિસી જીવ કી હાન । માન મદ મોહ નસાને વાલે ॥૩॥  
 ચિત્ત સે ચિન્તા દીની ટાર । આપ ખુશ રહતે હૈ હરવાર ॥ ગુપ્ત  
 ગાવિંદ જપેં આરમ્બાર । ધ્રુવ નિજ રૂપ સમાનેવાલે ॥૪॥



## ૯૬. કવવાલી

શિવ શિવ હર હર કેા હર વાર, હર ભવપાર લગાને વાલે ॥૧૬॥  
શિવ ચિત્તા ભરમ હૈ અંગ, વામ કર ગૌરા અરધંગ ભાલે પૈથક  
શીસ પર ગંગ, ભૂષણ બ્યાલ હૈ કાલે કાલે ॥૧૭॥ ડમર તિરશ્ન  
લિયે ઝોલા, પહિને વાઘાંબર સોલા ॥ મુંડ રૂદ્રાક્ષ સોલે ભોલા,  
ધ્યાન લગાને વાલે ॥૧૮॥ આપકે કુરને કા વિસ્તાર, ઉત્પત્તિ પાલન  
ઔર સંહાર ॥ કરતા બિનુ કરતા કરતાર, પી ભંગ ભર્મ ભગાને  
વાલે ॥૧૯॥ ગુપ્ત ગિરજાપતિ ગિરિજા સાથ, બૈઠે ઈશ વિશ્વ કે  
નાથ ॥ જિન કે સુમિરન સે અઘળત, ધ્રુ, દે દર્શન દી ગનવાલે  
॥૨૦॥

## ૯૭. કવવાલી

કાશી વિશ્વેશ્વર દાતાર, દાતા જ્ઞાન કે દેને વાલે ॥૨૧॥ શિવ  
અવિનાશી તન મેં પરકાશત સખ હી કે મનમેં ॥ વહી ચીટી વહી જન  
મેં સંગ શક્તિ કે રહને વાલે ॥૨૨॥ શિવ સર્વ રૂપ હોકે, અંતર  
બાહર સખ દેખે ॥ દર્શન ભક્તોં કે દેકે, પાતી બિલ્વ કે લેને  
વાલે ॥૨૩॥ સત્ત ચિત્ત આનંદ માયા પાર, માયા કલિપત યહ  
સંસાર યોગિયોં કર તત્વ વિચાર, નૌકા ભક્ત કી બેનેવાલે ॥૨૪॥  
અંતર ગુપ્ત ધ્યાન ધારે, શિવ સંકલ્પ સહી જરે ॥ કેવલ મોક્ષ  
મૂર્તિવારે ॥ ધ્રુમુખ આપહિ કહનેવાલે ॥૨૫॥

## ૯૮. કવવાલી

બૈઠે શિવ સરૂપ હો આપ ॥ મુક્તી મોજ કે લેને વાલે ॥૨૬॥  
સંગ મેં શાંતિ મુદિતા નાર ॥ ચેતન બોધ રહે હર બાર ॥ સંસૃતિ  
મૂલ દિયા જિન ડારે ॥ વાની સત્ય કી કહનેવાલે ॥૨૭॥ જિનને  
કૈત દિયા સખ દૂર ॥ વ્યાપક બ્રહ્મ લખા ભરપૂર ॥ કીના કરતા  
મતિ કા ચૂર ॥ દાની જ્ઞાન કે દેનેવાલે ॥૨૮॥ પંથ ભૂત ત્રીન ગુન  
માહિ ॥ કિસી સે રાગ દ્રેષ કુછ નાહિ ॥ સમ દૃષ્ટિ સખ કે માહ  
ત્રીનો તાપ મિટાને વાલે ॥૨૯॥ એસે આપ તિરે તારે ॥ સખ સે  
મિલે રહૈ ન્યારે ॥ આપહી ગુપ્ત પ્રગટ સારે ધ્રુનિજ ધ્યાન લગાને  
વાલે ॥૩૦॥

## ૯૯. કંવાલી

કયા કહે' કહી ના જાય । રચના અજળ રચાને વાલે ॥૧૮૬॥ કિના  
સૃષ્ટિ કા વિસ્તાર । જિસકા નહીં પાર નહીં પાર ॥ જિસમેં  
હુય રહે નર નાર । તેરે સખ સે ઢગ નિરાલે ॥૧૮૭॥ તેને અસા  
ખેનાયા ખેલ । જિસકે પરદે અતિ કમાલ ॥ ઉસમેં કુછ ના રહે  
સંભાલ । ભૂલે ચતુર કહાનેવાલે ॥૧૮૮॥ કુછ હૈ નાહીં અતલાય ।  
ખિન રૂપ રૂપ દિખલાય ॥ સચમાન સભી ભરમાય । ખિન અંધ  
લગા દિયે તાલે ॥૧૮૯॥ કોઈ છાયા ગહને જાય । વો હાથ કભી  
ના આય ॥ ધ્રુ ખુદી સમજ રહજાય । યોં ગુપ્ત પ્રગટ ભ્રમ  
ડાલે ॥૧૯૦॥

## ૧૦૦. કંવાલી

પાય કે નર તન ઋતુ વસંત । ફાગ ખેલત હૈ ખેલન વાલે ॥૧૯૧॥  
ઉદય હુયે પૂરન પિછલે બાગ । જાસે ઉપજા હૈ વૈરાગ ॥ કિયા  
હૈ સભી જગત કા ત્યાગ । રાગ અરૂ દ્વેષ નશાને વાલે ॥૧૯૨॥  
ઉપજા સ્વયં સરૂપ કા જ્ઞાન । યાતે દૂરિ હુવા અજ્ઞાન ॥ છુટે  
હૈં સભી મોહ મદ માન । ખુલે અજ્ઞાન બજર કે તાલે ॥૧૯૩॥  
રહતે હૈં બ્રહ્મા નંદ આનંદ । કટ્ટે હૈં સભી કર્મ કે કંદ ॥ ખિલે  
રહે પૂનમ જૈસે ચંદ । દાગ સખ ઘોચે કાલે કાલે ॥૧૯૪॥ ગુપ્ત મેં  
રહતે હૈં ગર ગાય । જિસમેં નહીં જગત કા પાપ ॥ સદા પૂરન  
હૈ આપહિ આપ । મદ પી હોગયે મતવાલે ॥૧૯૫॥

## ૧૦૧. કંવાલી

શુભ કર્મ કરો નિષ્કામ રામ ભજિ ઉતરો પારા ॥૧૯૬॥ જિનોં  
કો સુમિરા હરિ કા નામ, ઉનોં કે સખ સિધ હો ગયે કામ ॥  
લગ્યા નહીં કોડી એક છદામ, છૂટિ ગયા સભી કર્મ કા ગારા  
॥૧૯૭॥ જગત મેં પાપી તિરે અનેક, લેકર રામ નામ કી ટેક ॥  
જિનોં કી નહિં ધારા કોઈ ભેખ, નામ નોકા ચઢિ ઉતરે ધારા  
॥૧૯૮॥ રસ સખ માહીં રમતા, મમાકર સખ મેં મમતા ॥ જખ  
ભાવ ઉદય હો સમતા, આપને ચિત્ત મેં કરો વિચારા ॥૧૯૯॥



ગુપ્ત પ્રગટ મેં એકહિ જાન, સીખસે ગુપ્ત ગુરુ સે જ્ઞાન ॥ અખ  
તો મત ના રહે અજાન, માન મદ તજિદો સભી વિકારા ॥૪॥

### ૧૦૨. કંવાલી

ભૂલો કે સત ચિત આનંદ રૂપ પડા હૈ જન્મ મરણ કે રૂપ ॥૧॥  
કહત હોં તોસો સખહી હાલ, ભર્મ કા દ્રષ્ટિ જાય સખ જાલ ॥  
જરા દુક સુનિયે કરકે ખ્યાલ, તુહીં ઇસ કાયા માહીં ભૂપ ॥૨॥  
સ્થૂલ સૂક્ષ્મ જેતા વિસ્તાર, સભી રહતા તેરે આધાર ॥ ઇનોં કા  
આપસ મેં વ્યભિચાર, તુંહીં તો વ્યાપિ રહા અનુસૂત ॥૩॥ જન્મતા  
મરતા હૈ સ્થૂલ. આપ મેં માનત હૈ યહી ભૂલ ॥ ઇસી સે સહતા  
હૈ બહુ શૂલ, નહીં તુઝ મેં હૈ છાયા ધૂપ ॥૪॥ તું હી હૈ ગુપ્ત  
રૂપ નિજ સાર, દેહ તીનોં કો જાનિ વિકાર ॥ પટક અખ ઇનકા  
શિરતે ભાર, જીત અખ કયોં હારત હૈ જૂપ ॥૫॥

### ૧૦૩. તરજ તાન

નિરલૈ હો ડર કો ડારી કે હંસ ખેલ ખેલ ખેલ ॥ ૧ ॥  
અખ દ્રષ્ટ સંગ કો તજના, એક નામ હરિ કા ભજના ॥ કોઈ  
મિલે આપના સજના, તિસ મેલી સે કર મેલ મેલ મેલ ॥ ૨ ॥  
ઇસ જગત જાલ કો ડારો, નિજ અપના જન્મ સુધારો ॥ અખ  
મૂલ અવિદ્યા હારો ॥ ઊર મલો જ્ઞાન કા તેલ તેલ તેલ ॥ ૩ ॥  
તન મન સે દૃષ્ટિ ઠાવો ॥ નિજ એક બૃહ્મ મેં લાવો ॥ તખ રૂપ  
આપના પાવો ॥ જન્માદિક દુખ કો પેલ પેલ પેલ ॥ ૪ ॥ યહ  
ગુપ્તજ્ઞાન ગહિ રાખો ॥ અખ સ્વાદ ઇસી કા ચાખો ॥ વાયક સે  
વાની ભાખો ॥ નિજ આતમ સુખ કો ઝેલ ઝેલ ઝેલ ॥ ૫ ॥

### ૧૦૪. તરજ તાન

ઇસ નર તન કો પાય કે ॥ કર કાજ કાજ કાજ ॥ ૧ ॥  
અખ કાજ યહી કર લીજે ॥ ઇશ્વર મેં ચિત્ત કો દીજે ॥ કલ પરસોં  
પર નહીં ઢીજે ॥ શુભ કારજ કો કર આજ આજ આજ ॥ ૨ ॥  
બહુ યોની મેં ફિરિ આયા ॥ યહ નર તન દુરલભ પાયા ॥ ઝૂઠી

है सखी माया । अथ साज लजन का साज साज साज ॥१॥  
 जिसको मानत है अपना । यह जगत रैनि का स्वपना ॥ २ ॥  
 है सखी रचना । इस ओंके जग से लाज लाज लाज ॥ ३ ॥  
 निज गुप्त रूप है सख्या । और सखी जनो कख्या ॥ स्वपने  
 में अच्छी अच्छी । इस मोह जल को त्याग त्याग त्याग ॥ ४ ॥

१०५. तरंग तान ।

दिल में वैराग जँयाय । लजिले राम राम राम ॥ टेक ॥  
 तन की ममता तजि दीजे । निष्काम कर्म को कीजे ॥ तू लज्जि  
 सुधारस पीजे । दुःख चित अपने को थाम थाम थाम ॥ १ ॥  
 करता हँकार न करिये । निज शुद्ध रूप उर धरिये ॥ सख पाप  
 धँसीसे जरिये । तू पावेगा सुख धाम धाम धाम ॥२॥ निश्चय  
 में राम हँसरे । मन हर्ष शोक मत लावे ॥ सख दैत लाव  
 छिड़कावे । ना लागे इस में दाम दाम दाम ॥३॥ यों निज  
 जन्म सुधारो । अपने को लव से तारो ॥ लख गुप्त गर्भ को  
 जारो । दू कर लीजे यह काम काम काम ॥४॥

१०६. तरंग तान ।

क्यों कसै विषय की जल । कहना मान मान मान ॥ टेका ॥  
 ये विषय सदा दुःख रूपा । तिनके संग से लव कूपा ॥ यों  
 संतभार कहूँ रूपा । मत विषय आक को छान छान छान ॥१॥  
 यह जगत जाल है स्वपना । इस में नहिं कोई अपना ॥ जैसा  
 करना वैसा करना । सुन कथा लगा कर कान कान कान ॥२॥  
 तन से सत संगति करना । मुख से हरि नाम सुमरना ॥ मन  
 निजानंद में धरना । प्रभू रूप जन जन जन ॥३॥ जम गुप्त  
 रूप को पावे । तब माया मल मिटि जावे ॥ नहिं गल वास  
 में आवे । ध्रुव तीर लक्ष में तान तान तान ॥४॥

१०७. तरंग तान ।

सत गुरु ने भारा आन । शिष्य के तान तान तान ॥ टेका ॥  
 जैसी जय ज्ञान कमाना । फिर लाया शब्द निशाना ॥ सख  
 विधि भरम स्थाना । लया आप रूप का ज्ञान ज्ञान ज्ञान ॥१॥



શિષ્ય ઘાયલ કરકે ડારા । ફિર ક્યા કરે વૈદ વિચારા ॥ કોઈ માંસ  
ખાલ નહિ ફાડી । કોઈ ઘાયલ લેવે જાન-જાન જાન ॥૨॥ ઘાયલ  
હી ઘાયલ જાને । દૂજ કોઈ નહિ પિજાને ॥ જિસ તન મેં લગી  
કરાસી । દુક ધરિ કે દેખો ધ્યાન ધ્યાન ધ્યાન ॥૩॥ જમ ગુપ્ત  
રૂપ ફે પાવે । સખ ઘાવ દરદ મિટિ જાવે ॥ શિષ્ય અપને મુખ  
સે ખોલા । છુટી ગઈ ચૌરાસી ખાન ખાન ખાન ॥૪॥

૧૦૮. તરજ તાન ।

તુઝ મેં ના મૈલ પાપ । તુહ તો સાફ સાફ સાફ ॥૩૬॥ અખ  
લાવ મિઠાવો દૂજ । કિસકી કરે સેવા પૂજ ॥જખ એક નહિ રૂપ  
સૂઝા । ફિર કિસકા કરતા જાપ જાપ જાપ ॥૧॥ સ્વપ્ને મેં દેખે  
જૈસા । ઇસકો લી જાનો તૈસા કોઈ કોડી લગે ન પૈસા । લખ  
તીનો કાલ મેં આપ આપ આપ ॥૨॥ મન રચતા ઝૂઝી રચના ।  
ઘાહે કો માનત અપના ॥ પર ધર્મ આપ ક્યો રખના । ઇસસે  
નહિ લાગે પાપ પાપ પાપ ॥૩॥ જખ ગુપ્ત ગલી મેં આવે ॥  
તખ ગુપ્ત ભેદ કો પાવે । સખ ભર્મ કર્મ જલિ આવે । ધ્રુવ કરે  
કોન કા તાપ તાપ તાપ ॥૪॥

૧૦૯. તરજ તાન ।

સત ગુરુ કે શરને જાયદે ॥ લખિ સૈન સૈન ॥૩૭॥ ખચનો  
મેં શ્રદ્ધા કીજે । સખન કે રસ કો પીજે ॥ ફિર મનન ઉસી કો  
કીજે । તખ પાવેગા સુખ ચૈન ચૈન ચૈવ ॥૧॥ ગુરુ કરે બ્રહ્મ પર-  
કાસા । જખ હોય અવિદ્યા નાસા ॥ તખ મિટે જીવ કા સાંસા ।  
રસ પ્યાયા અમૃત જૈન જૈન જૈન ॥૨॥ ઘટ અંદર હુઆ ઉજાલા  
ખુલિ ગયા ભરમ કા તાલા ॥ દરિયાવ મિલ્યા જિમિ નાલા ।  
જૈસે જલમાહી દેન દેન દેન ॥૩॥ જખ ગુપ્ત રૂપ કો જાન્યા ।  
સખ ભેદ ભર્મ કો ભાના ॥ તખ લાગ્યા લક્ષ નિશાના । ધ્રુવ  
વપય કરે નહીં નૈન નૈન ॥૪॥

૧૧૦. કકા ખતીસી વૈત સેહરફી કર્મ નાશક ।

ક, કાલ અરુ કર્મ નહિ આતમા મેં । દુક જામિ કે દેખ  
ક્યા પડા સોવે ॥ દેશ અરુ કાલ લેશ નાહિ । સદા એક

અખંડ ક્યોં ખંડ જોવે ॥ એક શુદ્ધ પરકાશ સરૂપ તેરા । ફિર  
કર્મ સે કૌન કા મેલ ધોવે ॥ ગુપ્ત નિરખન્ધ સમ્બન્ધ નાહિં ।  
ધસ કર્મ કે જલ ક્યોં ફંસા રોવે ॥૧॥

દોહા—કાકા જારો કર્મ કો, જ્ઞાન અગ્નિન કે સંગ ॥  
આતમ મેં કિરિયા નહિં, પુરણ શુદ્ધ અસંગ ॥

ખ, ખોજિ કર દેખ નિજ આતમા કો । જામેં કર્મ અરુ  
ભર્મ કા લેશ નાહિં ॥ નહીં પંચ કલેશ કી ગંધ જામેં । સુખ  
રૂપ પરકાશ લખ આપ તાહીં ॥ કોઈ જાગ્રત સ્વપ્ન નહિં નીંદ  
તામેં । નહિં વિદ્ય તેજસ્વ પ્રાણ આહી । ગુપ્તાનંદ આનન્દ દ્રુ  
અચલ હૈ તુહ । જામેં ચૌથિ અરુ પંચમી નાહિં કાહીં ॥૨॥

દોહા—ખખા ખોજ્યા આપકો, તીન દેહ કે માહિં ॥  
કર્તા કિરિયા કર્મ સખ, કુછ ભી પાયા નાહિં ॥

ગ, જ્ઞાન પરતાપ પાવે આપ તાહિં । નાહિં ઔર પ્રકાર યહ ફંધ છૂટે ॥  
ચહૈ કર્મ ઉપાસના લાખ કીજૈ । જહાં જયગા તહાં અજ્ઞાન ફૂટે ॥  
ચહી જ્ઞાન સ્વરૂપ પિછાનિયોજી । જખ દ્વૈત અદ્વૈત કા ભર્મ દુટે ॥  
ગુપ્ત રૂપ હૈ આપ અનૂપ પ્યારે । દ્રુવ પાચ કે ખખત યહ મૌજ લૂટે ॥

દોહા—ગગા ગુરુ ભવ તરન મેં, ઔર ન કોઈ ઉપાવ ॥  
છાંડો કિરિયા કીચકો, યક ચઢો જ્ઞાન કી નાવ ॥

ઘઘા, ખોજિ ધર માહિં ક્યોં બાહર જાવે. ગુરૂ વેદ સે ચાર  
તહકીક કીજે । સોખત કીજિયે જાય કે આરિકોં કી । મન વચન  
અરૂ દેહ સે પ્રીત કીજે ॥ નૈન સે ઐન સે સૈન સે પરખિ કર ।  
આપને ચિત્ત મેં જાનિ લીજૈ ॥ હૈ ગુપ્ત પ્રગટ તુહીં એક વ્યાપક  
સદા । દ્રુજાનિ કે રૂપ અજ્ઞાન છીજૈ ॥૪॥

દોહા—ઘઘા ધર ધર મેં રમા. સત ચિત આનંદ રૂપ ॥  
રંક બન્યા ભરમત ફિરે. તુહિં ભૂપન ભૂક્ષા પ ॥



જ ગંધ અરુ રસ નહીં રૂપ જામે । સ્પર્શ અરુ શબ્દ કયો પામ્યેલા  
સોતો શુદ્ધ સરુપ નહીં ગંધ માયા । મહત્તાવહકાર કયો ગામ્યેલા ॥  
જામે જીવ અરુ ઈશ કી ઠીર નાહી । સોઈ આપ મેં આપ સમાયેલા  
ગુપ્ત જ્ઞાન સે દેખિ જળ ભેદ જાને । ધ્રુવચલહે અચલ કો પામ્યેલા ॥  
દોહા—ડગાલિખ મેં ગૈય હૈ, દીખે સુને અપાર ॥

મીતર બાહર એક રસ, લિપતાં નહીં વિકાર ॥

ચ, ચમક તેરી કા પાય કે જી, યહ ચમકતા પિંડ અક્ષર  
સારા ॥ જૈસે સૂર પરકાશ તે કિરન બહુ લાસતી; તિસ સૂરતે  
નહીં કછુ કિરન ન્યારા ॥ સખ જોતિકા જોતિ હૈ આતમા તુહી  
તુહી જનતા ચાંદના અધિયારા ॥ નહીં ગૈય હૈ ગુપ્ત પરકાસ  
સખ કા કરે, ધ્રુવોખયે આપ મિદયા નહીં ન્યારા ॥૬૥

દોહા—ચચા ચામરુ હાડ કો, કરતા હૈ પરકાસ ॥

દમક પડી ફૂટસ્થ કી, જિસે કહે જીવ આભાસ ॥

જ, જાર મેં લાલ મિલિ રહ્યા પ્યારે, તિસ જાનિ કે લાલ કો  
કાઢિ લીજે । અખ ગુરુ વેદ કી કરો છાંણિ, ઘી જાનને વાલી કો  
લાય દીજે ॥ પંચ કોષ વપુ ત્રીન ચે જાર સખહી લખ, શુદ્ધ રૂપ  
નિજ આતમા લાલ લીજે ॥ સોઈ ગુપ્ત અતોલ નહીં મોલ જાક,  
ધ્રુવ કોન બજાર મોલ કીજે ॥૭૥

દોહા—છછા છાડિ અસાર કો, સાર લખો નિજ રૂપ ॥

પંચ કોષ ત્રય દેહ મેં, તુહી વ્યાપક વ્રત્ત સરૂપ ॥

જ, જાનિ કે આપને આપ કો જી, સખ જાપ અરુ તાપ કા  
કા ભર્મ માંજે ॥ ગુરુ અરુ વેદ સવ ખાંડિત હુયા, જહાં એક  
અદ્વૈત કા ઢોલ બાજે ॥ ફિર ઢોલ અરુ વાજ સખ ગાજ થકિ  
જાત હૈ, નહિં દ્વૈત અદ્વૈત કી ફોજ સાજે ॥ હૈ ગુપ્ત ગલતાન  
નહિં માન અમાન કો કહુ, ધ્રુવઅરુ અચલ તહાં સભી લાજે ॥૮૥

દોહા—જન્મ જોઈ જગત ગુરુ, જગ સે રહે ઊદાસ ॥

ગુરુ શિષ્યભાવ મિટાયકે, સખ જાને ચિદ આકાસ ॥

ઝ, ઝગડા સકલ સુકાય કે જી, હુએ અચલ નિહતાપ મુખ  
સંગ સોયા ॥ ઉસ મૌજ કી ફોજ સે શત્રુ સખ જય કિયે, વૈર  
અરુ ભાવ કા મૂલ ખોયા ॥ જાન્યા અપના આપ સખ ઠોર માહી  
તખ રાગ અરુ દ્વેષકા મૈલ ધોયા ॥ મૈંહી ગુપ્ત પ્રગટ નિરખંધ  
ખંધન નહીં ધ્રુખંધ અરુ મુક્ત સે હુયા ॥૯૮॥

દોહા-ઝમા ઝોલી પેટ કી, નહીં સેઠ સે કામ ॥

રાવ રંક નહિં દેખતે, ચહે હોય રામ કા રામ ॥

ઝ, યાદ સે વાદ ઉઠાય દીજૈ, નિરવાદ મેં સ્વાદ કો પાઈયેજી ॥  
કટે આસ કી ફાંસ હુલાસ હોયે, ફેર હસિયે ખેલિયે ગામ્હેજી ॥  
ચહે રંગ રામ સુન ખોગ માહીં, ચહે રાગ વેરાગ કો ત્યાગિયેજી ॥  
જખ જાનિયા ગુપ્ત જખ મુક્ત જીવન હુયે, ધ્રુખેલ યા ખેલિના  
લીજિયેજી ॥૧૦૧॥

દોહા-મમા યાકે ખીચ મેં તુહ તો રહે અસંગ ॥

જૈસે કાલી કામલી, ચહે ન દૂજા રંગ ॥

ઙ, ટારિકે મૂલ અજ્ઞાન સાયે, ફેરિ તૂલ સે કૌનસા કાજ  
ખિગડે ॥ જૈસે સ્વપ્ન મંઝાર લયે શત્રુ અરુ ચાર, ખુલે આંખિ  
તખ મિત્ર કહાં શત્રુ ઝગડે ॥ જૈસે ભીતિ કે શેર સે ભીતિ નહિં  
હોત હૈ, નહીં ચિત્ર કી આગિ સે તિમિર નિવડે ॥ ગુપ્ત મેં જગત  
અરુ જગત મેં ગુપ્ત હૈ, ધ્રુજગત કે માહિં ફેરી કૌન ખડે ॥૧૧૧॥

દોહા-ટાટા ટાટી ભરમ કી, સતગુરુ દર્ઘ ઉઠાય ॥

દરસાયા નિજ આતમા, પૂરણ અચલ સુઝાય ॥

ઠ, ઠીક ઠીકાને કો પાય કે જી, ફેરિ ઉલટિ અરુ પલટિ કે  
નહીં આના ॥ ઉસ ધામ કે ગામ મેં હાડ અરુ ચામ નાહીં, પૈર  
સે ગમન કર નહીં જાના ॥ ઘટ ફૂટિ કે ઘટ આકાસ જૈસે, મહા-  
કાશ મેં આગવન ગવન ભાના ॥ એક ગુપ્ત સરપ અનૂપ વહ  
ધામ લખિ, ધ્રુવ વાચ્ય કો ત્યાગિ કે લક્ષ જાના ॥૧૨૧॥

દોહા-ઠઠા ઠાકુર જગત મેં જો ઠાઠે નિજ રૂપ ॥

લક્ષ રાખિ નિજ આપકો, વાચ્ય ફટકિદયાસૂપ ॥



૩, ડારિ કે મૂલ અજ્ઞાન કો જી, જિસ મૂલ કો જાનિ લીજે ॥  
જિસ મૂલ મેં ડાર અરુ ફૂલ સખહી રહેં, સો સદા અક્ષર હૈ  
નાહિં જીજે ॥ સોતો આપના આપ હૈ જાપ કિસકા કરે, તેરિ  
કુર અજ્ઞાન યહ રાહ લીજે ॥ ધસ ગુપ્ત ગલિયાર મેં જગત  
નાહીં, ધ્રુવ જાનિકે મૂલ ફેરિ કહા કીજે ॥૧૩॥

દોડા-ડડા સખ ડર ડારિકે, નિરભય હોફર સોય ॥

મૂલ તૂલ કા મૂલ નિજ, લિયા આપકો જોય ॥

૪, ઢારિ કે પાસ જગ ચૌપટે પૈ ગુણુ ત્રીન સે આપ કો  
જુદા કરના ॥ સખ જન્મ અરુ મરન ગુણુ ત્રીન મેં હૈ, તોમૈં  
કર્મ અરુ બન્ધ નહીં મોક્ષ કુરના ॥ ગુણુ ત્રીન કે પાસ કો ઢાલ  
દીજે, અખ ગરિ પોહ્યાર નહીં જન્મ મરના ॥ હૈ ગૂપ્ત સખ  
ઠાર કહાં જાયે દૌરિ કે, ધ્રુજ્ઞાન અરુ ધ્યાન કો કહા કરના ॥૧૪॥

દોહા-ઢઢા ઢાલ બજય કે, કહે વેદ દિન રાત ॥

ગુણુ ક્રિયા સમ્બન્ધ સેં, આતમ સદા અજાત ॥

૫, અણુ અરુ મહત નહીં આતમા મેં, તિસે અનુ અરુ  
મહત યહ વેદ ગાવે ॥ તિસ વેદ કે ભેદ કો સમજિ પ્યારે, તિસે  
જાનિ સૂક્ષ્મ યહ સૈન લાવે ॥ ફેરિ એક અરુ દોય નહીં ઘના  
થોરા, નહીં થાપ અથાપ કો બતલાવે ॥ હૈ ગુલજાર કછુ પાર  
નાહીં, ધ્રુનેતિ કહિ આપહી નિત્ત ગાવે ॥૧૫॥

દોહા-ણુણા લેના દેન ન જસ મેં, ખાન પાન નહિ કોય ॥

ફેન તરંગ અરુ બુદ્ધબુદ્ધ, ભિન્ન નહીં કછુ તોય ॥

૬, ત્યાગિ કે રાગ કો જાગિ દેખો, જામે દોષ અરુ રોષ કો  
લેસ નાહીં ॥ સો તુહ આપ નિરવાણુ નહિં બાણુ માયા, દુક સમજિ  
કે દેખિયે આપ તાહીં ॥ ઔર લાખ ઉપાય નહિં પાક હોયે,  
તોમૈં શુદ્ધ અશુદ્ધ નહીં મૈત્ર કાહી ॥ તુહી ગુપ્ત પરકાસ ફેરિ  
આસ કિસકી કર, ધ્રુવજ્ઞાન અરુ ધ્યાન નહીં પરે છાંહી ॥ ૧૬ ॥

દોહા—તતા તોડો જગત સે, નાતા સભી બહાય ॥

તુંહી એક ભરપૂર હૈ, દૂજ બાવ ઉઠાય ॥

થ, થાપ અથાપ નહીં આતમા મેં, કોઈ જાપ અરુ તાપ કા  
નહીં રાસા ॥ પુન્ય અરુ પાપ નહીં સાદ અસાદ નહીં, નહીં  
રાગ અરુ દોષ કા પડા કાસા ॥ ઉલ્લુ લાખ હજાર બેકાર કદી,  
નહીં સૂર મેં અન્ધ અરુ ઉજિયાસા ॥ ગુપ્ત નિરવયવ મેં અવયવ  
કા લેશ ના ધ્રુવ ખોજિ કે દેખ હોવે હુલાસા ॥ ૧૭ ॥

દોહા—થથા થાકે ઉરે મેં, મન ખુદિ ચિત હંકાર ॥

પૈડી પંથ ન પગ ટિકે, નિરાકાર આકાર ॥

દ દૂરિ તેં દૂરિ કહ આતમા કો, સોતો આપના નૂર નહીં  
દૂર નેરા ॥ જૈસે ઉલ્લુ કી આંખી કે દોષ બલસે, પરકાસતા સૂર  
કહૈ તે અથેરા ॥ તેસે મલ વિક્ષેપ અંતર પડા જીવ કે, સોકાલ  
અરુ કર્મ સ્વભાવ ઘેરા ॥ હૈ આપ અપાર નહીં પાર વારા જિસે,  
ધ્રુગુપ્ત ને પિંડ બ્રહ્મંડ હેરા ॥ ૧૭ ॥

દોહા—દદા દિલ કે બીચ મેં, ઉમંગિ રહા દરિયાવ ॥

મન મલાહ ચલાવતા, ચલતી ખુદિ નાવ ॥

ધ, ધારના ધ્યાન કો દૂરિ કીજ, તુંહી એક અખંડ વિરાજતા  
હૈ ॥ યમ નેમ આસન ક્યોં પ્રાણ બેંચે, કરે નેતી અરુ ઘોતી  
નહીં લાજતા હૈ ॥ આતમ નિત પ્રાપ્ત સખ સહિત કિયા, નિર-  
વયવ મેં કર્મ ક્યોં સાજતા હૈ ॥ નિજ ગુપ્ત મેં યોગ કા રોગ  
લાવે, શૂ આપ અસંગ ક્યોં ભાજતા હૈ ॥ ૧૮ ॥

દોહા—ધંધા ધન ધર મેં ધના, સમઝત નાહીં મૂઢ ॥

યોગ કર્મ મેં હુંઢતા, આતમ રહે અગૂઢ ॥

ન નામ અરુ રૂપ નહીં આતમા મેં, દૈરિ અસ્તી અરુ  
ભાંતી કો કહા કહિયે ॥ ઈસ રમજ કો સમઝિ સમઝાવતે હૈં,  
આગે અંસ અરુ નામ કોઈ નહીં પાઠયે ॥ કોઈ વાચ્ય અરુ લક્ષ  
નહીં દક્ષ જામેં. સો તુંહી લક્ષ કા લક્ષ દૈરિ કહા ચહિયે ॥ હૈ ગુપ્ત  
સરુપ સખ ઠોર આપક, ધ્રૂહુંઢને વાસ્તે કહાં જઠયે ॥ ૨૦ ॥



દોહા—નના ન્યારા માહીં નહીં, વ્યાપક બ્રહ્મ સરૂપ ॥

જો સમજે ઇસ રમજ કો, તેન પરે ભવ કૂપ ॥

પ. પાપ કે આપને આપ કો છ, ઔર પાવને યોગ કોઈ નહીં  
દૂળ ॥ જ્ઞાન અરુ ધ્યાન ફેર કૌન કા કીજિયે, ધૂપ અરુ દીપ કરે  
કૌન પૂજા ॥ વહ એક અખંડ નહીં ખંડ જામેં, જખ પિંડ  
બ્રહ્મંડ મેં એક સૂઝા ॥ ગુપ્ત જ્ઞાન કો પાપ મસ્તાન હુવે, ધ્રુવનિ  
યહ મર્મ સખ કર્મ છીજા ॥ ૨૧ ॥

દોહા—પપા પાપ ન પુન્ય હૈ, નિજ આતમ કે માહિં ॥

લાભ હાનિ જામેં નહીં, અગમ અગોચર ઠાહિં ॥

ફ, ફેર હૈ આપકી ભૂલ માહીં, તિસ ભૂલ કે મૂલ કા ખોજ  
કરના ॥ ભૂલ નિજ આપકી શૂલ બહુતે સહે, યાતે લોક પરલોક  
મેં ગમન કરના ॥ કરે પુન્ય અરુ પાપ કો દુઃખ સુખ ભોગતા,  
ફેરિ ગર્ભ કી અગ્નિ કે માહિ જરના ॥ તજે કર્મ હંકાર ઉદ્ધાર  
હોવે, જપે ગુપ્ત ગોવિંદ ધ્રુવ હોય તરના ॥ ૨૨ ॥

દોહા—ફફા ફારિગ હોત હૈ, કર્મ કરે નિષ્કામ ॥

છૂટે મલ વિક્ષેપ સખ, દિલ મેં હોય અરામ ॥

ખ, બ્રહ્મ સરૂપ નિજ આતમા હૈ, તિસ આતમા સે નહીં  
બ્રહ્મ ન્યારા ॥ મિલે નીર અરુ ક્ષીર કોઈ ધીર જાને, હૈં એક  
મેં એક સખ ભેદ જારા ॥ ઘટાકાશ મહાકાશ કા દુટ નાહિં;  
ઘટાકાશ સે નહીં મહાકાશ ભારા ॥ વહીં ગુપ્ત પ્રગટ નિજ  
આપના આપ હૈ, ધ્રુવ ભેદ કો છેદ હલકા ન ભારા ॥ ૨૩ ॥

દોહા—ખખા ખાહર અંતર મેં, બ્રહ્મ આતમા એક ॥

જૈસે કુટ કાંચ કે, દ્રક દ્રક મેં દેખ ॥

ભ, ભર્મ કે ભાર કો તારિયેછ, તિસ ભાર કો ધાર ખડે  
સર્મ પાયા ॥ તીન દેહ અરુ પંચહી કોપ યે ભાર હૈ, માના  
આપકો પિંડ અરુ પ્રાણ કાયા ॥ તુહ તો શુદ્ધ સરૂપ

પરકાશ સખકા કરે, ઇસ વહન મેં અહીં કો કયોં બઢાયા ॥ ગુપ્ત  
મેં મુક્તી અરુ જગત કા મૂલ નહીં ધ્રુવધ કા મૂલ અજ્ઞાન  
ઢાયા ॥ ૨૪ ॥

દોહા—ભભા ભાર ઉતારતા કે, બૈઠો સતસંગ છાહિં ॥

પાની પિયો વિચાર કા, સર્મ રહે કોઈ નાહિં ॥

મ, માન અરુ તાન કે માહિં ભૂલા, નહીં માન અરુ તાન  
કા લેશ કોઈ ॥ કિસી લેખ અરુ મજહુબ કી રેખ જામેં નહીં,  
એસા જાનિ નિજ રૂપ હૈ આપ સોઈ ॥ સો તુહી સદા અરૂપ  
સરૂપ હોય દેખતા નહીં દેખનેહાર સરૂપ હોઈ ॥ જૈસે ગુપ્ત  
અપાર દરિયાવ માહીં, ધ્રુ લહેર કે કહર નહીં જાય તોઈ ॥ ૨૫ ॥

દોહા—મમા માયા રૂપ હૈ, દીખે સુનિયે સોય ॥

તુહ દૃષ્ટા ન્યારા રહે. દૃશ્યરૂપ નહિં હોય ॥

ય, યાર વહી દિલદાર મેરા, જો સાર અસાર બતલાવતા  
હૈ ॥ ઇસ દૃશ્ય અસાર કો દૂરિ કરકે, નિજ આપ દૃષ્ટા બતલા-  
વતા હૈ ॥ સખ જન્મ અરુ કર્મ ગુણ દોષ જેતે, ઇન સે રહિત  
નિજ રૂપ લખાવતા હૈ ॥ ધ્રુવ જ્ઞાન અરુ વ્યાન કી યુક્તિ સખહી  
કહે, છુટા ચામ ગુપ્ત ગામ બસાવતા હૈ ॥ ૨૬ ॥

દોહા—યયા યાર લખાવતે. નિજ આતમ કા ધામ ॥

છોડિ ચામ કે રાગ કો, કરો ધામ વિસરામ ॥

ર, રમા સખ ઠોર મેં સર્વ સોઈ, તિસ સર્વ સે નહીં જડ વર્ગ  
ન્યારા ॥ વૈસે દૂધ મેં ઘૃત અરૂ તિલો મેં તેલ હૈ, જલ પિંડ  
સે નહીં કછુ જુદા પારા ॥ રંઠ અરુ રાવ ફકીર ઉમીર મેં, ઉંચ  
અરુ નીચ મેં એક સારા ॥ ગુપ્ત પ્રગટ મેં ધ્રુ અરુ અચલ મેં,  
નહિ આપ સે મિલા કોઈ જુદા પારા ॥ ૨૭ ॥

દોહા—રરા રંગ લાગે નહીં, રહતા સદા અસંગ ॥

સખ વિકાર સે રહિત હૈ, ઉત્પતિ પાલન ભંગ ॥



લ, લક્ષ અલક્ષ કોઈ દક્ષ જાને, નિજ આપને માહિં નહિં  
પાવતા હૈ ॥ સ્થાન અરુ પાન નિત ધ્યાન કરતા, નહિં સોવતા  
જાગતા ધાવતા હૈ ॥ કોઈ જીવ અરુ ઈશ અજ્ઞાન નાહીં, જખ  
જ્ઞાન શમશેર હલાવતા હૈ ॥ એસા ગુપ્ત નિજ આપ નહીં માપ  
અમાપ, ધ્રુવ જાપ અજ્ઞાપ નહિ પાવતા હૈ ॥ ૨૮ ॥

દોહા—લલા લાખ કિરોડ કી, પલ મેં હોવે રાખ ॥

નિજ આતમ અજ્ઞાન તેં, કરૈ જુઠ પરલાપ ॥

વ. વહી હૈ તુહીં દુક સહી કીજૈ, જૈસે સ્વપ્ન કે માહિં નહિ,  
ઔર દુઃખ ॥ સ્વપ્ન કે દેવકી સેવ બહુ કરતે હૈં, ખુલી આંખિ જખ  
દેવ ઔર નહીં સૂઝા ॥ તેસે આપ મેં પુન્ય અરુ પાપ કો કલિપ-  
કરે બના દેવ કા દાસ કરે સેવા પૂજા ॥ ઉસ ગુપ્ત ગલિયાર મેં  
દેવ પૂજા નહીં ધ્રુવ એક આપ હૈ કોઈ નહિં બૂઝા ॥

દોહા—વ વાહી કો ધન્ય હૈ, દેવ લખે નિજ આપ ॥

દેવાદાસ ઝગડા ચુકા, તખ મિટા ભેદ કા પાપ ॥

શ. સ્વપ્ન સમાન જહાન સારા, નાના રંગ અરુપ હોય  
ભાસતા હૈ ॥ રૂહીં ચતુર મુખ હોકે રચે જગત કો, કહિં પાલ  
સંહારકર શાસતા હૈ ॥ નિજ ગુપ્ત સરુપ અનૂપ માહીં, ધ્રુવ આપહા  
રૂપ ઉભસતા ॥ ૩૦ ॥

દોહા—શશા સકલ શરીરમેં, કરૈ આપ પરકાશ ॥

બ્રહ્મરૂપ ફૂટરચ તુંહ, નહીં જીવ આભાસ ॥

પ. ખાન અરુ પાન કે બીચ માહીં, પડા સોવતા આપકો  
નાહિં જાને ॥ વાચ્ય અરુ લક્ષ કી બખર નાહીં, તિસ વાચ્ય કે  
ધર્મ કો આપ માને ॥ વાચ્ય અરુ વાચકા ધર્મ તોમેં નહીં, લક્ષ  
તુહી આપ કયા ના પિછાને ॥ સો ગુપ્ત ચેતન હૈ સાર તૂહીં,  
અસાર જડ દેહ ધરુ ભર્મ ભાને ॥ ૩૧ ॥

દોહા—પપા ખાલી મત રહો, ભરો બ્રહ્મ નિજ ખેપ ॥

ઠરિ ભક્તી કર્મ નિષ્કામહો, તખ છૂટે મલવિક્ષેપ ॥

અ. મેરે હા માજકરે સ્થાલ હયોં હોત હૈ, ઉમ ધાલ હા ગાજ  
પાલી રહા બારી ॥ જળ સ્થાલ હા બાવત હૈં ધાલ હા દાવ હૈ,  
મુખ મારિ ચપિર ખરિ હરે જ્યારી ॥ બલ આપના હેરે ઉહ સેર  
હૈ કેમની. કાલ પીજરા તોરિ હરિ મોહ ત્યારી ॥ મુખ આતમા  
અલ સરપ બનો પ્રબલિ કે કાલ શિર ચાપમારિ ॥૩૧॥

દોહા—મર્યા સાંઈ આપતુહ, બનિ રહા બૂલમેં છવ ॥

જળ મુરુ વેદ બલ પાયકે, સમઝ આપકો સિવ ॥

હ. હૈનિયા આપ તબ તાપ ત્રય સાર હોય. ન્દાય જ્ઞાન કે નીર  
અજ્ઞાન પોષા ॥ લોક અરુ વેદ મે મેલ માયા મૂરા, નિજ મુદ  
સરપ મન તાર પોષા ॥ નિજ તાર મે સારા સારે જાન્યા. નિજ  
મારે હો જાયા અમારે પોષા ॥ મુખ મેં મુખ અરુ જગત સારા  
જામે, પ્રભાવ મેં આપ મુખ મેં મોષા ॥૩૨॥

દોહા—હાલા હેવ ન મુદજુ હૈ, નાકોઈ કાજ અકાજ ॥

લોક વેદ અરુ બેદ નહીં, નાકોઈ કાજ અકાજ ॥

જ. લોક અરુ લોક અલોક સારે, મન નીર જ્યોં પીરકો  
આલના હૈ ॥ સત ૧૫ તો અવન્ય અપરિદ હૈ, મુજ સત્ય સે  
અર્થ ઉજવના હૈ ॥ બને બર્મ કો બર્મ જળ સર્મ નહી હોત  
હૈ, અવ અવના આપ હુકામત હૈ ॥ મુખ હૈ ॥ અરુ મુદી  
મુખ હૈ, કામાલ હોય આપ નિચામત હૈ ॥૩૩॥

દોહા—સજા છાયા જગત મેં, આપક અલ સરપ ॥

હપમા દોલેઝીનકી, કાલ નહીં રંક નહીં બૂપ ॥

અ. તીનોંહી તાપો કાર પીના. મુરુ જ્ઞાન કુનેન જળ ઘોરિ  
ખાર્ક ॥ અવો અવલ નિહાપ હિરે અપ કિસકા હરે સચ્ચની  
મૂરિ વા લોરિ ખાર્ક ॥ હરે દાલ મેં મન દરજ્યાલ મેં મસ્ત,  
હરે માલમેં મસ્ત એક મસ્તી બર્ક ॥ હૈ મુખ નિરખ નહીં  
મોહ સમજન્ય હોઈ, મુ જ્ઞાન અરુ પ્યાન કી ઘર લર્ક ॥૩૪॥

દોહા—ત્રતા તીનોં કાલ નહિ, નાહીં તીનોં તાપ ॥

તીન દેહ નહિ અવસ્થા નહિ તીન છવ કા પાપ ॥



ज्ञान का ज्ञान अरु ध्यान का ध्यान है, ज्ञान का ज्ञान  
ब्रह्मन सारा ॥ एव का एव है सीव का सीव है, अन्न का अन्न  
छु नाहि न्यास ॥ अपना आप है पुन्य नहि पाप है, जप  
अजप नही मधुर आस ॥ गुप्त से गुप्त प्रगर से प्रगर  
ध्रुव से ध्रुव सलता अपारा ॥३६॥

दोहा-ब्रह्मा ज्ञान सङ्ग ते, नही रूप अरूप ॥

मे तो अपना आप है, किसकी दीने छप ॥

मोहरा- ठका वर्ण अतीस, बाल सेहरही पैतकी ॥

लिमै लन्द छतीस, पिओ सजन अति प्रीतयुत ॥

१११. गजल हकीकी

छाह सज मिलन की आसा, कदा पर मिलोमे जार्ज ॥  
मिलनकी के नही हज, आन यदु समजले जार्ज ॥ २६ ॥ मिलन  
सज हैन माही है, यदा पके हैन नही जार्ज ॥ हजो नही कदा है  
प्यारे, आन यदु वेद ने जार्ज ॥ १ ॥ तुझे यदु जर्म करे जार्ज,  
जे शिन मे है अपलता ॥ दिया शक्ति नही जिसने, ज्ञान-  
शक्ति ही अनलार्ज ॥ २ ॥ कने हज विमान जल का जेर, न  
पावे हज माही जार ॥ समज तुज के नही छु और, तेरा  
यदु जर्म हजार्ज ॥ ३ ॥ जो सज जर्म का आजार, तेरा है रूप  
अपरपार ॥ समजले गुप्त से वेदान, तुझे वेदान अनलार्ज ॥ ४ ॥

११२. गजल

स्वर्ग पाताल अनार मे, यदु हज आपन निहारा है ॥  
अर्थ ओडेव दश हज जिनि, यदु हज मेरा पसार है ॥ २७ ॥  
मैदी दो दीन मे रहता न मुज से हज निहारा है ॥ मैदी सज  
हीर मे व्यापक, नही हज आन पाना है ॥ १ ॥ मै ही रचना  
हज हज अन्न, मैदी करेता हज सदाना ॥ मित्रा ज्यों हज माही  
धी, सभी यदु अन्न सारा है ॥ २ ॥ रन्धा यदु व्यास मुजही  
के, सभी मेरे आचारा है ॥ अरम मे जल न प्यारे सभी

મૂઠા બબરા હૈ ॥ ૩ ॥ મૈંહી હું સત ચિત આનંદ રૂપ, યહ કલ  
આલમ બે ધારા હૈ ॥ ગુપ્ત મમ રૂપ. મેં એસે રજજૂ સે ન  
સર્પ ન્યારા હૈ ॥ ૪ ॥

## ૧૧૩. ગજલ

બિના નિજ રૂપ કે જામેં, નહીં આરામ દારી હૈ ॥ યતન-  
કર આપ કો જાનો, તલી છુટે બિમારી હૈ ॥ ૧ ॥ આપકો  
માનતા કરતા, ઇસી સે દુઃખ કો ધરતા ॥ તલી ફિર જન્મતા  
મરતા, ભરમ કા ફેર ભારી હૈ ॥ ૨ ॥ જીવકર આપ કો જાને,  
પડે ફેર ફેદ કે ખાને ॥ લગ્યા હૈ અધો કો જાને, ભુગતા બહુત  
ખવારી હૈ ॥ ૩ ॥ બડ્યા અજ્ઞાન કા આઝર, ધરયા ત્રય  
દેહ કા સિર ભાર ॥ ચામ મેં ફંસિ હુયા ચમાર, ચાહ ઘર મેં  
ચમારી હૈ ॥ ૪ ॥ લેવે સતસંગતી કી ઝોટ, લગે કિસી મુર-  
શિદોં કી ચોટ ॥ તલી સખ દૂર હોવે ખોટ, રેખ કર્મોં કી મારી  
હૈ ॥ ૫ ॥ હરી કી ભકતી કો ધારે, નીચ સે ઉંચ કર ડારે ॥  
પાપ સખ જન્મ કે જારે, હોય શુદ્ધ બ્રહ્મચારી હૈ ॥ ૬ ॥ સુને  
સત ગુરૂ કે મુખ સે જ્ઞાન, રાત દિન કરે તિસકા ધ્યાન ॥ તલી  
છુટે સલી મદ માન, અવિદ્યા ડોંક જારી હૈ ॥ ૭ ॥ બજે જખ  
જ્ઞાન કે બાજે, કામ અરૂ ક્રોધ સખ ભાજે ॥ શીલ સતોંધ આ  
ગાજે, જ્ઞાન કી મહિમા ન્યારી હૈ ॥ ૮ ॥ મારી ગુરૂ જ્ઞાન કી  
ગુપ્તી, ધરી હૈ હાથ પર મુકતી ॥ રહી નહીં જનમનકી શકતી,  
તલી સોવે મુખારી હૈ ॥ ૯ ॥

સોરઠા—નિજ જાન્યા નિજ રૂપ. પાર હુયે ભવ સિંધ સે ॥

વ્યાપક બ્રહ્મ સરૂપ. છૂટિ ગયે યમ કુંદ સે ॥

## ૧૧૪. ગજલ

નહીં તકદીર કે આગે, કોઈ તદબીર ચલતી હૈ ॥ કરો ચહે  
લાખ ચતુરાઈ એક દિન મૌત ગિલતી હૈ ॥ ૧ ॥ હુયે બડે સિદ્ધ  
અરૂ રયાને, કાલ વહ દોનો કો જાને ॥ ચોટ લાવે થે નિશાને,



મોત તિનકો ભી ગલતી હૈ ॥ ૧ ॥ વૈષ મન્વંતરી હોઈ, નહીં  
જડ રોગ હી ખોઈ ॥ કર્મ ભુગતે હૈ સખ કોઈ, ઈસ નીતિ ન  
હિલતી હૈ ॥ ૨ ॥ હુયે હૈ જગત મેં ઓતાર, દુઃખ તિનકો  
સહે અપાર ॥ ઓર ઠારે કોન નર નારિ, કર્મ કી બેલિ ફસતી  
હૈ ॥ ૩ ॥ જિનોં કો કાલ વશિ કીના, કૈદ અપની મેં કર લીના ॥  
ધોખાતિન કો ભો દેદીના, વકત પર પડી ગલતી હૈ ॥ ૪ ॥ હુયે  
બાલી બલી મુકતે, કિ બલ વહ ચોગુના રખતે ॥ કિયે હૈ કાલ  
ને મુકતે, અગ્નિ ચહું ઓર જલતી હૈ ॥ ૫ ॥ યોગ કી મુક્તિ  
કો જાને, સમાધી કાલ બહુ ઠાને ॥ પડે હૈ કાલ કે પાને, પકોડા  
તેલ તલતી હૈ ॥ ૬ ॥ શીસ પર પૃથ્વી ધરતે, ઉત્પત્તી પાલ  
સંહરતે ॥ અન્ત મેં વેભી સભી મરતે, ઓર કી કહા પિલતી  
હૈ ॥ ૭ ॥ ગુપ્ત આતમ હૈ અવિનાશી, પડે નહીં કાલ કી ફાંસો  
કાલ તિનોં પરકાશી લિખાવટ તિસ સે ખિલતી હૈ ॥ ૮ ॥

### ૧૧૫. ગજલ

લખ્યા કિસ ખ્યાલ મેં ખેલે, તુઝે કયા મસ્તી છાઈ હૈ ॥  
કાલ કા છુટિ ગયા ગાલા, તોપ તેરે સિર પૈ લાઈ હૈ ॥ ૧ ॥  
કરે કલ્યાન્ત કા અભિમાન, સુખહ વા શામ કા મેહિમાન ॥ તેરા  
તો કહા હૈ ઉત્તમાન, બડોં પર ઘાત લાઈ હૈ ॥ ૨ ॥ બચે નહિ  
રાના ઓર રાજા, સભી હૈ કાલ કા ખાજા ॥ બજે તિહું લોક  
મેં બાજા ફિરી તિસ કી દુહાઈ ॥ ૩ ॥ લોક અરુ લોકોં કે પાલી,  
કરત હૈ સખહિ કો ખાલી ॥ સંગ મેં રહતી હૈ કાલી, કરે સખ  
કી સફાઈ હૈ ॥ ૪ ॥ ખેલ કી બાજી જિન લાઈ, જગત ચોપટ  
કો ખિજવાઈ ॥ દિશા હૈ ચાર ઘરવાઈ, પાશા અહ નિશિ બનાઈ  
હૈ ॥ ૫ ॥ ચાર ખાની સભી ગોરા, તિનોં પર મારતે ચોરા ॥  
બચત નહિં છોરા અરુ મોરા, ચટની સખ કી બનાઈ હૈ ॥ ૬ ॥  
કાલ સે વહી બચતા હૈ, રૂપ અપને મેં જાચતા હૈ ॥ નહીં ઉસે  
કાલ કા કુછ ભય અવિધા ધો બહાઈ હૈ ॥ ૭ ॥ કિયા કર્મોં કા  
તિસને ચૂર, લખ્યા હૈ આપ કો ભરપૂર ॥ વરસતા જિનકે મુખ પર  
નૂર, મુદત તિસકી કમાઈ હૈ ॥ ૮ ॥ કાલ પરઘટ કો ખાતા,

હૈ, ગુપ્ત દૂંડા ન પાતા હૈ ॥ વેદ સૂક્ષ્મ બતાતા હૈ, સૈન તૂઝ કો  
લખાઈ હૈ ॥ ૮ ॥

## ૧૧૬. ગજલ

ગતી હૈ કર્મ કી રહી, બિના બોધ ન ભગતી હૈ ॥ અકલ  
કોઈ કામ નહીં દેતી, વખત પર આય જગતી હૈ ॥ ૧૬ ॥ ધર્મ  
નીતિ કો પલિયાને, ભવિષ્યત કાલ કી જાને ॥ પકડિ કે તિનકો  
બી તાને, સભી કે પીછે લગતી હૈ ॥ ૧૭ ॥ હુયે નલ, રામ, રો  
આદિ, યુધિષ્ઠર ધર્મ કે વાદી ॥ કહે હૈ કયા તિલક, અરુ ગાંધી  
તિનો કી કહા શક્તી હૈ ॥ ૧૮ ॥ ભાવી કો જાનતે ભીષમ, અકલ  
જિનકી નહીં કુછ કમ ॥ પડા હૈ તિનકો આકે ગમ, સદા વ્યાધ  
જયોં તકતી હૈ ॥ ૧૯ ॥ ગુપ્ત આતમ રહે નિરખન્ધ, નહીં કોઈ કર્મ  
કા હૈ ફંદ ॥ સદા વલ રહતા હૈ આનંદ, ભર્મ સે પડી ગલતી હૈ ॥ ૨૦ ॥

સોરઠા જિનકો કહે અવતાર, ભાર ઉતારે જગત કા ॥

તિન પર ભી પડી માર ઓર કિસકી કયા ચલે ॥

બચા ન તિસ તેં કોય હોનહાર બલવાન હૈ ॥

નિજ પદ સુર્ત સમોય, જિસ કરકે કારજ સરે ॥

## ૧૧૭. ગજલ

દશહરા કેબલો દિલમે નેમકે નેવરતે કરકે ॥ શીલ સંતોષ  
કો ધારો, કામ ઓર ક્રોધ પરિહર કે ॥ ૨૧ ॥ જગત સે નાતા સખ  
તોડ, ચઢો અખ જ્ઞાન કે ઘોડ, ॥ નિશાના નેમકા જોડ, લગા  
હરિ હાથ પે ધરિકે ॥ ૨૨ ॥ સભી શુભગુન કે લે હથિયાર, કરો  
અખ દુશમનોં પૈ વાર ॥ લગાવો એક હરિસે તાર, લડો ઇસ  
મારચે ઝરિકે ॥ ૨૩ ॥ જાગતે સૂરમે રણમે મરનકા શોચ નહીં મનમે  
નહીં અભિમાન હૈ તનમે હટે સંગ્રામ તે મરિકે ॥ ૨૪ ॥ શૂર ક્ષત્રી  
વહી જગમે ચલત હૈ વેદકે મગ મે ॥ આસ નહીં કરત હૈ સંગ  
મે, વહી દિખલાતા હૈ તિરકે ॥ ૨૫ ॥ છુટયા હૈ જ્ઞાન કા ગોલા  
ઉડા અજ્ઞાન કા ટોલા ॥ કિયા દુશમન કા સિર પોલા, મારતા



તોપ ભરભર કે ॥પા॥ ગુપ્ત નહીં ધર્મ ક્ષત્રી કે, કહે છે ગીતાને  
નીકે ॥ કાયરોં કે લગે છે ફીકે, ભાગતે રણસે ડરે ડરિકે ॥પા॥

## ૧૧૮. ગજલ

મુઝે જગ ટોહ લિયા સારા, લાલ ઘટ માહિં પાયા હૈ ॥  
ફિરા બન પરવતોં માહીં, પતા નહીં જિસકા ભાયા હૈ ॥ટેકા  
મિલે જબ સત ગુરુપૂરે, લાલકા ભેદ લાયા હૈ ॥ ગિરેહ કે  
ખોલકર પરખ્યા, તલી આનંદ છાયા હૈ ॥૧॥ ભયે ધનવાન  
તવહી સે, જભી યહ માલ પાયા હૈ ॥ દરિંદ્ર દુખ સખ નાસે,  
કંગાલી કે બહાયા હૈ ॥૨॥ નિરખિ તિસ લાલકી છવિકો, ન દૂખ  
ઔર પાયા હૈ ॥ ઔર સખહી લગે નકલ, અસલી ઘટમેં ઠહ-  
રાયા હૈ ॥૩॥ જિસે હમ જાનતે થે દૂર, વો પાયા સખહિ મેં  
ભરપૂર ॥ ચરેં અખ મોજ અપની મેં ગુપ્ત ને એસે ગાયા હૈ ॥૪॥

## ૧૧૯. ગજલ

તમે સખ જ્ઞાન ચતુરાઈ, ખખર લખ મહલ કી ભાઈ ॥  
ખાત યહ વેદને ગાઈ ઝૂંટ ઇસમેં નહીં રાઈ ॥ટેકા॥ યહ નહીં યહ  
નહીં હોઈ .....સત્ય યાતે પરેસોઈ ॥ અપના રૂપ હૈ વોહી,  
ઝૂંઠ ઇસમેં નહીં પાઈ ॥૧॥ જિરમેં નહીં સાધ ઔર સાધન,  
નહીં કોઈ વાદ ઔ વાદન ॥ નહીં કોઈ રાધ ઔ રાધન લક્ષણ  
વૃત્તિ ઠહરાઈ ॥૨॥ લખ્યા જવ આપ અવિનાશી, કટી સખ કાલકી  
ફાંસી ॥ જગત ખેશક કરે હાંસી, પ્રતિ જબ ઉલટિ કર લાઈ ॥૩॥  
કોટિ પરકાશ સૂરજ ચન્દ, જહાં પર આપ ગુપ્તાનન્દ ॥ દેખિ  
છવિ ભયે હૈ આનંદ, જહાં કોઈ આવે ના જાઈ ॥૪॥

## ૧૨૦. ગજલ

ભક્તજન જગત મે આયે ધર્મ સંતોષ ધારા હૈ ॥ ખડગ  
જિન ભક્તિ કા લીના, કામ ઔ ક્રોધ મારા હૈ ॥ટેકા॥ કાટિ ઈર્ષ  
આસા ઔ તૃષ્ણા, લોભકા મૂલ ફાડા હૈ ॥ નિરભય હો રહત હૈ  
જગમેં સલી ડર દૂર ડારા હૈ ॥૧॥ વનજ હૈ ભક્તિ કા જિનકે  
ઔર નહીં કે વેપારા હૈ ॥ આસ સખ લોકકી ત્યાગી, એક પ્રભૂકા

સહારા હૈ ॥૨૧॥ ઉઠતે યૈઠતે એક રામ, રહા નહીં ઔર સે કોઈ  
કામ ॥ મસ્ત રહતે હૈં આઠો યામ, સદા સુખ રૂપ ધારા હૈ ॥૩૧॥  
લગા હૈ એક હરિ સે તાર, જુઠા સમજતે ઘરમાર ॥ ધ્રુ નિશ્ચય  
ભયા જિનકા, હુમસે કછુ નહિં ન્યારા હૈ ॥૪૧॥

૧૨૧, ગજલ

નહીં કિસી ભેષકે યોગી, નહીં કોઈ પંથ ધારા હૈ ॥ તોડ-  
દિયા જગતસે નાતા, ન યહાં પર કુછ હમારા હૈ ॥૨૬॥ પંથ સે પંથ  
અલસહિદા, પડા હૈ ભેષાં મેં વેદા ॥ હુમો યહ દેખકર સોદા,  
પંથ અપના સિંધારા હૈ ॥૧૧॥ ટુટી સખ મજબૂકી ફાંસી નવસતે  
મથુરા ઔ કાશી ॥ હુમી ઉસ ધામ કે વાસી, અન્ધ નાહીં ઉજારા  
હૈ ॥૨૧॥ ન કોઈ વર્ણ હૈ મહારા, હુમેં સખ આસર મજારા ॥  
છુટી જખ જ્ઞાનકી ધારા, વહાં સખ વેદ ભારા હૈ ॥૩૧॥ ગુપ્તધન  
પાયા હૈ જખ સે, હુમી આનન્દ હૈં તખસે ॥ મિત્ર કા ભાવ હૈ  
સખસે, દશોં દિશિ મેં ઉજારા હૈ ॥૪૧॥

૧૨૨. ગજલ

ધુતી જિન વાસના મનકી, વહી અવધૂત જગમાહી, ચરત હૈ  
મૌજ અપની મેં, વિધી નિષેધ કછુ નાહીં ॥૨૬॥ કટા સખ મોહ  
કા ફંદા, જાન્યા જખ આપકે તાંઈ ॥ જગત મેં કો નહીં ધંદા  
અતિ જખ લીનહો જાઈ ॥૧૧॥ કટી સખ આસકી ફાંસી, લખા  
જખ આપ અવિનાશી ॥ નહીં કોઈ દાસ અરુ દાશી નહીં ધન  
માલ પ્રભુતાઈ ॥૨૧॥ ખસે નિજ રૂપમેં જાઈ મહુજખ દૂકાન સખ  
ઢોઈ ॥ જિનહેં શંકા નહીં રાઈ, કહીં સો આવે ના જાઈ ॥૩૧॥ તત્વ  
જિનકો લખ્યા એસા, ન રખતે કૌડી અરુ પૈસા ॥ ગુપ્ત ધન  
પાયા હૈ એસા, ગોવંધન ખચે અરુ ખાઈ ॥૪૧॥

૧૨૩. ગજલ ।

સોઈ હૈ ફકર જગ માહી, ફિકર જિન મૂલ સે ખોયા ॥  
ઉલટ કર સર્વ સે વૃત્તી, અપને આપ કો જોયા ॥૨૬॥ ફે કરકે  
સદાહી ફાકા, તોડા અજ્ઞાન ગઢ વાંધા ॥ નહીં કોઈ સાક અરુ  
સાખા, સભી ઉરડાંર કે સોયા ॥૧૧॥ કે કરે કરકે કાટ દઈ આસા



ઉપજા નિરવેદ જો ખાસા ॥ ક્રિયા હૈ બ્રહ્મ મેં ખાસા, હોના સો  
આનિ કર હોયા ॥૨૧॥ રે કરકે રહમ કો ધારા, કામ ઔ ક્રોધ  
સખ મારા ॥ મૂલ સખ જગત કા જરા, જીવ કો બ્રહ્મ મેં પોયા  
॥૩૧॥ વિધિ નિવેધ નહીં જિનમેં, વિચરતે મૌજ અપની મેં ॥ ધ્રુવ  
પાયા ગુપ્ત તનમેં, મૈલ અજ્ઞાન સખ ધોયા ॥૪૧॥

૧૨૪. ગજલ ।

મિલો દિલદાર સે પ્યારે, જહાં ઉલકત હો રહને મેં ॥૨૬૧॥  
તજો સખ જગત કી ચારી, કરો સ્વયં સરૂપ કી ત્યારી ॥ નહીં  
તો હોયગી ખવારી, વિધોગે તીર પૈને મેં ॥૨૧॥ જિનોં કો કહતે હૈ  
મેરા, તિનોં મેં કો નહીં તેરા ॥ હોગયા જંગલ મેં ડેરા, સમઝ  
દુક અપને જોહને મેં ॥૨૧॥ સમઝ દુક આપ અપને કો, તજો સખ  
જગત અપને કો ॥ લગો યહ જાપ જાપને કો, આજ દુક  
મેરે કહને મેં ॥૩૧॥ સજન પરિવાર સુત દારા, ઉસી વે રોજ હો  
ન્યારા ॥ વજે શિરકાલ નકારા, દેખ દુક મન કે અયને મેં ॥૪૧॥  
ન કિજે રાજ કી મસ્તી, કિ સિર પર મૌત જો હંસતી ॥ છુટે  
સખ ઘોડા અરુ હસ્તી, ઐઠ ચલ કાઠ મ્યાને મેં ॥૫૧॥ પલક મેં  
છૂટિ જા ડેરા,....હુકમ કોઈ માને ના તેરા ॥ હો જાના ગુપ્ત કા  
ચેહરા, યહી કિસ્તી તિરાને મેં ॥૬૧॥

૧૨૫. ગજલ

જરા દુક ખોજ તન મન કો, તુહી હૈ આપ અવિનાશી  
॥૨૬૧॥ જિસે તું જાનતા હૈ દૂર, સોઈ હૈ સકલ મેં ભરપૂર ॥  
સમઝ દુક વહી તેરા નૂર, કરે હૈ કિસકી તલ્લાશી ॥૨૧॥ બસી  
હડ ચામ કી નગરી સોઈ જડ જાન તૂં સગરી ॥ પટક દે ભરમ  
કી પગડી, તુહી હૈ સખ કા પરકાશી ॥૨૧॥ તુહી હૈ રામ ઔકૃષ્ણ  
તૂ હી હૈ બ્રહ્મા ઔ વિષ્ણુ ॥ તુહી વહ ખોજતા જિસનૂં તુહી હૈ  
ઈશ કૈલાશી ॥૩૧॥ કહા દુક માનલે મેરા, તજો સખ દૂર ઔ  
નેરા ॥ બહુરિ નહીં હોયગા ફેરા, છુટે યમરાજ કી ફાંસી ॥૪૧॥  
જિસે તૂં ખોજતા જગ મેં, સોઈ ભરપૂર હૈ સખ મેં ॥ ભુલા  
ક્યા જગત કે મગ મેં, ફિરે ક્યા દ્વારિકા કાશી ॥૫૧॥ નહીં તલ-

માસે સૂરજ ચન્દ, તુહી હૈ આપ ગુપ્તાનન્દ ॥ જહાં પર કો નહીં  
દુખ દ્વન્દ, હોજા ઉસ ધામ કા વાસી ॥૬॥

૧૨૬. ગજલ ।

બિના તન આપ તન ધારી, ઉધર ક્યા હૈ ધધર દેખો ॥  
સભી સૃષ્ટી હૈ દૃષ્ટી સે, ચહેં તુમ વેદ કો દેખો ॥૭॥ જલ્લી  
દૃષ્ટી કો દૈલાવે, તભી સૃષ્ટી નજર આવે ॥ ફિરે દૃષ્ટી નસે સૃષ્ટી  
ચે કોતુક આપકા દેખો ॥૮॥ જો ચેતન ચેતતા જાવે, જિસે ચેતે  
સો બન જાવે ॥ સમાવે આપકે માહીં, સ્વતઃ નિજ રૂપ કો  
દેખો ॥૯॥ સર્વ વ્યાપી હૈ પર માતમ, ઉસી કો કહતે હૈં આતમ  
શુદ્ધ આનન્દ અવિનાશી, કિ અનુભવ કરકે તુમ દેખો ॥૧૦॥ ગુપ્ત  
જાને સે હો મુક્તી, બતાતે સંત યોં મુક્તી ॥.....ધ્રુવ અન-  
મોલ અવસર કો, નિગેહ કો ખોલ કર દેખો ॥૧૧॥

૧૨૭. ગજલ ।

ઉદય હુઆ જ્ઞાન કા ભાનૂ, ઉડા અજ્ઞાન અન્ધિયારા ॥  
સમાધી શુદ્ધ મેં લાગી. ભયા ઘટ માહિં ઉજિયારા ॥૧૨॥ દેખ્યા  
નિજરૂપ તમ્માશા, ભરમ કા ભૂત જગ નાશા ॥ મિટા શશિ મન  
કા પરદાશા, કિપગયે ઇન્દ્રિગણ તારે ॥૧૩॥ છિયે શિશુમાર પંચોં  
પ્રાણુ, છુટ્યા સખ દેહ કા અભિમાન ॥ ભઈ હૈ તસ્કરોંકી હાન,  
કામ ઓ ક્રોધ સખ મારા ॥૧૪॥ કરતે હૈં ભેદ કા નિત ગાન.  
સોઈ ઉલ્લુ કો નિશિ મેં જાન ॥ ન હોવે રાત માયા હાન, ધરા  
શિર ભેદ કા ભારા ॥૧૫॥ અંધેરી રાત્રી મંઝાર, જગાવે વેદ ચૌકી-  
દાર ॥ સમજલે ગુપ્ત કી યહ ચાર, સોવે ફિર ચૌકી રખવાર ॥૧૬॥

૧૨૮. ગજલ ।

દિવાલી દેખલો દિલ મેં, કિ દિપક જ્ઞાન કા બાલો ॥ મિટા  
કર આશ ઓ તૃષ્ણા, કામ અરુ ક્રોધ કો જાલો ॥૧૭॥ મૈલ વિશ્લેષ  
સખ ધોવો, સફાઈ મહલ કી કિલે ॥ ગલતી ઇસમેં નહીં દીજે  
મૈલ સખ મહલ કા ગાલો ॥૧૮॥ કરો અન્તઃ કરણ દીપક, પ્રીતિ  
કે તેલ કો ભરના ॥ વત્તી અખ ગૈરો નિષ્કર્મા, હોય મન્દિર મેં  
ઉજિયાલો ॥૧૯॥ કરુણા મૈત્રી મુદિતા, કરેં મન્દિર મેં શુભ ગાના ॥  
મિઠે સખ આના ઓર જાના, શીલ સન્તોષ કો પાલો ॥૨૦॥ ઇસી



काया दिवाली में गुप्त ओक गायधन पूजा ॥ भिदा के भाव सभ  
हूण, तिमिर अज्ञान को दालो ॥४॥

१२८. गजल ।

जगत से तोड यारी, लग्या दिलवर में दिल जिनका ॥  
धान देकर सुनो प्यारे, कहत हूं हल सभ तिनका ॥१॥ जैसे  
आशिक हुये मजनू धरक लैली से लाया है ॥ तल्ली लैली को  
पाया है, झिझिर नहीं कीन जलने का ॥२॥ धरक अथ कहत  
हृकानी, आत सभ लोक में जनी ॥ पिता की जिसने नहीं  
मानी, किया हट आपने मनका ॥३॥ मुसिभत को सहल लारी ॥  
टक नहीं अपनी दारी ॥ असुर ने अडग की भारी कटा नहीं रोम  
तनका ओक ॥४॥ मात का वयन सुन मनमें लगी धुवाल से तन  
में ॥ राज तजकर बले वन में, मज तिस को भिला वन  
का, ॥५॥ धरक भंसूर ने किया, अनलहुक भाही मन दीया ॥  
शीश सूली पर धर दीया, सुधर गया काज सभ उनका ॥६॥  
इरिदा रूप में लटक्या भांस सभ कागिलों अटक्या ॥ उसी दिल-  
दार में अटक्या, लाल जिसे हाया दरशन का ॥ ६॥ हुये धर  
शाह सुलतानी, तल थी वलभ रजवानी ॥ पिया जिन धरक  
का पानी, नशा सभ तज दिया धनका ॥७॥ दिल लगा धाम  
धुन अरु वाम, बड़े धिर मुक्ती ही को धाम ॥ गुप्त सुमिरे  
नहीं निष्काम, बना है दास सभ जन का ॥८॥

१३०. गजल ।

झैलाया जल माया ने, कोर सभजे भिलारी है ॥ जैसे  
आजर के भाही गायथ आल पसारी है ॥१॥ कोर धन धाम  
में लूते, कोर अडजेर में दूते ॥ कोर मद काम में जुते, कही  
सुत आत नारी है ॥२॥ कोर तो कर्म के साल कोर है लक्ष्मि  
में राख ॥ कोर पंडित कोर काख करे उपदेश लारी है ॥३॥  
कोर तो निगम आगम में, कोर तो अलख त्यागन में ॥ कोर  
दिन रात जगन में, किसी को धूनी जरी है ॥४॥ कोर तप धान  
को धरते, कोर तो भोज में चरते ॥ कोर काशी में जा भरते  
धारना ऐसी धारी है, ॥५॥ कोर निर्गुण में, अटके है ॥ कोर

સગુણ મેં લટકે હૈં । કોઈ દોનોં સે સટકે હૈં, તમાશા ખેલ  
જરી હૈ ॥૫॥ ક્યૈ કોઈ જ્ઞાન કો દિન રાત, કરહિં વેદાન્ત  
કી બહુ બાત ॥ ધ્યાના કરૈ સન્ધ્યાઓ પરભાત, નૈનન  
સે નીર જરી હૈ ॥૬॥ કહું કબ તક યહ જૂંઠા ખ્યાલ,  
કોઈ ગાતે હૈં દે દે તાલ ॥ કોઈ કપડે કો રંગતે લાલ  
કોઈ તો બ્રહ્મચારી હૈ ॥૭॥ ગુપ્ત પાયા નહીં ખોયા કહી જગા  
નહીં સોયા । નહીં હંસતા નહીં રોયા, નહીં હલકા ન ભારી  
હૈ ॥૮॥

### ૧૩૧. હોલી ।

હોલી રંગ મહલ મેં હોતી, કહા નીંદ ભરમ કી સોતી ॥૧॥  
યા હોલી કા ખેલ અજબ હૈ, દેખત મનકો મોહતી ॥ કોઈ કોઈ  
ખેલત મુઘર સયાને, મૂલ અવિદ્યા ખોતી ॥ ચિમક રહી આતમ  
જેતી ॥૨॥ ઇસ હોલી કી રંગત ન્યારી, પાપ જનમ કે ધોતી ॥  
મૂરખ કો પંડિત કરૈ છિન મૈં. પતરા પકના ન પોથી ॥ નહીં  
પાતી નહિં ખોતી ॥ ૨ ॥ બારેં માસ વસન્ત ઉડત હૈ, છઃ  
ઋતુ હોલી હોતી ॥ તાકી મહિમા વેદ કરત હૈ, કહિ સમજાવત  
નેતી ॥ ઝલક રહા આતમ ખોતી ॥ ૩ ॥ ઇસ હોલી કો જો નર  
ખેલત કૃગુવા ઉસકો દેતી ॥ ગુપ્ત જ્ઞાનકી હોલી મચી હૈ. ઓર  
સખ હોલી ધોધી ॥ કરત કદા નેતી અરુ ધોતી ॥ ૪ ॥

### ૧૩૨. હોલી ।

લખિ આતમ રૂપ અપારા, હોલી ખેલિ હુયે બહુ પારા ॥૧॥  
યાગ્યવલ્ક્ય જનકાદિક ખેલે, લાગ્યા નહીં લગારા ॥ જ્યોં જલ  
કમલ રહે જગ માહીં, છીંટ લગ્યા નહીં ગારા ॥ સભી કામાદિક  
જરા ॥ ૧ ॥ બામદેવ શુકદેવ ખેલારી, વચન પિતા કા ટારા ॥  
ધારા વૈરાગ જગત સે ઉઝરે, લેકર જ્ઞાન સહારા ॥ ઓર હુયે અનન્ત  
હજારા ॥ ૨ ॥ ઇસ હોલી કા યહી મહાતમ, જો ખેલા સો તારા ॥  
હિંચ અરુ નીચ ધની અરુ કંગડા, હલકા ગિનતી ન ભારા ॥ પાર  
હુયે ભવ કી ધારા ॥૩॥ ગુપ્ત ભાગ મેં હોલી મચી હૈ, નાના રંગ  
પસારા ॥ વિવેક વૈરાગ કી કેસર ધોરી, ફૂલી જ્ઞાન ફુલવારા ॥  
મોક્ષ એક ફુલ હજારા ॥૪॥



### ૧૩૩. હોલી ।

એકે દુષ્ણ આતમા હોલી, બનિતા કરિ રહી બરજોરી । પેશા  
મનપ્રીતિ અરુ આરમ દુષ્ણ, એમી કેમર ચોરી ॥ બરિ પિયકારી  
વિચરન કી મારી, જુદિ બઈ હૈ બોરી ॥ જ્ઞાન મુખ મુરલી ચોરી  
પાપ દુષ્ણ આતમા મદિર પડો, દેહે નવાવે હૈ દોરી ॥ કામ  
કા દગલ નૈન ગિય ગાલા, મુંદરી ચાહ ઉઠોરી ॥ નેહ કી નાથ  
નંદોરી ॥ ૨ ॥ તુમ કમની મેં આરા બોરા, નિત ઉઠ માહિં ઠોરી ॥  
કુચળા પોતાખર ચોરા, અમ બની સમ ચોરી ॥ મેહિં લાવત  
બઈ બોરી ॥ ૩ ॥ મુખ ગલીમ પકડે તુમકો ક્યા ફિરતી હો  
લોરી ॥ તવદુષ્ણ માનત કો બાહિ, માન મરકિયા ઠોરી ॥ તોર  
નથ દુલરી તોરી ॥ ૪ ॥

### ૧૩૪ હોલી ।

હોલી અઘાપ્રીતિ કો ગચી, ઝોર સમ હોલી કાચી ॥ ૧ ॥  
આર વેદ કા મરદુષ્ણ રોયા, આત કહી જિન સાંચી । પુરુષ પ્રકૃતી  
બિલન આવે, ઉઠિ પર ફિરતી નાચી ॥ પુરુષ સખ સ્યતા બચી  
પાપ મરદુષ્ણ અરુ હંકાર માયા, સાતોં કી ઠોલક ખાંચી ॥  
પંચમુત દસ કંદી મન લે, તાન લગાઈ આહી ॥ તિનોં કે સંગ મેં  
રાની ॥ ૨ ॥ પુરુષ અસંગ દેખન લાગા, તાકી ભુદિ ખાંચી ॥  
દેખ તમારમ આપકો ભૂગા, માનત હૈ દુલ બતી ॥ એમી વહ  
હોલી માચી ॥ ૩ ॥ જુદિ કો વર્મ આપમેં માનત, થોં ભુગતે  
ચોગમી ॥ મુખદુષ્ણ પરગર જમ હોવે, અવકાર ઉઠિજસી । ભાવ  
જેમે કીમ પચાચી ॥ ૪ ॥

### ૧૩૫. હોલી રંગપંચમી

જમ રંગ પંચમી હોવે, પાંચો નારી રંગમેં લિગાવે  
પરિદા મન સંગતિ મેં રંગતિ લાગી, તામેં પકડિ કુબોવે ॥ મન  
સંસિયા કો ખૂબ રિઠાય, પાપ જન્મ કે ખોવે ॥ દાગ સમ દિકે  
ધોવે ॥ ૧ ॥ કર મિંગાર વેરાગ જ્ઞાનકા તત કી તાલ સમોવે ॥ સાધન  
મગદિ અગત્યત આજે ॥ મૂલ આપના જોવે ॥ ફિર નિરભય  
હોઈ સોવે ॥ ૨ ॥ અહં અહં વહ બરિ પિયકારી, રાગ અખગિત  
હોવે ॥ આપ મેં પસિયા મોઈ હૈ સંસિયા ॥ ઝટ વસંત મેં મોઈ

તાર નિજ અંતર પોવે ॥૩૧॥ વિધિ નિષેધ કી ધૂલિ ઉડાકે, પુન્ય  
પાપ નહીં જોવે ॥ ગુપ્ત ગલીમેં હોલી ખેલત ॥ હોના હો સૌધ  
હોવે ॥ અહં પરિછિન્ન વિગોવે ॥૩૨॥

### ૧૩૬. હોલી ।

મન રસિયા ને હોલી મચાઈ ॥ એસી રચના અજબ રચાઈ  
દ્રષ્ટા દર્શન દૃષ્ય રચેજન, ચેતન સત્તા પાઈ ॥ દેશ અરુ કાલ રચી  
સખ વસ્તુ, જીવ રુ ઈશ ખનાઈ ॥ અવિદ્યા માયા લગાઈ ॥૧॥ નાના  
વિધિકે કર્મ ખનાયે, પુન્ય રુ પાપ પશારા ॥ જનકે ફક્ત સુખ દુખ  
દો ધીના ॥ સ્વર્ગ નર્ક ભુગતાઈ ॥ એસી યહ નીતિ ચલાઈ ॥૨॥  
જ્ઞાન ધ્યાન અષ્ટાંગ યોગરુ, સાધન સાધ્ય સિધાઈ, ત્યાગ વેરાગ  
દેવ અરુ પૂજા કર્મકી કાલુપ લાઈ, ફિરી હૈ કાલ દુહાઈ ॥૩॥ જો  
કછુ કૃત ક્રિયા સખ મન કા, આતમ મેં નહિં કાહી ॥ દ્રષ્ટા દૃષ્ય  
કલી નહિં હોતા ॥ ગુપ્ત જ્ઞાન લખિ લાઈ ॥ ખાત યહ ખેદો  
ને ગાઈ ॥૪॥

### ૧૩૭. હોલી ।

અખ વસન્ત પંચમી આઈ, યામેં લોજે રંગ ચઢાઈ ॥૧॥  
પંચ ભૂતકી રચના રચિ યહ માનસ દેહ ખનાઈ ॥ તાસ સમાન  
ઔર નહિં દેહા, દેવન કે મન લાઈ ॥ કરો યામે સુઘડ કમાઈ  
અન્તઃ કરણ કા મૈલા કપડા યાકી કરો સફાઈ ॥ નિર નિરંતર  
ભક્ત મસાલા સાધન શિક્ષા ખનાઈ ॥ મૈલ સખ ઘોઈ વહાઈ ॥૨॥  
સત ગરુ રંગિયા સે રંગ ચઢાયો, પૂરી દેકે ગાઈ ॥ સરથા  
ધી દેગ મેં જ્ઞાન રંગ ભરિયા મેં દેહ હુખાઈ ॥ ચઢે કુછ જખ  
રોશનાઈ ॥૩॥ ગુપ્ત ગલી મેં ફાગ મચાવો, કરિકે નિરભેતાઈ ॥  
ફાગન કે દિન સુખસે ખીતે, હોલી અવિદ્યા જલાઈ ॥ ભર્મ કી  
ધૂલિ ઉડાઈ ॥૪॥

### ૧૩૮. હોલી ।

ઋતુ આઈ વસંત સુહાની, જામેં ફાગન ખેલતે જ્ઞાની ॥૧॥  
જીવન મુક્તી ખજવત ખાજે રાગ ગાવેં બ્રહ્માની ॥ વૃત્તી વ્યાપતી  
તાલ લગાવે નૂર ધ્વજ ફહરાની ॥ છુટ્ટે દુખ ચારેં ખાની ॥૨॥



આપ રૂપ કે રંગમેં રાતે લાલ રહા નહીં હાની ॥ નાચત નાચ  
કર્મ અનુસારી ॥ કુગુવા મિલા નિરવાની ॥ છુટી સખ ખેંચાતાની  
॥ રાા સો રસિયા આનંદ મેં ખસિયા જિન યહ હોલી જની ॥  
કાલ નગારે કે સિરમેં ડંકા, જગદી ધુલ ઉડાની, જ્ઞાન પિચકારી  
તાની ॥ ૩૮ ॥ ગુપ્તરુ પરઘટ ખેલ કરતે હૈં જિનકી અકથ કહાની ॥  
લોક વેદકા ભય નહીં માનત મૂલ અવિધા ભાની ॥ નહીં કોઈ  
તાહીં સમાની ॥ ૪૧ ॥

### ૧૩૯. હોલી ।

હોલી જલગર્ધ અવિધા સારી ॥ રાખે નિજ ભક્ત મુરારી  
॥ ટેકાા ભક્તોં કે કાજ સાજ બહુ સાજે, તિનકો લેત ઉભારી  
॥ યાહી ટેક જાકે પરપરા સે નર હો વો ચાહે નારી ॥ કરે ભવ  
જલ તેં પારી ॥ ૧ ॥ જૈસે જન પ્રહલાદ કો રાખ્યા હોલી ભધ  
જલ છારી ॥ હિરનાકુશ અજ્ઞાન કો મારા ખંભ દિયો જિન  
ફારી ॥ દેહ નરસિંગ કી ધારી ॥ ૨ ॥ જખ પ્રહલાદ અવિધા હોલી  
તુષના અગિનિ પજારી હિરન કશિપ મૂલી અજ્ઞાન હૈ ॥ નરસિંહ  
જ્ઞાન કટારી ॥ ઉદર તાકો દેત વિદારી ॥ ૩ ॥ કામ કોધ સખ ભયે  
હૈં પહુરવા મારો રાવ બલ ભારી ॥ ગુપ્તરુ પરઘટ એક લખ્યો  
જખ એસી ધરના ધારી ॥ સોઈ હૈં સુઘડ ખેલારી ॥ ૪ ॥

### ૧૪૦. હોલી ।

લાગી ગુપ્ત જ્ઞાન કી ગોલી, સખ ઉડી ભરમ કી ટોલી ॥  
ટેકાા સત ગુરુ ભેદીને ભેદ બતાયા, બુદ્ધિ ખંદૂક ટોલી ॥ ભકિત  
કરમ સે મંજન કીની, સાર શબ્દ સે ખોલી ॥ હુઈ હૈં તખ અન  
ખોલી ॥ ૧ ॥ અહં બ્રહ્મ યહ રંજક ભરીકે, મનકે કાંટે તોલી ॥  
પ્રત્તી નિરંતર ખાંધિ નિશાના, શબ્દ અહં કો ખોલી ॥ કરમ કી  
ઉડિ ગઈ ટોલી ॥ ૨ ॥ કામાદિક મિરઘા સખ ભાગે, તૃષ્ણા હિરની  
ટોલી ॥ ઋતુ વસન્ત આઈ જીવન મુક્તી, ખેલત ભર ભર ટોલી ॥  
કર્મ કી ઉડરહી રોલી ॥ ૩ ॥ ગુપ્ત ગલીમેં જો નર આવે, પાવે  
વસ્તુ અનખોલી ॥ વેદ પુરાન કાવ્ય અરુ કથની, યે સખ લાગત  
ખોલી ॥ દૂરિ ગઈ અન્તર ચોલી ॥ ૪ ॥

## ૧૪૧. હોલી ।

ઘટ અંદર હોલી મચાઈ, કહા દેખત બહાર જઈ ॥૧૬૬॥  
 જાત્રાત માહિં વિધિ જૈલે હોલી જૈઠિ નયન કે માહિં ॥ દશાંદ્રિય  
 વનિતા લિયે સંગમેં, ભોગત ભોગ અઘાઈ ॥ કરૈ અપની મન  
 ભાઈ ॥૧૭॥ સ્વપ્ન માહિં તેજસ જૈલે હોલી, કંઠ દેશ મેં જઈ  
 સૂક્ષ્મ ભોગ મનો મય વાચા, સંગ લિયે મન ભાઈ ॥  
 એસી રચના રચવાઈ ॥૧૮॥ સુખપતિ માહિં પ્રાણ જૈલે હોલી,  
 પુરીતત્વ મેં જઈ ॥ અજ્ઞાન કી વૃત્તિ લિયે સંગ વનિતા, સુખ  
 કા ભોગ કમાઈ ॥ રહાતિસ માહિં ભુલાઈ ॥૧૯॥ ત્રીન દેશકી  
 હોલી જૈલ કર, ચૌથે દેશ મેં જઈ ॥ ઓર સખ હોલી લગી  
 હૈ હલકી, ચૌથી સમાધી લગાઈ ॥ સોઈ હોલી સુખદાઈ ॥૨૦॥  
 ચતુરથ જૈલી ગયો પંચન મેં તુરિયા તીત કહાઈ ॥ મનવાની  
 કી ગમ્ય નહીં જહુ, સો હમરે ભામ મનો ગૂંગા ગુડ  
 ખાઈ ॥૨૧॥ બાહર કી હોલી સખ તજકર, ભીતર દેખહુ  
 જઈ ॥ ગુપ્ત હોલી હોય ઘટકે અંદર જૈલત સુઘર જૈલારી ॥  
 ખાત તોહિં કહિ સમુઝાઈ ॥૨૨॥

## ૧૪૨. હોલી ।

હોલી જૈલત સુઘર જૈલારી, કહા જૈલત મુઠ અનારી ॥૨૩॥  
 મલ વિશેષ દોષ નહીં જકે, વિષય વાસના જારી ॥ નિત્ય અનિત્ય  
 વિવેક કિયો જિન, વિષ સમ જાની નારી ॥ ચાહુ ચિંતા સખ ટારી  
 ॥૨૪॥ સમ દમ શ્રદ્ધા સમાધાન વૈ, ઓર ઉપરતી ધારી ॥ દ્વંદ્વ  
 ધરમ સખ સહન કિયો હૈ, સહી હૈ તિતિક્ષા ભારી ॥ સોઈ હોલી  
 કા અધિકારી ॥૨૫॥ અસંભાવના દુરી કરી સખ, સરવન મનન  
 વિચારી ॥ વિપરીત ભાવના કી ધૂલ ઉડાઈ, નિદિધ્યાસન સે જારી ॥  
 ખાત જિન એસી વિચારી ॥૨૬॥ તત્ત્વ પદકા શાધન કીના, માયા  
 અવિદ્યા ડારી ॥ અસિપદ માહીં આસન મારા, લાગો સમાધી  
 સુખારી ॥ ચઢી હૈ બ્રહ્મ ખુમારી ॥૨૭॥ જીવન મુક્ત ભયે યા  
 જગમેં, વિચરત ઇચ્છા ચારી ॥ લોક વેદ કી શંકા ન માને વસિકર  
 પાંચો નારી ॥ એસી નિજ ધારન ધારી ॥૨૮॥ ભોગ અદૃષ્ટ અદૃષ્ટ



ભયે હૈ, વ્યાપક રૂપ મંઝારી ॥ ગુપ્ત રૂપકો પ્રાપ્ત હોકર, કબજું  
ન હોય દુખારી ॥ જિન હોલી ખેલી હૈ સારી ॥૬॥

### ૧૪૩. હોલી ।

દેખો દુક હોલી કા અજબ તમાશા, જાસે હોય અવિદ્યા  
કા નાશા ॥ ૧ ॥ એસી હોલી તોહિં ખેલાડિં, દૂરિ હોય સખ  
આસા ॥ ચંચલ મનુવાં અચલ હોય જાતે, દૂરિ જાય ભવ પાસા ॥  
હોય ઉર જ્ઞાન પ્રકાશા ॥ ૨ ॥ સાહે તીન કિરોડ જાપ હોય, એક  
એક હી રવાસા ॥ તિનકે અંદર સુરત સંભોવો, રોમ રોમ પર-  
કાશા ॥ પાવે નિજ રૂપ ખલાશા ॥ ૩ ॥ સોકો લેકર ચલત  
નાભિસે, હુંકો લેકર આવે ॥ દોનોં પદકા અર્થ વિચારો, જવ  
યાકા ફલ પાવે ॥ હોવે સુખ રૂપ નિવાસા ॥ ૪ ॥ સો પદ બ્રહ્મ  
રૂપ કરિ જાનોં, હું પદ આપ પિછાનો તત્ત્વમસિ કર એક રૂપ હૈ,  
ભાગ ત્યાગ કર માનોં ॥ સમજ યહુ વેદોં કા આશા ॥ ૫ ॥  
અહું બ્રહ્માસ્મિ વાયુ ચલાઈ, જ્ઞાન અગ્નિ પ્રગટાઈ ॥ મુલ સહિત  
તન મન સખ હોલી, ઠોકિ ઠોકિ કે જલાઈ ॥ હુયો ફિર અગ્નિ  
કા નાશા ॥ ૬ ॥ જો કોઈ હોલી ખેલિ ચુકા હૈ, ગુપ્ત ગલી કે  
માહી ॥ જ્ઞાન ગુલાલ કે ખરસત બદલા, કર્મ કે કીચ બહાર ॥  
કટા સખ કાલ કા ફાંસા ॥ ૭ ॥

### ૧૪૪. કુણડલિયા ।

નિજ સરૂપ અજ્ઞાનતે, દીખત હૈ બહુ ભેદ ॥ સ્વરૂપ જ્ઞાન  
કે હોતહી, મિટિ જાવે સખ ખેદ ॥ મિટિ જાવે સખ ખેદ, વેદ યોં  
નિતહી ગાવે ॥ મૃગતૃષ્ણા જગ નીર, સુનકર ભેદ મિટાવે ॥ લખ  
નિજ ગુપ્ત સરૂપ, કુપ જગ ગિરો ન પ્યારે ॥ અવસર ચુકે મૂક  
ફિરે વિષયન કે મારે ॥

### ૧૪૫. કુણડલિયા ।

ભેદ જો પંચ પ્રકાર કા, તાકો કરું બખાન ॥ જીવ ઈશ કા  
ભેદ, યક ઈસ જગત કો જાન ॥ ઈસ જગત કો જાન, તીસરા  
જીવે જીવન કા ॥ ચતુરથ ભેદ પિછાન, જીવ અરુ જડ હૈ તિનકા ॥  
પંચમ ભેદ જડ જડન કો, યહી ભેદ આકાર ॥ ધ્રુવ સખ કુર  
ભેદ જખ, તખ હોય ભેદ સે પાર ॥

१४६. कुण्डलिया ।

बिना लेह लेने बिना, छुटै न लेह के पंथ ॥ श्रुति सिद्धान्त  
यह कहत है, और कहे मुनि संत ॥ और कहे मुनि संत, लेह  
के अन्त ले कीजै ॥ लेह पाप के मूल, तासु के न उर में  
हीजै ॥ गुप्त रूप जगह लगे, छुटे लेह की आत ॥ लेह ले  
पांच प्रकार का, तापर भारे लात ॥

१४७. कुण्डलिया ।

अनादि वस्तु के कहत है, तिनको सुन अग्र लेह ॥ अग्र  
धंस लव अरु भाया, सम्बन्ध लेह कहे भेद ॥ तिनमें कुछ  
लेह अताया ॥ अग्र है अनन्त अनादि, पांच ये शान्तहि गाया ॥  
कह गोवर्धन विचार; अनादि वस्तु गार्ध ॥ गुप्त आत लघ  
प्रगट कुण्डलिया देखी लार्ध ॥

१४८. कुण्डलिया ।

भूयो जग निज आपको; तजह लयो कंगाल ॥ अपनी  
सुध लावे नहीं, घर में है सग्न माल ॥ घर में है सग्न माल,  
ज्याल हूजे का भेटो ॥ गुप्त रूप के पाय, पलंग पर सुग्न से  
लेटो ॥ ध्रुव निश्चय यह जन, शहनपति शाह है तुही ॥ लीनो  
आप निहार, वस्तु है ज्योंही ज्योंही ॥

१४९. कुण्डलिया ।

लोह लगाओ पलंग पर, करके सूध पांच ॥ आसन कीजै  
झेर की झेर न ऐसा दाव ॥ झेर न ऐसा दाव नाव में यह  
कर भेटो ॥ होज पटलेपार; गिरेह से दमडे काटो ॥ जग्न पात्रे  
गुप्तानन्द तहां कीजै विश्राम ॥ ध्रु निश्चय तज लयो सोवते  
यदर तान ॥

१५०. कुण्डलिया ।

जैसे लुभ सोये पलंग पर, ऐसा सोयो सत्र कोय ॥ लाया  
गलीया ज्ञान का, होनी होय सो होय, होनी होय सो होय  
मोह व्यापै नहीं भाया ॥ नित प्रापत अपना रूप, नहीं भोया



નહીં પાયા ॥ ગુપ્ત ગલી મેં આય કે, નિરભય ભયે આનંદ ॥  
ધૂ નિશ્ચયકર સેવતે કોઈ કે વિરલા સાધ ॥

૧૫૧. કુણ્ડલિયા ।

ચિદાકાશ નિજ રૂપ મેં, નહીં કાલ નહિં દેશ ॥ પાંચ તત્ત્વ  
ગુણ ત્રીન કા, જામેં નાહીં લેશ ॥ જામેં નાહીં લેશ, એક નિર-  
જન રાયા ॥ જામેં નપંચ કલેશ, મોહ વ્યાપો નહિં માયા ॥  
ગુપ્તરૂપ કો પાયકર, જામેં લાભ ન હાન ॥ ચિદાકાશ નિજ રૂપ  
લખિ, સોતે ચદર તાન ॥

૧૫૨. કુણ્ડલિયા ।

માત તાત સુત બ્રાત્ર સખ, રસ્તે કૈસા સાથ ॥ મેલા જગત  
સરાય મેં, સખ ઉઠિ જાત પ્રભાત ॥ સખ ઉઠિ જાત પ્રભાત, જાત  
કષ્ટ દેર ન લાવે ॥ ચહૈ લાખો કરૈ ઉપાય, ફેર દૂંઢે નહિં પાવે ॥  
જખ ભૂલ્યો ગુપ્ત સરૂપ, પડી મમતા કી કાંસી ॥ કયા રોવે મત્યા  
કૂટ, તુહી ચેતન અવિનાશી ॥

૧૫૩. કુણ્ડલિયા ।

અપને અપને કર્મ કા, ભોગન આયે ભોગ ॥ પૂર્વલે કિસી  
કર્મ સે, આન મિલા સંયોગ ॥ આન મિલા સંયોગ, સોચ  
ફિર કિસકા કિજૈ ॥ સ્વપ્નો સો જગ જાન, નામ એક હરિ કા  
લીજૈ ॥ જખ પાયે ગુપ્ત સરૂપ, અવિદ્યા સખહી છીજૈ ॥ સખ  
મિથ્યા સંસાર શોક ફિર કિસકા કિજૈ ॥

૧૫૪. કુણ્ડલિયા ।

લગે રહો હરિ નામ સે છોડા જગ કી આસ ॥ ખખર નહીં  
હૈ ઘડી કી, નિકલ જાયેગે શ્વાસ ॥ નિકલ જાયેગે શ્વાસ, ॥  
કાલ ને સખ કોઈ ખાયા ॥ રાજા રંક ફકીર, કાલ કે હાથ બિકાયા ॥  
પરાસ્થ કે ભોગ મેં, હોના નહી, ઉદાસ ॥ ગુપ્તરૂપ ઘટ માહિં  
લખ, સખ તજે જગત કી આસ ॥

૧૫૫. કુણ્ડલિયા ।

ના કષ્ટ હુયા ન હૈ કષ્ટ, ના કષ્ટ આગે હોય ॥ મૃગતૃષ્ણા  
કે નીર મેં, કયોં બહા જાત બિન તોય ॥ કયોં બહા જાત બિન

તોય, મોહ કા છાડ અખાડા ॥ સુષુપતિ અવસ્થા માંહિ, જગત  
કા પોલ નિકાલા ॥ ગુપ્ત ગલી મેં બેઠિ કે, કીજે સદા વિચાર ॥  
તું ચેતન ભરપૂર હૈ, જૂઠા જગત અસાર ॥

૧૫૬. કુણ્ડલિયા ।

ભોગન મેં સુખ હૈ નહીં, સખ તજે જગત કે ભોગ ॥ ભોગ  
શોક કા રૂપ હૈ, યોં કહેં સયાને ભોગ ॥ યોં કહેં સયાને ભોગ  
ચોંગતા આપ નિહારો ॥ કર્મ ઉપાસન જ્ઞાન માંહિ ચિત અપના  
ધારો ॥ ગુપ્ત રૂપ કો સો લહે, જોચાલે ધન પંથ ॥ શ્રુતિ સિદ્ધાન્ત  
યહ કહત હૈ, ઔર કહેં સદ અંથ ॥

૧૫૭. કુણ્ડલિયા ।

કોટિ જન્મ ભરમત ફિરો, કછુ ન પાયા સાર ॥ મનુષ દેહ  
અખ કે મિલી, કરકે દેખ વિચાર ॥ કરકે દેખ વિચાર, યાર કયા  
ભયા દિવાના ॥ સિર પૈ વૈરી કાલ, હાથ લે રહા વાના ॥ બચ્ચો  
ન તાસોં કોય, કાલ ને સખ કોઇ ખાયો ॥ જિન જાન્યા ગુપ્ત  
સરૂપ કાલ નેરે નહિં આયો ॥

૧૫૮. કુણ્ડલિયા ।

જેની સો નર જાનિયે, જો જીવમાર માર કે ખાય ॥ દ્વૈત  
ભાવ જાકે નહીં, રહી એકતા છાય ॥ રહી એકતા છાય દિગમ્બર  
રહે ઉદાસા ॥ સ્વ સ્વરૂપ લિયો ચિન્હ, મિલન કો મિટિ ગર્ભ  
આસા ॥ જખ જાન્યો ગુપ્તાનન્દ, કર્મ કા સંગલ દુટયા ॥ બહ  
ગર્ભ મજહુખ દુકાન, ભરમ કા ભાંડા ફુટયા ॥

૧૫૯ કુણ્ડલિયા ।

ગુપ્તાનન્દ આનન્દ મેં, સદા સર્વદા કાલ ॥ હાની લાભી ના  
રહી, પડે ન યમ કી જાલ ॥ પડે યમ કી જાલ ખ્યાલ કોઈ રહા  
ન કરના ॥ અખ કે એસે મેરે બહુરી હોવે નહીં મરના ॥ ગુપ્તાનન્દ  
કો પાય, રહા નહીં કરના બાકી ॥ સખ જૂઠા પરપંચ, સત્ય તો  
આપૈ આપી ॥

૧૬૦ કુણ્ડલિયા ।

કોઈ કછુ કહે કોઈ કછુ કહે, ના કીજે શોક ન હર્ષ ॥ જૈસી  
જાકી બુદ્ધિ હૈ, તૈસી તાકી પરખ ॥ તૈસી તાકી પરખ, બહુત વિધિ



કહે સમાર ॥ જોહરી પરખે લાલ, ચામ કો ગહે ચમાર ॥ ગુપ્તા-  
નન્દ કો પાય, મસ્ત રહે આઠોં ચામ ॥ કુછી બકો સંસાર, નહીં  
કાહુ સે કામ ॥

૧૬૧ કુણડલિયા ।

કાલ ત્રય ઉપજે નહીં, કહા ભયો સંસાર ॥ વ્યાસ વષિષ્ઠ  
મુનિ કહત હૈ, તુહી સદા એક તાર ॥ તુહી સદા એક તાર, અપને  
મેં આપ ભુલાયો ॥ સ્વપને કો પરપંચ, જાગિકર કહૂં ન પાયો  
॥ તૂં આપે ગુપ્તાનન્દ, સર્વ ભૂતન કા મૂત ॥ નભ મેં ભયો ન  
સુમન, ન જાયો બન્ધ્યા પૂત ॥

૧૬૨ કુણડલિશા ।

હોતા તો હોતા કહા, બિના હુયે યહ કીન ॥ બિના હુયે કે  
કારણે, હોતા ફિરતા દીન ॥ હોતા ફિરતા દીન, બાત યહ સચ્ચી  
ભાખી ॥ તાપર એક દૃષ્ટાન્ત સુનો ચોરોં કા સાખી ॥ જખ જાને  
ગુપ્તાનન્દ, મિટૈ યહ તખહી શૂલ ॥ નિશ્ચય હોવે આપ, રહે નહીં  
રંચક ભૂલ ॥

૧૬૩ કુણડલિયા ।

ભૂલહોત હૈ ભરત સે, ભરમ મૂલ અજ્ઞાન ॥ અજ્ઞાન તભી લગ  
જાનિયે, જખલગ હોત ન જ્ઞાન ॥ જખલગ હોત ન જ્ઞાન. ન  
તખ લગ હોવત દૂર ॥ નિશા રહે ફિર નાહિં, પરગેટ જખહી સૂર ॥  
જખ જાન્યો ગુપ્તાનન્દ, વસ્તુ બ્યોંકી ત્યોં ભાસી ॥ સંશય ઓર  
વિપરીત, ભાવના સખહી નાશી ॥

૧૬૪ લાવની બિના દોહૈ કી કલ્પવૃક્ષ ।

હમ ખુદ મસ્તી મેં મસ્ત, મૌજ મેં રહતે ॥ જો હમે કહે  
અપવચન, ઉસી કે સહતે ॥ ટેક ॥ હમ અપને આપ મેં મગન  
રહા કરતે હૈ ॥ જાતે દિલ કો હમ ચૂર ક્રિયા કરતે હૈ ॥ હમ આપી  
આપના દરસ ક્રિયા કરતે હૈ, ભર ભર કે જ્ઞાન કા ખ્યાલા પિયા  
કરતે હૈ ॥ ઇસ જગત જાલ કો દેખિ નહીં હમ બહતે ॥ ૧ ॥  
હમ અપને આપ કા જાપ ક્રિયા કરતે હૈ ॥ ઇસ તનકે અંદર માપ  
ક્રિયા કરતે હૈ ॥ પંચ કોપ વપુ ત્રીનકો સાફ ક્રિયા કરતે હૈ ॥  
અપને આતમ મેં આપ જિયા કરતે હૈ ॥ હમ જીવ ભાર કો

બ્રહ્મ છાડિ અગિન મેં રહતે ॥ ૨૧ ॥ તોડા માયા કા જાલ જ્યાલ  
હમ દેખા ॥ કુછ બાધી રખ્યા નાહિં પુરા ક્રિયા લેખા ॥ અબ  
આગે કો વન જ નહીં હમ કરતે ॥ જો કરતે હૈં વન જ વહી.  
નર મરતે ॥ હમ કાહૂ સે કુટીલ વચન નહીં કહતે ॥ ૩૧ ॥  
હમ પાયો ગુપ્ત સ્વરૂપ ભૂપકે ભૂપા ॥ નહિં પડે કાલ કે જાલ માર  
કહે રૂકા ॥ એસા નિશ્ચય ભયા ધુર ગુરુ હમ પાયા ॥ જિનકી  
કૃપા સે ભયે નિરંજન રાયા ॥ જો નર કરતે સત સંગ, સૈન વહ  
લહતે ॥ ૪ ॥

### ૧૬૫. લાવની ।

હમ જ્ઞાન સુધા કા પિયા પિયાસા પ્યારે ॥ માયા નાગિન કે  
જહર મરે નહિં મારે ॥ ૧૦૬ ॥ સતગુરુ કો મંતર દિયા જહર સખ  
ઝાડા ॥ માયા નાગિન કા જીત લિયા સખ ખાડા ॥ માયા કે મુત  
હે પાંચ બેડે બલકારી ॥ અહુ નિશિ આઠોં યામ મારે ફિલકારી ॥  
જિન બેડે બેડે પકડે વીર કૂપ ભવ ડારે ॥ ૧૧ ॥ અહું બ્રહ્માસ્મિ મંત્ર  
ગુરુ દીના ॥ માયા નાગિન કા જહર દૂર કર દીના ॥ માયા કા  
ઉતરા જહર કહર સખ નાશે ॥ જખ કટ ગયે દીરઘ રોગ જ્ઞાન  
પરકાશે ॥ પરઘટ હુવા પૂરણ જ્ઞાન શત્રુ સખ જારે ॥ ૧૨ ॥ છૂટા માયા  
કા પાપ જાપ કરે કિસકા ॥ હમ નિરભય હોકર રહે ખોદ નહીં ઉસ  
કા ॥ હમ વ્યાપક બ્રહ્મ અખંડ નહીં જહુ માયા ॥ જહાં નહીં કર્મ  
નહિં ધર્મ ન જન્મી જાયા ॥ હમ ચેતન શુદ્ધ પ્રકાશ કાલ નહિં ખારે  
॥ ૩ ॥ સતગુરુ કે પરસાદ સાધકી સંગત ॥ સત સંગતિ કી રેની  
ચઢી લગી હૈ રંગત ॥ હમ પાયો ગુપ્તાનન્દ ભર્મ સખ નાશે ॥  
ધ્રુ નિશ્ચય ભયો અગાધ જ્ઞાન પરકાશે ॥ અજર અમર અખ ભયે  
જરે નહિં જારે ॥ ૪ ॥

### ૧૬૬. લવની ચૌમાસા ।

બરસન લાગે દિનરાત જ્ઞાન કે બદલા ॥ બુદ્ધી પૈ છાયો  
સોહાગત યાગ કિયો સગલા ॥ ૧૦૭ ॥ ચારોં સાધન એક ચાત્ર માસ



તુમ જાનો ॥ જળ ઉમડી ઢાલી ઘસા શ્રાવણ પહિચાનો ॥ જળ  
પાને લાગી બૂંદ મનન સોઝ કદિયે ॥ જળ બરસન લાગ્યો મેલ  
નિહિયાસન લદિયે ॥ જળ ચલી પ્રેમકી લોર શુદ્ધ હોઃ જુગલા  
॥ ૧૧ ॥ સ્વાન બૂંદ આનક દો લગન હૈ પ્યારી ॥ નિસ આનક દે  
દે આદર્ય જાનો અધિકારી ॥ પચિત્ત રહે હૈ ઐક બરખા મનુ  
આર્ષ ॥ જિમિ મન ઇંદ્રી રહે ચાકિ દે સમ દમ પાર્ષ ॥ જળ  
જુટિ ગર્જ મન કી દોઢ જાય કહાં પગલા ॥ ૧૨ ॥ બદલ કી ઉડી ધોર  
બોલતે ધોર ॥ અહાં અક્ષાસ્મિ ધોર મેં જોરા ॥ ચન માહિં ઉઝ  
ખિજલી દા ચમકાર ॥ જળ પંચકોષ વધુ તીન સે કીના ત્યાર ॥  
જો આશિષ હૈ મજબૂત ચહે ચીમજલા ॥ ૧૩ ॥ સખ નહિયા ચાલી  
ઉમડ સમંદ દો વાર્ષ ॥ જિમિ ઉઠે વૃત્તિ પરવાહ અક્ષ મેં જર્જ ॥  
જળ જુપ્ત ઔપચી પ્રગટ બર્ષ હૈ પ્યારે ॥ દામ જવાસા કોવ  
આક સખ મારે ॥ ઇસ આતમાસ કી રમજ સમજે ક્યા કગલા ॥ ૧૪ ॥

### ૧૬૭. લાવની ।

નહિં માંઝ ફિરી સે દામ ન રખતે રંડી ॥ નિસ પર બી  
લોગ થોં કહેં બટે પાખડી પાંચા ॥ તીન લોક દે બોગ તજ સમ  
ત્યાગ ॥ જિસ પરમી હમં થોં કહેં ફિરે ચે બાગ ॥ ઊપર સે  
બનાયા સ્વાંગ કહેં હમ ત્યાગી ॥ યહ રખતે માહુર નોર બટે હૈં  
સગી ॥ ગેરુ દા લગાતે રંગ બને હૈં દંડી ॥ ૧ ॥ જો દોર્ષ કુછ  
કહે ઉસી કી ચહને ॥ અપને આપકે માહિં ગર્જ હમ રહને ॥  
વહતી દુનિયાં દો દેખિ નહિં હમ બહને ॥ કહતી દુનિયાં દો દેખિ  
નહીં કુછ કહને ॥ હમ દેખિ ઝાડી પછોડિ યહ દુનિયાં લંડી  
॥ ૨ ॥ હમ દિલવર દા દીઠાર કિયા કરતે હૈં ॥ મરને કી ગૈલ  
હમ મરા નહીં કરતે હૈં ॥ તપતી દુનિયાં દો દેખિ તપસ્યા કરતે હૈં ॥  
જલતે કી ગૈલ હમ જલા નહીં કરતે હૈં ॥ હમ અપને આપ કી  
સદા કરતે ઝડી ॥ ૩ ॥ હમ કરતે ગુપ્ત ત્યાર કહેં બટે જ્ઞાની ॥  
સમ હસને હમકો દેખિ બટે બક ધ્યાની ॥ દો જાને મહુરમ દોર  
હમારી બાત ॥ હમ નહિં રખતે સંસાર સે કુછ બી નાત ॥  
હમ ચલતે સીંચી ગૈલ કહેં આફંડી ॥ ૪ ॥

### १६८ लावनी ।

हमें गुप्त रूप का देखा अजय्य तमाशा ॥ जैसा कुछ दुरना  
होय वैसा उसे लासा ॥ टेक ॥ येतन के आसरे कदिय किसी ने  
माया अनादि अेक पुनि शांत तिसे भतलाया । नहिं कहिये सत्य  
असत्य विलक्षण गार्ध ॥ येतन से अनादि संभंध कहके समझा  
जे येतन रहा समान करै नहिं नासा ॥ १ ॥ माया में पडा  
आलास और अधिष्ठाता ॥ कोध तीनों मिलि धंधर का रूप  
भतलाता ॥ मलिन सत्य आलास और अधिष्ठाता ॥ कोध तीनों  
मिलिके लय रूप दिखलाता ॥ तिनमें कहे अेक स्वतंत्र अेक गल  
झंसा ॥ २ ॥ कोध कहे विष्य प्रतिविष्य अेकही रूपा उपाधी के  
बेद लिन सहरूपा ॥ प्रतिविष्य वाद में बेद और ली माना ॥  
पर विष्य रूपही प्रतिविष्य के गाना ॥ छाया और प्रतिविष्य  
का उलट रासा ॥ ३ ॥ कोध माया येतन मिले धंध भतलावे ॥  
अज्ञान अरु येतन मिले लय के गावे ॥ किसी ने प्रकृती पुरूप  
तत्व के बोधा ॥ कोध सात पदार्थ मान त्वं पद बोधा ॥ कोध कहे  
कर्म से मोक्ष जूट नहिं भासा ॥ ४ ॥ किसी ने तत्त्वम् दोनो पद के  
छाना माया रू अविद्या छोडि लक्षके जना ॥ लक्षणावृत्ति करे अतत्त्व-  
भसि भाहि । यह लाग त्याग की सेन तुजे समुझा ॥ कोध समुजे  
यतुर सुजन वेद का आशा ॥ ५ ॥ रंगत दूसरी वेद गुरु कहते  
यही पुकार ॥ जूठे हम जूठा सभ संसार ॥ गुप्त के समझ देय  
हुक यार, कल्पना का भेटो विस्तार ॥ सखी जूठा जनो जगडा,  
आप में अन्या न कछु भिगडा ॥ कल्पना जूठीते जूठी, गहो यह  
गुप्त ज्ञान भूही ॥ तुहिं येतन शुद्ध सत्त्व स्वयं परकाशा ॥ ६ ॥

### १६९ लावनी ।

हमें गुप्त वाग की देणी अजय्य लुरियाली ॥ मिले तरह तरह  
के कुल यमकी रही लाली ॥ टेक ॥ कोध काला लुरा कोध रक्त स्वेत  
केध पीला ॥ धन पंच इल से रची भाग की लीला ॥ माया का अया  
कोट ओट है जिनकी ॥ जहां दोध वक्त के भाहि यौधि रहिभन  
की ॥ माया में पडा आलास सोध है माली ॥ १ ॥ मलिन  
अरु माली भिजे करी जय्य तयारी ॥ यह तभते रचि दिये तीन



ચૌદહ રચિ ક્યારી ॥ માલિન ને મચાચે શોર જોર દિખલાયે ॥  
 એક ક્ષણમાત્ર કે માહિં પેડ સખ લાયે ॥ ચારો ખુરજોં પર ચાર  
 રહે રખવાલી ॥ ૨ ॥ ચાર કિસિમ કે પેડ રચે તિસ માહીં ॥ બીજન  
 કે અનુસાર ખિલી ફુલવાઇ ॥ કિસી મેં નિકલી કલી કોઇ ખિલિ  
 જાવે ॥ કોઇ નીચે ગિરતે દૂર કોઇ મુરઝાવે ॥ ફૂલોં પેં લગાતે  
 ચોટ કાલ અરૂ કાલી ॥ ૩ ॥ છઃ ઋતુ ખારહ માસ ચક્ર એક ફિરતા  
 ચે રાત દિન કો દીપ બાગ મેં જલતા ॥ માલી ને રાખે ત્રીન  
 કામ કે કરતા ॥ કોઇ ઉતપતિ પાલન કરે કોઇ સંહરતા ॥ જહ  
 પક્ષી કરે ફુલાહલ બજાતે તાલી ॥ ૪ ॥ ઇસ બાગ માહિં ત્રય કૂપ  
 છુટે જલધારા ॥ બિચ બિચ મેં ફુહારે છુટે બાગ પિવે સારા ॥  
 કોઈ પૌધે ઉપજે નયે પુરાને જલતે ॥ કોઇ કાલ પાય કે વેલી  
 અગિન મેં બલતે ॥ એસી રચના કા ખ્યાલ દેખતા ખ્યાલી ॥ પા  
 દેખન જનનવાલે કા કરો વિચારા ॥ સો ગુપ્ત આપના રૂપ સાર  
 કા સારા ॥ માલી અરૂ સખ બાગ નહિં કછુ ન્યારા ॥ જૈસે  
 સ્વપ્ને કે માહિં સાક્ષી આધારા ॥ તુંહ ચેતન શુદ્ધ સરૂપ તોડ  
 ભ્રમ જાલી ॥ ૬ ॥

### ૧૭૦ લાવની ।

હૈ કલ્પવૃક્ષ સતસંગ જગત કે માહીં ॥ મહિમા નહિં શારદ  
 શેષ સકે કછુ ગાઈ ॥ ટેક ॥ હૈ વેદ પત્ર શાન્તિ જિસ કી ડાલી ॥  
 અરુ જ્ઞાન પુષ્પ નિજ તત્ત્વ સે સખ હરિયાલી ॥ ખુશબૂ હૈ  
 પ્રગટ સખ જગહ ન કોઈ ખાલી ॥ જો દેખા ચાહે સેવે બન  
 કર માલી ॥ સ્વધર્મ ધારા શ્રદ્ધા સે પહુંચે જાઈ ॥ ૧ ॥ જિન  
 પાયા તત્ત્વ પાગચે પાયંગે જિતને ॥ ઉપાય ઇસ સે ઓર કહા  
 નહિં કિસને ॥ સતસંગતિ કર કલ્પવૃક્ષ કો સેવો ॥ માનુષ તન કો  
 મત વૃથા જગત મેં ખોવો ॥ યહ પન્થ સંત સે મિલે જો હોય  
 સહાઈ ॥ ૨ ॥ જો પ્રેમ નેમકર સતસંગતિ કો સેવે ॥ જખ શુદ્ધ ભાવ  
 હો પ્રગટ અવિદ્યા ખોવે ॥ જીવ ભાવ ઉઠિ જાય બ્રહ્મ કો જાને ॥  
 કર્મ ભકિત નીતિ કો ઠીક પહિચાને ॥ શીલ સત્ય સન્તોષ સ્વતઃ  
 આજર્ઠ ॥ ૩ ॥ જિન કલ્પવૃક્ષ કા લિયા સહારા જગ મેં । વો  
 ખુસ હો લૂટેં મૌજ ન આવે ભગ મેં ॥ લખ ગુપ્ત રૂપ હૈ સખ

प्रगट घट घट में ॥ जे देखा थाहे देणे धसी तन मठ में ॥  
ध्रुव यह वक्त अमोल न आवे सदाई ॥४॥

१७१ अथ सप्तप्यसन लावनी (महिरा)

हम आप रुप की मय का पिया पियाला ॥ जे झूठी मय  
को पिये तिन का मुण्य काला ॥ टेका ॥ हमें सत गुरु मिले कलाल  
हैं लर प्याली ॥ अन्तर के जुल गये यश्म छाये रह्यो लाली ॥  
हम पिया प्रेम के साथ अमल जय छाया ॥ सय भिटे लर्म  
और कर्म रह्यो नहिं माया ॥ हम करै न कोई जप रटै नहिं  
माला ॥१॥ जे गोडी माधवी और पेसटी पीना ॥ तिन का है  
वृथा जगत में लुना ॥ कोई लर के जातल पिये कोई पिये  
अधा ॥ फिर किरिया करते नीय होय मुण्य लदा ॥ हो गया कलेज  
लरुम नयन में जला ॥२॥ जय जगे परमल काम भोजता  
नारी ॥ थाहे मिलो वेश्या नीय यह भलतारी ॥ भोगे नहिं  
गिनता दाय गहं मति भारी ॥ इस नीय अमल ने करी जगत  
की ज्वारी ॥ आपस में एकती गाल ससुर औ साला ॥३॥  
ऐसा नहिं कीजे कर्म लरम सय त्यागो ॥ अय मोह निशा  
की नींद त्याग कर जगो ॥ तुम गुप्त रुप का लरकर पियो पियाला ॥  
जिस कर के छोटे जनम भरन का नाला ॥ क्या दुनिया के रंग  
देख हुवा मतवाला ॥४॥

१७२. भांस ।

जे नर जाते हैं भांस सोई करुसाई ॥ हम नहिं कहते  
यह जात शास्त्रने गार्ह ॥ टेका ॥ सय कहें जुदा की इह गति अरु  
मुरगे ॥ अकरा लैसा और लेउ किये क्यों मुरदे ॥ नेत्र से  
नेत्र मिले तिहली से तिहली ॥ जय भार इहको इह अडी कर-  
जुहली ॥ करै जुदा से षेर समुझे नहिं राई ॥१॥ दिन लर तो  
रोज करे पढे कुराना ॥ फिर भारे रातको इह कराल हलवाना  
जिसकी तुम पढे नवाज पांय वेर दिन में सो सय रुहन में  
रहे सोय कुछ मन में ॥ जाने नहिं न्याय धन्साइ हुये अन्याई  
॥२॥ छटि आया और का भांस त्रास नहिं तुमको ॥  
फिर तेरा ली गले को सोय यह मुजको निकसेगी जहां



કિતાવ્ય જ્યાવ્ય નહિં આવે ॥ મન આવ્ય ઝોરે કા માંસ  
દેર પકિતાવે ॥ રમના કે વશ હોગયા મીન કી ન્યાઈ ॥ ૮૮ ॥ આપણ  
કા પાયા જન્મ કિજલો જતી ॥ પિર આને માંસ શરાવ્ય ખરે હું  
પાપી ॥ જન્મ કિજે વરણ કે પાપ દામ વદ કરે ॥ નીચો કે  
મિર દોષ દાહે કો વરે ॥ આને ખરે પકિત કોમ રાખે ગુનાઈ ॥ ૮૯ ॥

૧૭૩. વૈશ્યા ॥

દામ નિશા કે જાગ પદા મન આવે ॥ મન કરે વૈશ્યા કા  
સુગ રંગ ક્યો આવે ॥ ૯૦ ॥ વૈશ્યા કો વિપવત જાન કરે મન સંગા  
નિમ વૈશ્યા કે સંગ દોષ વર્મ કા જંગા ॥ આંદ દેશા હી દો વની  
દેશા હો જંગા ॥ સમ તન વન કો હરિ લેત બનાદે નંગા ॥  
દમ કરે હું સમઝાય ગણિદા મન જોયે ॥ ૯૧ ॥ જપ તપ સંયમ અક  
દાન સુલી નરિ જોયે ॥ જેમે કિરે કુંઠા વૃક્ષ જડા સિદ્ધતવે ॥ કોઈ  
જાગત ના ફલ ફલ દોષ ખડ હાની ॥ દમ સવ નરકનદી આની  
વૈશ્યા જાની ॥ મન વૈશ્યા તાંવે માહિં મણિયા મન પાવે ॥ ૯૨ ॥  
વૈશ્યા કે જાણ કરે મન પારી ॥ વદ જાડયા લેય બનાય કરે  
ખરી જ્યારી ॥ કરે વન અક બલદા અંત દેર વમકાવે ॥ તુઝે  
મે વેર કહી જયાર વદાં ક્યો આવે ॥ સમ આવે લોક પરલોક  
મુરખા રોવે ॥ ૯૩ ॥ એમે નર તનકા પાપ અકારણ આવે ॥ નાહિં  
સુને ગુનકી આત અન્ત મં રોવે ॥ જે દહે વર્મ કી આત કરે  
મે હોંચી ॥ એમે મં પકિત મર્ક આવે દાસ કી હોંચી ॥ જન્મ  
અન્ત સમય કે માહિં કોઈ નાહિં દોષ ॥ ૯૪ ॥

૧૭૪. કુલ ॥

સદે કા ચલા રોજગાર મર્ક સાદુકારી ॥ વદ આવે દુરામી  
માલ મર્ક મન પારી ॥ ૯૫ ॥ નહિં કરે ઝોરે રોજગાર દાર વદ  
કાની ॥ સદે કુલ દોષે લાભ સદે દોષે હાનિ ॥ જે કુલ કીનાથા  
માલ બે ને કહા ॥ નિમ કે અમ બલન લેત કિલામી સદા ॥  
નહિં આવે આંક કિલામ દોષ જન્મ જ્યારી ॥ ૯૬ ॥ સદે કી  
જપ દુકાન કુપયા જાવે ॥ ખરે કેમ સદે હું વાટ આંક કમ  
આવે ॥ જેમે વરખા મન પાપ જલે જવાયા ॥ એમે જલેતે  
સાદુકાર લાભ કી આયા ॥ જે આજવે દમી માલ સદે ખરી

ત્યારી ॥૨॥ જખ આવત નાહિં આંક ખાક મેં મિલતે ॥ તખ  
રોવત મથાફટ હાથ દોઉ મલતે ॥ સખ હુટિ ગયા ઘર કા માલ  
ખાત સખ ખિગડી ॥ દૂડા જૂતા હૈ પૈર ફટી શિર પગડી ॥ તખ  
ચોરી કરને લગા લાજ ખોઈ સારી ॥૩॥ ફિર લેવે મૂડ મુડાય  
ખને હૈ સાધૂ ॥ લોગો કો ખતાવે આંક કરે ખડિ જાદૂ ॥ નાહિં  
ગુમ ખાત કો ખોજત મૂઠ અનારી ॥ કોઈ સંન્યાસી અનિજાય  
કોઈ બ્રહ્મચારી ॥ લોગોં સે ઠગિકર માલ કરે ફિર જારી ॥૪॥

### ૧૭૫ નારી

પરનારી સે પ્રીતિ ભૂલિ નાહિ, કરની ॥ પરનારી એસી જન  
પાવક કી અરની ॥૧૮૬॥ અપના રખિ ખાલી ખેત ઓર કા ખોતે  
કછુ ફલ નહીં પ્રાપ્ત હોય મુઠ ફિર રોતે ॥ ઘરકી કો દીના ત્યાગ  
શેવે પરનારી ॥ તખ ઘરકી કરતી જાય ઓરતેં ચારી ॥ જખ ઉર  
મેં હોય કલેશ લગે ખડિ જરની ॥ પરનારી પૈની છુરી અંગ  
સખ કાટે ॥ જૈસે કોઈ ડાકિન ખૂન માંસ કો ચાટે ॥ સખ તન  
ધનકો હુરિલેત કરે તુઝે ખાલી ॥ સખ ભદ્રા પડજાય અદન રહે  
નાહિં જાણી ॥ નર કો નિશ્ચયકરે ખાય કહે જિસે નરની ॥૨॥  
નારિ સખહી હૈ જુરી વેશ્યા પરકી ॥ યહુ તીજી કહિયે નરક  
નિશેની ઘરકી ॥ યહુ એક વિષય કે સંગ પાવતે નાશા ॥ યહુ  
જનો સચ્ચી ખાત હૂઠે નાહિં માસા ॥ પરત્રિયા સે કરૈ ગમન  
તિનકી દશા અરની ॥૩॥ નહિં દેખેં ગુમ સરૂપ વિષન મેં  
ભૂલે ॥ ફિર અન્ત સમય કે માહિં ખાટ મેં ફૂલે ॥ જખ ચલે  
કંઠ મેં પ્રાણુ ઉઠા ઘર્યા ॥ નેતર મેં છુટા નીર હિલાવે માથા ॥  
અખ કીજે કૌન વિચાર પડા વૈતરની ॥૪॥

### ૧૭૬. હિંસા ।

મતકરે જીવ કી ઘાત ખાત મુન પ્યારે ॥ સખ પરમેશ્વર કી  
રૂહ નહીં કુછ ન્યારે ॥૧૮૭॥ જૈસા દુખ તુઝકો હોય ઉસે ભી  
હોવે ॥ કુછ મન મેં કરો વિચાર પડા મત સોવે ॥ બિન કારણહી  
દે દુખ ઓર કો ભારી ॥ અપને કો ચાહે આરામ ગઈ મતિ  
મારી ॥ જિસ કરે કુટુમ્બ હિત પાપ હોહિં સખ ન્યારે ॥૧॥  
હિંસા હૈ ત્રીન પ્રકાર કહોં સમુઝાઈ ॥ કાયક વાયક માનસ



વેદને ગાઈ ॥ દૂજે કો દેવે દુખ સોઈ કસેસાઈ ॥ દૂજે કો દેના  
 સુખ સોઈ ધરમાઈ ॥ સુખ સે સુખ તુઝકો હોય દુખ સે દુખ  
 ભારે ॥૨૧॥ જૈસા કુછ દેના દાન વૈસા મિલ જાવે ॥ જવ બેલી  
 બોલે કટૂ દાખ કૈસે આવે ॥ જો સુખ ચાહે જીવ તજો અખ  
 હિંસા ॥ કરના ચલિયે વહી કામ વેદ પરસંસા ॥ જિસ કરકે  
 હોય આરામ દુખ છૂટે સારે ॥૨૩॥ તુમ છોડો કર્મ નિષેધ વિધિ  
 કો કરના ॥ ફિર તીન મેં ભી સહકામ દેત હૈં મરના ॥ જાસે  
 પાવે ગુપ્ત સરૂપ કહો નિષકરમા ॥ સખ છૂટે જનમ કે પાપ  
 હોય નહિં મરના ॥ અખ કિજૈ એસા કામ કાલ નાહિં ખારે ॥૧

### ૧૭૭. ચોરી ।

જો પર ઘર ચોરી કરત મરત હૈ તે જન ॥ આગે પડે યમ કી  
 માર હરયા ક્યોં પર ધન ॥૨૧॥ કોં ભલ પર પકડા જાય માર  
 લગ ગાઢા ॥ જૈસે કોઈ રખ્યડ લોગ કાઢતેં પાડા ॥ ફિર પકડ  
 લેત સરકાર શોચ કરે મન મેં ॥ સખ ચોરી કો લે કાઢિ એકહી  
 દિન મેં ॥ જખ લગે દુતરફી માર બિગડ જાય સખ તન ॥૧॥  
 જો હરે પરાયા માલ હાલ યહ જિનકા ॥ કલિ નાશત નાશત  
 નાહીં શોક તિનોં કે મન કા ॥ ચોરી કે સંગ મેં રહે ઝુંઝ દિન  
 રાતી ॥ જૈમે દીપક જખ જલે તેલ અરુ ખાતી ॥ સખ દેખેં  
 એસે હાલ ડરે નાહીં મન ॥૨॥ ચોરી જીવે કા કામ જુરા હૈ  
 પ્યારે ॥ જો કરતે એસા કામ ફિરત હૈ મારે ॥ આગે વિગડે  
 પરલોક લોક મેં નિંદા ॥ જો કરતે એસા કા પડે ગલફંદા ॥  
 એસી હોવે દુરગતી મિલે નાહિં અન્ન ॥૩॥ છોડો ચોરી કી  
 ખાત હાથ ક્યા આવે ॥ ફિર અન્ત સમય કે માહિં બહુત પશિ-  
 તાવે ॥ કીજે નહિં એસા કામ મનુષ તન પાકે ॥ લખે ગુપ્ત  
 અપના રૂપ કહું સમજાકે ॥ મત ફિરે ઉલ્લૂ કી તરહ અવિદ્યા  
 બન બન ॥૪॥

દોહા—ધન્યવાદ ઉસ પુરુષ કો, જોકો વ્યેસન ન એક ॥

સો ઉત્તમ સખ નરન તેં, વાકેહિ વિમલ વિવેક ॥

એક એક ને મારિયાં, ખડે ખડે ઉત્તમ મૂપ ॥

જામેં સાતોં વ્યસન હૈં, ક્યોં ન પડે ભવ કૂપ ॥  
 માનુષ તનકો પાય કર, ક્રિયા નહીં શુભ કામ ॥  
 તિસતે અચ્છા જાનિયે, ઢોર પશૂ કા ચામ ॥

૧૭૮. લાવની ।

દેવન કો પૂજા કરો આર્ધ દીવાલી ॥ ચક્ર સખ દેવન કા  
 દેવ આતમા વાલી ॥૧૮૬॥ યહ કાયા દેવલ જન આતમા દેવા ॥  
 તિસકી અખ સેવા કરો ખતાઉં મેવા ॥ કરો શીલ અશનાન  
 પહિર સત શોલા ॥ પ્રેમ કે પાત્તર માંજ રહે નહિં મૈલા ॥  
 આશા તૃષ્ણા કા ત્યાગ બનાવો થાલી ॥૧૮૭॥ જપ તપ તીરથ  
 ઔર દાન ઘંટા વજવાવો ॥ નિષ્કામ કર્મ કી ધૂપ પ્રેમસે લાવો ॥  
 જત સત કા કરો સિંગાર લગા સિંહાસન ॥ તિસકે ઊપર લગ  
 રહા દેવ કા આસન ॥ ઉડતે શુભ કર્મ ગુલાલ ચમકિ રહિ  
 લાલિ ॥૧૮૮॥ ચિત કે ચન્દન કો ચરચ પ્રીતિ કો પાતી ॥ દિલ સે  
 દીપક કો વારિ ધારોં દિન રાતી ॥ કરની કા કીટ બનાય મુકુટ  
 મન કીજૈ ॥ ફિર ચઢે પ્રેમ કે ફૂલ દેવ જખ રીઝે ॥ એસા પરિ  
 પૂરણુ દેવ નહિં કછુ ખાલી ॥૧૮૯॥ એસા નહિં પાવે વક્ત ગુપ્ત  
 તુઝે કહતા ॥ જો એસી પૂજા કરે જગ મેં નહિં બહતા ॥ કલિ  
 કાશી સેવે જાય કલ્પી સેવે મથુરા ॥ સેવે નહીં ચેતન દેવ પૂજે  
 કયા પથરા ॥ કયા પૂજત ફિરેં ગવાર ભેંરૌં અરુ કાલી ॥૧૯૦॥

૧૭૯. લાવની ।

ભરમ ક્યોં બિના બિચાર દૂસરે મન્દર ॥ ઇસ તન કે અન્દર  
 દેખ મૂરતી સુંદર ॥૧૯૧॥ જિસકે નાહીં રંગ રૂપ ઊપકયા કહિયે ॥  
 તિસકે દરશન કો પાય પરમ પદ લહિયે ॥ નહિં સમુઝત મૂઢ  
 ગવાંર ફિરત હૈ મારા ॥ દેખા ચાહત હૈ મૂઢ આપસે ન્યારા ॥ ખાતા  
 ડાલત પરસાદ હોગયા બંદર ॥૧૯૨॥ નહિં કારણ સૂક્ષ્મ થૂલ મૂલ હૈ  
 સખ કા ॥ ધરની જલ પાવક પવન સમઝલે નભકા ॥ હમ કહે તોહિં  
 સમઝાય દેવ હૈં એસા જાકિ સેવા હોય નિષ્કામ ચઢે નહિં પૈસા ॥  
 ઇસ ઘટકે ભીતર દેખ ચમકી રહા ચંદર ॥ ૨ ॥ કરલે તિસકા  
 દીવાર પાર હો ભવ સે ॥ કયા દેખે ઝૂઠે દેવ તિરે નહિં તિનસે ॥



પૂજત હું જુઠું જુત ગઈ મતિ મારિ ॥ ચેતન વડે જડ સે કહે  
રક્ષા કર હમારી ॥ કુછ કરતા નહીં વિચાર આપને અન્દર ॥ ૩૩ ॥  
દેવન કા દેવ હું આપ દેખ અરુ જાને ॥ કુછ દેવ ન પૂછે જાત  
નહીં પહિચાને ॥ શાસ્ત્ર ને કહા હું દેવ એક પુરુસારથ ॥ દુગ્ધ  
નહિં કોઈ દેવ કહો યથારથ ॥ વહેજતે હું નર મૂઠ જગત સમન્દરાક્ષ

### ૧૮૦. લાવની

કરતે હું બહુત અચાર વિચાર ન કરતે ॥ તિસ અહંકાર કે  
માહિં દુષકર મરતે ॥ ૧ ॥ યહ કાયા સદા મલીન શુદ્ધ નહિં  
હોવે ॥ જિસકી શુદ્ધિ કે અર્થ કાલ કો જોવે ॥ યહ બંધી મૂતકી  
ગાંઠ જિસે બડા ધોવે ॥ કિતનેઈ ચન્દન લેપ શુદ્ધ નહિં હોવે ॥ જળ  
તક ઇસ મેં હંકાર તબી તક મરતે ॥ ૨ ॥ જોકે નવ દ્વારન કે  
માહિં નઈ નિત ઝરતા ॥ સ્થાન બીજ દો બ્રહ્મ શુદ્ધ દૈસે કરતા ॥  
ઇસ તન કી શુદ્ધી લાગિ જન્મ કો જોવે ॥ કિતનેઈ મજ્જન કરો  
શુદ્ધ નહીં હોવે ॥ સોઈ નર મૂરખ જાન કામ યહ કરતે ॥ ૩ ॥  
બેડે લાતે તેલ કુલેલ બને હું ચુન્દર ॥ બીતર સે જોજત નાહિં  
ચામ કા મન્દર ॥ એસેહી સખ નર નારિ ભૂલિ ગયે તન મેં ॥  
કુછ કરતે નહીં વિચાર અપને મન મેં ॥ નિત આતમ ચેતન  
શુદ્ધ જોજ નહિં કરતે ॥ ૪ ॥ સો સદા આપના રૂપ શુદ્ધ કા શુદ્ધ ॥  
જગત સ્વપ્ન સુષુપતિ સદા પર બુઢા ॥ સતસંગત કો પાપ ભેદ  
કહ્યુ જાને ॥ જળ યુગ્મત સર્વ મલીન શુદ્ધ પહિચાને ॥ વહે શુદ્ધ  
રૂપ પરકાશ કર્મ સખ જરતે ॥ ૫ ॥

### ૧૮૧. લાવની ।

કહને કો સબી ને કહા ન રખા બાકી ॥ બિન જવા કહે  
કયા આપ અપના સાખી ॥ ૧ ॥ જો ઘર રખે સો અપને ઘર કો  
પાવે ॥ જો ઘર જોવે વહ ઘર ઘર ઘડકે જાવે ॥ કહિં પુણ્ય કરે  
તો પાપ તુરત બનિ જાવે ॥ કહિં પાપ કિયે તે સ્વર્ગ વાસ મેં જાવે ॥  
જો કરે શુભ કી ઘાત વહ દેખે ઝાંકી ॥ ૨ ॥ જો લોભ કરે તો  
ક્ષોભ તુરત મિટિ જાવે ॥ કયા તજે સે દિલ કા દરદ હટિ જાવે ॥  
યોગ તજે વહ યોગ કે માહિં સમાવે ॥ જ્ઞાન તજે તે વિદ્યાવાન  
કહલાવે ॥ તન જલા બસ્મ મલને સે હોવે બાખી ॥ ૩ ॥ પરકો

પીઠા કરે સો હોવે પૂરા ॥ જો વિપય ગહે વોહ કંન્દ્ર છતહે  
સૂરા ॥ જો ભોગ કરે વહ જન્મ રોગ કો ધોવે ॥ તુખા કરને સે  
તિનોં તાપ કો ખોવે ॥ વેદ શાસ્ત્ર કા ચૂરણ ખના કર ફાંકી  
॥૩૥ ત્યાગ કિયે સે રાગી ખન ઐઠે હૈં ॥ ઊપર જાને સે આપ  
ગિરે રેઠે હૈં ॥ યહ ગુપ્ત જ્ઞાન સમજે સો બેખરકે હૈં ॥ બિન સમજે  
નર ચોરાસી મેં ભરકે હૈં ॥ દ્રુવ ત્યાગ અહણુ કી સભી ખાસના  
નાકી ॥ ૪ ॥

### ૧૮૨. લાવની ।

બિન યતન રતન યક ખન મેં ભોગતા ભોગી ॥ મુન કથન  
સજન તજ વતન હોગયે યોગી ॥ રેક ॥ બિન પૃથ્વી પરવત હૈ  
યક ઊંચા ભારી ॥ પંગૂ ગિરવર પર ચઢા ગઈ મતિ મારી ॥  
બિન નેત્ર દેખવે દિલ સે ખુશી હુઈ ભારી ॥ કર બિન સે અહણુ  
કર કરે નૃત્ય દે તારી ॥ બિન મર્મ શર્મ તજિ દઈ સો જાનો  
રોગી ॥૧॥ બિન પતી સતી ને તન બિનુ પુત્તર જાયા ॥ જન્મતે  
પુત્રને સભી કુટુંબ કો ખાયા ॥ બિન અંગ સંગ વો પિતાસેં જાકે  
કરતા ॥ બિન બદન પિતા મુખ ચૂમ અડં મેં ધરતા ॥ એસી  
અચરજ કી બાત હુઈ અરુ હોગી ॥ ૨ ॥ બિન નીર સંમદર  
બીચ કુવાં પનિઘટ કા ॥ હિલ મિલ કે સખી જલ ભરેં ન  
હુએ મરકા ॥ યક પથિક મુસાફિર આન કુવે પર અરકા ॥ વો  
જલ માંગે વો કરે સેન ઘૂંઘટ કા ॥ જખ ચઢા વારી તો પથિક નાર  
ભય સોગી ॥૩॥ યહ ગુપ્ત જ્ઞાન વિનુ શ્રવણ સે જો મુનિલેવે ॥  
બિન બુદ્ધિ સે સમજ રમજ મેં રહવે ॥ યહ વચન કહે વિપરીત  
મગ્ન તુઝે દેવે ॥ ઉલટ કો મુલક ચીનહ ઓર ક્યા કહવે ॥ ધ્રુ  
જનમ મરન કી સભી અવિદ્યા ખોગી ॥૪॥

### ૧૮૩. લાવની ।

બિના મુલ યક ફૂલ ગગન બિનુ દેખા ॥ તિસ ગુલમેં ગુલ  
ખિલ રહે ગિનતિ નહિં લેખા ॥૧॥ યક બિન અચરજ કી બાત  
કહે વિનુ બાની ॥ કોઈ મૂરખ લેવે સમજ સમજે નહિં જ્ઞાની ॥  
અમૃત કા ખના તલાવ અગિન ને ફૂંકા ॥ યક ખાતા હૈ દિન રાત  
મરે નિન બૂકા ॥ ધારે સૂક્ષ્મ સ્થૂલ રૂપ નહિં રેખા ॥૨॥ ધરની





सखी नर नार है ॥ सव के शामिल मिल रहा, सवसे जुड़ा यक  
तार है ॥ वो मुझमें है मैं हूँ उसके चेहरे पे ॥ ३॥ दुनियां से  
धोकर हाथ सनम को पाया ॥ वो मिला मुझे महमूद रंज  
विसराया ॥ इस विधिमें वोहि विधिभर कहलाया यह नाम  
इप सवही है उसकी माया ॥ शेर ॥ सर्व में सर्वज्ञ है, वो सर्व  
में भरपूर है ॥ ज्ञान दृष्टी से मिले अज्ञान से वो दूर है ॥  
आशिके हो के छूटता नहीं, मिलता उसे वो जरूर है ॥ सत्य  
आनन्द कंद मेरा गुप्त असली नूर है ॥ ध्रु रहता है हरवज  
तेरे सहरे पे ॥ ४॥

### १८५ लंगड़ी लावनी

धरक आशिक पूरे करते, धरको कर परभाद कदम भागूक की  
तरफ धरते ॥ १॥ लौ भागूक से लगी रहती यशम से जल  
धारा बहती ॥ धड़ि नहीं और विषय गहती, तमियत भागूक को  
बहती ॥ होला, दुनियां से हो तर्क, गर्ज यक भागूक के भाई ॥  
दमपै दम ये निकला जाता, सूजत कछु नहीं ॥ सनम क्यों अलग  
र छूटते ॥ २॥ धरक का जेश हुवा भरपूर, दीजने लगा सनम का  
नूर ॥ जिसपै मैं गिरा हूँ होकर चूर, उसी का रहता मुझे गरूर  
होला, मुझको मुसियत देते हो, क्यों छसते हो मुझ केर ॥ गले  
लगाकर मिला आप, अण्य क्यों करते हो देर ॥ हुये दिन अलग  
बहुत रहते ॥ ३॥ दयाकर दिया दरश मुझको, कहुँ मैं क्या क्या  
अण्य तुझको ॥ सगज आती है समझे को, पाहुँया अण्य तेरे दरजे  
को ॥ होला, जणसे भागूक मिला, शाय अण्य रहा न मिलाने  
का ॥ दोनों की तमियत ओक छुछ नहीं जगर है हिलने का ॥  
देर अण्य छलटे नहीं छिस्ते ॥ ४॥ आशिक भागूक की अकही जन  
जैसे धी चिकनाई ले मान ॥ धरक यह छककानी पहियान ॥ शीजसे  
गुप्त गुरू से ज्ञान ॥ होला, गोवर्धन धनश्याम कृष्ण की दिल से  
रखियो याद ॥ जन्म धरका सार यही है, जगको कर परभाद ॥  
छुकर धरक विना सिरते ॥ ४॥

### १८६ लावनी

शिकारी दम है पूरे यार, जिस तन के वन में बचल भिरघा  
भेलत बाढ़ी शिकार ॥ १॥ यरै जहूँ भिरघन की टोली ॥ मारते



બિન કાશ ગાલી ॥ મિરથી દસ યક મિરઘ કાલા ॥ ૬ ॥ જિસકે સિર  
પર હો બાલા ॥ દોહા, ધરની બિનુ મિરઘા ચરે, બિન જમી ખેતી  
ખાય ॥ સૂરદાસ કો બાસતે નેત્રસે દીખે નાય ॥ ખાતે નહીં ચાર  
ન્યાર ॥ જગત સખ તિનકો કિયા ખુવાર ॥ ૧ ॥ મિરઘા કે નહીં  
બદન નહિ ગાત ॥ ખાને કો ખાતા હૈ દિન રાત ॥ ગિને નહિ  
સંધ્યા અરુ પરભાત ॥ પૈર બિન મારે સખ કે લાત ॥ દોહા, બિનુ  
અચરજ કી ખાત, યહ કરકે દેખો ખ્યાલ ॥ સોઇ પૂરા પારથી,  
જિન ગેરા મિરઘ પર જાલ ॥ બિન કર પકડે દો સીંગ, પટકિ બિનુ  
ધરની દિયા પછાર ॥ ૨ ॥ બિના કર પકડી હમે કમાન, ખેચિ  
મિરઘા કે મારા ખાન ॥ લગા બિન સરકા જિસકે તીર ॥ મિટી  
મિરઘા કી સગરી પીર ॥ દોહા, સુખી ભયા મિરઘા ચરે, ન કહિ  
રાગ ન દોષ ॥ મારે તે સો અમર ભયા હૈ, કરિકે દેખો હોસ ॥  
અજર અમર અખ ભયા તિસે નહીં સકતા કોઈ માર ॥ ૩ ॥  
ગુપ્ત કા એસા હી પરભાવ, ચલે નહિ જિસ પર કોઈ દાવ ॥  
કહી મિરઘ મારન કી યુક્તિ, ઇસીસે પાવત હૈ મુક્તી ॥ દોહા, બેદરદી  
બહે મિરઘા મારે, જખ હોવે આનન્દ ॥ જો કોઇ રક્ષા કરે જીવકી  
સો પડે કાલ કે ફંદ ॥ ઇસ વિધિ સુધરે સખ કાજ, આજ હમ  
કહતે યહી પુકાર ॥ ૪ ॥

### ૧૮૭ લાવની ।

માન કહિ તજિદે ભરમ વિકાર ॥ ઇન નર કે તન કો પાવ  
કીજિયે ઇસ મેં કછુ વિચાર ॥ ૧ ॥ કિયહ તન એસા હૈ નીકા ॥  
દેવ બ્રહ્માદિક કા ટીકા ॥ યહી ઉધારન હૈ જીકા ॥ ભક્તિ વિનુ  
ક્યોં રખતા ફીકા ॥ શૌર ॥ યહ માનુષ તન તોકો મિલા, કુજ  
કરકે દેખ વિચાર ॥ ૨ ॥ યક પલક માહીં નાશહો પછતાયગા ફિર  
યાર ॥ ૩ ॥ દિલ અન્દર કરો વિચાર, ફેર તુઝે મિલે ન ફૂલ વાર  
॥ ૪ ॥ કરો અવ ઇસ મેં કછુ વિચાર, કોન મેં કો યહ સખ  
સંસાર ॥ કિસ કે યહ રહતા હૈ આધાર ॥ યહી હૈ સવ સારન  
કા સાર ॥ શૌર ॥ માલા મેં મનકા રહે, સવ સૂત્ર કે આધાર ॥  
સૂત્ર તિન મેં એક હૈ, સવ મનિકો કા વ્યભિચાર ॥ ૫ ॥ એસો  
જાત અરુ સ્વપ્ન સુપોપતિ, આતમ કે આધાર ॥ ૬ ॥ સોઈ હૈ  
વ્યાપક બ્રહ્મ સ્વરૂપ, ફેર નહીં પડતે હૈ ભવ રૂપ ॥ શૌર ॥ અગર

જો તૂં ચાહે એક તાર્થ, તો જુદાર્થ તોડદે ॥ યક આવ દિલ મેં  
સમજ કે, સવ બુદ બુદાર્થ છોડદે ॥ અવ પંચ કોષ અરુ, તીન  
દેહ કા પટકો સિર તેં ભાર ॥ ૩ ॥ રોગ કી ઔષધિ વતલાર્થ  
સેવન પથ સે કીજે ભાર્થ ॥ દૂરિહો મન કી સવ કાર્થ, વાત યહ  
વેદોને ગાર્થ ॥ શેર ॥ યહ વક્ત બીતા જાત હે, કર લિજિયે ધસ  
કાજ કો ॥ અવ ગુપ્ત સાગર માર ગોતા, છોડ જગ કી લાજ કો  
॥ ધસ તન કા તજ હંકાર, ચપરિ કે મત ના વને ચમાર ॥ ૪ ॥

### ૧૮૮ લાવની ।

પડા ક્યા ગફલત મેં સોવે ॥ કાચા કા કાચા કોટ કાલ કી  
પડે ચોટ રેવે ॥ ૧ ॥ કાલ કા જગ મેં માચા શેર, કિસી કા ચલે ન  
ઉસ પર જોર ॥ ગિને નહિં સાહુકાર અરુ ચોર, અપના પર કા  
ગિને ઔર ॥ શેર ॥ ધસ કાલ ને ખાલી કિયે, સખ લોક અરુ  
લોકાપતી ॥ નિરભય હોકર મારતા, અચતા નહીં યોગી યતી ॥  
કછુ ઘાલિ રહા મુખ માહિં, કછુક તો રાંધે કછુ પોવે ॥ ૨ ॥ તજે  
જો અધિ ભૌતિક હંકાર, કાલ કી પડે ન ઉસપર માર ॥ સોઈ હૈ  
સખ કાલન કા કાલ, કાલ કા પડે ન ઉસ પર જાલ ॥ શેર ॥ અગ્ની  
સે વહ જલતા નહીં, જલ નહિં સકતા ગાલ વે ॥ હવા સે સૂખે  
નહીં, ક્યા કરે તિસકા કાલ વે ॥ કર દેખો દિલ મેં ખ્યાલ, લાલ  
કો ક્યોં વિરથા પોવે ॥ ૨ ॥ લીજિયે સતસંગતિ કી ઓટ, દૂર  
હોવે સવ તેરે ખોટ ॥ પહિરલે જ્ઞાન કવચ કા કોટ, વહાં પર ચલે  
ન યમ કી ચોટ ॥ શેર ॥ ચારોં કહેં પુકાર કે, જ્ઞાન વિતુ મુક્તિ  
નહીં ॥ તૂં સમજ અપને જહન મેં, યહ વાત હમ તોસેં કહી ॥  
મન તાગા કર વારીક બ્રહ્મ મેં ક્યોં ના અવ પોવે ॥ ૩ ॥ જ્ઞાન  
કે મુન લીજે સાધન, વિવેક વૈરાગ હોય સમ્પન્ન ॥ વિષય તેં રોકે  
ધન્દ્રી મન' યહી હૈ સવ પુનન કા પુન ॥ શેર ॥ જવ સાફ અન્તઃ  
કરણ હો, નહિ રહે મલ વિદ્વેષ કો ॥ સાધન કહે યહ જ્ઞાન કે  
ફિર પોવે તિસ સે મોક્ષ કો ॥ યહ પાયા તુઝ કો વક્ત, ગુપ્ત કો  
પાય મૈલ ધોવે ॥ ૪ ॥



## ૧૮૯. લાવની ।

નીર વિનુ ચસે કૂપ દિન રાત, બિનુ બેલ ચર્સ બિનુ લાવ  
 નહીં, કોઈ હાકનવાલા સાથ ॥૮૬॥ કુવે પર પનઘટ લાગે ચાર,  
 નીર ભરને કો ચલી હૈ નાર મારગ મેં પડતે વિધન અપાર, કૂપ  
 પૈ પહુંચે કોઈ પનિહાર ॥ શેર ॥ જિસ મારગ મેં વિપયર સર્પ  
 હૈ, દન્ત બિનુ સખ કો ડસે ॥ જહુર સખ તન મેં ચઢે પ્રાણ કાયા  
 સે નસે ॥ બિનુ જલ નહિં જાવે પ્યાસ, પાસ કુવે કે કૈસે જાત  
 ॥૧॥ મિલે કોઈ વાજગર સૂરા, સર્પ કામન્ત્ર દે પૂરા ॥ કૈર જખ  
 ઉસ મન્તર કા જપ, કૈર નહિં ચઢતા વિષ કા તાપ ॥ શેર ॥ યહ  
 મન્ત્ર જિસ કે પાસ હૈ ફિર સર્પ કા કુછ ડર હી નહીં ॥ ઉસકો  
 કછ સંશા નહીં, વહ કૂપ પર પહુંચે સહી ॥ દૂજ નહિં સકતા  
 જાય, સમઝ હમ સકતે સચ્ચી ખાત ॥૨॥ કોઈ નર આવે નાર  
 કે પાસ દેખકર મિટિ જાવે સખ પ્યાસ ॥ પિવે સે હોવે છવ કા  
 નાશ, ઝૂંઝ જાને છુદ્દી ચિદાલાસ ॥ શેર ॥ એસા જો અદભુત નીર  
 હૈ, પીવે સોઈ મરજાત હૈ ॥ જિસ ને ન પીયા નીર વહ, સો  
 જગ મેં ગોતા ખાત હૈ ॥ કોઈ મૂરખ સમઝે રમજ, વચન વાની  
 સે કહી નહિં જાત ॥૩॥ કૂપ હૈ બિના ધરણી આકાશ, જહાં પર  
 નહિં સંતાપ, ॥ સદા રહતા હૈ ગુપ્ત પ્રકાશ, જગત સે હોકર  
 દેખા ઉદાસ ॥ શેર ॥ કૂપ અપને પાસ હૈ, સતગુરુ વિના સમઝે  
 નહીં ॥ સખ કહતે સન્ત પુકાર કે, યહ ખાત વેદાં મેં કહી ॥  
 અખ કરો વતન કા યતન, નીર યોં વહી ઉમર સખ જાત ॥૪॥

## ૧૯૦. કવિત્ત અલૌકિક ।

પાયો નરતન યાર યામેં કીજિયે વિચાર કહ્યુ, સાર ઝોર અસાર  
 કહા દેખિયે વિચાર કે ॥૮૭॥ વૃથા મત જોવે મૂઢ અન્ત માહિં  
 રાવે કૈસે બ્રમ માહિં સોવે તુઝે કહત પુકાર કે ॥ બાર બાર તોં સો  
 કહી આયુ જાત સખ વહી, માનિલીજે મેરી કહી દુક ખાત કો  
 નિહાર કે ॥ જખ પાવેગા ગુપ્ત તવ હોવેગા મુક્ત મૂઠા જાનિયે  
 જગત ચિત લીજે યહી ધાર કે ॥

## ૧૯૧. કવિત્ત ।

કાલ વિકારલ સો તો કરત હૈ બુરો હાલ, કાહુ સે ન કરે  
દાલ સોચિયે વિચાર કે ॥ અજ ચીંટી પરચન્ત કરે સવહુ કો અન્ત,  
એસે કહે સવ સન્ત કાલ ગેરત હૈ માર કે ॥ યહ કાલ ભલા  
પાયો નરતન યામે આયો, તજ મોહુ ઓર માયા વૈરાગ ધાર  
લીજિયે ॥ જવલો નાહીં નિરવેદ તવ લો પાવત હૈ એદ, ચોં  
પુકાર કહે વેદ ગુપ્તરૂપ જન લીજિયે ॥

## ૧૯૨. કવિત્ત ।

કષ્ટ કીજિયે વિચાર નરતન કો યહ સાર, આપ રૂપ કો સંભાર-  
કર અમિય રસ પીજિયે ॥ તત્ત્વમસિ કો વિચાર દેખ સાર વા  
અસાર, સાર કો વિચાર વા અસાર દૂર કીજિયે ॥ પાવે વસ્તુ  
અનૂપ તાકી દીજિયે ન ઊપ કોઈ આપનો સ્વરૂપ સોઈ ઓર ના  
પતીજિયે ॥ દ્વૈત મન ધરે સો તો ગભાં માહિં જરે, દ્વૈત દૂર કરે  
સો તો પરમપદ પાકયે ॥

## ૧૯૩. કવિત્ત ।

જમેં હાડ ઓર ચામ એસો વસો હૈ યહ ગાંમ, કરના જો  
કામ સો તો યાહી માહિં કીજિયે ॥ મુત દારા પરિવાર સવ જનિયે  
અસાર, તોસોં કહી વાર વાર છિન એકહી મેં છીજિયે ॥ કીજે  
કામ કોઈ એસા જમેં લાગત ન પૈસા, છોડ દીજે એસા વૈસા  
એક ધંશ ચિત્ત દીજિયે ॥ કહે ગુપ્ત જો પુકાર એસા નિશ્ચય  
ધુર ધાર, એક વા હજાર વાર યહી મુન લીજિયે ॥

## ૧૯૪. કવિત્ત ।

પાંવ સે ચલત વસ્તુ કર સે ગહત, મુખ સે કહત શબ્દ શ્રવણ  
સુનત હૈ ॥ રૂપ નયન સે લખત રસ રસના અખત, ત્વચા શીત  
કો સેહત મન રાગ કો ધરત હૈ ॥ દેહ કો સંધાત કૃત્ય દેહ સે  
કરત આપ, દેહી તો અસંગ રંગ ઓર ના લહત હૈ ॥ દૃશ્ય તો  
અસત્ય આપહી કો જાને સત, વિચાર ચોં કરત જગ રૂપ ના પરત  
હૈ ॥ આસ જો તજત ગુપ્ત રૂપ કો મિલત, હોકે નિજનનન્દ વન્ધ  
વિનુ વિચરત હૈ ॥ વેદ ચોં લનત સ્વરૂપ માહિં હોય ગત, કુરુ  
લક્ષ પાય ચુપ આપહી રહત હૈ ॥



## ૧૯૫. કવિત્ત ।

માન મહિમાન રુપઆપનો પિછાન, દૃશ્ય નાશવાન જન  
હાટ કેસો મેલા હૈ ॥ કર્મહી કે યોગ આપ વનો હૈ સંયોગ, કર્મ  
કે વિયોગ ભોગ ત્યાગ લેત ગેલા હૈ ॥ યાતે તૂતો નિષ્કર્મ સવ  
દેહ ધર્મ, સ્વ કર્મ પાય કે કરત નાહિં હેલાહૈ ॥ એસો તત્વ  
જ્ઞાન ગુપ્ત જામેં નાહીં વંધ મુક્ત, ધુરુ નિશ્ચય મુક્ત જહાં અંધ  
ના ઉજેલા હૈ ॥

## ૧૯૬ કવિત્ત ।

જ્ઞાન સાગર મેં નહાવો માયા મલકો બહાવો, એસા દાવ  
નહીં પાવો યહ બાત સુન લીજિયે ॥ એસે જલ માહી નહાવે  
જળ શાંતિ ચિત્ત આવે, તખ ઔર ના સુહાવે કછુ આપને મેં  
રીઝિયે ॥ જાન્યા આપને કો આપ જળ મિટે તીનોં તાપ, જપૈ  
કૌનહૂ કા જપ કહો કાજ કૌન કીજિયે ॥ કરના ભયો સખ દૂર  
ગુપ્ત રૂપ હૈ ભરપૂર, સોઈ અપના હૈ નૂર સમઝ યહ લીજિયે ॥

## ૧૯૭ કવિત્ત ।

ચિત્ર યહ વિચિત્ર ચિત્ર મૈન સૈન સંગ લિયે, તાનકે સુમન  
વાન જન ઉર મારે હૈ ॥ મતી માન જો મહાન મતિ તાકી  
કરૈહાન, મુરખ અજાન કો બખાન કોન કરૈ હૈ ॥ લલના કો  
લોભ દેય તન ધન હુરિલેય, મનકો સંતાપ આપ પાપ માહિં  
ડારે હૈ ॥ એસો હૈ અનંગ અંગ બિન સંગ જાય કરૈ, મારકે  
સુચેત માર મરે હુયે મારે હૈ ॥ ગુપ્ત શિવકો સરૂપ મહિમા  
જાકી હૈ અનૂપ, માર મારે ચૂપ શિવ ભક્ત ના નિહારે હૈ ॥  
ધ્રુવશિવરૂપ જાન તાસે હોયે કામ હાન, શિવકે સ્વરૂપ બિન  
સવકો પછારે હૈ ॥

## ૧૯૮ કવિત્ત ।

દેખિયે સુજન જન દેખને કે યોગ્ય આપ, આપકો નિહાર  
જાપ દેવકા મિશાઈયે ॥ જાગ્રત સુપન મુષોપતિ ક્ષીન મન તિનકો  
જો સાક્ષી સો તો તુરિયા કહાઈયે ॥ એસો તુરિયા સરૂપ તુહીં  
તુઝ બિન ઔર નહીં, વેદ મહા વાક્ય સહી સંત અનુભવ સે

જાણ્યે ॥ ગુપ્ત રૂપ કો પિછાન કીજે માયા મલ હાન, ધ્રુવ લક્ષ  
ભાનિ કહાં જાણ્યે ન આણ્યે ॥

૧૯૯ સવૈયા ।

રૂપ અરૂપ સરૂપ હો ભાસત, દેખિયે ચિત્ર વિચિત્ર વનેહૈ ॥  
પુત્ર કલત્ર મિત્ર આદિ વહુ, આંખ સે દેખત શાસ્ત્ર સુને હૈ ॥  
દેહ સે આદિ ક્રિયા જિતની, ઉતની સવહી પલ માહિં હને હૈ ॥  
ખાંડ કો પૂત અકાશ કો પુખ, ઇમી સવહી યહ વેદભને હૈ ॥  
ચિત્ત ચિત્તેરે રચ્યો યહ કૌતુક, સ્વપ્ન સમાન યહ ચિત્ત જને હૈ ॥  
ગુપ્ત હૈ સાર અસાર સભી, ધ્રુવડર ડારિ કે જ્ઞાન ગુને હૈ ॥

૨૦૦ સવૈયા ।

સંત શિરોમણિ જે જગમેં, જિન પૂરણ બ્રહ્માહિ આપ  
પિછાના ॥ હૂં પરિપૂરણ એક સદા, દ્વૈત અદ્વૈત નહીં કછુ નાના ॥  
ઈશ્વર જીવકી ભેદ નહીં કછુ, ભેદ ઉપાધિહિ કૃત વાખાના ॥  
ઉપાધિ ઉપાધી કે ધર્મ સભી, મુઝ ગુપ્ત સરૂપ મેં નાહિં સમાના ॥

૨૦૧ સવૈયા ।

તન કે વન મેં તૃણ હિરની, જેહિ મારન હરિજન ચિત્ત  
હુભાયો ॥ ॥ ગમકી વાંદક ભરી ઘટ મેં શીતલ બન પલીત  
લગાયો ॥ જ્ઞાનકી ગાલી લગી તતકાલ, મરી મિરઘી મનમેં હર-  
પાયો ॥ કરની કી કરદ સે છિલિ વનાઈ, વૈષ્ણવ હોત કવાવ  
કે ખાયો ॥

૨૦૨ સવૈયા ।

કામ કબૂતર તામસ તીતર, જ્ઞાન કે ખડગ સે મારી ગિરાયો ॥  
પંખ પરપંચ દૂરિ કિયે, મોહકે અસ્થિ નિકારી ડરાયે ॥ સંયમ  
કૂટ વિચાર મસાલા, માધુકી સંગતિ સીક લગાયે ॥ બ્રહ્મ હુતાસન  
સંદિ વાવરે, વૈષ્ણવ હોત કવાવ કે ખાયે ॥

૨૦૩ સુલના ।

ભરમકી ભંગ પી આવલા હારેહા, બદત હૈ ઓર તે ઓર  
બાની, પુન્ય ઓર પાપ કરિ ॥ સુખ દુખ ભોગતા, જામું અરુ  
મરુંહું જીવ અજ્ઞાની ॥ હોશ કરે દેશ તૂં આપને આપકી, તૂં



૪૫ ઓરતે ઓર જાની ॥ સેરતુ દેહરી લેદ ક્યોં હોરહા, આપની  
શુધતે નાહિં આની ॥ આપકો બૂલ કર દુખ ભુગતે સદા,  
સેવના કિરેગા આરિ આની ॥ નાકજુ હુયા ના હૈ કજુ હોગયા,  
દીખે સુને સો ભર્મ મરુ થલ પાની ॥ શુવ અરુ બ્રહ્મ કા લેદ  
કજુ હૈ નહીં, સિંધુ કે માહિં જખ બૂંદ સાની ॥ કહે ગુપ્ત આનન્દ  
સત ચિત આનન્દ તૂં ગુરુ ઓ વેદ સે હમ જાની ॥

૨૦૪ ઝૂલા ।

યહ પાયા મનુષ્ય શરીર માંસ યહ સાવન કા આયા ॥૧૬૬॥  
દયા ધરમ કા રસસા કરિકે ઝૂલા વલવાયા ॥ પ્રેમ પરિયા રખિ  
કે જિસ પર ઝૂલન કો આયા ॥૧૭॥ પાંચ સહેલી સંગ મેં લેકર  
મગલ કો ગયા, મનુષ્ય મગન લયા ડોલત હૈ જખ આપ રૂપ  
પાયા ॥૧૮॥ બ્રહ્મ રાગ કો ગાને લાગ્યા, આનન્દ ઝડ લાયા ॥  
સખ ભરમ કરમ મિટિ ગયે, જહાં પર રહી નહીં માયા ॥૧૯॥  
બ્રહ્માનન્દ કો પ્રાપ્ત હોકર ગુપ્ત રૂપ પાયા, દ્રૂ અખ મરના દૂરિ  
હુવા નહિં ફેર જન્મ પાયા ॥૨૦॥

૨૦૫ ઝૂલા ।

ઝૂલત હૈ સંત સુજન દેખિ ઝૂલેકી અજખ બહાર ॥૨૧॥  
એસા ઝૂલા સંત ઝૂલી કર હોગયે પદ્મે પાર, લવ સાગર કી  
નદિયાં ગહેરી ॥ વહ ગયે મૂઠ ગવાર ॥૨૨॥ ગગન મંડલ મેં  
ઝૂલા ઘાલા, પવન ચલે એક તારા ॥ ઈડા પિંગલા સુષમન દ્વારા,  
ચઢ ગયે દસવેં દ્વારા ॥૨૩॥ નિરભય હોકર રહે જહાં પર પડે ન  
કાલ કી માર, અજખા તાલી લગી ગગન મેં દૂટત નાહીં તાર  
॥૨૪॥ ગુપ્ત ગુફા મેં બાજે બાજે બ્રહ્માનન્દ ઝંકાર ॥ ઢોલક ઝાંઝ  
બજે હરમુનિયા બાજત ધુરૂ સિતાર ॥૨૫॥

૨૦૬ ઝૂલા ।

ના જાનોં કલ કયા હોય, બાજ કર લીજે ચારો કાજ ॥૨૬॥  
નર નારાયણી દેહ મિલી હૈ, સખ શોભા કા સાજ ॥ ઈસ મેં  
કજુ ગફલત નહિં કરની, ઝૂઠા સભી સમાજ ॥૨૭॥ કાલ સભી  
કે સિર પર બૈસે, કયા રધયત કયા રાજ ॥ પલ મેં તોકોં પકડિ  
પહારે, જ્યોં તીતર કો બાજ ॥૨૮॥ સત સંગતિ નોકા મેં બૈસે,

છોડ જગત કી લાજ ॥ વેદ ટેર કર કહતા તોકો, સખ પ્રમાણુ  
સિરતાજ ॥૩૧॥ ગુપ્ત રૂપ કો જખહી પાવે, મિટૈ વિષય કી ખાજ ॥  
બ્રહ્માનંદ મગન ભયે મનમેં ધ્રુવ નિશ્ચય ભયો આજ ॥૪૧॥

૨૦૭ ઝુલા ।

કહૂ તોહિ સમુઝાય, દેખે દુક ઝૂલે કા આનંદ ॥૧૮૬॥ ઇસ  
ઝૂલે પર જો નર ઝૂલે, કટિ જાય ચમકે ફંદ ॥ આશા તૃણા રાગ  
દ્વેષ જહાં, કોઈ નહીં દુખ દંદ ॥૧૮૭॥ જિન ઝૂલે પર ઝોંટા ખાયા,  
પાર ભયે ભવસિંધ ॥ જનત હૈ કોઈ જનત હારે કયા જાને મતિ  
મંદ ॥૧૮૮॥ ઝુજા ઝુલત મિલા પિયારા, આનંદન કા કંદ ॥ સભી  
જગહ મેં વ્યાપક એસે ઝુલોં મેં ગંધ ॥૩૧॥ બ્રહ્માનંદ ભરા હૈ  
સખ મેં સોઈ ગુપ્તાનંદ ॥ ધ્રુવ યહ ખાત સમઝ કે વિચારત  
જ્યોં પૂનમ કા ચંદ ॥૪૧॥

૨૦૮ ઝુલા ।

જગમેં સોઈ બડ ભાગ, સુજન જન ઝુલિ રહે ઝુજા ॥૧૮૯॥  
સુખ દુખ સમાં એક સમ જાને, ના કોઈ પ્રતિ ફૂલા ॥ સખ  
કર્મ ભયે જલ છાર, જલ્યા જખ જ્ઞાન અગિન ચૂલા ॥૧૯૦॥ હુવા  
જ્ઞાન અગિન પરકાશ, અવિદ્યા નાશ ગઈ મૂલા ॥ હમ રહતે હૈં  
બે ખોફ કહા અખ કર સક્તી તુલા ॥૧૯૧॥ સુખ કે સાગર ગોતા મારા  
મિટિ ગઈ સખ સૂલા ॥ જખ ઉઘડે જ્ઞાન કપોટ, મોક્ષ કા દરવાજા  
ખૂલા ॥૩૧॥ ઉડી ગુપ્ત ખુસ વોય, ફૂલ એક બ્રહ્માનંદ ફૂલા ॥  
ધ્રુવ નિશ્ચય ભયો અગાધ નહીં કંઈ જાન્યા નહિં ભૂલા ॥૪૧॥

૨૦૯ ઝુલા ।

રહી સુરત હિંડોલે ઝૂલ, મુલે મેં ભૂલ નહીં પાઈ ॥૧૯૨॥  
ધુન સુન મનવા મગન ભયો હૈ, સુરતા મુસકાઈ ॥ એક અખ-  
ડિત બ્રહ્મ શુન્યા જખ, આપ રૂપ પાઈ ॥૧૯૩॥ દ્વૈત અદ્વૈત ભૂલ  
ગઈ સખહી, જહાં કોઈ જીવ નહીં માર્ઈ ॥ જ્યોં લોન પુતરિયા  
જાય સમુદર મેં, ઉલટ નહીં આઈ ॥૧૯૪॥ શુદ્ધ રૂપ કો જિસને  
પાયા, મિટિ ગઈ સખ કાઈ ॥ કહન સુનન મેં કશુ નહિં આવે,  
ખાત યહ સમઝન કી ભાઈ ॥ બ્રહ્માનંદ મેં મગન ભઈ, જખ



જળ આનંદ અધિકારી ॥ ધૂવ પાયા હૈ ગુપ્ત જહાં પર, ભેદ  
નહીં રાઈ ॥૪॥

૨૧૦ ઝુલા ।

આયો સાવન ચે મન ભાવન, ચલો ગુપ્તેશ્વર દરબાર  
ઠાઠકા ચિત્ત કા ચંદન પ્રેમ કી પાતી, સુરત પુષ્પ લે લાર, અગર  
કપૂર દધી ઔર માખન ॥ છુટત દૂધ કી ધાર ॥૧॥ સંયમે કા  
કર થાલ લિયા, હૈ, જ્ઞાન દીપલિયો જર ॥ ગુપ્તેશ્વર કી પૂજા  
કરકે પાયા આતમ દીદાર ॥૨॥ જ્ઞાન ઘટા જળ ચઢી ઉમડ કે  
પડને લગી ફાહાર ॥ મન આતક જળ કરને લગ્યા, બ્રહ્માનંદ  
પુકાર ॥૩॥ કાયા ઘન મેં ચેતન બિજલી, ચમક રહી ચમકાર ॥  
બ્રહ્માનંદ ગુપ્ત ભયો પરઘટ કહતા ધુર પુકાર ॥૪॥

૨૧૧ ઝુલા ।

કર દિલમેં દેખો જ્યાલ, લાલકો ક્યોં વિરથા ખોવે ॥૮કા  
લાખ ચૌરાસી ભરમત આયા, ફેર ક્યા ગફલત મેં સોવે ॥ ચહ  
માનુષ તન છુટિ જાય, મૂંઢ ફેર સુષુકસુષુક રોવે ॥૧॥ ધન ધામ  
તનય ઔર વામ. દેખિકે ધનકો ક્યોં મોહે ॥ અન્ત સમય કે  
માહિં, તેરા ચહાં કોઈ નહિં હોવે ॥૨॥ ભજ પરમાતમ દેવ,  
તેરે વહ સખ દુખ કો ખોવે ॥ જનમ મરન કા છુટિ જાય ચક્કર,  
આનંદ જળ હોવે ॥૩॥ કર બ્રહ્માનંદ વિચાર, ગુપ્ત મેં ક્યોં  
ના મન મોવે ॥ ધુર નિશ્ચય કર કીજૈ સુધરે, જળ એક બ્રહ્મ  
જાવે ॥૪॥

૨૧૨ ઝુલા ।

તુઝે કહતા ગુપ્ત પુકાર, વખત ચહ તુઝ કો પાયા હૈ ॥૮કા  
જગત શહર મેં જીવ વેપારી, સૌદે આયા હૈ ॥ અખ સૌદા  
કીજૈ સમજ બહુત ટોટે ને ખાયા હૈ ॥૧॥ જો સૌદાગર સૌદે  
આયા, રહને ન પાયા હૈ ॥ ચહ કાલ શેર વિકરાલ, જિસે સખ  
કોઈ ખાયા હૈ ॥૨॥ જ્ઞાન કવચ કો પહિર, સભી ચહ ઝૂઠી માયા  
હૈ ॥ લિયા તત કા તેગ બનાય, કાલ નિયરે નહિં આયા હૈ ॥૩॥  
જિસ કો પાયા હૈ નફા, સોઈ બ્રહ્માનંદ નહાયા હૈ ॥ ગોતા ગુપ્ત  
લગાય, ધુર ફિર ઉલટ ન આયા હૈ ॥૪॥

૨૧૩ જુલા ૧

રંગ વરસે બ્રહ્માનન્દ ચન્દ, જહાં સૂર નહિં તારા ૧૦૨કા  
 ના કોઈ પરકાશ જહાં પર, ના કોઈ અધિયારા ૧૧ લમ દેખા  
 તરાજૂ તોલ, નહીં કછુ હલકા નહીં ભારા ૧૧૧ા જહાં નહિં  
 પિંડ નહિં પ્રાણ, નહીં કોઈ આધેય આધારા ૧ જહાં સૂક્ષ્મ  
 સ્થૂલ, તહાં કોઈ મહારા નહિં થારા ૧૨૧ા જહાં એક નહિં દેાય  
 વહાં કોઈ મિત્રા નહિં ન્યારા ૧૨ સખ માયા ગઈ બિલાય, જૂટિ  
 રહી હૈ ચેતન થારા ૧૩૧ા જહાં નહિં ગુપ્ત નહીં પ્રગટ, જીવ અરુ  
 બ્રહ્મ સભી જારા ૧૪ જહાં નહીં ધ્રુવ નહિં ચલે જહાં પર મધુર  
 નહીં ખારા ૧૪૧ા

૨૧૪ જૂલા ૧

ઘટ મેં મથા જ્ઞાન કા ઘોટ, પીસિ દિયે ભુઝી ઓર આભાસ  
 ૧૦૨કા વ્યાપક બ્રહ્મ આપકો જાન્યા, પૂરણ સ્વતઃ પ્રકાસ ૧૧ જીવ  
 ઈશ કો મિટિ ઉપાધી, દૈસે અખ કરિયે કર્મ ઉપાસ ૧૧૧ા સ્વર્ગ  
 અરુ નરક એક દરિ જાન્યા, રહી નયમ કો ત્રાસ ૧૧૨ે ભરમ સખ  
 દૂર હુવા, સોઈ કુરડી સોઈ કેલાસ ૧૨૧ા બ્રહ્મ પુરી અરુ ભંગી  
 કા ઘર, સખહી હોવે નાસ ૧૨ એસી બાત સમજ કે પ્યારે, સખ  
 છૂટી જગત કી આસ ૧૩૧ા અન્ધકાર મિટિ ગયા, દસહૂં દિશિ હુવા  
 બ્રહ્મ ઉજિયાસ ૧૪ ગુપ્ત રૂપ ભયા પરઘટ, ધ્રુવ જખ કરને લાગે  
 હાસ ૧૪૧ા

૨૧૫ જૂલા ૧

જિસ કો સમજી ચહુ રમજ તિનોં કી દુરિ હુઈ શંકા ૧૦૨કા  
 ઉડિગયા કોટ અજ્ઞાન, હુટી જૈસે રાવન કી લંકા ૧૧ સખ કર્મ અસુર  
 હુયે નાશ, કાલ રાવન કા ક્રિયા ફંકા ૧૧૧ા ચહિ ઉતરે જ્ઞાન કે  
 સૈત, જિજ્ઞાસૂ રામચન્દ્ર બંકા ૧૧ જખ પાઈ સીતા મોક્ષ, જીત કા  
 બાજ હૈ ડંકા ૧૨૧ા બ્રહ્મરાજ મેં અદલ જમા સખ, ખુશી ભઈ  
 રંકા ૧૨ ચહિ મુક્તી પુખ વિમાન, અવધ કા આનિ ક્રિયા ઝંકા ૧૩૧ા  
 આનન્દ મેં સખ અવધ બીતતી, શોક સખ દૂરિ હુયા મન કા ૧૪  
 ધ્રુવ ગુપ્ત બ્રહ્મ કો પાય, ફેર કછુ શોચ નહિં તન લા ૧૪૧ા



## ૨૧૬ મસ્તી ।

કોઇ હાલ મસ્ત કોઇ માલ મસ્ત, કોઇ મૈના તીતર સૂચે મેં ॥  
 ૧૧ કોઇ ખાન મસ્ત પહિરાન મસ્ત, કોઇ રાગ રાગની છુદે મેં ॥  
 કોઇ અમલ મસ્ત કોઇ રમલ મસ્ત, કોઇ સતરંજ ચોપડ જૂએ મેં ॥  
 ૧૨ એક ખુદ મસ્તી ખિન ઔર મસ્ત, સખ પડે અવિદ્યા કૂવે મેં ॥૧૧॥  
 કોઇ અકલ મસ્ત કોઇ શકલ મસ્ત, કોઇ ચંચલાતાર્ધ હાંસી મેં ॥  
 કોઇ વેદ મસ્ત કતોવ મસ્ત, કોઇ સેવક મેં કોઇ દાસી મેં ॥  
 કોઇ ગ્રામ મસ્ત કોઇ ધામ મસ્ત કોઇ મહે મેં કોઇ કાશી મેં ॥  
 એક ખુદ મસ્તી ખિન ઔર મસ્ત સખ ફૂંસે અવિદ્યા ફાંસી મેં ॥૧૨॥  
 કોઇ હાટ મસ્ત કોઇ ઘાટ મસ્ત, કોઇ ખન પરવત ઉજિયારા મેં ॥  
 કોઇ જાત મસ્ત કોઇ પાંતિ મસ્ત, કોઇ તાત બ્રાત સુત દારા મેં ॥  
 કોઇ ધરમ મસ્ત કોઇ કરમ મસ્ત, કોઇ મજહુબ ઠાકુર દ્વારા મેં ॥  
 એક ખુદ મસ્તી ખિન ઔર મસ્ત, સખ વહે અવિદ્યા ધારા મેં ॥૧૩॥  
 કોઇ પાઠ મસ્ત કોઇ ઠાઠ મસ્ત, કોઇ ભેરેં મેં કોઇ કાલી મેં ॥  
 કોઇ અન્થ મસ્ત કોઇ પન્થ મસ્ત, કોઇ શ્વેત પીતરંગ લાલી મેં ॥  
 કોઇ કાવ્ય મસ્ત કોઇ ખવાખ મસ્ત, કોઇ પૂરણ મેં કોઇ ખાલી મેં ॥  
 એક ખુદા મસ્તી ખિન ઔર મસ્ત સધ ફૂંસે અવિદ્યા જાલી મેં ॥૧૪॥  
 કોઇ રાજ મસ્ત ગજ ખાજ મસ્ત, કોઇ છપરે મેં કોઇ પૂલે મેં ॥  
 કોઇ યુદ્ધ મસ્ત કોઇ કુંદ મસ્ત, કોઇ ખડગ કુઠાર વસોલે મેં ॥  
 કોઇ પ્રેમ મસ્ત કોઇ નેમ મસ્ત, કોઇ છીંકે મેં કોઇ મૂલે મેં ॥  
 યક ખુદ મસ્તી ખિન, ઔર મસ્ત સખ પડે અવિદ્યા ચૂલે મેં ॥૧૫॥  
 કોઇ સાકિ મસ્ત કોઇ ખાક મસ્ત, કોઇ મલ મલ મેં કોઇ ખાસે મેં ॥  
 કોઇ યોગ મસ્ત કોઇ ભોગ મસ્ત, કોઇ સ્થિર મેં કોઇ ચંચલ મેં ॥  
 કોઇ ઋદ્ધિ મસ્ત કોઇ સિદ્ધિ મસ્ત, કોઇ લેન દેન કી કલકલ મેં ॥  
 એક ખુદ મસ્તી ખિન, ઔર મસ્ત સખ ફૂંસે અવિદ્યા દલદલ મેં ॥૧૬॥  
 કોઇ રદન મસ્ત કોઇ વદન મસ્ત, કોઇ પશુ પક્ષી કે સાવક મેં ॥  
 કોઇ નૈન મસ્ત કોઇ વૈન મસ્ત, કોઇ લડકી મેં કોઇ ચાવક મેં ॥  
 કોઇ સૈન મસ્ત કોઇ ચૈન મસ્ત, કોઇ નઈયા મેં કોઇ બાવક મેં ॥  
 યક ખુદ મસ્તી ખિન ઔર મસ્ત સખ પડે અવિદ્યા પાવક મેં ॥૧૭॥  
 કોઇ ઈસ્ત મસ્ત કોઇ બ્રિષ્ટ મસ્ત, કોઇ નતિની મેં કોઇ નાતે મેં ॥  
 કોઇ નામ મસ્ત કોઇ ચામ મસ્ત, કોઇ ઈંદ મેં કોઇ ખાતે મેં ॥

કોઈ ધમલ મસ્ત કોઈ ચિલમ મસ્ત, કોઈ અક્ષર મેં કોઈ પાતી  
 મેં ॥ યક ખુદ મસ્તી બિન, ઔર મસ્ત સખ કટે અવિધા કાંતી  
 મેં ॥૮॥ કોઈ જીવ મસ્ત કોઈ સીવ મસ્ત, કોઈ પુસ્તક મેં કોઈ  
 પાની મેં ॥ કોઈ મૂલ મસ્ત કોઈ તૂલ મસ્ત, કોઈ સાખા મેં કોઈ  
 ડહને મેં ॥ કોઈ લોક મસ્ત પરલોક મસ્ત, કોઈ તાને મેં કોઈ  
 ખાને મેં ॥ યક ખુદ મસ્તી બિન, ઔર મસ્ત સખ કુદ અવિધા  
 ખાને મેં ॥૯॥ કોઈ ઉર્ધ્વ મસ્ત કોઈ અર્ધ મસ્ત કોઈ બાહુર મેં  
 કોઈ અન્તર મેં ॥ કોઈ દેશ મસ્ત પરદેશ મસ્ત, કોઈ ઔષધ  
 મેં કોઈ મન્તર મેં ॥ કોઈ ધામ મસ્ત કોઈ બામ મસ્ત, કોઈ નાટક  
 ચેટક તન્તર મેં એક ખુદ મસ્તી બિન ઔર મસ્ત સવ ભરમે  
 અવિધા જન્તર મેં ॥૧૦॥ કોઈ પુષ્ટ મસ્ત કોઈ તુષ્ટ મસ્ત, કોઈ દીરગ  
 મેં કોઈ છોટ મેં ॥ કોઈ ગુફા મસ્ત કોઈ સફા મસ્ત, કોઈ તૂંબે મેં  
 કોઈ લોટ મેં ॥ કોઈ જ્ઞાન મસ્ત કોઈ ધ્યાન મસ્ત, કોઈ અસલી  
 મેં કોઈ ખોટ મેં ॥ યક ખુદ મસ્તી બિન ઔર મસ્ત સખ ધુટ્ટે  
 અવિધા સોટ મેં ॥૧૧॥ કોઈ મજબ મસ્ત કોઈ ગજબ મસ્ત કોઈ  
 કોડી મેં કોઈ પૈસે મેં ॥ કોઈ એક મસ્ત કોઈ દોય મસ્ત કોઈ  
 ગૈયા મેં કોઈ ભૈસે મેં ॥ કોઈ મણડલ મસ્ત, કોઈ પણડલ મસ્ત,  
 કોઈ ચેલે મેં કોઈ ચેલી મેં ॥ યક ખુદ મસ્તી બિન ઔર મસ્ત  
 સખ ચલે અવિધા ગેલી મેં ॥૧૨॥ કોઈ ટૂંક મસ્ત કોઈ ભૂખ મસ્ત  
 કોઈ નંગે મેં કોઈ ચંગે મેં ॥ કોઈ ભવન મસ્ત કોઈ ગવન મસ્ત,  
 કોઈ મૌન મસ્ત કોઈ દંગે મેં ॥ કોઈ નદી મસ્ત કોઈ બદી મસ્ત,  
 કોઈ તીરથ મેં કોઈ ક્ષેતર મેં ॥ યક ખુદ મસ્તી બિન ઔર મસ્ત  
 સખ, જમે અવિધા ખેતર મેં ॥૧૩॥ કોઈ ટિકટ મસ્ત કોઈ વિકટ  
 મસ્ત, કોઈ ઘંટી મેં કોઈ સિંગલ મેં ॥ કોઈ તાર મસ્ત પલગાર  
 મસ્ત, કોઈ કસરત કુશતી દંગલ મેં ॥ કોઈ બૂંટ મસ્ત કોટ મસ્ત  
 કોઈ ટોપી મેં કોઈ કુપ મેં ॥ એક ખુદ મસ્તી બિન ઔર મસ્ત  
 સખ, કુટે અવિધા જુટે મેં ॥૧૪॥ કોઈ રાગ મસ્ત કોઈ બાગ મસ્ત  
 કોઈ ઢાલક ઝાંઝ સિતારે મેં ॥ કોઈ શેલ મસ્ત કોઈ મહુલ મસ્ત,  
 કોઈ કરતે શયન ચૌખારે મેં ॥ કોઈ તાલ મસ્ત કોઈ ખ્યાલ મસ્ત,  
 કોઈ સાંરળી ધોતારે મેં ॥ યક ખુદ મસ્તી બિન ઔર મસ્ત સખ,  
 ધસે અવિધા ગારે મેં ॥૧૫॥ કોઈ ડંડ મસ્ત કોઈ સંડ મસ્ત



જાણ સંન્યાસી પંથાર્થ મેં ॥ કોઈ કુંભ મસ્ત કોઈ જંગ મસ્ત,  
 કોઈ પટે મલેહિટી સ્યાહી મેં ॥ કોઈ હિન્દુ મસ્ત કોઈ મુસલ મસ્ત,  
 કોઈ કાળ પડિત મુલ્લા મેં ॥ યક ખુદ મસ્તી ખિન ઔર મસ્ત  
 સખ ફેસે અવિધા ગલ્લા મેં ॥૧૬॥ ચે લૌકિક મસ્ત કહાં લગ  
 વરનો, હૈ માયા કે દંગલ મેં ॥ કરે કૌન ઈનકી ગિનતી સવ  
 જકડે હૈ દહ સંગલ મેં એક છિન મેં ૩૭૮ પુષ્ટ એક, છિન મેં  
 સ્થિત લદા અમંગલ મેં ॥ યક ખુદ મસ્તી ખિન ઔર મસ્ત  
 સખ ભૂલિ રહે અવિધા જંગલ મેં ॥૧૭॥

દોહા—વસ્તુ અનાતમ મેં ફેસે, ત્યાગા આતમ રૂપ ॥

દુનિયાં મેં ભટકત ફિરે, તે મૂઢન કે ભૂપ ॥

આતમ વસ્તૂ ત્યાગિ કે, કરે જગત કી આસ ॥

મૃગ તૃષ્ણા કે નીર સે દૂર ન હોવે ખ્યાસ ॥

૨૧૭ છપ્પય છન્દ ।

સો નર જાનો સંત અંત જિન જગકા કીના, કરી અવિધા  
 નાશ આપ પરિપૂરણ ચીના ॥૧॥ રહ્યો ન ભેદકો મૂલ શૂલ અજ્ઞાન  
 હિરાના, અદ્વય અમલ અપાર રૂપ જિન નિશ્ચય જાના ॥૨॥  
 શંકા રહીન કોય મોહ વ્યાપે નહિં માયા, ના કોઈ તાત ન ભ્રાત  
 નહીં કોઈ જન્મી જાયા ॥૩॥ સદા અખંડિત આતમા ચેતન પૂરણ  
 શુદ્ધ, ગુપ્ત ગલી બેઠ કર કોઈ લખે સંતપર ખુદ ॥૪॥

૨૧૮ છપ્પય છન્દ ।

જગ તેજે ન માયા મોહ નામ અતીત કહાવે, ઘરમેં લેહિ  
 કુસીદ ભીખ પુનિ માંગન જાવે ॥૧॥ કહેં એકાંત બનેવાસ સંગ  
 બહુ દ્વંદ મચાવે, સોવે નિરંતર રાત દિન કહેં હુમ ધ્યાન લગાવે  
 ॥૨॥ સોધન મઘ મલીન મુખ ભૂપ સેજ કર પૌલ પર ॥ ધન  
 લિપસ્યા બ્યાકુલ મહા સરમા પતિ સમાહુત પર ॥૩॥ હરકા પંથ  
 સો દૂર પંથ વહુ આપ ચલાવે, રહી ફકીરી દૂર માંગિકર પેટ અઘાવે  
 ॥૪॥ રૌનિ ઈરે રતિ ભોગ દિને પુનિ ભસ્મ રમાવે, આપ કરે  
 સખ પાપ ઔર કો ધર્મ સુનાવે ॥૫॥ ઇસ ભાંતિ અતીત જો મેં

લખે નખ શિષ તેં અભિમાન અતિ ॥ નિશિ વાસર દમડે ચહેં  
કબહુ ન હોવેં રામ રતિ ॥૬॥

દોહા-ચામ ચિરડ સળ જગતહે, ચક ચૂંધર પઢી પુરાન ॥

પટ શાસ્ત્રી પાગલ ભયે, વેદાંતી કેા ઉલ્લૂ જન ॥

યે ચારિડ અન્ધે ભયે, વિના સ્વરુપક જ્ઞાન ॥

ગુપ્ત રૂપ મેં ઘટ લખો, નિત્ય અનિત્ય કેા છાન ॥

૨૧૯ મરાઠી છન્દ ।

જવ તૂં ભૂલા અપને આપકો તખ સે પાપ લગા ભારી,  
જન્મ મરણ કા અન્ત ન આયા બહુત ઘરી શિર પર ખવારી ॥  
કભી ભયા તૂં પુરૂષ નપુંસક કભી ભયા હૈ બલ ધારી ॥ બડે બડે  
યોધા રણમેં જીતે યુદ્ધ ક્રિયા હૈ અતિ ભારી ॥ કભી ભયા તૂં રાજા  
રાની કભી ભયા આજ્ઞાકારી ॥ કભી તો દર દર ફિરે માંગતા બહે  
સન્યાસી અરુ બ્રહ્મચારી ॥ કભી તૂં બ્રહ્મા કભી તૂં વિષ્ણુ કભી  
બનાહૈ ત્રિપુરારી ॥ દેવ પુરિકા અધિપતિ હોકર ભોગે ભોગ બહુત  
ભારી ॥ જખ લગ અપના આપ ન જાન તખ લગ વિપત્તિ સહી  
ભારી ॥ અખતો કહૂં સમજલે પ્યારે માર અધિદા મંજરી ॥ ખાકી  
મનકો પકડિ પછારો વસ કીજૈ પંચો નારી ॥ તત્ત્વમસિ કા અર્થ  
વિચારો છોડ જગત કી સખ ચારી ॥ ગુરૂ વેદકા આશા સમજો  
શ્રદ્ધા કરિ કે અતિ ભારી ॥ તત્ત્વમસિ કા અર્થ બતાવેં એસે ગુરૂ  
પર બલિહારી ॥ વાચ્ય અર્થ કા ત્યાગ કરો અરુ લક્ષ અર્થ કી  
કર ત્યારી ॥ ગુપ્ત રૂપ ઘટ માહિ વિચારી બાત કહી તોસોસારી ॥

૨૨૦ મરાઠી છન્દ ।

જો તૂં સચ્યા રામ સનેહી ફેર જગત સે નેહ કહા જો તુમને  
ઘરખાર તજ તખ ફેર દુવારે મેં કામ કહા ॥૧॥ દુખ રૂપ જાન  
કર કુટુંબ તજ ફિર સેવક સતી મેં આરામ કહાં ॥ જાતિ વરણ  
સખ છોડિ દિયા તખ ફેર મજબ કી દુકાન કહાં ॥૨॥ સો હૈ ઝુકા  
રામસનેહી જો ધન બાતોં મેં અટક્યા ॥ રામ દ્વારા મેં કથા  
સુનાવે હાથ લિયે વાણી ગુટકા ॥૩॥ ઔરન કેા ઉપદેશ બતાવે  
આપ ફિરે જગમેં ભટકા ॥ જ્ઞાન ધ્યાન કી રાહન પાઈ કનક



કામના મેં અટકા ૥૪૧ ॥ ગુપ્ત મતેકી અખર નહીં ફિર કયા દેરેકંઠી  
માલા ॥ ચેલા ચેલી ફિરે મૂડતા રામનેહી કા સાલા ૥૪૨ ॥

૨૨૧ મરાઠી છન્દ ।

પહલવાન જગ કે બહુ જીતે, ક્રતે કિયે કુલહી ખારે ॥ મદ  
હંકાર માન મેં ધસ ગયા, અન્દર લૂટ રહે સારે ॥ યે નિતગપટ  
હૈ તો પર, ચશમ ખોલ દેખો પ્યારે કયા મસ્ત હુવા તુ ફિરે જગત  
મેં, તેરે અન્દર પહલવાન ભારે ॥ યક પહલવાન મન આલીસા  
હૈ, જિસ કે યે ચેલે સારે દરા શાગિર્દ સંગ મેં રહતે, ધંચ કરે ન્યારે  
ન્યારે ॥ જો કોઈ ઈન સે કૃશતો જીતે, પહલવાન હોવે પૂરા ॥ કાયર  
કો યે પકડિ પછારે, કોઈ જીતત હૈ સારા ॥ જિન ગુપ્તાનન્દ કો  
પાય લિયા, ઉન કૃશતી જીતી દંગલ મેં હપ શોક સખ મનકે નાશે,  
અવધ જાત હૈ મંગલ મેં ॥

૨૨૨ ત્રોટક છન્દ ।

આતમ નિતહી પરકાસત હૈ, તત્ત્વ વેતન યોં ભાસત હૈ ॥  
જાન્યત મેં સખકો જાનત હૈ સ્વપ્નેકે માહિ પિછાનત હૈ ॥૧॥  
સુષપતિ મેં સખકા ભોગ કરે, તુરિયે મેં સાક્ષી રૂપધરે ॥ યહ આ-  
તમ અનુગત એક રહે, સખ દેહન કા વ્યતિરેક રહે ॥૨॥ વિધિ  
નહિં તેજસ પ્રાણસ ભી, તુરિયતા કૈસે હોયે જભી ॥ એસા નિજ  
આતમ રૂપ તુહી ॥ અસ્તિ ભાંતિ પ્રિય રૂપ સહી ॥૩॥ સો વ્યાપક  
બ્રહ્મ અખંડ સદા, તિસકો નર જાને મૂઠ જુદા ॥ સત ચેતન  
આનન્દ શુદ્ધ તુહી, ઘોખે મહં દુનિયા જાત વહી ॥૪॥

૨૨૩ ત્રોટક છન્દ ।

સતસંગતિ નૌકા બૈઠત ના, સતગુરુ કેવરિયા જાન્યત ના ॥  
કૈસે ઉતરે ભવ પાર જના, દિન રાત લગે ધન ધામ મના ॥૧॥  
તરને કા સકલ સમાજ બના, વૃથા હુખત હૈં મૂઠ જના ॥ સતગુરુ  
કે શબ્દ લાગત ના, યે મોહ નીંદ સે જાગતના ॥૨॥ નિત ચૌકીદાર  
જગાવત હૈ, ફિર આલસ કર સોજાવત હૈ ॥ જખ ચોર નિશા મેં  
લૂટત હૈ, જાગે તખ છાતી કૂટત હૈ ॥૩॥ જખ ચશમ ખુલી હૈ  
અન્દર કી, સખ વસ્તુ ભાષી મન્દિર કી ॥ જખ ગુપ્તરૂપ કો પાયા  
હૈ, નહીં કાલ કર્મ જહં માયા હૈ ॥૪॥

## ૨૨૪ ત્રોટક છન્દ ।

જહાં રામ રહીમ કરીમ નહીં । અલ્લા ઈશ્વર કી સીમ નહીં  
 જહાં રંગ રૂપ કા ભેદ નહીં । કોઈ સ્થિરતા અરુ ખેદ નહીં ॥૧॥  
 જહાં કાગજ સ્યાહી કલમ નહીં । લિખના પઢના કોઈ ઇલમ નહીં ।  
 જહાં વેદ ક્તેવ કુરાન નહીં । કોઈ દેવલ-દેવ નિશાન નહીં ॥૨॥  
 જહાં ચન્દન તારા ભાનુ નહીં । કોઈ સાધન સાધ્ય અરુ જ્ઞાન નહીં  
 અષ્ટાંગ ન યોગ સમાધી હૈ । કોઈ સાદી નાહિં અનાદી હૈ ॥૩॥  
 ચેતન ચમકારા ચમકત હૈ । જહાં જ્ઞાન ધ્યાન સખ કટિપત હૈ ॥  
 જો ઈન ગલિયન મેં આવેગા । સો ગુપ્ત રૂપ કો પાવેગા ॥૪॥  
 દોહા—જો દીખે સો હૈ નહીં, નહિં દીખે સો જન ॥

વૃત્તિ લક્ષણા કીજિયે, અરુ અનુભવ પરમાન ॥

## ૨૨૫ વારખૈત ।

આદિત્યવાર નિવાર સખ, સંભાર આપને આપ કો ॥ ઔર  
 ભરમ સવ છોડિ કર, નર જયો સ્મિત જપ કો ॥૧॥ સોમવાર અખ  
 ધાર સમતા, જર દૂજ ભાવવે ॥ મનુષ જન્મ કી મૌજ પાઈ, ફેરન  
 એસા દાવવે ॥૨॥ મંગલવાર નિહાર લે છબિ, ચહૂં દિશિ આનન્દ  
 ભયો ॥ સત ચિત્ત આનન્દ એક લખિ, સખ તાપ ત્રય મનકે ગયે  
 ॥૩॥ બુધવાર બિચાર લે, અપાર વાર સરૂપ વે ॥ પાર વારકી  
 ગમ નાહીં. નહિં જહાં છાયા ધૂપવે ॥૪॥ વૃહસ્પતિવાર ઉચારતા  
 ગુરુ, ગમ્ય લખિ બેહુદ ગયે ॥ હુદકા દરજા છોડિ કર તુમ દેખ  
 આનન્દ નિત નયે ॥૫॥ શુક્રવાર પુકારિ કહતા, પશ્ચિમ કો મત  
 જાઝવે ॥ પશ્ચિમ દિશાકો શૂલ હૈ, નર આવે પૈર ફેડાય વે ॥૬॥  
 શનિચરવાર જોહાર ગુરુકો કરત હજાર ન બારવે ॥ પકડિ ભુજ  
 જિન કાઢિયા જન વહે જાત મજ્જાર વે ॥ ૭ ॥ સાત વાર વિચાર  
 લે, નર સાર સખ તોંસો કહા ॥ તત્વ પદ કો શોધિલે ફિર ગુપ્ત  
 અસિપદ તુહિ ભયા ॥ ૮ ॥

દોહા—વાર ખત કે અર્થકા, મન મેં કર વિચાર ॥

જીવન મુક્ત લહે વહી, જન્મ ન દૂજવાર ॥

સાક્ષી પૂરન એક હૈ, ડોગર ડહર દયાલ ॥



અર્ધઉર્ધ અરુદસોં દિશિના, કહું જોરાકાલ ॥  
 સો આતમ કૂટરથ હૈ, નહીં બ્રહ્મ સે ભેદ ॥  
 ભેદ પાપકો દૂર કર, ખડા પુકારે વેદ ॥  
 ભેદ ઉપાધી કૃત હૈ, સો તૂં મિથ્યા જન ॥  
 તૂં ભૂમા સુખરૂપ હૈ, યહી, બ્રહ્મકા જ્ઞાન ॥  
 ઔર જ્ઞાન સખ જ્ઞાનડી, બ્રહ્મજ્ઞાન સોઈ જ્ઞાન ॥  
 જૈસે ગોલા તોખકા, કરતા જય મદાન ॥

૨૨૬ ખૈત ।

બન્દે જાનિ આતમ સાર વે, જો આવે દેખન સુનન મેં  
 સખહિ કો જાન અસાર વે ॥૨૧॥ નૌકાલિયે હૈં કાલ ને ચૌખીસ  
 પર પડી મારરે ॥ જો ચક્રવર્તી રાવથે ॥ સખહી કી ઉડિગઈ  
 છારવે ॥૨૨॥ અનગિનત વિજયુ ચતુર મુખથે અન ગિનત શંકર  
 ગયે ॥ ઇનસે આદિ ઔર ભી સખ કાલને ચઢની કિયે ॥૨૩॥  
 આગે જો બાકી રહે એક દિના સખકો ખાયવે ॥ વારી ધરા મુમેરૂ  
 ચારૂ સખહી ભરમ હોયજાહિ વે ॥૨૪॥ યહુ સમજ વાત વિચારલે,  
 ઇસ દેહ કી કયા આસવે ફસી કર અવિદ્યા જાલમેં જૂંઠ કરે પર-  
 લાપ વે ॥૨૫॥ વેદ સતવાદી કહે તિસકી ભી માને નાહિં વો  
 સખ જૂંઠા નામ અરુ રૂપ હૈં, કયોં ઉલજતા તિસ માહિં વે ॥૨૬॥  
 જિમિ નામ નામી ભાસતે હૈ, સ્વપ્નકે મંઝાર વે ॥ પૂજ્ય પૂજક  
 અર પૂજા દ્રષ્ટા કે આધાર વે ॥૨૭॥ ખુદ આપ ચેતન ગુપ્ત પર-  
 ઘટ કર કે દેખ સંભાલ વે ॥ સો સમજ તેરા રૂપ હૈ, સખ  
 કાલહૂ કા કાલવે ॥૨૮॥

૨૨૭ સવૈયા છન્દ ।

પિયુસે નાહિં મિલી લડકી, તખ ગુડી કે ખેલ સોં ખેલિ  
 રહી હૈ ॥ જખ સાજ સજ્યા તખ ખેલ તજ્યા. વહુ બાપ કે  
 તાખ મેં ખેલિ ગઈ હૈ ॥ જૈસે સ્વપ્ને મેં દેવ બનાય લિયા તિસ

દેવકી સેવ મેં આચુ ગઈ હૈ ॥ જાગિ ઉઠાવત દેખિ રહ્યા તહાં  
દેવરુ દાસ કી ગંધ નહીં હૈ ॥

સોરઠા—ગુપ્ત ગલી કે માહિં, ના કોઈ દેવ ન દાસ હૈ ॥  
દીને ભર્મ ખહાય, એક અદ્વિતીય આપ હૈ ॥

૨૨૮ વૈત ।

ખંદે જાન આતમ રૂપ વે, ઇસ નર કે તનકો પાય કર ક્યોં  
પડત હૈં ભવ રૂપ વે ॥ ભવ તરન કાયા ઘાટ હૈ સતસંગ નૌકા  
ઐઠ વે ॥ મિલિ કર ગુરુ મલ્લાહ સેં, ઇસ ભવ કે સંકટ કાઢિવે  
॥૧॥ જો કાજ કરના કાલિહૈ, કર લિજિયે તિસે આજવે ॥ નહિં  
ખખર ક્ષણ એકકી, યહ બિગડી જવે સાજવે ॥૨॥ ઇસ ઘોખે  
મેં બહુતેં ગયે હૈ, આનિ પકડે કાલવે ॥ માટી મિલાયે ભૂપ  
ભારે, લુટગયે ધન માલ વે ॥૩॥ ભક્તી કરમ નિષ્કામ કે અખ  
સાજકો તુહ સાજ વે ॥ જિસ કરકે પાવે જ્ઞાન કો, ઇસ જગત  
સે મત લાજિ વે ॥૪॥ સખહી અવિદ્યા જલ કી, યહ ઇશ ને  
લેખજ રચી ॥ અહં બ્રહ્મ મેં આપ હૂં યહ બાત જિનકે ઉર  
જચી ॥૫॥ જનમ જિસકા સફલ હૈ, પાયા હૈ અપના આપ વે ॥  
શાંત હોકે વિચરતે, છુટિ ગયે હૈં તીનોં તાપ વે ॥૬॥ શંકા  
ન માને લોકકી, કછુ સમજતે નહિં વેદ વે ॥ ગુરુ વેદ યા ભય  
માનતે હૈં જિનકે હૈ કુછ ભેદ વે ॥૭॥ વહુ ગુપ્ત ગુપ્તાનન્દ હૈ,  
જિનકો નહીં દુખ દ્રવ વે ॥ વહિ આપ દિવ્યાનન્દ હૈં, નહિં  
પડે યમ કે ફંદ વે ॥૮॥

દોહા—સાખુન જ્ઞાન લગાયકર, માયા મલ કો ઘોય ॥

શીલ શિલા ફટકારિ લે, ફેર ન મૈલા હોય ॥

૨૨૯ તિથિ જૈત ।

પૂનમ પૂરણ આતમા હૈ, અસ્તિ ભાંતિ પ્રિયે સદા ॥ સત-  
ચિત આનન્દ એક હૈ, સખ સે મિલા સખ સે જુદા ॥૧॥ એકમ  
એક નિહાર લે, નર કહા દેખે દૂર વે ॥ જલકે જલાબિમ્બ જ્યોં  
સદા, સો સમજ તેરા નૂર વે ॥૨॥ દુજ દુતિયા દૂરકર, તું સદા  
આપહિ આપ વે ॥ જન્મા ન મુઆ હૈ કભી, કોઈ નહીં માર્ધ



આપ વે ॥૩૧॥ તીજ તીનોં સે જુદા, દુક ખોલ ચશ્મે જગ વે  
જાગત સ્વપન સુપોષિત, નહીં વિશ્વ તેજસ પ્રાગ વે ॥૩૨॥ ચૌથ  
ચૌથા પદ હૈ તુરિયા, સખ ફૂલન કા ફૂલ વે ॥ તુલસીસર્વ મેં અનુસ્મૃત  
હૈ, નહીં કારણ શુદ્ધ સ્થૂલ વે ॥૩૩॥ પંચમી ન પંચો કોપ તૂં  
નર સર્વકા પર કાશવેતુ આપ ચેતન હૈ સહી, ફિર કૈ ફિસ કી આશ  
વે ॥૩૪॥ છઠ જાન દેખો દૂધ પાની, હંસ હાકર આપ વે ॥ તું  
આપ માલિક ખુદખુદ, ફિર કૈ ફિસકા જાપ વે ॥૩૫॥ સાતમ  
સુખ સરૂપ તેરા, દુઃખ કા નહિં લેશ વે ॥ તૂ કહાં ભૂલા ભરમ  
મેં, દુક દેખ અપના દેશ વે ॥૩૬॥ આઠમ આઠોં પુરી ખોજો  
અપન આપ સંભાલ વે ॥ ભૂત ભવિષ્યત વર્તમાન, તુંહ સખ  
કાલન કા કાલ વે ॥૩૭॥ નવમી નવ દારન પુર્યા યહ, દેહી  
આતમ આપ વે, કરતા નહીં કરાવતા કયુ, નહીં પુન્ય ન પાપ  
વે ॥૩૮॥ દસમી દમકા કા ખોજ કરલે, દેખ આપ સંભાલ વે ॥  
યહ જડ હવા ન રૂપ તેરા, તુંહ લાલન કા લાલ વે ॥૩૯॥  
એકાદશી કા વર્ત આયા કોજે તાહીં સંભાલ વે ॥ દસ ઇન્દ્રી  
મન રોકના સખ છાંડિ જગ જંગલ વે ॥૪૦॥ દ્વાદશી દસોં  
દિશી આતમા હૈ, વ્યાપક જ્યોં નલ રૂપ વે ॥ દુજો હુયા  
નહીં હોયગા, કિસકી દિયે તહં ઉપ વે ॥૪૧॥ ત્રયોદશી જહં  
ત્યાંગ નાહીં અહણુ ભી કયુ નાહીં વે ॥ કર્તા ક્રિયા કર્મ નાહીં  
નહીં ન્યારા નહીં માહિં વે ॥૪૨॥ ચૌદહ ચતુર્દશં ભુવન નાહીં  
નહીં તીનો લોક વે ॥ રાગ દ્વેષ કી ગન્ધ નહિં, નહીં હર્ષ ન શોક  
વે ॥૪૩॥ પંચ દશી, પાવન આતમા જહં નહીં પ્રકાશત ચન્દ  
વે ॥ બન્ધ મોક્ષ કા ભર્મ તજ, તુંહ આપ ગુપ્તાનન્દ વે ॥૪૪॥

દોહા- તિથી જૈત કે અર્થ કા ચિંત દે કરો વિચાર ॥

જે યાકો ધારન કરે પહુચે ભવ કે પાર ॥

૨૩૦ નેષ્ટક જૈત

જિસ દારન ફિરા બન પરવત મંજાર ॥ ઓર દેખે હૈં હમકો  
હમરોં બજાર ॥ પાયા નહીં હમેં ઉસકા દિદાર ॥ ઇસ જગ મેં  
હુયા હું મેં અતિશય ખુવાર ॥૧॥ મિલે ભુરશાહ હમેં જખ  
કિના વિચાર ॥ ઇસતન મેં લખાયા હમેં વોહી યાર ॥ ઊસ

દિલવર કી દેખી હૈ દિલ મેં બહાર ॥ બલકે મુર ચન્દા વહાં લાખોં  
હજર ॥૨૧॥ નહિં તોલ મોલ નહિં હલકા ન ભાર ॥ નહીં દુર  
નેરે કછુ નહીં બાર પાર ॥ સત ગુરુ લખાયા હૈ સખઠા જોસાર ॥  
આપે મેં દિખાયા હૈ અપના દિવાર ॥૩૧॥ નહીં બાર મોમેં નહિં  
કછૂ પાર ॥ ભીતર ઓ બાહર ભરાએક સાર ॥ ઘર મેં ન દેખે  
યહુ જાવે બાહર ॥ વસ્તુ ગુપ્ત ઇસ કાયા મંઝાર ॥૪૧॥

૨૩૧ જૈત ।

પાયા હૈ હમકો અમોલક જો લાલ ॥ મિલે સતગુરુ જો  
પૂરે હમકો દલાલ ॥ કાગ હૈ તિનકો સખ માયા કા જાલ ॥  
કિની મેંહર કિયા હમકો નિહાલ ॥૧॥ જૂઠા લગ્યા યહુ માયા  
કા જાલ ॥ જેતા જહાં લગયે ક્યર્ગ અરુ પતાલ ॥  
તીનોં વખત કા જો જાને હૈ હાલ ॥ જો જાનન મેં આવે સો  
જૂઠા હૈ ખ્યાલ ॥૨॥ દીન અરુ દુનિયાં ખજાના ઓર માલ ॥  
સખ રહજાય ઇલાહીં જખ પડેગા કાલ ॥ દેખે કવીલા જો હોવેગા  
હાલ ॥ કોઈ ચલે ના વહા તેરી જો નાલ ॥૩॥ નહિં રિસવત  
કો લેકે વહુ કરતા હૈ ટાલ ॥ કરતા અખત પર વહુ સખડી પર-  
તાલ ॥ વિવેક અરુ વૈરાગ કી કિજિયે નાલ ॥ ગુપ્તજ્ઞાન ગોલિ  
સે મારો ન કાલ ॥૪॥

૨૩૨ જૈત

ઇસ નફસ કો રોકો યહુ કરતા સૈતાન ॥ નિત ઉઠ કે કરતા  
વિપયોં કા જો પાન ॥ ઇસે કિયા લુચ ગુડા ઓર બેઈ જોમાન ॥  
કુછ દેખો સમઝ કે કર અપની પિછાન ॥૧॥ બન્દા નહીં અજબ  
તેરી જો શાન તુહીં ખુદ ખુદ હૈ ક્યોં હોતા હૈરાન ॥ દુક સમઝ  
કે રમજ કો કરદે મુકામ ॥ જિસ કરદે મિલેગા અખ તો કો  
આરામ ॥૨॥ ઓર કિજે નહીં કોઈ દૂજ જો કામ ॥ ખુદ અહું  
ખુદ અહું કરે આહોહિ યામ ॥ સખ પાની મેં ગરો કિતાબા  
કુરાન કુછ ઇતને ન હોતા હૈ દિલ મેં આરામ ॥૩॥ યક સચ્ચા  
અલિક આપ જુઠા જહાન ॥ સખ છોડો ન ચારોં મજબ કી  
દુકાન ॥ તૂઝે કહતા ગુપ્ત યહુ તુસખા પિછાન ॥ કરસે દવાઈ  
હોય રોગોં કી હાન ॥૪॥



२३३ जौत

जैसे तिलो में तेल है, गुलो में सुगंध ॥ त्यों काया में  
आत्म सदा है निरभंध ॥ जैसे जल में दरियाव और कल्पित है  
सिंध ॥ तैसे काया अर्थात् आत्म का जनो संबन्ध ॥१॥ जैसे  
गुला में डोय पन्नग का लान ॥ तैसे आत्म में करता कर्म  
अैसे जन ॥ जैसे पुत्र के भीये से जुटे है तार ॥ तैसेहि जनो  
सम्बन्ध का विस्तार ॥२॥ यह तो परिष्कार भी यह विवर्त पिछान ॥  
सुवर्ण और लूप्य का अकलि मुकाम ॥ जैसे मृद में मिथ्या  
घटादी असार ॥ मन्दिर और समजिद सम्बन्ध अन्तर ॥३॥  
जैसे गगन में नीले का वहे लान ॥ तैसे आत्म में तूं काया  
पिछान ॥ जैसे लोहे में मिथ्या ससी लुधियार ॥ गुप्त आत्म  
में ऐसेहि जनो संसार ॥४॥

२३४ जौत

जो समझे हमारे जिकर की जो आत ॥ इस दुनिया में  
गोता सो कम्हूँ न आत ॥ तुही अक्ष व्यापक तुही शुद्ध शुद्ध ॥  
यही दुष्ट लारी जो माने गुदा ॥१॥ दूजे से लय होय कर  
दोषो विचार ॥ यही कहते हैं छहूँ और चारों प्रकार ॥ इस  
मिथ्या पर दावा न कीजरे यार ॥ सम्बन्ध जुंठे सौदागर और जुंठे  
आन्तर ॥२॥ यह आत्म चेतन है सम्बन्ध आधार ॥ दीजे  
सुने हैं सम्बन्ध अक्षर ॥ तूँही आप व्यापक है पूरख जो  
अक्ष ॥ जो सुनिये और कहिये सो जुंठा है लर्म ॥३॥ सत  
गुरु से जिसको यह पाया है लर्म ॥ तिसको न होता है जग  
में शरम ॥ गुप्त रूप का पाया है जिसको आनन्द ॥ सो सदा  
सुखी शांत जैसे पुनम का चन्द ॥४॥

२३५ कुटुम्बर शिष्ट

मन तूं क्यों दुजे मज्दारा, ले सतसंग सहारा ॥ टेका नर  
तन लव वारिधि के जेरे, ता यहि होउ पारा ॥१॥ कठिन समाज  
सुलल सम्बन्ध पायो, फिर क्यों अहे गंवार ॥२॥ या नर तन  
को सुर वांछित है, सो तैं कियो अवार ॥३॥ या तन माहिं  
गुप्त वृक्ष है मूल फूल इल डारा ॥४॥

## ૨૩૬ શબ્દ

મન તુમ હરિ ભજ ઉતરો પારા, ઔર ન કહું ગુજરા  
 ૥ટેકા ભવસાગર મેં સતસંગ નૈયા, સતગુરુ ખેવન હારા ૥૧૧  
 જખ સતગુરુ કે શરને આવે હોય અવિદ્યા છારા હૈ ૥૨૧ સત-  
 ગુરુ જાકે બદલી લગાવે પાર કરે ભવ ધારા ૥૩૧ ગુપ્ત મતે કી  
 ખાત જનાવે, દેવે મૂલ સહારા ૥૪૧

## ૨૩૭ શબ્દ

જગત મેં સોઈ નરજનોં સૂરા, અહં બ્રહ્મ શમશેરસે જિન  
 કાટિ દિયા દલ પૂરા ૥ટેકા મહાવલી અજ્ઞાન રાવ કો, દલ સાજ  
 હૈ પૂરા ૥ સેનાપતિ કામાદિ ભટ હૈ, બાજે જિનકે તૂરા ૥ દુસરા  
 દલ હૈ જ્ઞાન વલી કો, સો યોધા રણધીરા ૥ સેનાપતિ શીલ હૈ  
 જાકે, સો વીરન કા વીરા ૥૨૧ દોઉ દલ આનિ જુડે સન્મુખ,  
 હોરહો ધુરન ધુરા ૥ ચલી તેગ તલવાર અરુ બરછી શબ્દ હુયા  
 હૈ પૂરા ૥૩૧ કાયર હોયર સો ભગે ઉલટિ કે પગ રોપે સોસૂરા ૥  
 આગે હી કો પૈર ધરત હૈ ૥ માર કરે ચકચૂરા ૥૪૧ કાયર કા મુખ  
 પીલા પડ ગયા, મન મેં ધીરે ન ધીરા ૥ સૂરા અડિગ લડે રણ  
 માહી ૥ જા મુખ બરચે નૂરા ૥૫૧ દોઉ રાજન કા મન હૈ મન્ત્રી,  
 કાજ કરત હૈ પૂરા ૥ તાકે દોય રૂપ તુમ જાનોં, ચક ખાકી ચક  
 નૂરા ૥૬૧ ખાકી કો જિન પકડિ પછારા, વશ કીના હૈ નૂરા ૥  
 પાંચ પચીસોં અકસર મારે, જખ બાજે જ્ઞાન કા તૂરા ૥૭૧ ગુપ્ત  
 ખજના મિલા મૂલ સે જખ સતગુરુ મિલિયા પૂરા ૥ બ્રહ્મરાજ મેં  
 અદલ જમાયા, છત લિયા તમ કૂરા ૥૮૧

## ૨૩૮ શબ્દ

જગત મેં સોઈ નર જાની સંન્યાસી, વર્ણઆશ્રમ મજખ પન્થ  
 કી કાટિ દઈ જિન ફાંસી ૥ટેકા કંચન કાચ એકર જાના, અલુણ  
 ત્યાગ બુધિ નાસી ૥ મન્દિર માલ નહિં કછુ જિન કે, ના કોઈ દાસ  
 અરુ દાસી ૥૨૧ વિધિ નિધિ નહીં કછુ જિનકે, લોક વાસના  
 ફાટી ૥ સ્વય ઇખ્લા વિચરત જગ માહી, ક્યા મંગલર ક્યા દાશી  
 ૥૩૧ સંપદ કા જખ અર્થ વિચારા, તખ બુદ્ધિ પરકાશી ૥ કામ



કોય જાણે જ્ઞાણ તુલ્યા, દારણ સદિન વિનાશી ॥૩૩॥ ન્યાય પદ  
જાળ્યું વહી દે. હુએ જ્ઞાન કે વાચી ॥ ગુપ્ત પ્રદાશ બેસા ય  
અન્દર, હુએ મૂલ અવિનાશી ॥૩૪॥

### ૨૪૯ છન્દ સંગીત ૧

અજી અજી દેખા નિજ જ્ઞાનમ અજળ અનૂપ ૧ ૫૪ કોય  
અજી તીન દેહ મં વ્યાપક જ્ઞાન સરૂપ ॥૩૫॥ તુલ નો બર્ષ માલિ  
બૂલા કજી કીજિયે સંભાલ ૧ ૫૫ ઘર માલી દિગિ રહો નહી  
કજી તાલી બાલ ॥ બિના અગર કૈસે બહે રહો કંગાલજી ॥ અજ  
કીજિયે કિયાય તોસે દહન દુ દાલ, કાયા ઘર માલિ તોસ ગલિ  
રહો ધન માલ ॥ ગુરુ અરુ વેદ કીજે શુદ્ધિ કૃદાલ કિર બે  
બૂપન જા બૂપ ॥૩૬॥ પુકારી કહે વેદ યામે નાલી જુઠી  
જાત ૧ ૫૬ ॥ અમૃત સદાર હે તેરી સાથ ભૂટે નાલી  
શિવારી જામે અહે દિન રાત ૭ ૧ ૭૮ ધન કાજ મૂઠ  
સાખન કિયાય કરે ૧ ૫૭ ૫૬ ધન જાજલ નાલી રણ માલી  
જાય મરે ૧ ૫૮ ૫૬ દાહિન દામ અનિશાય અનેક કરે ॥ સહે શીત  
અજી પુષ ॥૩૭॥ અન્ય જે સુખન તોસે દહન ટેરી ટેરી ૧ ૫૯  
કાના વેદ દાલ મારત હે ધરિ ધરિ ॥ સમજે ના સેન તોકો કહે  
હોન એર એર ૭ ૧ ૬૦ ૫૬ વચ્ચમસિ વાક્ય વાકો કીજિયે વિચાર ૧ વાચ્ય  
અજી લક્ષ વાકે કોનાં લીજે નિશ્ચાર ॥ લક્ષ નિજ રૂપ લખિ વાચ  
હી જો લીજે કાર ૧ ૬૧ નાલી પડને બચ કૂપ ॥૩૮॥ મુનીયદ જાત  
જોકે જાય બેસા વલવાર ૧ ૬૨ ૫૬ જામે ગુપ્ત જ્ઞાન સોઈ નર હુએ  
પાર ॥ ૬૩ ૫૬ ના શરમ કજી સામે નાલી યામે વારજી ॥ ૬૪ ૫૬  
અઠેન લખિ ૧ ૬૫ ૬૩ હવ જ્ઞાન જાનિ લઈ રજી તખ હોત  
નાલી સર્પ જાન ૧ ૬૬ ૫૬ અધ્યાય તોસા આંતમા મં અભિમાન ૧  
૫૭ અવધિ જ્ઞાન સરૂપ ॥૩૯॥

### ૨૪૦ શાપ્તાચાલ રંગરિયા

વ્યાપક જ્ઞાન અચલ અવિનાશી, પૂરણ શુદ્ધ અનામ હો  
॥૪૦॥ જન કલિહન કલહ જન રમિયા, તન ધરિ ધારત નામ હો  
॥ ૪૧ ૫૬ મંદર ૭૫ સીવ સોઈ અનિશ્ચા, સંજ માયા કરે દામ હો ॥૪૨॥

એક બાંધત એક છોડત જગ મેં, એક બંધે ધન ધામ હો ॥ એક  
ત્યાગિ બનિ વન વન ડોલત, એક ધમ્મિત સુત વામ હો ॥૨૦॥  
એક ભક્તી કર સંગ સંતન કે દેખત આતમ રામ હો ॥ વિષયા  
સક્ત વિષય સંગ બધિય દેખત પામર ચામ હો ॥૨૧॥ સૃષ્ટી પ્રગટ  
યહુ નજર હોજાવે, આખિર ગુપ્ત મુકામ હો ॥ ધ્રુવ સખ રૂપ સરૂપ  
હિસી કા, જા બિન સખહિ અકામ હો ॥૨૨॥

## ૨૪૧. શીખ

કયોં ફિરતા ભટકા, અખ તૂં છોડ જગત કા ખટકા ॥ટોકા  
યા જગ માહીં ફિરે ભરમતા, આઠિ કામ કા પટકા ॥ સિર સે  
બોજા કયોં નહિં ડારે, દેહિ ભરમ કા મટકા ॥૧॥ નાના સ્વાંગ  
ધરેતેં જગમેં ॥ જૈસે લડકા નટકા ॥ કનક કામિની કો નિત ધાવે  
પીવે વિષય રસ ગટકા ॥૨॥ સત સંગતીકી સારન જાની ફિરતા  
સટકા સટકા ॥ જખ સતગુરુ શરને આવે, પાવે બ્રહ્મ જ્ઞાન કા  
લટકા ॥૩॥ બાહુર સે દૂક ભીતર હોકર, બોજ કરો ઇસ મઠ  
કા ॥ ગુપ્ત મૂલ કી અજખ મૂરતી, દરશન કર મોરમુકુટ કા ॥૪॥

## ૨૪૨. શીખ ।

મન તું મુખ કે સાગર બસરે ॥ કહિં ઔર ન એસા યશરે  
॥ટોકા ॥ યહુ જગ મૃગ તૃષ્ણા કો ગારો, યા મેં મત ઘસરે ॥ આતમ  
નીર નિકટ બહે નિર્મલ, તું યાકો પચિસ ચસરે ॥૧॥ યહુ સંસાર  
બિડા થોહર કા, કાટા નખ ઔર શિખરે ॥ બહુત બેર તોકો  
સમજાયા ॥ તૂં યામેં મત ફસરે ॥૨॥ તનક બઢાર્ધ પાય જગત  
મેં ॥ માન લિયા ॥ બડો યશરે ॥ એક ઘર છોડિ દિયા અપના ॥  
તેજ ઘેરે ઔર દૂસરે ॥૩॥ યા સાગર પર ગુપ્ત ઘાટ હૈ ॥ જૈતિ  
રહી જહાં ચસરે, મૂલ પૈઠી પર પગ ધરિ કે ॥ તું ગોતા લગા  
હસરે ॥૪॥

દોહા-ઇસ સાગર પર જે વસેં જિનકે વિમલ વિવેક ॥

ડોભડિયોં મેં ફિરત મેં, મચ્છી યુગત અનેક ॥



## ૨૪૩ નવીન દોહી ।

હરદોશ સજન સિંગાર અગ, દોહીકા કિનતો આગયા પાંડકા  
 ઉચરિન કો યહ દોહી રચી, જિયા કિન જનમકો પાગયા ॥ રંગ  
 દેખિહર મહારા ભૂલયા, જનમ જાતા આગયા ॥૧॥ ઈકશર અપના  
 બહા કર, પાંખ મેં પાંખા આગયા ॥ ગદસલ મેં ફેરે સેવતા,  
 આંતરો કાલે આજ ગયા ॥૨॥ ગય જલ આંતર કોંઝે રહે, રમ  
 ર પે મુરલી સુના ગયા ॥ જગાં ભરમ કો નીક સે, વોહ રાગ  
 માંડ ગા ગયા ॥૩॥ દોહી ઉચી કો સફલ દે, જે આતમ નીચ  
 નહા ગયા ॥ ગુપ્ત જાતા લાયકે, અજ્ઞાન મેલ બહા ગયા ॥૪॥  
 દોહા-દોહી હરિકે નામ સે, જલતી દોવે શાંત ॥

જેસે જન પ્રહલાદ કો, લગી ન તત્તી આંચ ॥

હરદમ દોહી જલરહી, સમઝત હે કોઈ ધીર ॥

કારજ અપના કીજિયે, જાનો નીર અરુ ક્ષીર ॥

## ૨૪૪ ધૂલેટી ।

મોત દોહી કૂંકિ કાયા ધૂલ ધૂલેટી મચા પાંડકા અગ ધામ  
 બામ તજિ કર ચલા, સગ કોઈ કર ગચ્યા ગચ્યા ॥ હસ્થી  
 ઘોડા પાલકો, દોહત રહી દુગ સે સચ્યા ॥૧॥ મત્યા હિસાવે  
 સેન લાયે, નયન લે આંસુ જિંચી ॥ અગ તો રહના ના બને,  
 યહ જાત અંતર મેં જચી ॥૨॥ ગચ્યા ન જાયા પુન લાયો,  
 સેવતા લેલે હિંચી ॥ દોહી ન ગાઈ સગ ગચાર્, આજ તો યહ  
 ના ગચી ॥૩॥ તન ધન કો સચ્યા જનતા, મરને કો નહિ જાને  
 સચી ॥ ઉચ ગુપ્ત ગોચિંક કો બાજે જિનસે યહ સગ માયા રચી ॥૪॥

દોહા-ધૂલેટી જગ ધૂલસમ, જાને કોઈક સન્ત ॥

ધૂલ નામ અરૂપકા, સખી મિરદ મેં અન્ત ॥

આતમ ચેતન શુદ્ધમેં જગત નામહે ધૂલ ॥

સા નિસસે ન્યારા નહીં ભિન્ન લગ્યે સોઈભૂલ ॥

## ૨૪૫ જ્ઞાન ધોડા ।

અખ તો ચઢું જ્ઞાન કે ઘેડે, તતકા તેગ બનાડીંગા ॥૨૬॥  
 શુભ ગુણ બહુત બનાડીં શસતર, શીલ સંતોષ કા ધારું બખ્તર  
 ॥ વિવેક વૈરાગ કે પહિરું વસ્ત સત સંગતિ રંગ ચઢાડીંગા ॥૨૭॥  
 પ્રેમ ભક્તિ કી પાખર ડારું સમ, દમ, દોષ રક્ષાખ મુઘારું ॥  
 દયાકી દુમચિ નિશ્ચલ ધારું, લક્ષ લગામ લગાડીંગા ॥૨૮॥ અજ્ઞાન  
 બલી શત્રુકો મારું યુક્તિ દૃષ્ટાન્ત બનાડીં દારું ॥ એક ફેર મેં  
 સખકો મારું ગુરુ ગમ તોપ ચલાડીંગા ॥૨૯॥ ગુપ્ત રૂપ સ્વયં રાજકો  
 પાડીં, સખ પર અપના હુકમ ચલાડીં ॥ એક કોસ ચલકર નહિ  
 જાડીં આપ મેં આપ સમાડીંગા ॥૩૦॥

## ૨૪૬ પદ

વહી ચાર હૈ દિલદાર મેરા, સાર કો બતલાવતા ॥૨૬॥ પચ્ચીસ  
 તત્ત કા દેહ યહ, સ્થૂલ મરતા જમતા ॥ જાગ્રત અવસ્થા કોપ અન્ન  
 મય, કાહે મેં મન લાવતા ॥૨૭॥ સત્વહ તતકા દેહ સૂક્ષ્મ, લોકો  
 મેં જાતા આવતા ॥ અવસ્થા હૈ સ્વપ્ન જાકી, કોષ તત્ર મય  
 ગાવતા ॥૨૮॥ અજ્ઞાન કારણ તીસરા, આનન્દ મય સમજાવતા ॥  
 અવસ્થા જાકી સુસોપતિ, તેરે મેં નહીં પાવતા ॥૨૯॥ સાક્ષી હૈ  
 દૃષ્ટા તીન કા, સો તેરા રૂપ લખાવતા ॥ ગુપ્ત પરઘટ આપ હૈ,  
 જાતા નહીં કહીં આવતા ॥૩૦॥

## ૨૪૭ પદ

જાન્યા હૈં અપને આપ કો, ફિર જાપ સે ક્યા કામ હૈ ॥૨૬॥  
 આતમ વિદ્યા જો પઢા, ઉસકો ક્યા વેદ પુરાણ હૈ ॥ જો આનન્દ  
 બ્રહ્માનન્દ મેં, વિષયોં મેં કહાં આરામ હૈ ॥૨૭॥ જો નહાયે નિરમલ  
 જ્ઞાન સે, ઉનકો કહા અસનાને હૈ ॥ મિથ્યા લખ્યા પરપંચ કો,  
 ઉસકો કહા ધન ધામ હૈ ॥૨૮॥ ખુદ મસ્તી મેં જો મસ્ત હૈ, ઉસકો  
 ક્યા મદિરા પાન હૈ ॥ વ્યાપક લખ્યા નિજ રૂપ કો વહ  
 કિસકા ધરતા ધ્યાન હૈ ॥૨૯॥ જો આનિ પકડ્યા કાલ ને, ઉસકો  
 ક્યા સુખહ શામ હૈ ॥ જો ગુપ્ત આતમ મેં જુડ્યા, ઉસકો  
 કહા સુત બામ હૈ ॥૩૦॥



## ૨૪૮ પદ

પૂર્નિમઃ પુરુષ તન પાય કે, પૂજન કરો નિજ આપ કો ॥૮૬॥  
પ્રીતી કે પુષ્પ ચઢાય કે, ચન્દન લગાવો જાપ કો ॥ કરની કેસર  
માલિક કે, કર તિલક હરદમ હાથ કો ॥૧॥ જગ પૂનિમા કે બીચ  
મેં જો ચન્દ પૂનમ લાપતો ॥ ત્યોં કાયા મેં ગુરુ આત્મા, પરકાસ  
હે પરકાસ કો ॥૨॥ જો એસી પૂનમ પૂજતા, સો આવે તીનોં  
તાપ કો મૈલે કો કેસે પુજતા, જિસને પાયા નિજ સાફ કો ॥૩॥  
ગુપ્ત પૂરણ પૂરિ રહા, પુજન કરો કોહ તાસુ કો ॥ દૃષ્ટી ન મુઝી  
આવતા, વહ સ્વાસ હૈ સમ સ્વાસ કો ॥૪॥

## ૨૪૯ પદ

દીદારકર દિલદાર કા, કાયા દિવાલી મેં સહી ॥૮૭॥ જિસે  
આંખ સે દેખા ચહો, વહ આંખિ સે દીખે નહીં ॥ દેખન વાલા  
આપ હૈ, દુક માની લે મેરી કહી ॥૧॥ જો સ્વપ્ન માહીં દેખતા,  
જાગત મેં વહ પાતા નહીં ॥ દીખે સુને સો ભર્મ હૈ, વહ ખાત  
વેદોં મેં કહી ॥૨॥ ગાબર ગજી કે ઉદર મેં, અરુ દૂધ ભી રહતા  
વહીં ॥ ઈશ્વર ને કીના લિન્ન વહ, જિસ માહિં તૂં ગેરે દહી ॥૩॥  
વહ ગુપ્ત ગોવર્દન તુહી, ઉસ કી ખબર તુઝ કો નહીં ॥ ફિરતા  
હે ભેટયા ચાલ મેં કછુ સોચતા મન મેં નહીં ॥૪॥

## ૨૫૦ પદ

દેવ તેરા કૌનહીં હૈ, જિસ કી તૂં આશા કરે ॥૮૮॥ જો  
દાન દેવે હાથ સે, મુખ સે ભજન હરિકા કરે ॥ ઈશ્વર કી એસી  
નીતિ હૈ વહ કામ કરતા સો તિરે ॥૧॥ અપને પુન્ય પાપ કા  
ફલ, મુખ અરુ દુખ કો ધરે ॥ દૂખ યહીં કોઈ દેવ હૈ, અપના  
કર્યા આપહિ ભરે ॥૨॥ કોઈ કાજ તેરા આય કે વહ દેવ  
કભિહિ ના કરે ॥ જો આસ કરતા દેવ કી વહ મનુષ ગર્હલ સે  
પરે ॥૩॥ ખુદ આપ ચેતન દેવ હૈ, અપની ખબર કુછ ના કરે ॥  
ઉસ ગુપ્ત કા નાહિં ભેદ જાન્યા, ખુત્ત કી પુજા કરે ॥૪॥

## ૨૫૧ પદ

લક્ષણ કહો ઉસ ધર્મ કા, જિસકા કથન કરને લગે ॥૮૯॥  
સરપ કરણ કૌન હૈ વિરધી કો કેસે પાવતા ॥ સ્થિતી કહીં પર

રહતા હૈ, અરુ નાશ કો ધરને લગે ॥૧॥ વિપાક તિસકા ઝન હૈ,  
સખહી કહો સમઝાય કે । નામ માત્ર વસ્તુ સે' કુછ કાજ ગહિ  
સરને લગે ॥૨॥ લક્ષણ બિના પરમાણુ કે, કોઈ વસ્તુ કી સિદ્ધી  
નહીં ॥ ઉત્તર સફાઈ સે કહો, બિન મૌત ક્યોં મરને લગે ॥૩॥  
ધર્મ કે સમૂહ કી, દસ ખાત હૈ વહ કોનસી ॥ કહતે ધરમ એક  
અંગ કો, યહ કામ કયા કરને લગે ॥૪॥ ધર્મ ધર્મી સે જુદા  
ઉસકી ખબર તુઝકો નહીં ॥ ઉસ ગુપ્ત કા નહીં ભેદ જાન્યા,  
ધર્મ મેં જલને લગે ॥૫॥

### ૨૫૨ પદ

કરલો જતન ઇસ વતન કા, જહાં જાકે નહીં આના પડે  
॥૧॥ ઇસ લોક કી ઇચ્છા તજે, પરલોક નહિં જાના પડે ॥ વહ  
લોક અપના રૂપ હૈ, ભગવાન ગીતા મેં પદે ॥૨॥ સોઇ પુરુષ હૈ  
સૂરમા, ઇસ મોરચે ઊપર ડટે ॥ આના જાના ભર્મ તજિ, નિજ  
રૂપ મેં નિત હી લડે ॥૩॥ ખાના તો એસા ચાહિયે, કંછુ ફેરિ  
નહીં ખાના પડે ॥ નહાના તો એસા ચાહિયે, કહિં ફેરિ નહીં  
નહાના પડે ॥૪॥ લેના તો એસા ચાહિયે, ફેરિ નહીં લેના પડે ॥  
જુડના ઉસી કા સફલ હૈ, જો ગુપ્ત આદમ મેં જુડા ॥૫॥

### ૨૫૩ રાગ આરતી અષ્ટક

ભજ શિવ ગુપ્તનન્દે, જો કોઇ ભજન કરે મન લાકે ॥  
કટિ જાય યમ ફન્દે, હર શિવ ગુપ્તાનન્દે ॥૧॥ આરત જન કી  
સુનો' આરતી હૈ કિરપા સિન્ધે ॥ મોહ જાલ કી ફાંસી માહિં,  
જીવ ફિરે બન્ધે ॥૨॥ સભી કહો સમઝાય, કોન મેં કો યહ જગ  
બન્દે ॥ અબ કરો અવિદ્યા નાશ, તભી હમ હોવે આનન્દે  
॥૩॥ કો ઇશ્વર કા જીવ કોન રહતા તિનકે સન્ધે ॥ કયા માયા  
કા રૂપ, કહો અબ સત ચિત આનન્દે ॥૪॥ આરતી કૈસે કરે  
તુમહારી, તુમ વ્યાપક જિન્દે ॥ જો કોઈ તુમરી કરે આરતી, વહ  
જુદી કે અન્ધે ॥૫॥ (ઉત્તર કી આરતી) મેં મેરા યહી મોહ  
હુયા, અરજુન કો રણ મધે ॥ ઉડા જ્ઞાન ગીતા કા સુનિ લખ  
સમઝાની સન્ધે ॥૬॥ તુહ ચેતન ભરપૂર દૃશ્ય મન જગત જાલ  
વન્ધે ॥ જબ હોય અવિદ્યા નાશ, ખિલે જબ વિદ્યા કે અન્દે ॥૭॥



કરે શુભા શુભ કર્મ, ભોગતા ફલ સુખ દુખ દ્રવ્યે ॥ સીવ કો  
કહતે જીવ, સીવ કષ્ટ કરે નહીં ધન્યે ॥૭૧॥ તત્ ત્વં પદ મેં અસિ  
ને તેતન, દોનોં કા સન્દે ત્રિગુણાત્મક મિથ્યા માયા, ગુપ્તા-  
તમ સતચિત આનન્દે ॥૮૧॥

દોહા-પઢે જો અષ્ટક આરતી, સાંજ સમય ચિતલાય ॥

કોઈ કાલ અભ્યાસ તેં સમુજે સહજ સુભાય ॥

૨૫૪ સ્તોત્રાષ્ટક

મનુષ્યોં ન દેવો નહીં દૈત્ય યક્ષ, પંડિત ન મૂરખો કવિયો  
ન દક્ષ ॥ જાતા ન આતા ખોયા ન પાયા, શિવઃ કેવલોહં નિર-  
મૈલ માયા ॥૧॥ આશ્રમ ન વર્ણ ન કુલ જાતી ધર્મી ॥ નહિં  
નામ ગોત્રં શર્મા ન વર્મા ॥ જાત્યત સ્વરૂપ નહીં પ્રાણ કાયા ॥  
શિવઃ કેવલોહં નિરમૈલ માયા ॥૨॥ દેશો ન કાલો વૃદ્ધો ન  
બાલો ॥ તુરિયા વિ તુરિયા નહીં કાલ જાલો ॥ જન્મ્યા ન મૃયા  
જાતા ન આયા ॥ શિવઃ કેવલોહં નિરમૈલ માયા ॥૩॥ જીવો ન  
સીવો ન અજ્ઞાન મૂલં, સુખં દુખં નહિં પાપ સૂલં, કર્તા અકર્તા  
નહિં બિંબ છાયા ॥ શિવ કેવલોહં નિરમૈલ માયા ॥૪॥ મૌની  
ન વક્તા બંધો ન મુક્તા, રાગં વિરાગં નહિં લક્ષ લખતા ॥  
સખ વાચ્ય અવાચ્ય કા મહલ ઢાયા ॥ શિવઃ કેવલોહં નિરમૈલ માયા  
॥૫॥ શાદી અનાદી નચ મેં સમાધી, સ્વાસ્તા ન શાસ્ત્ર નહિં  
વાદ વાદી ॥ નહીં પક્ષ પાતં જન્મી ન જાયા ॥ શિવઃ કેવલોહં  
નિરમૈલ માયા ॥૬॥ યોગં વિયોગં નચ મેં સમાધી ॥ માયા  
અવિદ્યા નચ મેં ઉપાધી ॥ શુદ્ધો સ્વરૂપં નિરંજનં રાયા ॥  
શિવઃ કેવલોહં નિરમૈલ માયા ॥૭॥ ગુપ્તા ન મુક્તા લિપતા ન  
છિપતા ॥ લોકા ન વેદા તપતા અતપતા ॥ એકો ચિદાતમ સખમે  
સમાયા ॥ શિવઃ કેવલોહં નિરમૈલ માયા ॥૮॥ પઢે પ્રાતા  
કાલે કંઠે યમ જાલે ॥ તજે આશ તૃષ્ણા સંતોષ પાલે ॥ અજ  
સ્તોત્ર મેં મન લગાયા ॥ શિવઃ કેવલોહં નિરમૈલ માયા ॥૯॥

૨૫૫ રાગ બ્રહ્મ અભ્યાસ ॥

કરે વૃત્તી બ્રહ્માકાર મળ કુજ જળપાવે ॥૧૬૬॥ અજ એજ  
બ્રહ્મ બ્રહ્મ બ્રહ્મ બ્રહ્મ અલિપ્ત જાવે ॥ સોવત જાગત બ્રહ્મ, બ્રહ્મ

પવિત્ર ખાવે ॥૧॥ અણ એણ લેત દેતહૈ બ્રહ્મ, બ્રહ્મ જગડા  
ઠાવે ॥ દેખત સુનતા બ્રહ્મ ॥ બ્રહ્મ નાચે ગાવે ॥૨॥ અણ એણ  
મન બુદ્ધિ આદિક બ્રહ્મ, બ્રહ્મ તીરથ નહાવે ॥ ઉપવાસ કરત હૈ  
બ્રહ્મ ૨ પુજા લાવે ॥૩॥ અણ એણ કર્મ ઉપાસન બ્રહ્મ જાવે  
આવે ॥ કરત કાજ સખ બ્રહ્મ, બ્રહ્મહી ભરમાવે ॥૪॥ અણ  
એણ ઉપજન હારો બ્રહ્મ બ્રહ્મ હી ઉપજાવે ॥ પાલન કરતા બ્રહ્મ  
બ્રહ્મહી ખપિજાવે ॥૫॥ અણ એણ સમજન હારો બ્રહ્મ, બ્રહ્મહી  
સમજાવે ॥ ખોવન હારો બ્રહ્મ, બ્રહ્મ ઢુંઢે પાવે ॥૬॥ અણ એણ  
ત્યાગી રાગી બ્રહ્મ, બ્રહ્મ સખ કરવાવે ॥ જીવ ઈશ સખ બ્રહ્મ,  
બ્રહ્મહી ભુગતાવે ॥૭॥ અણ એણ ગુપ્ત પરઘટ બ્રહ્મ, બ્રહ્મ  
જહાં મન જાવે ॥ યો અભ્યાસત જો બ્રહ્મ બ્રહ્મ હી હો જાવે ॥૮॥  
દોહા—કીટ ભિરંગી હોત હૈ, પુનઃ પુનઃ અભ્યાસ ॥

સુની ભૂંગા કે શબ્દ કો, ભૂંગ હોય ઉડ જાત ॥

૨૫૬ રંગતિ મજેદાર ।

કુછ મજા ઉસી કો આયા હૈ, જો આપ મેં આપ સમાયા હૈ  
॥૧૬૬॥ બ્રહ્માનન્દ કિસકી તુલ્ય ખરનો, નહિં તિસકી પટતર  
પાવાહૈ ॥૧॥ બ્રહ્માનન્દ કા કોઈ ચક્ર કતરા, સખ તિરલોકી મેં  
છાયા હૈ ॥૨॥ જો આનન્દ ચક્રવર્તી કા, અરુ બ્રહ્મા કે તક ગયા  
હૈ ॥૩॥ બ્રહ્માનન્દ આનન્દ કે આગે, સખ આનન્દ ભાસ સુનયા  
હૈ ॥૪॥ બ્રહ્મલોક વૈકુંઠ પુરી લગ, સહી કાલ નેં ખાયા હૈ ॥૫॥  
તન ધન મેં આનન્દ હો ખેઠે, ચહ સ્વપને કૈસી માયા હૈ ॥૬॥  
જિસ આનન્દ કો પ્રાપત હોકે, ઔર ન આનન્દ ચાહા હૈ ॥૭॥  
ગુપ્તાનન્દ કે ગુપ્તાનન્દ મેં જો નિત ઉઠિ ગાતા લાયા હૈ ॥૮॥

૨૫૭ મજેદાર

સો મજા ન મહંગા સસ્તા હૈ, જહાં સંત લાડિલા ખસતા હૈ  
॥૧૬૭॥ ઘાટ બાટ કુછ પાવત નાહી, વહ વિકટ મહલ કા રસતા હૈ  
॥૧॥ નીમ મઝરન નાહી મહલ કે, કોઈ કૈસે ઉસમેં ફસતા હૈ ॥૨॥  
જો કરતે નિષ્કામ કર્મ કો, અરુ મન ઇન્દ્રિય કો સકતા હૈ ॥૩॥  
સાધન ચાર ચલે રસ્તે મેં સત ગુરુ કે સંગ ધસતા હૈ ॥૪॥



અકલ કા અકલ સખ ફૂટા, બે અકલ સોદા જયતા હૈ ॥૫૦॥  
 દુની દેત પર આગ લગી હૈ, વહુ આશિક બેડે હસતા હૈ ॥૬૦॥  
 કહા કહું શોભા અરુ સુખ કી, લીયા મુક્તી હાથ ગુલદસ્તા હૈ  
 ॥૭૦॥ ગુપ્તાનન્દ કો પરઘટ જના, સો ઘટ ઘટ માહીં લસતા હૈ ॥૮૦॥

### ૨૫૮ મજેદાર

ક્યા મજા મિલા જિન્દગાનો મેં સખ ખો દઈ ઉમર હરામી મેં  
 ॥૧૦૦॥ ખેલા ખાયા લાડ લડાયા, કુછ સમજા નહીં નાદાની ॥૧૦૧॥  
 આઈ તરુનાઈ મસ્તી છાઈ, લો ગઈ કામ અરુ કામી મેં ॥૧૦૨॥  
 બચ્યા બચ્યા ખાન પાન હિત, ફિર ધન હિત ફસા ગુલામી મેં  
 ॥૧૦૩॥ આવે બુઢાપા દે સિર થાપા, હો ગયા આશક્ત મલાની મેં  
 ॥૧૦૪॥ કાલ આય તતકાલ વિનાશે, તુઝે ગેરે ચારોં ખાની મેં  
 ॥૧૦૫॥ લાલ અમોલક યા નર તન કો, ખોય ચલા મૈદાની મેં  
 ॥૧૦૬॥ ના કોઈ કર્મ ઉપાસન કીના, નહીં બૈઠા સતસંગ જ્ઞાની  
 મેં ॥૧૦૭॥ ગુપ્તરૂપ કો જના નાહીં, અતિશય હો ગયા હાની  
 મેં ॥૧૦૮॥

### ૨૫૯ મજેદાર

કુછ મજા આપ કે જાને સે, ક્યા હૈ ફકરાની ખાને સે ॥૧૦૯॥  
 જો આનન્દ સૂખે દુકડે સે, સો નહીં ગિજ માલ કે ખાને સે ॥૧૧૦॥  
 જો આનન્દ હુરિ કી ભક્તિ સે સો નહીં માલ ખજાને સે ॥૧૧૧॥  
 જો આનન્દ વૈરાગ મેં દેખા, સો નહિં વિષય કમાને સે ॥૧૧૨॥  
 જો આનન્દ સન્તોષ સખર મેં સો નહિં દ્રવ્ય કમાને સે ॥૧૧૩॥  
 જો આનન્દ અપને ઘર માહીં, સો નહિં પરદેશ ડુલાને સે ॥૧૧૪॥  
 જો આનન્દ અપને સમજન મેં, સો નહિં લોક રિજાને સે ॥૧૧૫॥  
 જો આનન્દ એકાન્ત દેશ મેં સો નહિં મન કે ભરમા સે ॥૧૧૬॥  
 સભી આનન્દ ગુપ્તાનન્દ સે, આપ મેં આપ સમાને સે ॥૧૧૭॥

૨૬૦. કુટુમ્બ જન્ય દુખ હરિહરસમ્પાદ

દોહા—મિલે હરી હર પરસ્પર, હસિ પૂંછી કુશલાત ॥

હરિહી હર સે યોં કહયા, કિસ વિધી મારો ગાત ॥

સુનિ કે હરિ કે બચન કે, હર હરખે ઉર માહિં ॥  
 મોંસેતી પૂછન લગે, તુમ કયા જનો નાહિં ॥  
 દિયા બિરોધી કુટુમ્બ, અહ નિશિ ઉર કે જરે ॥  
 મેંરા બાહન ખેલ, સતી કા શેર દહાડે ॥  
 કાર્તિક સ્વામી કે મારે, તુંડી કે મૂષક ધારે ॥  
 મોગલ માહિં સર્પ, ડરે અરુ બહુત કુકારે ॥  
 દુકુમ્બ બિરોધી દેખિ કે, જલત રહું દિન રાત ॥  
 હરહી હરિ સોં યોં કહયોં ઇસ વિધી માડોં ગાત ॥

૨૬૧ પદ

લખિ નિજ આતમ રૂપ અપારા, જિસમેં મિથ્યા સંસારા  
 ૥૧૬૬૥ છોડિ જગત પરવાહુ સમઝ અખ, નહોવો જ્ઞાન કી ધારા ॥  
 કાલ કર્મ કા છુટૈ મૈલ સખ જખ હોવે ઉદ્ધારાં ॥૧॥ આતમ સદા  
 અસંગ રહત હૈ, લિપે ન દેહ વિકારા જયો જલ માહીં કમલ  
 રહત હૈ, જલ સ્પર્શ સે ન્યારા ॥૨॥ પંચ કોષ અરુ ત્રીન દેહ  
 મેં વ્યાપિ રહા સારા ॥ કટે ન સૂખે જલ સે ભીંગે, અગ્નિ ને  
 નહીં જરા ॥૩॥ ગુપ્ત અરુ પરઘટ સભી ઘોર મેં સોહે રૂપ  
 તુમહારા ॥ જૈસે ઘૂત દૂધ મેં રહતા રહતા, સભી જગહ એક સારા ॥૪॥

૨૬૨ પદ

શાસ્ત્ર વેદ સભી સમઝાવેં, એક આતમ સત્ય બતાવેં ॥૩૬૬૥  
 સુનિ ગુરુ મુખ સે જ્ઞાન આપને, મન મેં કયોં ના લાવે ॥ભર્મ  
 જાત ઉડિ જાવે, તેરા પૂરણ પદકો પાવે ॥ ૧॥ જૈહિ એકાંત વિચાર  
 કરો, જો સતગુરુ બાત બતાવે ॥ તિરથ વરત ધરમ સખ મન કે, ઉલઝિ  
 ઉલઝિ મરજાવે ॥ ૨ ॥ તુહીં શુદ્ધ સચ્ચિદાનંદ ફિર, કાહે કો મન  
 ભટકાવે ॥ જિસકો અમૃત પાન ક્રિયા, વહ કાહે કો ખલ ખાવે  
 ॥ ૩ ॥ બાહર અન્તર રૂપ આપના, ખોજન કિસકો જાવે ॥ ગુપ્ત  
 રૂ પરઘટ જડ ચેતન મેં અપના આપ લખાવે ॥ ૪ ॥



### ૨૬૩ શબ્દ ધનાસરી

આતમ જોતી સખ ઘટ માહીં, બિન સતગુરુ વહ સૂજત નાહીં  
 ॥ ૧ ॥ જૈસે દ્રવ્ય ગડયા ઘર ભીતર, બિન ભેદી વહ પાવત  
 નાહીં ॥ જૈસે ધૃત દૂધમેં રહતા, બિન મથન બિન નિકસત નાહીં  
 ॥ ૧ ॥ જ્યોં જલ વૃક્ષ, વૃક્ષ મેં અલના, લાલ ધરયા તિસ અલને  
 કે માહીં ॥ તાકી દમક પડી જલ ભીતર, ખોજી રહે વહ પાવત  
 નાહીં ॥ ૨ ॥ કોઈયક ચતુર પુરૂષ કો નિરખ્યા, લાલ ખતાદિયા  
 અલને મેં તાહીં ॥ ત્યોં જગ જલમેં તરુ નર કાયા, અન્તઃ કરણ  
 અલના દિખલાયા ॥ ૩ ॥ તામેં આતમ લાલ બિરાજત, દમક પડી  
 જગ જલધિ મેં સાજત ॥ ગુપ્ત ભેદ સતગુરુ સે પાવત, ઘટમેંહી  
 આતમ લાલ ખતાવત ॥ ૪ ॥

### ૨૬૪ શબ્દ ભર્મ નાસક

લખી આપકે તાંઈ, દીજો ભરમ ખાહાઈ ॥ ૧ ॥ યોગી ભરમી  
 રહે યોગન મેં ભોગી જાય ફસે ભોગન મેં ॥ રોગી નિત રોવહી  
 રોગન મેં, કાલ નિરંતર ખાઈ ॥ ૧ ॥ પંડિત પંડિતાઈ મેં ભૂલે  
 કાજી પડે કજાકે ચૂલે ॥ ધારાપતી માન મેં પૂલે મૂરખ મૂરખતાઈ  
 ॥ ૨ ॥ કોઈ વિદ્યા વૈરાગ ત્યાગ મેં, કોઈ ધુનીલા જલે આગ મેં, સાર  
 વસ્તુ કે ફિરે ત્યાગ મેં, નાહક ઉમર ગમાઈ ॥ ૩ ॥ કોઈ કોઈ જન  
 ઉભરે ચૌરાસી, નેમ નહીં ગ્રહી સન્યાસી ॥ જિસકો લખ્યા ગુપ્ત  
 આવે નાશી, સભી ઠોર કે માહીં ॥ ૪ ॥

### ૨૬૫ પદ જૈન વર્મ પ્રકાશક

હુઆ મજહુખ, દિવાના, કરતા ફિરે વ્યાખ્યાના ॥ ૧ ॥  
 સોઈ જૈની આપ કો જાન્યા, ભેદ ભર્મ સખ ખોયા નાના ॥ પાપ  
 પુન્ય કા મૂલ ઉડના, તાર લક્ષ મેં તાના ॥ ૧ ॥ તન સરાય મેં  
 અસંગ રહત હૈ, સોઈ સરાવગી સાર ગહત હૈ ॥ મુખ સે ખાત  
 ખનાય કહત હૈ, છોડે નહીં ખેઈમાના ॥ ૨ ॥ સોઈ દુઢિયા જાનોં  
 સન્યા, જિસકો ઘર હુંઠા હૈ પકકા ॥ બાકી ઔર હરામી કે ખચ્યા  
 આંધહિં થાનિક થાના ॥ ૩ ॥ સોઈ યોગી યતી સન્યાસી, મજહુખ

પંથ કી કાઠિ કાંમી, ગુપ્ત રૂપ પૂરુષ અવિનાશી, ભેષ પંથ કી  
જ્ઞાન ॥ ૪ ॥

૨૬૬ શ્લોક

અમ તજ મિથ્યા અહંકાર, ભાર સે કયોં બોજ મરે ॥ ૧ ॥  
કારણ સુક્ષ્મ સ્થૂલ, તનરે, ઈનકા તજ હંકાર ॥ તું ચેતન ભરપુર  
હૈરે, સિયે ન દેહ બિહાર ॥ ૨ ॥ પંચકોષ મેં મત ફેરે, તેરા રૂપ  
અપાર ॥ ભર્મ માહિં કયોં ભરમતારે, અન્તર કરો વિચાર ॥ ૩ ॥  
સાંચે સતગુરુ સે મિલોરે, જળ પાવોગે માર ॥ જુઠે ગુરુ કે આસરે  
રે, કમલું ન હોય ઉદાર ॥ ૪ ॥ ગુપ્ત રૂપ પરવટ આપ હૈરે, જામેં  
નહીં સંસાર દિલ કી હુધ ઉઠાયદે રે, આશા તૃષ્ણા માર ॥ ૫ ॥

૨૬૭ પદ

દમકી રહા દમ માહી, રતન અમોલી લાલ ॥ ૧ ॥ ન  
સૂખે ભીંગતા રે, કરકે દેખ સંભાલ ॥ અગ્ની સે જલતા નહીં રે,  
ખાવે ન તિસકો કાલ ॥ ૨ ॥ દેખે કયોં ના બોજ કરે, ઘર મેં હૈ  
સખ માલ ॥ જો પાવો ઉસ નિધી કોરે, ફેર ન હોય કંગાલ ॥ ૩ ॥  
મન મજૂર કો લાય દેરે, બોજ કરો સંભાલ ॥ ચિત કી ચક્રમક  
જાડિ દેરે, બુદ્ધિ કા કરો ન કુદાલ ॥ ૪ ॥ સાવધાન ઈનકા રખોરે  
કરતા રહે રખવાલ ॥ ગુરુ જો હરિ ગુપ્ત ખજાના ॥ અતલાવત  
તતકાલ ॥ ૫ ॥

૨૬૮ પદ

હમારે સતગુરુ નજર નિહાલ, દારિદ્ર મહારો દુર કિયો ॥ ૧ ॥  
કાઠિ યુગન યુગ ભર્મિયોરે, દુખ નહિં દરિ થો ॥ એક પલક કી  
ઝલક મેરે, મોહિં નિહાલ દિયો ॥ ૨ ॥ જુઠે વન કે કારનેરે, ભરક  
ભરકિ કે મુયો ॥ સાંચી દૌલત સતગુરુ દીની, જન્મ સુકલ મહારો  
હુયો ॥ ૩ ॥ મેં તિર્ધન કંગાલ કોરે, પ્રેમ પ્રીતિ સે લિયો ॥  
ખરચા ખાયા અહુત લુટાયા, પાની કે જ્યોં પિયો ॥ ૪ ॥ ગુપ્ત  
આતમા લાલ મિલા જળ, મુખ કે સાથી સોયો ॥ આવન  
જાવન ખેદ મિઠ્યો સખ, છવ આનન્દિત હુયો ॥ ૫ ॥



## ૨૬૯ શબ્દ

કાહે મેં કરે અનુરાગ, મન તું માહ નીંદ સે જાગ ॥ ૧૮૬ ॥  
જિન કે જોગ લાગ્યા તું ડાલે, વહ સખ જાવે તોહિં ત્યાગ ॥ ૧૯૧ ॥  
સભી પદારથ દુષ્ટ નષ્ટ હૈ, અખ ઇન સે મત લાગ ॥ ૨ ॥ પર-  
મેશ્વર કા શરણુ પકડો, છુટ કરમ કે દાગ ॥ ૩ ॥ ગુપ્ત ગલી મેં  
જો કોઈ આવત, સુખભર ખેલત ફાગ ॥ ૪ ॥

## ૨૭૦ શબ્દ

જોઈ ઉમર અખ સારી, નહિં સુમિરે કરતાર ॥ ૧૮૬ ॥ જખ  
ગભવાસ મેં આયા નૌ માસ તહાં દુખ પાયા ॥ ક્રિયા ભગતી  
કા કરાર ॥ ૧૯૧ ॥ ફિર બાહર નિકલ કે આયા, યોગી ચન્તર મેં દુખ  
પાયા ॥ કરન લગ્યા હાહાકાર ॥ ૨૦૦ ॥ મૂઢતા મેં બાલપન ખોયા,  
જખ ભૂખ લગી તખ રોયા ॥ કરે માતા પ્યાર ॥ ૨૦૩ ॥ ફિર તરુણ  
અવસ્થા હોવે, તરુણી કે સંગ મેં ખોવે ॥ કામ ક્રી પડગઈ માર  
॥ ૨૦૪ ॥ વહ તરુણ અવસ્થા જાવે, જૈસે બિજલી છિપિ જાવે, ડાકરા  
ભયા ગંવાર ॥ ૨૦૫ ॥ જખ કફ વાઈનિ ઘેરા, કર દિયા પૌર મેં ડેરા  
॥ ૨૦૬ ॥ યહાં ફૂકર માર ॥ ૨૦૭ ॥ અગડ પડોસી સખ દુખિયારે, અખ  
તુંહ મર પાપી હત્યારે ॥ તૈને બડ ક્રિયે ખુવારે ॥ ૨૦૮ ॥ તન મેં ફૈલી  
બીમારી, ચઢિ આઈ કાલ અસાવરી ॥ સુન નહિ ગુપ્ત પુકાર ॥ ૨૦૯ ॥

## ૨૭૧ સવૈયા

પુત્ર કલત્ર સભી તુઝે ત્યાગત, તું જિનકે સંગ લાગાહિ ડાલે ॥  
સ્વાસ્થ હેતુ સે પ્યાર કરે સખ, બિન સ્વાસ્થ કો સુખ સે નહિં  
ખોલે ॥ ૧ ॥ તુહ આપની આયુ સખ ખોવત, અન્તર વિચાર કહુ નહિં  
તોલે ॥ ૨ ॥ દેહ દિયા હરિ કો હરિ સુમરન, તો હરિ સે પડદા નહિં  
ખોલે ॥ ૩ ॥

દોહા-દેખિ રહા હૈ આંખિ સે, સુનતા હૈ સખ કાન ॥

તોભી નર ચેતે નહીં, મન એસા બેધમાન ॥

## ૨૭૨ રાગ તરંગ ।

સૌદાગર પ્યારે, સૌદા તો કરિલે હરિ નામ કા ॥ ૧૮૬ ॥ નર  
તન પાયા જગ મેં આયા કરલે સુઘર કમાઈ ॥ કાલ ચપેટા સુખપર

લાગે, બુલિ જાવે ચતુરારી ॥ ૧ ॥ ગમ્મ માલિં છકાર દિયા, થા  
કયાં ભુલન હૈ ઉચકો ॥ જે ઉચકો નહીં અદા કરેગા, કયા જવાબ  
દેના નિચકો ॥ આ થન કે હાજ સાજ અહુ સાજે, હરિ એ કમલ  
ન લાગે ॥ યહીં પૈ ચલેગય માલ અજેના, યમ પકડી કરેગા આજે  
॥ ૩ ॥ અપને હાથ એ કરી હમાઈ, જોડિ જમી મેં રખતા ॥ નાંજ  
હાથોં ચલા મુસાફર, આસ અન્ત અખતા ॥ ૪ ॥ લોક અહાઈમ  
ફૂલ્યા ફિરતા કરે ચતુરારી ॥ કાલ કરારી પડિ કંઠ પર, બુલિ ગયા  
લખનાઈ ॥ આ કૈને ચલેગય પડા જિમી મેં, હૈ આવેજ ભાઈ ॥  
કયા નો જલન સજ મેં હોવે, કયા લે જાલિં થોલ જમાઈ ॥ ૬ ॥  
વિજા પડી સાર નહિં જાન્યા જગમેં કરી કંગાઈ ॥ વાંચિ સરોદ  
સ્વર એ સોચા, વેદગ અખ ફેલાઈ ॥ ૭ ॥ સૌદા દિયા નેકે કે  
કારન ઉલટા દેરિ આયા મુખ રૂપ એ સમજા નાહિં, પડી રહી  
અખ માયા ॥ ૮ ॥

દોહડા—સૌદા કીજ સમજિ કે. ફેર ન એસા દાવ ॥

પુન્ય પુનઃ કરકે મિલ્યાં, વૃથા નહીં ગવાંય ॥

૨૭૮ રાગ તરંગા

અંરે સુમિતયા રમજની, નોડ ગાયાહૈ સખ નાતા ॥ ૧ ॥ તન  
અસય એ નિર્મલિ ચલ્યા હૈ, કોડ કિલા નહિં લતા ॥ કિસ મારગ  
જહે ગયા મુસાફર, કોન કિધાને જતા ॥ ૨ ॥ આચી તાઈ ઓર  
ભોજાઈ, અહન ભાનજ માતા ॥ કાદી ભૂવા મામી નાની, ત્રિયા  
ફૂરે માયા ॥ ૩ ॥ આચા તાકે દાદા ખાયા, રુખ ફૂડા જાતા ॥  
દેહ ઉલય જમી મેં ફૂંલ્યા, સિર ફોડ દિયા હૈ તાતા ॥ ૪ ॥ આપ  
દિયા સ્નાન સુખીને, કરને લાગે ખાંતા ॥ કે તિલાંજલી ચલે  
નગરકે, નોડ્યા નીંબ દા ખાતા ॥ ૫ ॥ લંબા ધોતા ઘાંબ મેં પોયા,  
પાંડિતજ બુલિ આતા ॥ દર્મદાન્ડ દી આત મુના કે, અપની  
કીક લગાતા ॥ ૬ ॥ ઘાટ ડિપર દહા આવે, વહ લી ફેલ મચાતા  
॥ પાંચ દમાએ ભોજન આવે, સચ્ચા પર સો જતા ॥ ૭ ॥ ઉનકે  
હાલ દી અમર નહીં ફૂઝ, અપની આત બનાતા ॥ વેતો મત્યા  
ફૂટકે મેવે, વહ માલ મજે મેં ખાતા ॥ ૮ ॥ વહતો હોયગા શુપ્ત,



કિસી કો ઉસકા પતા ન પાતા ॥ ઠગિ ઠગિ માલ પોપણ ખાતે, કૈસે  
ઉસપાસ પહુંચાતા ॥૮॥

૨૭૪ સવૈયા ।

ભેંડયોં કી ચાલમેં ચાલિ રહે નર, નાહીં વિચાર કરે ઘટ અન્દર  
મૂયે કા શોક પડયા અતિશય, ધન લૂટત પોપ મયા દિયા દુંદર ॥૧॥  
સ્વપને સમાન યહ બેલ વન્યા કાહે પૈ ચુનાવત ઊંચે સે મંદિર ॥  
ગુપ્તકી ખાતન સમજત મૂરખ નાચિ રહ્યોં ત્યોં મદારી કો ખંદર ॥૨॥

૨૭૫ રાગ તરંગા ।

અરે ગફલત કે માતે, ખીત્યા જાત હૈ યહ વેલા ॥૮૬॥ કોઈ  
ન તેરા સંગી હોગા, પકડયા જાય અકેલા ॥ ઘડી પલક કી ખબર  
નહીં હૈ, પડરહ્યા કાલ કા હેલા ॥૧॥ યા નર દેહી ભજન કરને  
કો પકડ હરી કા ગેલા ॥ હાથ ન હિલે પૈર નહીં ચલના, દામ  
લગે નહીં ઘેલા ॥૨॥ સૌદા તો નેકી કા કરલે છોડ સકલ બદ  
ફૈલા ॥ અખ તો હાટ ખજાર લગ હૈં, ફિર વિધુર જાયગા મેલા  
॥૩॥ ઘર સે નિકસ્યા ભજન કરન કો, દેખત ડાલે મેલા ॥ પુત્ર  
બ્રાતા છોડિ દિયે હૈં, અખ ગુરુભાર્ષ અરુ ચેલા ॥૪॥ જ્ઞાન  
ધ્યાન અધ્યયન કા ભૂંડ્યા કરને લાગ્યા બેલા, ઉસે દરગહ કી  
ખબર નહીં યમ પકડિ નિકાલે તેલા ॥૫॥ માંગે માલ ઉડાને લાગ્યા,  
ખનિ ગયા મોટા બેલા ॥ તન પુઝે મન પુઝ હુવા કરતા કશ્મીર  
કા સેલા ॥૬॥ બ્રહ્મ જ્ઞાન કા લક્ષણ કરતા, આવે સબકે ભેલા  
॥ મન માનેજિત તિન સા જાવે, ક્યા ઉતમ ક્યા મૈલા ॥૭॥  
ગુપ્ત ભેદ કા સમજત નાહીં પડયો અવિદ્યા બેલા ॥ કભી તો  
મૌન કભી લપરાઈ, કભી ખનિ બેઠત હૈ ભૌલા ॥૮॥

૨૭૬ કુણુડલિયા ।

ફકર કે મકર નહીં, ઓર નહીં ધન માલ ॥ રાજ રહતે ઉસી  
મેં, જે કુછ ખીતે હાલ ॥ જે કુછ ખીતે હાલ, ખ્યાલ દૂજ નહિં  
કરતે ॥ સખ હોય અદૃષ્ટ આવીન મૌન અપની મેં ચરતે ॥  
ગુપ્તાનન્દ મેં આનન્દ, આવે ચહે ઘી અરુ શકર ॥ પ્રારબ્ધ  
કે વેગ નહીં, કુછ કરતે મકર ॥૧॥

૨૭૭ ભજન

નરપતિ ચલે કાયા કોટ સે, સજિગર્ભ જિસ કા અસવારી  
 ॥ટોકા॥ હસ્તી અરુ ઘોડા સખ છોડે, કાઠ કે તામજમ મેં પોઢે ॥  
 કસિકર ખાંધિ દિયે દો ગોડે, અખ કુંસે બચે યમ ચોટ સે ॥  
 હુયા પુન્ય પાપ સખ જરી ॥૧॥ હાહાકાર બાજતે બાજે, સાજ  
 સભી ચલને કે સાજે ॥ બહુત સમજન્ધી આયે રાજે, વહ બાત  
 કરે નહીં હોઠ સે ॥ હોગર્ભ પુરિષ્ટક ન્યારી ॥૨॥ કહાંસે આય  
 પોલકી ઠાઈ, પડી રહી સખહી ઠકુરાઈ ॥ જિનકે વારતે કરી કમાઈ  
 સિર ફોડન લાગે સોટ સો ॥ જો પ્યાર કરતે થેભારી ॥૩॥ વહ  
 જીને કે ઘોખે મેં રહતા, કાલ આય તતકાલહિ ગહતા ॥ ગુપ્ત  
 ભેદ કછુ નાહીં લહતા નહિં બચતા યમ કી ચોટ સે ॥ કર રામ  
 ભજન કી ત્યારી ॥૪॥

૨૭૮ ઝગડા ।

યહભી સખ ઝગડા હૈ, ઝગડે સે ન્યારા ઢગડા હૈ ॥ ઝગડા  
 કુંસે જાન્યા રે, હમેં આતમ બ્રહ્મ પિછાના ॥ ઝગડા એસે જાન્યા  
 રે ॥ટોકા॥ પહિલી ઝગડા તોહિ સુનાજિ, શાસ્ત્રોં કી બાત દિખાડી  
 યહ ભીં ॥ કોઈ સાત પદારથ ગાવત હૈ કોઈ સોલહ મેં સમજા  
 વત હૈ ॥ યહ કોઈ પ્રચ્ચીસ તત્વ વિવેક કરે, કોઈ કર્મ યોગ  
 મેં પાંચ ધરે, ॥ યહ ૦ ॥ કોઈ જ્ઞાનહિ જ્ઞાન પુકારે હૈ, એકત્વ કા  
 નિશ્ચય ધારે હૈ ॥ યહ ૦ ॥ ઇસ વિધિ પર દરશન બરકિ રહે ॥  
 અપના અપના શિર પરકિ રહે ॥ યહ ૦ ॥ ઘર છોડિ કે આપ  
 ફકીરી લઈ ॥ બાતેં કરતા હૈ અહીં વહીં ॥ યહ ૦ ॥ સેવગિ  
 શિખી લાવત હૈ ॥ પેસે કલદાર કમાવત હૈ ॥ યહ ૦ ॥ અંગ  
 માહિં ભભૂતી લાવત હૈ શિર લખે કેશ બઢાવત હૈ ॥ યહ ૦ ॥  
 કોઈ ઘોડમ ઘોટ કરાવત હૈ, દાઢી અરુ ભૂંછ બઢાવત હૈ ॥  
 ॥ યહ ૦ ॥ ગેરુકા રંગ લગાવત હૈ, લંબી ગાતી લટકાવત હૈ  
 ॥ યહ ૦ ॥ ઊંચે મકાન બનાવે હૈ, ફીકે પકવાન કરાવે હૈ ॥ યહ ૦ ॥  
 છાપે અરૂ તિલક લગાવત હૈ, લંબીમાલા લટકાવત હૈ ॥ યહ ૦ ॥



ઠાકુર કી પૂજા રાખત હૈ, દિન ભર પરસાદ હિં ચાખત હૈ ॥યહુના  
 નાના બિધિકે ભાગ લગાવે, ઠાકુરજી કા નામ બતાવે ॥યહુના  
 દુકાન લગાવે ટકે કમાવે, બૈઠી મજે મેં આવે ॥યહુના દોને ચટ્ટા  
 કરેં બડાઈ, બડા સિદ્ધ આયા હૈ ભાઈ ॥યહુના કોઈ પઢે પઢાવે  
 જ્ઞાન સુનાવે દમડો કે ઢંગ લગાવે ॥યહુના ગલી બજારોં કરે  
 વ્યાખ્યાના, વિદ્યા પઢી મર્મ નહીં જાના ॥યહુના લઈ ફકીરી તત્તન  
 જાના, ખાને લગા વિષોંકા ખાના ॥યહુના ટૂક માંગિકે ભરતે  
 પેટ, રહેં ગાંવકે ગારે લેટ ॥યહુના પોખર ઊપર કુટી બનાવે,  
 તકિયા ઔર બિછોના લાવે ॥યહુના મોર છડોં સે ઝાડ લાવે  
 જાની કા દૂધ માંગિકર લાવે ॥યહુના ઉપવાસ કો કરતે તીરથ  
 ફિરતે કાશી મેં મરતે ॥યહુના કરતે સંથારા મૂઠ ગવાંરા તનસુકા  
 સુકા કે મારા ॥યહુના ઘર છોડિ બસાયા રામદુવારા, માલા  
 બેચિકર કરે ગુજારા ॥યહુના માંગિ માંગિ કર કૌડી લાવે ઋષી  
 મેં કુટી બનાવે ॥યહુના ગંગાકે તટ સિદ્ધ બિચરતે; ઘાટોં ઊપર  
 આસન કરતે ॥યહુના કટીમેં બાંધે લાલ લંગોટે, ફિર મુકેરેં  
 જંગલ ઝોટે ॥ કોઈ કાશી મેં વિદ્યા પઢી આવે, મંડલી બાંધે  
 શિષ્ય બનાવે ॥યહુના કોઈ પઢે પઢાવે લોક રિઝાવે, કવિતા ખૂબ  
 બનાવે ॥યહુના કોઈ કાનોં માહીં ડાટ હુકાવે, આંખિ મીંચકર  
 ધ્યાન લગાવે ॥યહુના કોઈ ર કરતે યોગ સમાધી કોઈ બને હૈં  
 આત્મ વાદી ॥યહુના કોઈ ર નાચે કોઈ ગાવે, કોઈ મૌન ગહેરહિં  
 જાવે ॥યહુના માંગહિ માલ કરે ભંડારા, બનિગયા મહંત બડા  
 ભારયા ॥યહુના કાંખ માહિં લે ચલ્યા પોથા, છોડી કમર તે  
 ઢીસા ધોતા ॥ યહુ ॥ પંચાગ વાંચિ કે ગિરે લગાવે, માલ ઠગિ  
 કે આવે ॥ યહુ ॥ શંખ બજાય કૂટતે પીતલ, કલ્મી નહીં મન  
 હોવે શીતલ ॥ યહુ ॥ ગંડા ગાલી મંતર જંતર કરે કીમિયા  
 પઢિ પઢિ તંતર ॥ યહુ ॥ પૂજન લાગે દેવી દૂરગા, કાટેં બકરા  
 મારે મુરગા ॥ યહુ ॥ કોઈ વાચન લગે સરોધા, રંગ રૂપ પત્તન  
 કા સોધા ॥ યહુ ॥ સ્વર કો સોધિ બતાવે પરશન, મૂરખ કા  
 મન કરે આકર્ષન ॥ યહુ ॥ જો કુછ હોંનહાર સોઈ હોવે, ભટકિ  
 ભટકિ કે વૃથા રોવે ॥ યહુ ॥ કોઈ બને યતી સંન્યાસી, ઘર કો  
 છોડિ હુયે વન વાસી ॥ યહુ ॥ ગલે મેં રૂદ્રાક્ષ કી માલા,

ખાક લગાય ક્રિયા મુખ કાલા ॥ યહ૦ ॥ બ્રહ્મચારી કા ભેષ  
 બનાવે, કૌડિ કે લિલામ વતાવે ॥ યહ૦ ॥ જીવ ઈશ કી કહી  
 ઉપાધી, માયા અવિદ્યા સાદી અનાદી ॥ યહ૦ ॥ તાતેં ચે દો  
 ભેદ બતાવે, ભિન્ન ભિન્ન કર દોનો ગાયે ॥ યહ૦ ॥ મહાવાક્ય  
 વેદોં મેં ભાષે, ભેદ ઉપાધી કૃત જો નાખે ॥ યહ૦ ॥ ભાગ  
 ત્યાગ કી સૈન બતાઈ, વૃત્તિ લક્ષણા કહિ સમુઝાઈ ॥ યહ૦ ॥  
 રચે વ્યાસ ઇતિહાસ પુરાના, સાધન સાધ્ય જ્ઞાન અરુ ધ્યાના  
 ॥ યહ૦ ॥ અષ્ટાદસ પ્રસ્થાન બનાવે, અજ્ઞાની કે મન પરચાવે  
 ॥ યહ૦ ॥ નામ રૂપ માયા કી રચના દિખે સુનિયે ગુનિયે તિતના  
 ॥ યહ૦ ॥ ઔર તરહ ઝગડા નહીં દુરે જહાં જાય તહું કૂકસ  
 કૂરે ॥ યહ૦ ॥ ઝગડા ગુપ્ત ગલી મેં ગરે, વ્યાપક એક આતમા  
 હેરે ॥ યહ૦ ॥ સખ ઝગડા હૈ, ઝગડે સે ન્યારા દેગડા હૈ ॥  
 ઝગડા કૈસે જાન્યારે, હમેં આતમ બ્રહ્મ પિછાન્યા ॥ ઝગડા એસે  
 જાન્યારે ॥

॥ ઇતિ ॥

### ૨૭૯ તરજ તાન

મત લગે વિષય કી ચાટ, મન કો ડાટ ડાટ ડાટ ॥૧૬૬॥ મન  
 હી સખ કારજ સારે, વિષયો તે તાહિ નિવારે ॥ નિજ બોધ  
 રૂપ મેં ધારે, શુભ ગુન કા લાવો ઠાઠ ઠાઠ ઠાઠ ॥૧૭॥ મન કી  
 ચલતી દો ધારા ॥ કુચક ડાખે દૂજ પારા કુમારગ કરો નિવારા  
 સત સંગતિ નૌકા બાઠિ બાઠિ બાઠિ ॥૧૮॥ યહ૦ અનુષ્ઠાન કરવાવો  
 નિજ બ્રહ્મ રૂપ મેં લાવો, અખ અપના કામ બનાવો, મન કા  
 દપ્તર જા ફાટિ ફાટિ ફાટિ ॥૧૯॥ યહ૦ ગુપ્ત ભેદ લખ પ્યારે, ઇસ  
 મનને બહુત ઉધારે અખ ગિને કૌન તેં સારે, ટુક મોહ જાલ કો  
 કાટ કાટ કાટ ॥૨૦॥

### ૨૮૦ શબ્દ

અખ કીજેરે ચારોં જ્ઞાન ગોષ્ઠી, સખ જોડોં જગત કી દોસ્તી  
 ॥૨૧॥ બડે ભાગ સે નર તન પાયા, યાકે પીછે ફિર રહી લોપધી



૧૧૧૥ બ્રહ્મ વિચાર કરો ઇસ તન મેં ખાત તજે સખ કોકટી ૧૧૨૥  
ખાતે ખાતે બહુત દિન બીતે, અખ તોડા અવિદ્યા જોપટી ૧૧૩૥  
બ્રહ્માનન્દ કો પ્રાપ્ત હોકર, દૂર કરો સખ શોકટી ૧૧૪૥ વ્યાપક રૂપ  
લખો નિજ આતમ, કિર રહે ન યમ કી જોપટી ૧૧૫૥ ગુપ્ત  
મૂલ કે બૈઠ ચીતરે, જખ પાવેગા ઘોસટી ૧૧૬૥

## ૨૮૧ શબ્દ

ઇસ દુનિયા મેં દો દિન લગી હૈ, ઇન દોનો કી બાજી  
૧૧૭૬૥ ઉન કો નામ ધરા હૈ મન્દિર, ઉનકો સમજિદ સાજી ૧૧  
ઉનકો નામ ધરા ઠાકુરજી, ઉનકો ધરા ખુદાજી ૧૧૧૥ ઉનકો નામ  
ધરા પંડિતજી, ઉનકો રખલિયા લિયા કાજી ૧૧ વા સન્ધ્યા ગાયત્રી  
પઢતે વો હોગયે નેમાજી ૧૧૨૥ વે લગે ઉપવાસ કરન કો, વે રોજે  
મેં રાજી ૧૧ વે કાશી ગંગા કો ચાલે, વે હોન ચલે હૈ હાજી  
૧૧૩૥ અપની અપની બન્ધે પક્ષ મેં, છૂટે કોન ઉપાજી ૧૧ ગુપ્ત  
મૂલ હૈ, એક સભી કા જિન યહ રચના સાજી ૧૧૪૥

## ૨૮૨ શબ્દ

દેખો દેખે તમાશા દિદાર કારે ૧૧૭૬૬૥ સભી અનાતમ  
ઝગડા છોટા, સૌદા કરલે ન અનાતમ બજાર કારે ૧૧૧૥ જાસે  
ખ્યાસ ખુજે તન મન કી, પાની તૂં પિલે બિજાર કારે ૧૧૨૥  
સતસંગતિ નૌકા મેં બૈઠો, સૈલા કરલે ન પરલે પાર કારે ૧૧૩૥  
ભવસાગર મેં ફેરિ ન આવે, બાન લગે નહીં માર કારે ૧૧૪૥  
નિજનન્દ કો પ્રાપ્ત હોકે, ઝગડા મિટે સંસાર કારે ૧૧૫૥ ગુપ્ત  
ગલી મેં બાજે બાજે ધ્રુવ ઉઠે ઝંઘાર સિતાર કારે ૧૧૬૥

## ૨૮૩ શબ્દ

બાબા બોલે ને રગડા લગા દિયારે ૧૧૭૬૭૥ તન કી કુંડિ  
મન કા સોરા જ્ઞાન કા ઘોર મચા દિયારે ૧૧૧૥ સંશય સોંક  
અરુ કામની, માયા કા મિચ્છા હુકાય દિયારે ૧૧૨૥ મમતા મગદ  
કલાયત્તી, ફેશર, લુગડા ઘોર બનાય લિયારે ૧૧૩૥ સત કી સાફી  
મેં બગિચા કાની, જગ દોષ્ટ કાદિ અગતય દિયારે ૧૧૪૥ પ્રેમ કે

ખ્યાલે મેં પ્રીઈ, જાકે અખિયાં મેં જોશ ઉગાય દિયારે ॥૫૫॥ ગુપ્ત  
ગલી મેં શંકર ધૂમત, જગ ભર્મા કા ભૂત ઉગાય દિયારે ॥૬૫॥

## ૨૮૪ શબ્દ

યક ખેર બંશી ફેર વળાય વંશી કે વળને હોરેરે ॥૮૫॥  
તેરી વંશીને ને મેંરા મન મોહા, તુએ એસી બળદધ  
કારેરે ॥૯૫॥ તેરી બંશી ને સારા જગ મોહા, મોહે ચન્દ સૂર  
અરુ તારેરે ॥૧૦૫॥ યક ખેર બંશી બાજી વૃજ મેં તુએ નખ પર  
ગિરવર ધારેરે ॥૧૧૫॥ એક ખેર બંશી બાજી અવધમેં તુ સંતન  
સુખકારે રે ॥૧૨૫॥ એકવેર વંશીવાજી જનકપુર ઉસ રંગભૂમિ  
કે મન્જારેરે ॥૧૩૫॥ યક બેક બંશી બાજી લંકા મેં તુએ અસુર  
ખપાદિયે સારેરે ॥૧૪૫॥ ગુપ્ત બંસુરિયાં ઘટ મેં હી બાજે કોઇ  
સુનતે સુનને હોરેરે ॥૧૫૫॥

## ૨૮૫ ગુરુ શિષ્ય સમ્બાદ, શિષ્ય પ્રશ્ન ચૌપાઈ

કોઉ એક શિષ્ય આયો ગુરુ શરના ॥ હાથ જોડિ મેલ્યો સિર ચરના ॥  
સો ભગવન તુમ જાનો મરમા ॥ સો કહ્યુ કરો મિટે જિસે મરના ॥  
મેં આયો તુમહારી શરનાઈ ॥ પ્રભુ કિજે અખ મોર સહાઈ ॥  
જન્મ મરન કા કાટો ફન્દા ॥ જાકર પાવહુ પરમાનન્દા ॥  
દેખિ ડર્યો મેં યહ સંસાર ॥ તાતે અખ મોહિ કીજે પારા ॥  
યા જગ માહીં દુઃખ અનેકા ॥ સુખ સુપને કબહૂં નહિં એકા ॥  
આશા તૃષ્ણા ચિન્તા ખાવેં ॥ કામ ક્રોધ મદ મોહ ડરાવેં ॥  
કુમતિ સુમતિ નિત કરે લડાઈ ॥ મમતા ડાકિન નિત ઉઠ ખાઈ ॥  
દંભ કપટ ઠગ રહે લુભાઈ ॥ મદ મત્સર અરુ માન બડાઈ ॥  
મોપર નિત ગૈરત યે ફન્દા ॥ ખિન સતગુરુ કયા જાનૂં મેં અન્ધા ॥  
અખ ઈનસે કીજે ઉદ્ધાર ॥ ભવસાગર તે કીજે પારા ॥  
હેતુ મુકિત કા હો સો કહિયે ॥ તુમહારી કૃપા પરમ પદ લહિયે ॥  
તુમ ખિન ઔર ન કરે સહાઈ ॥ ડુબત હો ભવસાગર માહીં ॥  
માત પિતા બ્રાતા સુત દારા ॥ દારા યે સખ સ્વારથ કે હૈં સારા ॥



બિન કે દાસ કપા નહિં માયા । એા કરતે દીનન પર દાયા ॥  
અથ માહિં દીજે યદ ઉપદેશ । અમેા છૂટે સકલ કલેશ ॥

દોહા—શિષ્ય ને સકલ મદદ દહિ, દીનદી બાત સુનાય ॥  
અથ ગુરુ એસા કીજિયે, સકલ ભરમ મિટિ જાય ॥  
ભરમ બરાબર જગત મેં નાહીં દસર ખેદ ॥  
સખ કહતે અન્ત પુકાર કે, યોં કહેં શાસ્ત્ર વેદ ॥

૨૮૬ ગુરુ દિતાર ।

મુન આસત દી મિરા વિનીતા । મુનહુ શિષ્ય અથ દોહુ અભીતા ॥  
એ તુમ કહી સકલ મેં જાની । મુનિ શિષ્ય દોખતે દુખ હાની ॥  
દુખ નાશન દા દારણુ એહુ । યાને મિરે સકલ સદેહુ ॥  
તત્ત્વમસિ દા અર્થ મુનિજે । ભાગ ત્યાગ લક્ષણા યદ કીજે ॥  
છપ કંઈ હી મિરે કિપારી । ચેતન શુદ્ધ સદૃષ અનાદી ॥  
તામેં એદ મંદ ના દોઈ । અપના રૂપ જાનિયે સોઈ ॥  
યદ ગુરુ મુખ ને સરવન દરિકે । મનન કરે યુક્તી ચિત્ત ધરિકે ॥  
દાસ પાય ગદે દુદ અખ્યાસા । કિર છુટે મન દી સખ આસા ॥  
નિશ્ચલ હોય ભયો મન થીરા । જૈસે મિદયો નીર મેં નીરા ॥  
આતમ અક્ષ રૂપ યદ જાના । અમેદ નિશ્ચય યદ જ્ઞાન અખાના ॥  
એા જાને મુક્તી દા હેતુ । જૈસે જલ પારન દો સેતુ ॥  
યા વિધી કિતરે બહુતે પારા । લે સેતુ સત સંગ સહારા ॥  
બિન સત સંગ તરયા નહીં દોઈ । હુયેઅનેહુ અરુ આગે દોઈ ॥  
સત સંગતિ મહિમા સખ વરની । અજ્ઞાન નાશ કમિ પાવક અરની ॥  
મુન શિષ્ય દો પાને દુખ નાસા । યદ આપરૂપ દા અજખ તમાસા ॥  
જે દમ પૂછા એા દમ બાખા । આગે કહો સંશય જે રાખા ॥

દોહા—જે બાખ્યા ઉપદેશ યદ, તાકો મુન ચિત લાય ॥  
સંશય શોક રહે નહી, ભરમ, વિલય હો જાય ॥

હમણોં નાહીં કહત હૈ, યોં કહે સયાને સંત ॥  
નિગમાગમ યોં કહત હૈ, ધમિ હોય ભરમ કા અન્ત ॥

### ૨૮૭ સંધ્યા આરતી

દોહા—જેતી સંધ્યા અરતી, લિખતે સખકા સાર ॥  
સાંઝ સમય યાકોં પઢે, સમુજે સાર અસાર ॥  
પઢે સુનૈ અતિ પ્રીતિયુત, અરુ પુનિ કરૈ વિચાર ॥  
જ્ઞાન ભાનુ છિન ર ઉદય, વહે આતમ દીદાર ॥

### ચૌપાઈ

એસી આરતી તોહિં સુનાડીં । જન્મ મરન કો ઘોય બહાડીં ॥  
એસી આરતી કિજે હંસા । છુટે જાતિ વરણ કુલ વંસા ॥  
કાયા માહિં દેવ હૈ એસા । દૂજા ઔર નહીં કોઈ તૈસા ॥  
કાયા દેવલ આતમ દેવા । બિન સતગુરુ નહીં પાવે ભેવા ॥  
પહિલે ગુરુ સેવા ચિત્ત લાવે । તાસે સકલ વિધી કો પાવે ॥  
જો યુક્તી ગુરુ દેવ બતાવે । તામેં અપના મન ઠહરાવે ॥  
માયા કા સખ ઝૂઠ પસારા । સત હૈ ચૈતન રૂપ તુમહારા ॥  
પાંચ અંશ સખહી મેં જાનેં । અસ્તિ ભાંતિ પ્રિય સત્ય બખાનેં ॥  
નામ રૂપ ઝૂઠે વ્યલિચારી । તિનસે ભૂલિ ન કીજે ચારી ॥  
તીન સચ્ચિદાનન્દ પિછાનેં । તિનકોં બ્રહ્મ રૂપ કરિ માનેં ॥  
સો હૈ બ્રહ્મ અપના રૂપા । એસે વેદ કહત મુનિ ભૂપા ॥  
દો ઝૂઠે માયા કૃત દેખે । તિનકો સત્ય કબહુ નહિં પેખે ॥  
માયા નામ કહત મુનિ ઉસકા । પરમારથ સે રૂપ ન જિસકા ॥  
અચિન્ત્ય શક્તિ કર તાહી બતાવે । યુક્તી આગે રહન ન પાવે ॥  
સો યુક્તી અખ કહો બતાઈ । જાતે માયા રહન ન પાઈ ॥  
સત્ય અસત્ય નહીં કહુ માર્ઘ । નહિં દાનેં પદ મિલકર ગાર્ઘ ॥  
નહિં યહુયે કહિ સિન્ન અસિન્ના । નહિં દાતોં પદ મિલિ ઉત્પન્ના ॥  
નહિં સાહેબ નહિં નિખેવા । દાનેં મિલિ નહિં હોય અખેવા ॥



યહ નવ યુક્તી તિસને જાની । જિનકે માયા મરતી પાની ॥  
 યહ સખ યુક્તી ગુરુ સે જાને । ફિર કીજે નિજ આતમ ધ્યાને ॥  
 આતમ પુખ બહુ વિધિ કીજે । જાતે સકલ અવિધા છીજે ॥  
 સોહા થાલ બહુત વિધિ સાજે । સ્વાસ સ્વાસ પર ઘંટી બાજે ॥  
 સંયમ આટ કરે દિન રાતી । જ્ઞાન દીપ બાલે બિન બાતી ॥  
 જસ દીપક કા હોય ઉજાલા । અન્વકાર નશીજા તતકાલા ॥  
 ઝાંઝ ઝનક ચેતન કી ઝનકી । મૂલ અવિધા સારી છિનકી ॥  
 મન મિરદંગ તાન કરે કુટા । ઘૂક ઘૂક કહન લગા મં ઝૂંઠા ॥  
 ચિત કા ચન્દન ઘસિ કરે લાયા । તખ હીં દેવ નિરંજન પાયા ॥  
 ખુદિ તાલ બજાવન લાગી । કોટી જન્મ કી સૂતી જાગી ॥  
 અહંકાર કા વાજ ઘંટા । બહુત કાલ કા દુટા ટંટા ॥  
 ચિદાભાસને શંખ વજાયા । અપના રૂપ હમે અખ પાયા ॥  
 ચિદાભાસ કા કીના ત્યાગ । કુટસ્થ રૂપ મેં કીના રાગ ॥  
 આભાસ રૂપ કો ત્યાગ જખ હી । રૂપ અક્રિય પાયા તખહી ॥  
 તા સાક્ષીકર સદા અભેદા । બ્રહ્મ રૂપ યહ ગાવત વેદા ॥  
 જિમિ જલાકાશ અરુ ઘટકાશ । મહાકાશ મેં સખકા વાસા ॥  
 યહ દૃષ્ટાન્ત વિચારે મન મેં । બ્રહ્મ રૂપ પાવે યા તન મેં ॥  
 એસી કીજે આતમ સન્ધ્યા । યાતે છવ છુટે યહ બન્ધ્યા ॥  
 એસી સન્ધ્યા આરતી કીજે । જાતે દેવ નિરંજન રોજે ॥  
 મંદ્રી અરુ તિનકે સખ દેવા । કરન લગે હૈં આતમ સેવા ॥  
 ભયે મુદિત સખ કરે વિચારા । આતમ અપના રૂપ નિહારા ॥  
 કોઈ નાચે કોઈ ગાવે । કોઈ મોન ગહે રહિ જાવે ॥  
 કોઈ તાલ બજાવન લાગે । આતમ માહીં હુયે અનુરાગે ॥  
 પ્રીતિ પુષ્પ ચડાવન લાગે । ધ્યાન ધુપ કો લાવન લાગે ॥  
 બત્તી કરે બ્રહ્મ કા ગાના । ઓર કહુ નહિં ભાખત આના ॥  
 એસે કહિ કે બ્રહ્મ સમાઈ । ભેદ ભરમ સખ દિયા ઉગાઈ ॥  
 લોન પુતરી જાવે નીરા । ઉલટ બાત કુછ કહેં ન બીરા ॥  
 આપ રૂપ સખ દિયા ગવાઈ । હોય ઉઠક દક માહીં સમાઈ ॥  
 જો કુછ સુક્ષમ યા સ્થૂલા । ઓ કારણ થા તિનકા મૂલા ॥  
 ગખહીં ચેતન બે પરકાશા । દ્વેત અદ્વેત સભી જંહુ નાશા ॥  
 સન્ધ્યા આરતી કરો વિચારા । છૂટે ભરમ કરમ સંસારા ॥

લોક વેદ કી છોડા આસા । તખ દેખોગે બ્રહ્મ તમાસા ॥  
 એસી સન્ધ્યા આરતી ગાવે । બહુરચો જગત જન્મ નહીં જાવે ॥  
 દૂદે બન્ધન હોય ખલાસા । જન્મ મરન કા મિટિજા સાસા ॥  
 બંધ મુક્ત યાતે સખ જાને । દોનોં મરમ કર મિથ્યા માને ॥  
 બંધ વિહીન એક નહિં દોઈ । તાકા મુક્ત કોન વિધિ હોઈ ॥  
 બંધ મુક્ત માયા કૃત જાને । આતમ શુદ્ધ રૂપ પહિચાને ॥  
 ધ્યાન અરુ જ્ઞાન નહીં કોઈ જામેં । સાધન સાધ્ય નહીં કોઈ તામેં ॥  
 દ્વૈત અદ્વૈત નહીં કહ્યુ ઝગડા । ના કહ્યુ બન્યા નહીં કુછ બિગડા ॥  
 અજર અમર આતમ અવિનાશી । ચેતન શુદ્ધ રૂપ પરકાશી ॥  
 સજાતી વિજાતી ન તામેં કોઈ । સ્વગત ભેદ ફિરે કૈસે હોઈ ॥  
 નહિં વહ વૃદ્ધ નહિં વહ બાલા । સ્વેત પીત હરતા નહીં કાલા ॥  
 નહિં વહ પુરુષ નહિં વહ નારી । નહિં સંન્યાસી નહિં બ્રહ્મચારી ॥  
 લક્ષ અલક્ષ નહિં કહ્યુ તામેં । વાચ્ય, અવાચ્ય બનૈ નહિં જામેં ॥  
 સવ કુછ હૈ અરુ નાહિં । તન વિકાર કુછ પરસત નાહિં ॥  
 નહિં વહ હલકા નહિં વહ ભારા । ના કહ્યુ મધુર નહિં કુછ ખારા ॥  
 રૂપ રંગ જામેં કુછ નાહીં । એસા આતમ સખકે માહીં ॥  
 સમ રસ રહે ગગન કી નાઈ । કાલ કર્મ કી પડેન છાઈ ॥  
 સદા અક્રિયે નિરભય દેવા । કહા કરે કો તિસકી સેવા ॥  
 ના કહ્યુ મૌન નહિં કુછ બોલે । ના કહિં સ્થિર ના કહિં ડાલે ॥  
 નિશ્ચલ સદા અક્રિયે દેવા । બિન સત ગુરુ નહિં પાવે ભેવા ॥  
 નાહું પરિચ્છેદ તાસૂ મેં કોઈ । દેશ કાલ વસ્તુ નહિં હોઈ ॥  
 સંધ્યા આરતી કી લિખી ચૌપાઈ । જગ કો મિથ્યા કહે જનાઈ ॥  
 આતમ બ્રહ્મ રૂપ કરિ ભાસે । સત ચિત આનંદ એક પરકાસે ॥  
 જૈસે ગુન મેં ભાસત ભોગી । ત્યોં આતમ મેં જગ પ્રતિ યોગી ॥  
 શુક્તી મેં રૂપા ભ્રમ હોઈ । ત્યોં આતમ મેં જગ હૈ સોઈ ॥  
 સ્થાણુ માહિં પુરુષ કહૈ જૈસે । રવિ ફિરનન મેં નીર કહૈ તૈસે ॥  
 આકાશ માહિં જ્યોં ગંધર્વ ગામા । યોં આતમ મેં જગત  
 અભિરામા ॥  
 મિરચી મેં તીક્ષણતા જૈસે । જલકે માહિં ક્ષારતા તૈસે ॥  
 ફૂલન માહિં ગંધ જિમિ હોઈ । આતમ મેં એસે જગ સોઈ ॥  
 દોહા—સભી ભરમ કર ભાસતા, કરતા કરિયા કર્મ ॥  
 આતમા સદા અસંગ હૈ, કોઈ જનત વિરલા મર્મ ॥



સતગુરુ વિના નહિં ભેદ પાવે , કહત વેદ પુકારિ કે ॥  
 લાચાર નહિ ચાર ચલા , હમ ચારોં બેઠે હારિકે ॥  
 પર માન જેતી સિમરતી , વસ્તુ અનાતમ કો કહે ॥  
 કોન શક્તી તામુઝી , જે આતમા કો વદ લહે ॥  
 નિરમેવ ચેતન શુદ્ધ નિરમલ , એક દો કી ગમ નહીં ॥  
 એસે શબ્દ કરે વેદ કહતા , ઔર કષ્ટ બને નહીં ॥  
 દેસક કહીં યદ શિષ્ય કો , તુહિ અગ્ર વ્યાપક રૂપ હૈ ॥  
 જે સમજતા ઈસ રમજકો , પડતા નહીં ભર રૂપ હૈ ॥  
 મન ખાય ગટકા ભરમ મેં , તુહી આપ ચેતન હૈ સહી ॥  
 હક સમજ અપને જેહન મેં , યદ ખાત હમ તોસોં કહી ॥  
 તત્ત્વમસિ આદિ મહા બાક્ય , કીજે તાહિ વિચાર કો ॥  
 મન કંસે દિરિયા કીચ મેં , સખ છાંડિ જગ આચાર કો ॥  
 યદ પઠે સંખ્યા આરતી , ચારો પદારથ બ લહે ॥  
 જે ધારે ઈસકે અર્થ કો , ફિર ખાત ઉમરી કો કહે ॥  
 ચાહે અમાલક રતન કો , બેઠે ગુમ દિરિયાવ મેં ॥  
 યદ વજા ખીતા છત હૈ , ફિર રોહિમ કસ હાવ મેં ॥

દોહા—તમ નાશત પરકાશ તેં કહો તોહિ સમુઝાય ॥  
 ઔર ન કાહુમે નશે, ચહેં લાખોં કરોં ઉપાય ॥  
 અજ્ઞાન વિરોધી જ્ઞાન હૈ, લીજે ખાત વિચાર ॥  
 નાશ ન હોવે ઔરતે, ચાહેં ધારો વૃત્ત હજાર ॥

દોહા—નથૂ ભૈયા પ્રાગદત્ત, ગોવર્દન યશવન્ત ॥  
 મિશ્ર ભૈયાદાસ હૈ, સખ મણ્ડલી મહન્ત ॥  
 કૃષ્ણ ધુર ઔ શિવરતન, ખાબૂ ઓંકાર ॥  
 ગુપ્ત જ્ઞાન ગુટકા ખના, તિન આજ્ઞા અનુસાર ॥

સારદૂલસિંહ વંશીધર, તીજ ગંગારામ ॥  
 ધનસે આદિ ઔર જો, ભક્ત મારુડલી નામ ॥  
 સાધૂ જિતે સમાજ મેં, તિનકે લિખતે નામ ॥  
 પ્રભાનન્દ કેસરપુરી, ગૌરાંશંકર જન ॥  
 સમ્બત કી સંખ્યા લિખેં, સુનિયો કરકે કાન ॥  
 ગૃહ લગી હૈ પ્રભ પૈ, મુનિશિર મુકુટ પિછાન ॥  
 પક્ષ પ્રકાશિત બાદવા, તીજ તિથી ખુશવાર ॥  
 મન્દસોર પૂરા હુવા, વિશનપુરી દરબાર ॥

॥ ૐ શાન્તિઃ શાન્તિઃ શાન્તિ ॥



:૦: નવીન અનુભવી છન્દ ૩૧ :૦:

### ૨૮૯ શબ્દ

મનકી બાત રહે સખ મનમેં । તેરા સાજ બિગડ જાય જિન  
 મેં ॥ ૧૬ ॥ એક તિહાર્થ ખેલ ગવર્થ । ભૂલ્યા બાલાપન મેં ॥  
 આર્થ જવાની ચઢી મસ્તાની । મુખ દેખે દર્પન મેં ॥ ૧ ॥ મૂંઝ  
 મરોરે ટેલી પગડી । બાંધત સો ખેર દિન મેં ॥ તેલ કુસેલ લગાવત  
 તન મેં બાત કરે પંચન મેં ॥ ૨ ॥ આયા બ્રહ્માપા સખ તન કાપ્યાં ।  
 મન પુત્તર અરુ ધન મેં ॥ પડ્યા ખાટ મેં મજેકે મારે । બીમારી  
 સખ તન મેં ॥ ૩ ॥ હરી કી ભક્તી કબહુ ન કીની । ભૂલ્યા  
 તીનોં પન મેં ॥ ગુપ્ત રૂપ કો જાન્યા નાહીં પડ્યા અવિદ્યા વન  
 મેં ॥ ૪ ॥

દોહા—લોક બડાર્થ મેં ફંસે , કરતે બહુત વિખ્યાન ।

જસે ભવ સાગર તિરે, ખિસર ગયા સખ કામ ॥





લોકરૂપ વેદ લગે સખ ઝુંઠેભરમ જાલ ઉડી જાવે ॥૧॥ અહીં  
 બ્રહ્મ યહ જાપ કરે, સો યમ કી ચોટ બચાવે । કાલ બલી કા જોર  
 ન ચલતા, જો યહ ધ્યાન લગાવે ॥૨॥ અસ્તિ ભાતિ પ્રિય સત્ય  
 રૂપ હૈ, નામ રૂપ છિટકાવે ॥ જપ યહ રમજ સમઝ મેં નહીં  
 આવે ॥ સચ્ચા સત ગુરુ વતલાવે ॥૩॥ ગુપ્ત રૂપ પરઘટ આપ  
 રૂપ હૈ । ભેદ ભરમ મિટિ જાવે ॥ અખ કે ઓસર મત નાચૂકે ।  
 ફેર દાવનહીં આવે ॥૪॥

## ૨૯૩ શબ્દ

કર મન પુરુષોત્તમ અસનાના ॥ સખ મિટી જાય આના  
 જાના ॥૧॥ તીરથ બરત કરે બહુતેરે, ખોયા બહુત જમાના ॥  
 અખકી બાર સમઝ મન મૂરખ । ફિર પીછે હોય પછતાના ॥૨॥  
 બ્રહ્મ રૂપ નિજ આત્મ જાનો । પકડો ઠીક ઠીકાના ॥ અખકે  
 ઓસર ચૂકિ જાયગા । ચૌરાસી કો જાના ॥૩॥ વાચ્ય અર્થ કા  
 ત્યાગ કરો । અખ ચેહી બૈલ છુટાના ॥ બ્રહ્માકાર કરો અખ  
 વિરતી । લાવો લક્ષ નિશાના ॥૪॥ ગુપ્ત ગલીચે મુખ સે બૈઠો  
 ખાવો બ્રહ્મ રસ ખાના ॥ બહુડ કી જ્યોતિ પિંડ કે માહીં ।  
 આપમેં આપ સમાના ॥૫॥

## ૨૯૪ શબ્દ

તુહ તો ચેતન હૈ અવિનાશી । અખ તોડ ભરમ કી ફાંસી  
 ॥૧॥ કારણ સૂક્ષ્મ, સ્થૂલ, દેહ ધન સખહી કા પરકાશી ॥ પંચ  
 કોષ ઓર દેશ કાલ મેં ઘટ ઘટ માહિં નિવાશી ॥૨॥ બદ્રીનાથ  
 કેદારનાથ મેં, મથુરા મેં ઓર કાશી ॥ રામેશ્વર અરુ જગન્નાથ  
 મેં તુહીં દ્વારિકાવાસી ॥૩॥ સ્વર્ગ નરક વૈકુણ્ઠપુરી મેં તુહિં ધંદર  
 યમ ફાંસી ॥ તુહીં બ્રહ્મા વિષ્ણુ તૂહીં ઈશ કૈલાસી ॥૪॥ તુહીં  
 ગુપ્તરૂ તૂહીં પરગટ, તુહીં રોવે તુહીં હાંસી ॥ તુઝ સે બિના  
 નહીં કછુ ખાલી, કર કે દેખ તલાશી ॥૫॥

## ૨૯૫ શબ્દ

ભલા જો કુછ હૈ સો આપૈ આપ । આપહિ જન્મે આપૈ  
 મરતા, આપહિ તપતા તીનો તાપ ॥૧॥ આપૈ પંચ ભૂત દસ





## ૨૯૮ શ્લોક

ભલા બ્રહ્મ જ્ઞાન કો સુની ખાની, પંચ કોશ મેં વ્યાપક  
આતમ, બ્રહ્મ રૂપ હૈ નિરવાની ॥૧૮૬॥ સો હૈ વ્યાપક રૂપ આપના,  
ખોજ કરો ના સખ પ્રાની ॥ જો કોઈ આતમ વિદ્યા પઢતા પડતા  
નહીં ચારો ખાની ॥ વેદ શાસ્ત્ર કથન કરત હૈ, સમગ્રત નહીં  
અજ્ઞાની ॥ પોથે વાંચત કથા સુનાવે, ભરમિ રહા પુષ્પિત સાની  
॥૨૦॥ ભેદ વાદ કી ફિરે ગલી મેં, પૂજત હૈ પથર પાની ॥ લોભ  
માહ કે ફસ્યા ફન્દ મેં, નહીં મૂર્ખ નહીં તત જ્ઞાની ॥૩૦॥ જો  
નર ગુપ્ત જ્ઞાન પાતા હૈ, વિષય વાસના સખ ભાની ॥ પદમ  
પત્ર જો જગ મેં રહતે, તિનકી નહીં હોવે હાની ॥૪૦॥

દોહા—બ્રહ્મ જ્ઞાન યહી જનના, આતમબ્રહ્મ સરૂપ ॥

વેદ કહે નિત ટેરિ કે, સખ ભૂપન કા ભૂપ ॥

## ૨૯૯ શ્લોક ભજન

હંસા ભૂલ્યા નિજ તાલ કો, જખ સે ભટકત ડાલે હૈ ॥૧૮૭॥  
માન સરોવર છુટ ગયા નહાના ભૂલ ગયા મોતી ખાના ॥ યુગલ્યો  
મેં મિલિ હુયા દિવાના, ખાતા હૈ મચ્છી માલ કો, યુગલ્લી બોલી  
બોલે હૈ ॥૧૯॥ છુટિ ગયે નિજ આતમ ધર્મા, ભૂલિ ગયા કુલ  
કે સખ કરમા ॥ બનતા ડાલે શરમા વર્મા, કરતા નહીં આપ  
સંભાલ કો, કુછ ઓર ઓર બોલે હૈ ॥૨૦॥ પગલો મેં મિલિ  
હો ગયા પગલા, હૈ તો હંસ વોલતા બગલા ॥ પ્રાકમ ભૂલિ  
ગયા હૈ સગલા, ભૂલ્યા હૈ દેશ અરુ કાલ કો, જડ અન્થી નહીં  
બોલે હૈ ॥૨૧॥ ગુપ્ત રૂપ પૂરન હૈ જ્યોતી, ખાત તજો યુગલો  
કી થોથી ॥ અહં બ્રહ્મ યહ ખાવો મોતી, દુરિ કરો યમ કાલ  
કો, પરવત તુણ કે ઓહલે હૈ ॥૨૪॥

## ૩૦૦ શ્લોક ભજન ।

તુહિં હાજિર સદા હજૂર હૈ, ફિર કિસકા જાપકરે હૈ ॥૧૮૮॥  
સખ મેં શામિલ સખ સે ન્યારા, જાગ્રત સ્વપ્ન ખેલ વિસ્તારા ॥



સુષોપતિ મેં હૈ એકતારા તુરિયે મેં ભર પૂર હૈ, કયોં ઝૂઠા નાચ  
નચે હૈ ॥૧૧॥ ત્રીન અવસ્થા જનનહારા, એસે હૈ ત્રીના સે  
ન્યારા ॥ કયોં ફિરતો હૈ મારયા મારા, નહીં નેરે નહીં  
દૂર હૈ, ફિર કિસકા તાપ તપે હૈ ॥૧૨॥ વ્યાપક હૈ સો રૂપ તુમહારા  
ના કહુ હલકા ના ભારયા, ના વહુ મધુર નહીં વહુ ખારા જ્યોં  
કા ત્યોં ભરપૂર હૈ ॥ યહુ કયોંના જાંચ જ'ચેં હૈ ॥૩૧॥ ગુપ્ત  
ભેદ કો નાહિં લહતા હૈ કુછ ઔર હી કહતા, યાહી સે ભવ  
સાગર વહતા તુઝકો કહુ નહીં સહૂર હૈ, ભવસાગર નાહિં  
તિરે હૈ ॥૪૧॥

### ૩૦૧ ભજન

ખાત યહુ કહતે વેદ પુરાન, બ્રાહ્મણ સોઘ બ્રહ્મ પિછાને ॥૧૬૧॥  
સમ દમ શૌચ તપ કો કરતા, હિંસા રહિત શાંતિ કો ધરતા ॥  
જ્ઞાન વિજ્ઞાન આસ્તિક ચરતા, યહિ બ્રાહ્મણ કા લક્ષણ જાને ॥  
નિજ આતમ રૂપ કો જાને ॥૧૭॥ સોઘ ક્ષત્રી જહુ કો જાને,  
દિનકર તેજ ધીર્જતા ઠાને ॥ યુદ્ધ સે ઉલટા હટિ નહિં જાને ॥  
આસ્તિક હોવે ચતુર સુજાન, સખ દાન વિધી કો જાને ॥૨૧॥  
વૈશ્ય સોઘ જો બનિજ બઢાવે ખેતી કરતા ગઊ ચરાવે ॥ ઈશ્વર  
મેં અપના મન લાવે, જખ હોવે કલ્યાન, નિજ ત્રીન ધર્મ  
કો ઠાને ॥૩૧॥ એક ધર્મ શુદ્ધ કા વરન્યા, નીન વર્ણકી સેવા કરના  
ગુપ્ત ધ્યાન ઈશ્વર કા ધરના, સેવે ધર્મ અપના જાના ગીતા મેં  
કૃષ્ણ બખાને ॥૪૧॥

### ૩૦૨ ભજન

જગ નહીં અપુખ્ત સમાન હૈ, ફિર ઈશ કૌન કા કરતા  
॥૧૬૧॥ સાક્ષ્ય બિના સાક્ષી નહીં હોવે, દૃશ્ય નહીં નેત્તર કયા  
જોવે ॥ ભરમ નીંદ મેં કેસે સોવે ॥ નહીં રૂપ નહીં નામ હૈ ॥  
ફિર કો જન્મે કો મરતા ॥૧૭॥ હોય અજ્ઞાન તો જ્ઞાન નસાવે,  
બંધ હોય તો મુક્તી પાવે ॥ વેદ શાસ્ત્ર નીતહી ગાવે, ઝૂઠે હુમ ઝૂઠ

જહાન હૈ, ક્યોં ઝૂંઠા ઝગડા ધરતા ॥૨॥ વેદ વૃક્ષ કા જો ફલ ચખતે,  
સો કરતા બુદ્ધિ નહીં રખતે ॥ નિશ્ચલ બહે નિજ રૂપ મેં જાયતે  
ઇસ મેં અનુભવ પરમાન હૈ, તુંહ નિશ્ચય સદા અકરતા ॥૩॥  
ગુપ્ત ભેદ કોઈ લખે વેદ કા, તિસકે લેશ નહીં રહે ખેદ કા ॥  
ઝૂંઠા ઝગડા વિધિ નિષેધ કા, મૂર્ખ કા વિલવાન હૈ ॥ જ્ઞાની ધન  
સખસે તરતા ॥૪॥

### ૩૦૩ ભજન ।

જો કછુ ભાષત હૈ વિસ્તાર ॥ વિરતી કા ખેલ હૈ સારા  
॥૧॥ અંતઃકરણ અવિદ્યા દોષતિનકા મિલિ-પરિણામ જો હોઈ,  
વિષયન કા પરકાશ સોઈ ॥ રૂપ સમાન વિચાર, સોઈ સખ જગ  
કા આધાર ॥૨॥ ઈશ જ્ઞાન માયા કી વિરતી તાતે સર્વજ્ઞતા કો  
ધરતી, જીવ જ્ઞાન અન્તઃ કરન વિરતી, અવિદ્યા રૂપા સર્પ નિહારી  
સો સત્ય અસત્ય મંઝારા ॥૩॥ ભરમ યથાર્થ જ્ઞાન કહાવે, દોનોં  
સંસ્કાર ઉપજાવે, જિસતે જ્ઞાન સિમિરતિ પાવે ॥ અન્દર કરો  
વિચાર, અનુમાન જ્ઞાન સે ન્યારા ॥૪॥ ગુપ્ત જ્ઞાન હૈ સખસે  
ન્યારા, વીરતી જ્ઞાન કો દેત સહારા ॥ પરમારથ અરુ હોય  
ખેવહારા, યહિ ફલ હે તિસકા સાર, કર દેખો જ્ઞાન વિચાર ॥૫॥

### ૩૦૪ કવ્વાલી

એક ભૂપ સૈયા પર સોયે, સ્વપ્ને મેં ચિલ્લાને લગે ॥૧॥  
પેર પકડ્યા સ્યારની કો, તિસસે ઘખરાને લગે । યૌધા ખડ  
ચૌકેર કો વહુ ઉનકો બુલવાને લગે ॥૨॥ યોધારુ હથિયાર સખ  
કછુ કામ નહીં આને લગે, સ્વપ્ને કા દંડ, હાથ લે, વહુ ઉસસે  
છુટાવા ને લગે ॥૩॥ પગ છુટિ કર લંગડે હુયે, જર્સાહ કો જાને  
લગે ॥ ફેહા ન દીના તાસુ કો, ફિર લહુચતે આને લગે ॥૪॥  
મીલિ ગયે મુનિ એક સ્વપ્ન મેં વહુ જડી કો લાને લગે ॥ નહીં  
રાજ ધન કછુ કાજ આયા, ગુપ્ત સમઝાને લગે ॥૫॥



દોહા-રાજ વિભૂતિ નૃપ કે કોઝી ન આઈ કામ ॥  
સ્વપ્ને કે મુનિ દંડ ને, સખી સંભારયા કામ ॥

### ૩૦૫ કવ્વાલી

મૈત્રા વિષયો' કેશુખ મે' સોયા પરચા, ગુરૂ જ્ઞાન કે જ્ઞાન  
જગાય દિયા, જળ જળી ઉઠ્યા તળ દેખી રહ્યા મેરા માનરુ  
માલ મુરાય લિયા ॥૧॥ ગુરૂ જ્ઞાન કલેજ દેાડિ ગયા, ઈશ્વર  
સે નાના જોડિ ગયા ॥ સખ જગ સે યારી તોડિ ગયા નિજ  
આતમ માલિ' લગાય દિયા ॥૨॥ જળ જળિ લિયા, નિજ રૂપ  
સહી મેરી કશેડ જન્મ કી ભૂત વહી ॥ જ્ઞાનાશિ સે સખહિ  
અવિધા દહી, મેરા આતમ તરવ દિખાય દિયા ॥૩॥ જૈસે નિદ્રા  
ગમે સે ગયા સ્વપના તેસે આતમ જ્ઞાન સે જગત હુન્યા ॥  
નખ નીલ સમાન જહાન બન્યા મેરે કિલ કા દાગ ધોવાય દિયા  
॥૪॥ ગુરુ દેવ ને કુંદ તોડિ દિયા, મેરા દુટયા નાતા જોડિ  
દિયા ॥ અગ સફલ હુઆ હૈ જન્મ દિયા, સખ ઝગડયા ગુપ્ત  
બુઢાય દિયા ॥૫॥

### ૩૦૬ રાગ તરંગા

રે મુસાફિર પ્યારે, કાલે પર લયા હૈ દિખાના ॥૧॥ જૂઠા  
હી યહ જ્યાલ રચા હૈ, જૂઠે રાજ રાના ॥ જૂઠા હૈ સખ લાવર  
લશકર, જૂઠે મુરે નિશાના ॥ ૨ ॥ પંચ ભૂત કી જૂઠી  
રચના, સ્વર્ગ પતાલ જહાના ॥ જૂઠે હી સખ સ્વર્ગ નર્ક  
હૈ જૂઠે હી તિનકા જના ॥૩॥ જૂઠી કાયા જૂઠી માયા  
જૂઠે પિડક પ્રાના ॥ જીવ કશ કોઝી હૈ જૂઠે, સોઢ સંઘ્યા જિન  
જના ॥ ૪ ॥ સોઢ ચેતન રૂપ તુમહારા યહી જ્ઞાન યહી ધ્યાના ॥  
॥ તારે બિન્ન જો દિખે મુનિયે, નિશ્યા સફલ જહાના ॥ ૫ ॥

દોહા-જો પાવે સત રૂપ કો, મિટિ જવે સખ શોક ॥  
સખ કહતે વેદરુ સાસ્તર, ઓર મહાજન લોક ॥

## ૩૦૭ શબ્દ

સખ જૂઠે ગુરુ ઓર ચેલા, વેદ ગુરુ કહે પુકાર ॥ ૧૬૬ ॥ જૂઠ્યો  
કા જૂઠા નાતા, ક્યોં ફેરે ભરમ મેં માથા કરો આતમ નિરવાર  
॥ ૧ ॥ ગુરુ વેદ સત્ય જો કહતે, તો દૈત માહિ બંધ રહતે, નહીં  
અદૈત સંભાર ॥ ૨ ॥ ભવ દુખ મિથ્યા ગુરુ વેદ, યોં કરે વેદ ગુરુ  
છેદા, મિથ્યા જગ કા પરિહાર ॥ ૩ ॥ યહ જ્ઞાન લખો ગુપ્તાઈ જૂઠે  
કી કુલિ ઉડાઈ, તજો તિસકા હંકાર ॥ ૪ ॥

## ૩૦૮ શબ્દ

ગુરુ વેદ કહે સમજા કે, જગત સખ સ્પષ્ટના સમાન ॥ ૧૬૭ ॥  
યહ જગત જાલ છિટકવો, જૂઠે જગડે ક્યોં હવો ॥ આત તિનકી તો  
માન ॥ ૧ ॥ તુહ કહતા હમ સંન્યાસી ફિર ક્યોં ફેરે લોભ કી  
ફાંસી, ધર્મ અપને કો પિછાન ॥ ૨ ॥ તીરથ પર ચઢે ભંડારા, દમડ્યોં  
કા ઢંગ હૈ સારા ॥ બાચતે કથા પુરાન ॥ ૩ ॥ નહીં ગુપ્ત ભેદ કો  
જાન્યા, કાહે કો લગાવત વાના ॥ લોભ હિત કરે વિખ્યાના ॥ ૪ ॥

## ૩૦૯ શબ્દ

કમ તોલે જૂઠ કો બોલે, રહે ફેરે ધાર્મીયાર ॥ ૧૬૮ ॥ તકડી  
કા ખેંચે કાના, તેરા સભી કપટ હમ જાના લેવે પાસંગ કો  
માર ॥ ૧ ॥ તુંહ જૂઠી દેત ગવાહી, ગંગાજી સભામેં હાઈ, ડૂબિ દિયા  
કુલ પરિવાર ॥ ૨ ॥ તિજી કરે અધિક કમાઈ, હમ દેખે મહાજન  
ભાઈ ॥ લેવે પંચીસ હજાર ॥ ૩ ॥ સુન ગુપ્ત આત કો ભાઈ, તુમ  
સચ્ચી કરો કમાઈ ॥ જખી હોવેં ઉદ્ધાર ॥ ૪ ॥

દોહા--નામ મહાજન કહતે હૈં. કરતે ખડે અકાજ ॥

મોલ કરેં બાજાર મેં. નેક ન આવે લાજ ॥



કન્યા બેંચ ધન ખાહિંગે, સાંભર જ્યોં ગલિ જાહિં ॥  
ભોજન નાહિ સમજના, ખૂન માંસ કો ખાહિં ॥

૩૧૦ ગજલ

ચઢ્યા લૌકિક બઢાઈ પર, પડી ગલ મજબકી ફાંસી ॥ કરે  
ખાજર વ્યાખાના છુટતી કુચ્યોં કી હાંસી ॥૩૬॥ મજબ કી જલ  
ફેલાવે, જાનવર આનિ ફાંસિ જાવે ॥ લાવની ગજલ કો ગાવે, બુદ્ધિ  
નિજ રૂપ તે નાસી ॥૧॥ સભા વહ બહુત સી લાવે, નેમ ઔર વરત કર-  
વાવે ॥ કમતી તુલના ન છુટવાવે, જૂઠ બોલના ન છુટવાસી ॥૨॥  
છાડતે લિલવી ખાના, તજેં નહીં કન્યા વિકરાના, બહુત સુનતે હૈં  
વ્યાખના ॥ કરેં નહિં ધર્મ તલાસી ॥૩॥ કાવ્ય કથની કરે આછી  
તીસ હજાર કે ડાંકી ॥ રહી નહિં ભક્તી મેં બાકી ગુપ્ત કહતા  
હૈ કૈલાસી ॥૪॥

દોહા—ભગત વહી હૈ જગત મેં, પર ધન કરતે ધાત ॥  
ખાત બનાવેં ધર્મ કી, લોગોં કો દરસાત ॥

૩૧૧ ગજલ

લગે હૈં લોભ કે મારે, વહાં પડિત વહાં કાજી ॥ નીર નહીં  
ક્ષીર કો છાને ડાખ દઈ દાનાં કી બાજી ॥૨૬॥ ગલા વહ રહ કા  
કાટે, ખૂન ઔર માંસ કો ચાટે ॥ કૈસે ઉસ ખુદા કે નાટે, જિસને  
ચહુ રચના સખ સાજી ॥૧॥ પથર પાની કો પુજવાતે, મન્દિર  
મેં રંડી નચવાતે ॥ રાગ રસિકોં કે વે ગાતે ॥ બને હૈં લોભ કે  
પાજી ॥૨॥ રાખતે ગ્યારસ ઔર રોજ, ઠાવતે મજબ કા બોઝા ॥  
નહીં સખ ઘટ ખુદા સુઝા, કૌન કરની સે હૈ રાજી ॥૩॥ વેઠ  
કુરાન કો જાને, લોભ વશ તિનકી નહીં માને ॥ ગલા ચેતન કા  
વહ ભાને, ગુપ્ત ગાવે ગજલ તાજી ॥૪॥

## ૩૧૨ ગજલ

અંત મેં હોય પછિતાના, હાથ દોડી જાયગા ખાલી, કહા  
ગફલત મેં સોતા હૈ, ગયે બડે મુલક કે વાલી ॥૧૬૬॥ જિનોં કે  
ચલે થે ચક્રર, તિનોં કી કોઈ નહીં સરવર ॥ કાલ જિન રાખ્યા  
અપને ઘર, લગાકર કૈદ મેં તાલી ॥૧૬૭॥ હરી કી ભક્તી નહીં  
પાઈ, મારે ઉન સખાહી કો ખાઈ ॥ ખોજ જિનકા નહી રાઈ,  
રહ્યા નહીં મૂલ ઔર ડાલી ॥૧૬૮॥ ચેત અખ છોડી કે હંકાર,  
હરી ભક્તી કરે હોય પાર ॥ સાજિ લે ચેહી અખ સિંગાર, રહેગી  
ઘસસે કુછ લાલી ॥૧૬૯॥ ગુપ્ત ગલિયારે મેં આવે, કહીં ફિર ધોખા  
નહીં ખાવે ॥ રૂપ જો અપને કો પાવે, કરહિં કયા કાલ ઔર  
કાલી ॥૧૭૦॥

## ૩૧૩ શબ્દ

નિજ આતમ કા જિલવા ચહુ છાય રહ્યા રે ॥૧૭૧॥ નેત્ર દેશ  
ઘડા નાહી મેં જાગ્રત કે રંગ દિખાય રહ્યા રે ॥૧૭૨॥ કંઠ દેશ હેંતા  
નાહી મેં સ્વપ્ને દૃષ્ટી બતાય રહ્યા રે ॥૧૭૩॥ હિરદા દેશ પુરી તત  
નાહી, સુષુપતિ કા સુખ દરશાય રહ્યા રે ॥૧૭૪॥ તુરિયે મેં તીનોં  
કા દૃષ્ટા, ગુપ્તહી જોતિ જગાય રહ્યા રે ॥૧૭૫॥

## ૩૧૪ શબ્દ

ઘસ કાયા મેં અજખ જહુરા હૈ ॥૧૭૬॥ ક્ષિતિ જલ પાવક  
પવન અકાસા પાંચો ગુણ ગંભીરા હૈ ॥૧૭૭॥ પિંડ પ્રાન કા યોગ  
ભયા હૈ, મન બુદ્ધિ ચિત હંકારા હૈ ॥૧૭૮॥ દસ ઇન્દ્રી પચ્ચીસ  
પ્રકૃતી મન કે સદા હજુરા હૈ ॥૧૭૯॥ બુદ્ધિ બેસવા નૃત્ય કરત હૈ,  
ગુપ્ત અચલ નિજ નૂરા હૈ ॥૧૮૦॥

દોહા—ગુપ્ત અક્રિયે નૂર તેં, ઘુટિ રહ્યા સભી જહુર ॥

દેખત હૈ કોઈ ધીરજન, કયા દેખે મતિ ફૂર ॥



## ૩૧૫ શ્લોક

કાયા ગુલ મેં દો દિન કી ચહ લાલી હૈ ॥૧૬॥ મોત મર  
નિયાં ફિરતી બાગ મેં, સંગ કાલ બલી માલી હૈ ॥૧॥ ડા  
પાત કો તકતે ડાલે, હાથ તિનોં કે ડાલી હૈ ॥૨॥ તોડી  
ફૂલ મૂલ સે ફાડે કરતે બહુત કુચાલી હૈ ॥૩॥ ગુમ તા  
કુલન કે લાવે, જૈચી કુલેલ કરે ખાતી હૈ ॥૪॥

## ૩૧૬ શ્લોક

ગુલ સૂખા હરા નહીં હોતા હૈ ॥૧૬॥ પિંડ પ્રાન કા યો  
હૈ જખ લગ કયોં ના પાપ કે ઘોતા હૈ ॥૧॥ કોટિ જનમ  
ભરમત હો ગયે, કયોં ના મૂલ અવિધા જોતા હૈ ॥૨॥ ક  
આય તત કાલ વિનાસે ॥ કયા ગફલત મેં સોંતા હૈ ॥૩॥...  
અંત કાલ કયા રોતા હૈ ॥૪॥

## ૩૧૭ શ્લોક

૩ દમ કા કુછ નાહીં ઠિકાના હૈ ॥૧૬॥ ભૂલિ રહ્યા  
ધામ બામ મેં તિનકે હાથ વિકાના હૈ ॥૧॥ ઘડી પલા  
ખખર નહીં હૈ, કખ કર ચલે પયાના હૈ ॥૨॥ ખાનપાન  
કે સુખ મેં હોય રહ્યા મસ્તાના હૈ ॥૩॥ ગુમ ગલી મેં  
ન આયા, અંત રસાતલ જાના હૈ ॥૪॥

## ૩૧૮ શ્લોક

રંગ લાગ્યા હૈ સતસંગ રેની કા ॥૧૬॥ ઘટ હી ભી  
દરસતા, દરશન માધો વેની કા ॥૧॥ અલખ કી બલ  
ખિય છાર્ક, ઘાટ નહાયે તિરવેની કા ॥૨॥ કહના ઓર  
ઓરા, કયા ફલ હોવત કહની કા ॥૩॥ ગુપ્ત ભેદ ક. ફંદા  
જખ ઘર પાયા રહની કા ॥૪॥

## ૩૧૯ શ્લોક

માયા ગદ મેં જાણેલી લાગિ રહી ॥ ૧૮ ॥ આતમ રાજ  
 પરમાત્મ છે, તિસકી ભેતિ જાગિ રહી ॥ ૧૯ ॥ મન દેવાન જહ  
 કુમ સુનાવે, હન્દિ અનુચર જાગિ રહી ॥ ૨૦ ॥ પ્રાન પવન દિન  
 તન ચલત હે, કાલ કુગ કુગી જાગિ રહી ॥ ૨૧ ॥ ગુપ્ત આતમ  
 મરતા વેદ કહત હે, યહ માયા સખ રચના કો રાચિ રહી ॥ ૨૨ ॥

શ્રી પરમહંસ પરિવ્રાજકાચાર્ય અબધૂત

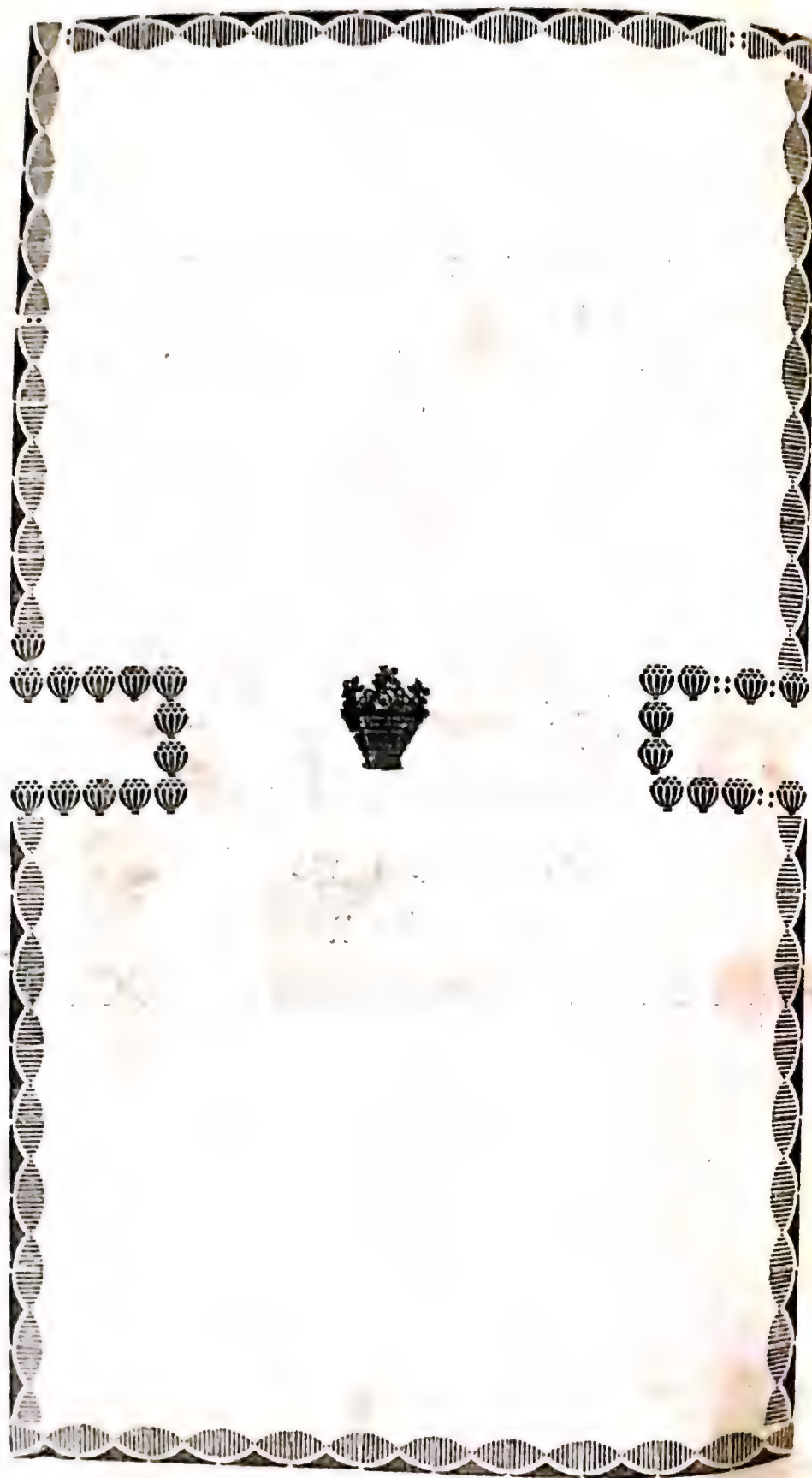
ગુપ્તાનન્દજી મહારાજ કૃત

ધતિ ગુપ્તજ્ઞાન ગુટકા

॥ સમાપ્ત ॥









શ્રી ઐમ. ઐમ. ખંભાતવાળા.  
(વિશ્વધર્મ કેશતેલોના આગેવાન ઉત્પાદકો)



